

Presented with Compliments

To पंज्जालाकेशार्जी मुख्यार् सम्मादक 'कानेकान्त'.

It is requested that acknowledgements and copies of Review when published should be kindly sent to Prof. H. L. Jain, King Edward College, Amraoti, Berar, (India).



	,			
		,		
•				
·				

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भृतविल-प्रणीतः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-घवला-टीका-समन्वितः।

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद-संदृष्टि-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः सम्पद्धिता

सत्प्ररूपणा २

सम्पावकः

अमरावतीस्थ-किंग-एडवर्ड-कालेज-संस्कृताध्यापकः एम्. ए., एल् एल्. बी., इत्युपाधिधारी हीरालालो जैनः

सहसम्पादकी

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री

थं. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

संशोधने सहायकी

व्या. वा., सा. सू., पं. देवकीनन्दनः

* डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः

सिद्धान्त शास्त्री

उपाध्यायः; एम्. ए., डी. छिट्ट

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र

जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालयः

अमरावती (बरार)

वि. सं. १९९७

वीर-निर्वाण-संवत् २४६६ [ई. स. १९४०

्रभूरपं रूपक-दशकम्

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ श्रितावराय लक्ष्मीचन्द्र, जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय अमरावती (बरार)



मुद्रक-टी. एम्. पाटील, मॅनेजर सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती (बरार)

THE

ŞAŢKHAŅŅĀGAMA

OF

PUSPADANTA AND BHŪTABALI

WITH

THE COMMENTARY DHAVALA OF VIRASENA

VOL. II

SATPRARUPAŅĀ

Edited

with introduction, translation, notes, and indexes

BY

HIRALAL JAIN, M. A., LL. B.

C. P. Educational Service King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY

Pandit Phoolchandra Siddhānta Shāstrī

*

Pandit **Hiralal** Siddhānta Shastrī, Nyāyatirtha.

With the cooperation of

Pandit Devakinandana Siddhānta Shastrī

*

Dr. A. N. Upadhye, M. A., D. Litt.

Published by

Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,

Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Karvālava.

AMRAOTI (Berar).

1940

Price rupees ten only.

Published by-

Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra, Jaina Sabitya Uddharaka Fund Karyalaya, AMRAOTI (Berar).



Printed by—
T. M. Patil, Manager,
Saraswati Printing Press,
AMRAOTI (Berer).

विषय सूची

	विषय	पृष्ठ नं.	विषय	पृष्ठ नं.
	प्राक् कथन	१-३	५ बारहवें श्रुतांग दृष्टिवादका	
	प्रस्तावना		परिचय	४१-६८
	ग्रंथकी प्रस्तावना (अंग्रेजीमें)	I-VI	१ परिकर्म	४३
१	ताड्पत्रीय मतिके लेखनकालका निर्णय	5 50	२ सूत्र	ક્રફ
	१ सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति	१ –१४	३ पूर्वगत	४८
	र सत्मरूपणाक अन्तका मशास्त २ घवलाके अन्तकी प्रशस्ति	\$	४ प्रथमानुयोग	५६
_		9	५ चूलिका	49
	सत्प्ररूपणा विभाग	१४	महाकम्मपयडिपादुड	६०
ঽ	वर्गणाखंड विचार	१५–३३	कसायपादुड	<i>७</i>
	१ वेयणकसिण पाहुड और वेदनाखंड २ वर्गणा नामपर खंडसंक्षा	१६	६ ग्रंथका विषय	६८
२व		१७	७ रचना और भाषादोळी	७०
	३ वेदनाखंडके आदिका		विषय-सूची	
	मंगलाचरण	१९	१ सत्प्ररूपणा-आलापसूची	હ ર
	४ वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका	२१	२ आलापगत विशेष-विषयसूर्य	-
	५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता	२२ ·		
	६ मूडविद्रीसे प्रतिस्तिप		ग्रुद्भिपत्र	८४
	करनेवालेकी प्रामाणिकता	२३	सत्प्ररूपणा २	
	७ वेदनाखंडके आदि अवतर-	ર ષ	मूल, अनुवाद और संदृष्टियां	४११ –८५५
	णोंका ठीक अर्थ		परिशिष्ट	
	१ वेदना और वर्गणासंडोंकी		१ पारिभाषिक शब्दसूची	१
	सीमाओंका निर्णय	३०		દ
	२ वर्गणा निर्णय	३१	२ अवतरण गाथासूची	•
૪	णमोकार मंत्रके आदिकर्ता	३३- ४१	३ प्रतियोंके पाठभेद	9
	१ धवलाकारका मत	३ ३	४ प्रतियोंमें झूटे हुए पाठ	१३
	२ इवेताम्बर मान्यता विचार	३५	५ विशेष टिप्पण	१५

माक् कथन

श्रीधवलसिद्धान्त प्रथम विभागके प्रकाशित होनेसे हमें जो आशा था, उसकी सोलहों आने पूर्ति हुई। हमें यह प्रकट करते हुए अत्यन्त हर्ष और संतोष है कि मूडबिद्दी मठको मेंट की हुई शाकाकार और पुस्तकाकार प्रतियोंके वहां पहुंचनेपर उन्हें विमानमें विराजमान करके जुद्धस निकाल गया, श्रुतपूजन किया गया और सभा की गई, जिसमें वहांके प्रमुख सज्जनों और विद्वानोंद्वारा हमारी संशोधन, सम्पादन और प्रकाशन व्यवस्थाकी बहुत प्रशंसा की गई और यह मत प्रगट किया गया कि आगे इस सम्पादन कार्यमें वहांकी मूळ प्रतिसे मिलानकी सुविधा दी जाना चाहिये, नहीं तो ज्ञानावरणीय कर्मका बंध होगा। यह सभा मूडबिद्दी मठके भट्टारकजी श्री चारुकीर्ति पंडिताचार्यवर्यके ही सभापतित्वमें हुई थी।

उक्त समारंभके पश्चात् स्वयं भद्दारकजीने अपना अभिप्राय हमें सूचित किया और प्रति मिलानकी व्यवस्थादिके लिये हमें वहां आनेके लिये आमंत्रित किया। इसी बीच गोम्मटस्वामीके महामस्तकि। भेषकका सुअवसर आ उपस्थित हुआ। यद्यपि छुट्टियां न होनेके कारण हम उक्त महोत्सवमें सिम्मलित होनेके लिये नहीं जा सके, किंतु हमारे कार्यमें अभिरुचि रखने और सहायता पहुंचानेवाले अनेक श्रीमान् और धीमान् वहां पहुंचे और उनमेंसे कुछने म्डिविदी जाकर प्रंथराज महाधवलकी भी प्रतिलिपि कराकर प्रकाशित करानेके लिये महारकजी व पंचोंकी अनुमति प्राप्त कर ली। समयोचित उदारता और सद्भावनाके लिये मृडिबिदी मठका अधिकारी वर्ग अभिनन्दनीय है और उस दिशामें प्रयत्न करनेवाले सज्जन भी धन्यवादके पात्र हैं। अब हम उस सम्बंधमें पत्र-व्यवहार कर रहे हैं, और यदि सब सुविधाएं मिल सकीं, जिनके लिये हम प्रयत्नशील हैं, तो हम शीव्र ही मृडिबिदीकी समस्त धवलादि श्रुतोंकी प्रतियोंकी (फोटोस्टाट मशीन या माइको फिलिंग मशीन द्वारा) प्रतिलिपियां कराकर प्रंथराजका चिरस्थायी उद्धार करनेमें सफलीभूत हो सकेंगे। इस महान् कार्यके लिये समस्त धिमेष्ठ और साहिस्सप्रेमी सजनोंकी सहानुभूति और क्रियासक सहायताकी आवश्यकता है, जिसके लिये हम समाजभर का आहान करते हैं

प्रथम विभागका प्रकाशनोत्सव ४ नवम्बर सन् १९३९ की किया गया था। तबसे आज ठीक आठ मास हुए हैं। इतने अल्पकालमें द्वितीय विभागका संशोधन सम्पादन होकर मुद्रण भी पूरा हो रहा है, यचि कार्यमें कठिनाइयां अनेक उपस्थित होती रहती हैं। इस सफलतामें समाजकी सद्भावना और दैवी प्रेरणा बहुत कुछ कार्यकारी दिखाई देती है। यदि समय अनुकूल रहा तो आगे प्रायः वर्षमें दो भागोंका प्रकाशन करानेका प्रयत्न किया जायगा।

इस विभागके सम्पादनमें भी पूर्वोक्त सहयोग पूर्ववत् ही चलता रहा है, अर्थात्

पं. फूलचंद्रजी शास्त्री और पं. हीरालालजी शास्त्री स्थायी रूपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ संलग्न रहे, तथा पं. देवकीनन्दनजी शास्त्री और डा. आदिनाथजी उपाध्यायसे हमें संशोधनमें ययावसर वांछित साहाय्य मिलता रहा । धवलाकी जो प्रशस्तियां इस विभागके साथ प्रकाशित हो रहा हैं. उनका सहारनपुरकी प्रातिसे अक्षरशः मिलान वीरसेवामंदिरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी ने करके भेजनेकी कृपा की । उन्हीं प्रशस्तियोंके कनाडी पाठोंके संशोधनका अत्यन्त कठिन कार्य डा. उपाध्येके सहयोगी, राजाराम कालेज, कोल्हापुरमें कनाडीके प्रोफेसर श्रीयुत कुन्दनगारजी द्वारा किया गया है। वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने प्रस्तुत विभागमें आई हुई अवतरण-गाथाओं के प्राकृत पंच संप्रहमें होने न होने की हमें सूचना दी । बीनाके पं. वंशीधरजी व्याकरणा-चार्यने पृ. ४४१-४४३ पर आये हुए न्याकरण संबंधी कठिन प्रकरणपर अपनी सम्मति विस्तारसे हमें लिख भेजनेकी कृपा की। पं. महेन्द्रकुमार्जी न्यायाचार्यने इस भागके प्रथम फार्मका प्रफ देखकर मुद्रण-संबंधी अनेक सूचनाएं देनेकी कृपा की। इस सब सह।यताके लिये हम इन विद्वानोंके बहुत ही अनुगृहीत हैं। और भी अनेक विद्वानोंने अपनी बहुमूल्य सम्मतियां हमें या तो व्यक्तिगत पत्र द्वारा या समालोचनाके रूपमें पत्रोंमें प्रकाशित कराकर देनेकी कृपा की । उन सबसे भी हमने लाभ उठानेका प्रयत्न किया है। अतएव वे सब हमारे धन्यवादके पात्र हैं। उन सम्मतियों आदि परसे जो संशोधन या स्चनाएं प्रथम खंडके विषयमें हमें आवश्यक प्रतीत हुईं, उनका भी समावेश इस विभागके शुद्धिपत्रमें किया जाता है। पाठक उससे प्रथम खंडमें उचित सुधार कर छैं।

हमारे अनेक भ्रेमी पाठकोंने कुछ सूचनाएं ऐसी भी भेजी थीं जिनका, खेद है, हम पाछन करनेमें असमर्थ रहे। इनमें एक सूचना तो प्राकृत अंशोंका या उनके कठिन स्थलोंका संस्कृत रूपान्तर देते जानेके सम्बंधमें थी। इसको स्वीकार न कर सकने का कारण हम प्रथम जिल्दके प्राक्क्यनमें ही दे चुके है और हमारा वह मत अब भी कायम है। दूसरी सूचना हमारे वयोवृद्ध पाठकोंकी ओर से यह थी कि भाषान्तरका टाइप छोटा पड़ता है, उसे और भी बड़ा कर दिया जाय तो उन्हें पढ़नेमें सुविधा होगी। हम बहुत चाहते थे कि अपने वृद्ध पाठकोंकी इस म्र्तिमान कठिनाई को दूर करें। किन्तु पाठक देखेंगे कि मुख्के टाइपसे अनुवादका टाइप बहुत कुछ छोटा होते हुए भी उसमें मूछसे कहीं अधिक स्थान छगता है। अब हम यदि उसे और भी बड़े टाइपमें छें तो हमारी निश्चित की हुई खंड-व्यवस्था और व्हाल्यूममें बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होती है। अतएव विवश होकर हमें अपनी पूर्व पद्धति ही कायम रखना पड़ी। आशा है हमारे वृद्ध पाठक प्रकाशन संबंधी इस कठिनाईको समझकर हमें क्षमा करेंगे।

इस विभागके संशोधनमें भी हमें अमरावती जैनमिन्दरकी प्रतिके अतिरिक्त आराके सिद्धान्त भवन तथा कारंजाके महावीरब्रह्मचर्याश्रमकी प्रतियोंका लाभ मिलता रहा तथा सहारन-पुरकी प्रतिके जो कुछ पाठभेद पहलेसे नोट थे उनसे लाभ उठाया गया है। अतएब इन सब प्रतियोंके अधिकारियोंके हम अनुगृहीत हैं।

श्रीमन्त सेठ छक्ष्मीचन्द्रजी और जैन साहित्योद्धारक फंडकी ट्रस्ट कमेटीके अन्य सब सदस्योंका इस कार्यको प्रगतिशील बनाये रखनेमें पूरा उत्साह है, और इस कारण हमें व्यवस्थामें किसी विशेष कठिनाईका अनुभव नहीं हुआ, बल्कि आगे सफलताकी पूरी आशा है ।

यूरोपीय महासमरके कारण इस खंडके लिये यथेष्ट कागज आदिका प्रबंध करनेमें बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई, जिसको हल करनेमें हमारे निरन्तर सहायक पंडित नाथूरामजी प्रेमीका हमपर बहुत उपकार है।

सत्साहित्यकी कदर करनेवाले मर्मज्ञ पाठकोंने प्रथम जिल्दका जो खागत किया है और उसके लिये हमारी ओर जो प्रशंसांक भाव न्यक्त किये हैं, उसके लिये हम उनकी गुणप्राहकताके कृतज्ञ हैं। पर हम यह फिर भी न्यक्त कर देते हैं कि इस महान् कठिन कार्यमें यदि हमें सचमुच कुछ सफलता मिल रही है तो उसका श्रेय हमें नहीं, किन्तु समाजकी उसी सद्रावना और समयकी प्रेरणाकों है जो उचित कालमें उचित कार्य किसी न किसीसे करा लेती है। इस सम्बंधेंम हमारी तो, महाकवि कालिदासके शन्दोंमें, यही धारणा है कि—

सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्विप यश्चियोज्याः सम्भावनागुणमवेहि तमीश्वराणाम् । किं वाऽभविष्यव्हणस्तमसां विभेत्ता तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यम् ॥

किंग एडवर्ड कालेज, अमरावती १५।७।४०

हीरालाल जैन

प्रसावना

INTRODUCTION

1. Age of the palm-leaf manuscript of Dhavala at Mudbidri.

In the introduction to Vol. 1 we had conjectured that the palm-leaf manuscript of Dhavala deposited at Mudbidri was at least five or six hundred years old. We are now in a position to throw some more light on the subject of the manuscript tradition. At the end of Satprarupana after the colophon we find some text which, when reconstructed, yields three verses in Kenarese in praise of Padmanandi, Kulabhushana and Kulacandra respectively. The relation between these three notabilities has not been mentioned here, but there is no doubt that they are identical with the teachers of the same names mentioned in the Sravana Belgola inscription No. 40 (64) as succes. sively related to each other in a spiritual geneological order. There is similarity in the adjectives used for them at both the places. The inscription also tells us that the teachers belonged to the brilliant line of Desigana, a branch of the Nandigana of Mulasamgha which had owned, amongst others, Kundakunda, Umāsvāti, Samantabhadra, Pujyapāda and Akalamka. One of the pupils of Padmanandi was Prabhācandra who is said to have been the author of a celebrated work on Logic. He, thus, appears to be identical with the author of Prameyakamala-martanda and Nyaya-kumuda-candrodaya. This inscription is not dated, but the line extends upto the third generation beyond Kulacandra, and there we find Devakirti Muni who, according to inscription No. 39 (63), attained heaven in 1163 A. D. The immediate successor of Kulacandra Muni was Maghanandi whose lay disciple Nimbadeva Samanta has also found mention in the Sukrabara Basti inscription of Kolhapur as a feudatory of the Silähāra king Gandarādityadeva for whom there are mentions from 1108 to 1136 A. D. Taking all these factors into consideration we may safely conclude that the persons mentioned in the Satprarupana Prasasti flourished probably during the eleventh century A. D. The Kanarese verses being obviously the interpolations of the scribe who may have been the pupil of the last teacher, we might infer that a copy of the Dhavala was made about this period.

The Prasasti found at the end of the Dhavala Ms. throws still more light on the subject. The text of this long Prasasti is partly in Kanarese and partly in Sanskrit, and the Kanarese portion is very corrupt. But the fact that emerges from it prominently is that the Ms. of Dhavala was presented to the famous teacher Subhacandra Siddhāntadeva of the Banniyakere temple on the occasion of the completion of her Srutapancami vow by Demiyakka who was the aunt of Bhujabalaganga Permadideva of Mandali Nadu. Subhacandradeva is said to have belonged to the Desigana. His line begins from Kundakunda, and the other names of teachers mentioned are Griddhapiccha, Balākapiccha, Gunanandi, Devendra, Vasunandi, Ravicandra, Dāmanandi, Viranandi, Sridharadeva, Maladhārideva, Candrakirti, Divākaranandi and, lastly, Subhacandradeva. On scrutinizing these facts in the light of epigraphic references that

are available to us, we find that the Subhacandradeva to whom the Ms. of Dhavala was given is identical with that Subhacandradeva whose death is commemorated in Sravana Belgola inscription No. 45 (117) of 1123 A. D., because the spiritual geneology of Subhacandra as given at the two places agrees entirely. We even find three verses that are common between our Prasasti and the inscription, the numbers of these verses in the inscription being 12, 13 and 21. The Banniyakere temple with which Subhacandradeva, the recepient of the Ms., has been associated, was built, according to Shimoga inscription No. 97 (Ep. Carna. Vol. VII) in 1113 A. D. In this inscription Bhujabalaganga Permadideva, also mentioned in our Prasasti, makes a grant to the temple, and at the close of the record Subhacandradeva of Desigana is praised. Thus, the temple of Banniyakere with which Subhacandradeva was associated was built in 1113 A. D., while he died in 1123 A. D. The Ms. of Dhavala was, therefore, presented to Subhacandradeva by Demiyakka between 1113 and 1123 A. D.

We also get some light about the donor of the Ms. from epigraphic records, Sravana Belgola Inscription No. 49(129) is in commemoration of a lady variously named as Demati, Demavati Devamati and Demiyakka, who is said to have been a pupil of Subhacandradeva of Desigana and to have died by the Jaina form of renunciation on the 11th day of the dark fortnight in Saka 1042 (A. D. 1120). In the inscription the lady is highly eulogised for her four forms of charity which included gifts of shastras or holy books. These mentions leave no doubt in our mind that this lady is the same as the donor of the Dhavala Ms. The date of the gift is, therefore, brought within closer limits i. e. between 1113 and 1120 A D.

The upshot of the above discussion is that we are confronted with three facts about Dhavalā Ms. namely—

- 1. A copy of the Dhavalä was made probably about three generations prior to the death of Devakirti Muni in 1163 A. D., i e. about 1100 A D.
- 2. A Ms. of Dhavalā was presented to Subhacandradeva by lady Demiyakka sometime between 1113 and 1120 A. D.
- 3. A palm-leaf Ms. of Dhavalā making mention of the above fact and indicating fact No. 1 exists at Mudbidri.

The probability in my mind is that it was the present palm leaf Ms. at Mudbidri which was copied by a pupil of Kulacandra and presented by Demiyakka to Subhacandradeva. But the possibility of the object of Demiyakka's gift being a later copy of the first Ms. and the present Ms. being a still more subsequent copy of the second, mechanically reproducing the eulogistic verses and the Praéastis of the former ones, cannot be entirely precluded until the present palm-leaf Ms. at Mudbidri is thoroughly examined from all points of view internally as well as externally.

2. Is Vargana Khanda included in the available Mss. of Dhavala?

The six main divisions of the present work, on account of which it acquired the title of Satkhandagama, were Jivatthana, Khuddabandha, Bandhasamitta-vicaya,

Vedana, Vaggana and Mahabandha. We had already stated in the previous volume that of these six Khandas, the last i. e. the Mahabandha exists in a separate manuscript and is not included in the Mss. of Dhavala which contain all the remaining five Khandas. To this an objection was raised from one quarter that the available Mss. of Dhavala contain not even five, but only the first four Khandas, Vaggana Khanda being also missing from them. This view was based upon a misinterpretation of one text and a wrong reading of another text found at the beginning of the Vedana Khanda and then support was sought for the view by a series of wrong co-relations and a number of allegations against the old reporters like Indranandi and the recent copyist from Mudbidri Ms. These have been critically examined by me from every possible point of view on the basis of all available material, with the result that my previous statements have been fully confirmed. The last word on this subject, as well as on others of a similar nature, however, could only be said when the Mudbidri Mss. have also been thoroughly examined and the whole work has been critically edited.

3. Authorship of the Namokara Mantra

Panca-namokara Mantra is the most sacred formula of Jaina religion. It forms part of the daily prayers of all the Jainas whether Digambara or Svetambara. It has been regarded almost as an eternal revelation and the question of its author-ship was never raised. It is this very formula that forms the benedictory text at the beginning of Jivatthum and the author of Dhavala throws important light upon its authorship. He divides sacred writings into two kinds according as their benedictory text forms their integral part or not. Now, different benedictory texts are found at the beginning of the Jivatthana Khanda and that of the Vedana Khanda. But the author of the Dhavala places the first Khanda in one category and the other in the second category on the clearly stated ground that at the second place the benedictory text was not an integrel part of the writings because it was not the original composition of the author who had merely borrowed it from elsewhere. But he regards the Namokara formula as integrally connected with the Jivatthana. This shows that in the opinion of the author of Dhavala the Namokara formula was the original composition of Puspadanta the author of the Satprarupana which was the first part of Jivatthana.

I tried to pursue the inquiry further and found that in the Svetāmbara Ágama, Ajja Vaira is credited with having interpolated the formula in one of the Mūlasūtras. A survey of the Svetāmbara Paṭṭāvalis and equivalent mentions in the Digambara texts revealed a number of points of contact and of difference between them in the names and dates of various notabilities like Ajja Vaira. Ajja Mankhu or Mangu and Nāgahatthi, associated with this sacred formula and with the study and preservation of portions of the lost canon. But a clarification of these and ultimate conclusions on the points raised must await further investigation and study.

4. A comparative review of the contents of Ditthivada

The twelfth Jaina Srutanga Ditthivada, according to the traditions of both the Digambaras and the Svetambaras, was irretrievably lost. But a brief resume of its

1

contents is found in the literature of both the sects. The Digambara work Saṭkhaṇḍā-gama of Puṣpadanta and Bhūtabali as well as Kaṣāya-pāhuda of Guṇadharācārya are claimed to be directly based upon it. It would, therefore, be interesting to take a bird's eye view of the contents of this most important Jaina Srutāṇga, leading up to the portions that have been preserved.

The Ditthivada was divided into five parts, Parikamma, Sutta. Padhamānioga, Puvvagava and Culia. The Svetambaras place Puvvagaya first and Anuoga, with its subdivisions Mulapadhamānuoga, and Gandianuoga, instead of Padhamānioga, next in the above order. The two schools differ entirely in the matter of the subsections of the first part, Parikamma. The Digambaras name five Pannattis under it, namely, Canda, Sura, Jambudiva, Divasāyara and Viyāha; while the Svetāmbaras count under it seven Seniās, namely, Siddha, Manussa, Puttha, Ogādha, Uvasampajjana, Vippajahana and Cuacua, each of which is again divided into fourteen or eleven sections like Maugapayaim, Egatthiapayaim Atthapayaim, Padhoamasapayaim, Rāsibaddham, Egogunam, Dugunam, Tigunam, Keubhuam, Padiggaho, Samsārapadiggaho, Nandavattam and Siddhavattam, The nature of the subject-matter of these is shrouded in mystery. The Digambara subdivisions, on the other hand, are quite intelligible and their contents are also clearly stated. There is, however, one thing remarkable about the Svetambara subdivision that the first six divisions of Parikamma are said to be in accordance with the Jaina view which recognised four Nayas, while the seventh was an addition of the Ajivikas who recognised three Rasis or Nayas. It appears from this that the Ajivika view-point was also accommodated in the Jaina Agama and that at one time the Jain's recognised only four instead of seven Nayas.

The second division of Ditthivāda was Sutta which, according to the Digambaras, dealt, firstly, with the philosophy of the soul according to their own ideas; and, secondly, with the philosophical theories of others, such as Terāsiya, Niyativāda Saddavāda and the like. They also speak of eightyeight divisions of Sutta of which, they say, the names have been forgotten. The Svetāmbaras mention twentytwo subdivisions of Sutta and point out that they may be studied according to four Nayas, namely, Chinnacheda, Achinnacheda, Trika and Catuska, of which the first and the fourth Nayas are followed by the Jainas, while the second and the third are adopted by the Ájīvikas. In this way, Sutta is shown to possess eightyeight subdivisions. Here again, the mention of the Ajīvika view-point and its accomodation are remarkable.

Padhamānioga division of Ditthivāda, according to the Digambaras, deals with Paurānic accounts. As mentioned before, the Svetāmbaras give the name of this division as Anuoga and subdivide it as Mula-padhamānuoga dealing with the lives of the Tirthamkaras, and Gaṇḍiānuoga dealing with the lives of Kulakaras and other distinguished persons in separate sections (Gaṇḍikās). Amongst these the account of the Citrāntara Gaṇḍikā is very astonishing and staggering.

Puvvagaya was the most imporant division of Ditthivada because its fourteen subdivisions, known as Puvvas, contained, in fact, all the essential wisdom of the

Tirthamkaras. There is no substantial difference in the name or in the nature of the contents of the fourteen Puvvas in the Digambara and the Svetāmbara accounts of them, except that the eleventh Puvva is called Kallāṇa by one and Avanjham by the other, while there is also some difference in the extent (number of padas) of the twelfth Puvva, Pāṇāvāya. Both schools agree that some studied the entire Sruta while others stopped at the tenth l'uvva. This view, in a way, shows the significance of placing Anuoga or Padhamānuoga before Puvvagaya, for, otherwise, those that stopped at the tenth Puvva could have no knowledge of Anuoga.

The fifth and the last division of Ditthivada is Culia, which, according to the Digambara school, dealt with the sciences pertaining to Jala, Sthala, Maya, Rupa and Akasa The other school has no account of the Culikas to give except that they were appendexes of the first four Puvvas and that their number was, in all, thirtyfour. But if they were appended to the Puvvas, it remains unexplained why a separate division for them was thought necessary.

The Puvvas are said to have been divided into Vatthus and each Vatthu was subdivided into twenty Pahudas, their total number, according to the Digambara school, being 195 and 3900 respectively. The Kammapayadi-Pahuda, of which the subject-matter has been preserved with all its twentyfour Adhikaras, in the Saṭkhaṇḍāgama, was one of the 280 Pahudas included in the second Puvva Aggeṇiyam Similarly, the Kaṣāya-Pāhuḍa of Guṇadharacarya is based upon one of the Pahuḍas included in the fifth Puvva Nāṇapavāda. Nothing corresponding to these portions in age and subject-matter is yet found in the Svetambara literature.

5. Subject-matter, language and style.

This volume is entirely devoted to the specification of the various soul qualities under different stages of spiritual advancement and under various conditions of life and existence, which have already been dealt with, in a general way, in the first volume. It is entirely the work of the commentator Virasena who takes his stand upon the foregone Sutras; but the idea of the twenty categories that form the basis of his treatment here is borrowed from elsewhere. He starts by quoting an old verse which names the twenty categories. The earliest work where we find the treatment of the subject under the same twenty categories is the Tiloya--paṇṇatti. It is, however, still a matter for investigation as to who started the idea of the twenty categories first.

We have tabulated the numerical specifications on each page in order to show the subject at a glance and facilitate reference, and the number of tables is in all 546. The various divisions and subdivisions leading to this high number would become clear by a glance at the table of contents.

The language is throughout Prakrit except for a few Sanskrit passages in the beginning, and by the very nature of the subject-matter which consists mostly of enumeration, the style is very indifferent to grammatical forms. In the enumerations

of the soul-qualities words have frequently been used without inflections. In fact, abbreviated forms with dots are also met with all over in the Mss. But since the Mss. used by us were not uniform on the point, we preferred to give the fuller forms, and have also taken the liberty to complete the enumerations where omissions in the Mss. were obvious But we have not attempted to make the words inflected for fear of changing the entire character of the author's style which is so natural in its own way under the circumstances.

The number of older verses found quoted in this volume is thirteen, all in Prakrit. One of them (No. 228, on page 788) is said to have been taken from 'Pindia's work which is otherwise unknown.

As before, I have, in this brief survey, avoided details which the interested reader would find in the Hindi translation.

१ ताड्पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय

सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति

धवल सिद्धान्तकी प्राप्त हस्तिलिखित प्रतियोंमें सत्प्ररूपणा विवरणके अन्तमें निम्न कनाड़ी पाठ पाया जाता है³—

संततशांतभावनदः पावनभोगनियोग वाकांतेय चित्तवृश्वियछविं नछछंदनं गरूपं त्रिदं गर्जं 'ध्यिरिपोगेज सोझतपद्मणंदिसिद्धांतमुनींद्रचन्द्रजुदयं बुधकेरवषंडमंडनं मंतणभेणोसुद्गुणगणक भेदवृद्धि अनन्तनोन्तं वाक्कांतेय चित्तवछीय पद्धिण 'दर्पंबुधाछि हृस्सरोजांतररागरंजितदिनं कुछभूषण 'दिष्यसैद्धांन्त-मुनींद्रचुण्वर्वछयशोजंगमतीर्थमछर्हं संततकाछकायमतिसञ्चरितं दिनदिं दिनके वीर्यं तउतिहंदुइय वियम-इंगेमेयो छातवविद्वमोहदाहं तवे कंतु मुन्तुगिदे सञ्चरित कुछचन्द्रदेवसैद्धान्तमुनीन्द्रक्षितयशोज्वछजंगमवीर्यं-मछ्कं

मैंने यह कनाड़ी पाठ अपने सहयोगी मित्र डाक्टर ए. एन्. उपाध्याय प्रोफेसर राजाराम कालेज कोल्हापुर, जिनकी मातृभाषा भी कनाड़ी है, के पास संशोधनार्थ मेजा था। उन्होंने यह कार्य अपने कालेजके कनाड़ी भाषाके प्रोफेसर श्री. के. जी. कुंदनगार महोदयके द्वारा करा कर मेरे पास भेजनेकी कृपा की। इसप्रकार जो संशोधित कनाड़ी पाठ और उसका अनुवाद मुझे प्राप्त हुआ, वह निम्न प्रकार है। पाठक देखेंगे कि उक्त पाठ परसे निम्न कनाड़ी प्य सुसंशोधित- कर निकालनेमें संशोधकोंने कितना अधिक परिश्रम किया है।

8

संततशांतभावनेय पावनभोगनियोग (वाणि) वा-क्रांतेय चित्तवृत्तियोलिं नल (विं गड मोहनां) गरू-पं तळेदं गडं प्रचुरपंकजशोभितप्राणंदिसि-द्धान्तमुनीन्द्रचंद्रनुद्यं हुधकैरवषंडमंडनम् ॥ १ ॥

2

मंत्रणमोक्षसद्गुणगणाब्धिय वृद्धिगे चंद्रनंते वा-क्कांतेय चित्तवश्चिपद्पंकजदस्बुधालिह्नस्सरो-जांतररागरंजितमनं कुलुभूषणदिब्यसेब्यसे-द्धांतमुनीन्द्ररूजितयशोज्वस्त्रजंगमतिर्थकस्परः॥ २॥

१ प्राप्त प्रतियों में इस प्रशस्तिमें अनेक पाठमेद पाये जाते हैं । यहां पर सहारनपुरकी प्रतिके अनुसार पाठ रखा गया है जिसका मिलान हमें वीरसेवा मंदिरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी मुख्तारके द्वारा प्राप्त हो सका । केवल हमारी अ. प्रतिमें जो अधिक पाठ पाये जाते हैं वे टिप्पणमें दिये गये हैं । २ अनन्तकानोन्त । ३ पदिप्पणनदर्ष्प । ४ प्रहृत् । ५ दिव्यसेव्य । ६ तीर्धदमञ्चयस्य । ७ मञ्चरूहरू ।

3

संवतकालकायमितसभारितं दिनदिं दिनके वी-यं तलेदंदु मिक नियमंगलनांतुविवेककोधदेा-हं तवे कंतु मन्युगिदे सभारितं कुलचन्त्रदेवसै-दांतमुनीन्द्रकृजितयशोज्वलजंगमतीर्थंक्द्रवम् ॥ ३ ॥

इसका हिन्दीमें सारानुवाद हम इसप्रकार करते हैं-

8

श्रीपद्मनिद् सिद्धान्तमुनीन्द्ररूपी चन्द्रमाका उदय विद्वद्गणरूपी कुमुदिनी समूहका मंडन था। वे प्रफुल्छ कमछके समान सुशोभित थे, तथा उनके मनमें निरंतर शान्त भावना और पावन सुख-भोगमें निमग्न सरस्वती देवीका निवास होनेसे वे सहज ही सुंदर शरीरके अधिकारी हो गये थे।

२

वे दिव्य और सेव्य कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र अपने ऊर्जित यशसे उज्वल होनेके कारण जंगम तीर्थके समान थे। मंत्रण, मोक्ष और सद्गुणोंके समुद्रको बढ़ानेमें वे चन्द्रके समान थे, तथा सरस्वती देवीके चित्तरूपी बह्छीके पदपंकज (के निवास) से गर्वयुक्त बिद्दत्समुदायके इदयकमल्लके अंतर रागसे उनका मन रंजायमान था।

3

ऊर्जित यशसे उज्वल कुलचन्द्र सद्धान्तमुनीन्द्रका उद्भव जंगमतीर्थके समान था। निरन्तर कालमें काय और मनसे सच्चारित्रवान्, दिनोदिन शक्तिमान् और नियमवान् होते हुए उन्होंने विवेकबुद्धिद्वारा ज्ञान—दोहन करके कामदेवको दूर रखा। यह सच्चारित्र ही कामदेवके क्रोधसे वचनेका एकमात्र मार्ग है।

इसप्रकार इन तीन कनाड़ी पद्योंकी प्रशस्तिमें क्रमशः पद्मनिद् सिद्धान्तमुनीन्द्र, कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र और कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रकी विद्वत्ता, बुद्धि और चारित्रकी प्रशंसा की गई है। पर उनसे उनके परस्पर सम्बन्ध, समय व धवलग्रंथ या उसकी प्रतिसे किसी प्रकारके संम्बन्धका कोई ज्ञान नहीं होता। अतएव इन बातोंकी जानकारिके लिए अन्यत्र खोज करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

श्रवणवेल्गुलके अनेक शिलालेखोंमें पद्मनिन्दि मुनिके उल्लेख आये हैं। पर सब जगह एक ही पद्मनिन्दिसे ताल्पर्य नहीं है। उन लेखोंसे ज्ञात होता है कि मिन्न भिन्न कालमें पद्मनिन्दि नाम व उपाधिधारी अनेक मुनि आचार्य हुए हैं। किन्तु लेख नं ४० (६४) में हमारे प्रस्तुत पद्मनिन्दिसे अभिप्राय खनेवाला उल्लेख ज्ञात होता है, क्योंकि, उसमें पद्मनिन्दि सैद्धान्तिकके

5

शिष्य कुछभूषण और उनके शिष्य कुछचन्दका भी उल्लेख पाया जाता है। वह उल्लेख इसप्रकार हैं-

अविद्धकणीदिकप्रमानन्त्री सैद्धान्तिकाक्योऽजनि यस्य छोके । कौमारदेवव्रतिताप्रसिद्धिजीयासु सो ज्ञाननिधिः सधीरः ॥ तिष्ठिष्यः कुल्लभूषणाख्ययतिपश्चारित्रवारांनिधि-स्सिद्धान्ताम्बुधिपारगो नत्तिवेनेयस्तस्सधर्मो महान् । शब्दाम्भोरुहभास्करः प्रथितत्तकंप्रथकारः प्रभा-चन्द्राख्यो सुनिराजपंडितवरः श्रीकुण्डकुन्दान्वयः॥ तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेहिशष्यो विनेयस्तुत-स्सद्वृत्तः कुल्जचनद्वदेवसुनिपस्सिद्धान्तिवद्यानिधिः।

यहां पद्मनिद्द, कुल भूषण और कुलचन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उल्लेख है। पद्मनिद्दको सैद्धान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुल भूपणको चारित्रवारांनिधिः और सिद्धान्ताम्बुधिपारग, तथा कुलचन्द्रको त्रिनेय, सद्वृत्त और सिद्धान्तिवद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके धवला—प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे अभिन होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखद्वारा पद्मनिद्दके गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविद्यकर्ण थे अर्थात् कर्णच्लेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत बालपनमें वे दीक्षित होगये थे और इसलिए कौमारदेवत्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दाम्भोरुहभास्कर और प्रयित तर्कप्रन्थकार थे।

इसी शिळाळेखसे इन मुनियोंके संघ व गण तथा आगे पीछेकी कुछ और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है। छेखमें गौतमादि, भद्रबाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनिद, कुन्दकुन्द, उमास्वाति गृद्धिपच्छ, उनके शिष्य बलाकिपच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद्र, फिर देवनिद जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलंकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्तातिके उत्पन्न करनेवाले मूलसंघमें फिर निद्रगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया। इस गणमें गोल्लाचार्य नामके प्रसिद्ध मुनि हुए। ये गोल्लदेशके अधिपति थे। किन्तु, किसी कारण वश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण करली थी। उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अविद्धकर्ण पद्मनिद सैद्धान्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूलसंघ निद्गणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं।

छेखमें पद्मनिद, कुळभूषण और कुळचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है:—

कुलचन्द्रदेवके शिष्य माघनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्लापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्यापित किया। वे भी राद्धान्तार्णवपारगामी और चारित्रचन्नोश्वर थे, तथा उनके श्रावक शिष्य थे सामन्त केदार नाकरस, सामन्त निम्बदेव और सामन्त कामदेव। माघनन्दिके शिष्य हुएगंडिमुक्तदेव, जिनके एक छात्र सेनापित भरत थे, व दूसरे शिष्य भानुकीर्ति और देवकार्ति।
गंडिमुक्तदेवके सधर्म भूतकीर्ति त्रैविद्यमुनि थे, जिन्होंने विद्यानोंको भी चमत्कृत करनेवाछे
अनुक्रोम—प्रतिक्रोम काव्य राघव—पांडवीयकी रचना करके निर्मष्ट कीर्ति प्राप्त की थी
और देवन्द्र जैसे विपक्ष वादियोंको परास्त किया था। श्रुतकीर्तिकी प्रशंसाके ये दोनों पद्य
कनाड़ी काव्य पम्परामायणमें भी पाये जाते हैं। विपक्ष सद्यान्तिकसे संभव है उन्हीं देवेन्द्रसे
तात्पर्य हो, जिनके विषयमें श्वेताम्बर प्रन्थ प्रभावकचिरतमें कहा गया है कि उन्होंने वि० सं०
११८१ में दि० आचार्य कुमुदचन्द्रको वाद में परास्त किया था। इन्हींके अग्रज (सधर्म)
थे कनकनिन्द और देवचन्द्र। कनकनन्दिने बौद्ध, चार्वाक और मीमांसकों को परास्त किया
था, और देवचन्द्र भद्याकोंके अग्रणी तथा वेताल झोहिंग आदि भूत पिशाचोंको वशीभूत
करनेवाले बड़े मंत्रवादो थे। उनके अन्य सधर्म थे माधनन्दि त्रैविद्यदेव, देवकीर्त्ति पंडितदेवके
शिष्य श्रुभचन्द्र त्रैविद्यदेव, गंडिबमुक्त वादिचतुर्मुख रामचन्द्र त्रैविद्यदेव और वादिवज्रांकुश
अकलंक त्रैविद्यदेव। गंडिबमुक्तदेवके अन्य श्रावक शिष्य थे माणिक्य भंडारी मिरियाने दंडनायक,
महाप्रधान सर्वाधिकारी ज्येष्ठ दंडनायक भरतिमध्य हेगडे बृचिमस्यंगस्त और जगदेकदानी
हेगडे कीरय्य।

इन उल्लेखोंसे हमें प्रमनिद फुलभ्षणके संघ व गणके अतिरिक्त उनकी पूर्वापर धु-विद्यात, विचक्षण और प्रमावशाली गुरुपरम्पराका अच्छा ज्ञान हो जाता है। तथा, जो और भी विशेष बात ज्ञात होती है, वह यह कि, हमारे प्रमनिद्के एक और शिष्य तथा कुलभ्षण सिद्धान्तमुनिके सधर्म जो प्रभाचन्द्र 'शब्दाम्भोरुहभास्कर ' और प्रथित-तर्कप्रन्थकार ' पदोंसे विभूषित किये गए हैं; वे संभवतः अन्य नहीं, हमारे सुप्रसिद्ध तर्कप्रन्थ प्रमेयकमलमार्तण्ड और न्यायकुमुदचन्द्रके कर्त्ता प्रभाचन्द्राचार्य ही हों।

यह गुरु परम्परा इस प्रकार पाई जाती है: --

गौतमादि
(उनकी सन्तानमें)
भद्रबाहु
|
चन्द्रगुप्त
(उनके अन्वयमें)
पद्मनिद्द कुन्दकुन्द
(उनके अन्वयमें)

उमास्वाति गृद्विपच्छ बलाकपिच्छ (उनकी परम्परामें) समन्तभद्र (उनके पश्चात) देवनंन्दि, जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद (उनके पश्चात्) अक्लंक (उनके पश्चात् मूलसंघ, नन्दिगणके देशीगणमें) गोल्लाचार्य त्रैकाल्य योगी पद्मनन्दि कीमारदेव प्रभाचन्द्र कुलभूषण कुलचन्द्र माघनन्दिम्नि (कोल्लापुरीय) कनकनन्दि देवचंद्र, माधनन्दि त्रैतिचदेव, देवकीर्ति पं. दे. के शिष्य शुभचंद्र त्रै. दे., रामचंद्र त्रै. देव. भानुकीर्ति देवकीर्ति

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि उक्त प्रानान्द आदि आचार्य किस कालमें उत्यन हुए ! जिस उपर्युक्त शिलालेखमें उनका उल्लेख आया है, उसमें भी समयका उल्लेख कुछ नहीं पाया जाता । किन्तु वहां उस लेखका यह प्रयोजन अवश्य बतलाया गया है कि महामंडलाचार्य देवकीर्ति पंडितदेवने कोल्लापुरकी रूपनारायण वसदिके अधीन केल्लंगेरेय प्रतापपुरका पुनरुद्धार कराया था, तथा, जिननाथपुरमें एक दानशाला स्थापित की थी । उन्हीं अपने गुरुकी परोक्ष विनयके लिए महाप्रधान सर्वाधिकारी हिरिय मंडारी अभिनव—गंग—दंडनायक श्री हुल्लराजने उनकी निषद्या निर्माण कराई । तथा गुरुके अन्य शिष्य लक्खनंदि, माधव और त्रिमुवनदेवने महादान व पूजामिषेक करके प्रतिष्ठा की । हुल्लराज अपरनाम हुल्लप वाजिवंशके पक्षराज और

छोकाम्बिकाके पुत्र तथा यदुवंशी राजा नारसिंहके मंत्री कहे गए हैं। इन यादव व होव्सळवंशीय राजा नारसिंह तथा उनके मंत्री इल्ळराज या इल्ळपका उल्ळेख अन्य अनेक शिलालेखोंमें भी पाया जाता है, जिनसे उनकी जैनधं में श्रद्धाका अच्छा परिचय मिळता है। (देखो जैन शिलालेख संप्रह, भू. पृ. ९८ आदि)। पर उक्त विषय पर प्रकाश डालनेवाला शिलालेख नं० ३९ है जिसमें देवकीर्तिकी प्रशस्तिके अतिरिक्त उनके स्वर्गवासका समय शक १०८५ सुमानु संवत्सर आषाद शुक्त ९ बुधवार सूर्योदयकाल बतलाया गया है, और कहा गया है कि उनके शिष्य छक्खनंदि, माधवचन्द्र और त्रिमुवनमळुने गुरुमिकिसे उनकी निषदाकी प्रतिष्ठा कराई।

देवकीर्ति पद्मनिन्दिसे पांच पीढी, कुलभूषणसे चार और कुलचन्द्रसे तीन पीढी पश्चात् हुए हैं। अतः इन आचार्योको उक्त समयसे १००-१२५ वर्ष अर्थात् शक ९५० के लगमग हुए मानना अनुचित न होगा। न्यायकुमुरचन्द्रकी प्रस्तावनाके विद्वान् लेखकने अल्पन्त परिश्रमपूर्वक उस प्रन्यके कर्ता प्रमाचन्द्रके समयकी सीमा ईस्वी सन ९५० और १०२३ अर्थात् शक ८७२ और ९४५ के बीच निर्धारित की है। और, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, ये प्रमाचन्द्र वे ही प्रतीत होते हैं जो लेख नं० ४० में पद्मनिन्दिके शिष्य और कुलभूषणके सधर्म कहे गए हैं। इससे भी उपर्युक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है। उक्त आचार्योक कालनिर्णयमें सहायक एक और प्रमाण मिलता है। कुलचन्द्रमुनि के उत्तराधिकारी माधनन्दि कोल्लापुरीय कहे गये हैं। उनके एक गृहस्य शिष्य निम्बदेव सामन्ते का उल्लेख मिलता है जो शिलाहार नरेश गंडरादिल्यदेवके एक सामन्त थे। शिलाहार गंडरादिल्यदेवके उल्लेख शक्त सं. १०३० से १०५८ तक के लेखोंमें पाये जाते हैं। इससे भी पूर्वोक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है।

पद्मनिद आदि आचार्योंकी प्रशस्तिके सम्बन्धमें अब केवल एक ही प्रश्न रह जाता है, और वह यह कि उसका धवलाकी प्रतिमें दिये जानेका अभिप्राय क्या है ! इसमें तो संदेह नहीं कि वे पद्म मुडिविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिमें हैं और उन्हींपरसे प्रचलित प्रतिलिपियोंमें आये हैं । पर वे धवलाके मूल अंश या धवलाकारके लिखे हुए तो हो ही नहीं सकते । अतः यही अनुमान होता है कि वे उस ताड्पत्रवाली प्रतिके लिखे जानेके समय या उससे भी पूर्वकी जिस प्रति परसे वह लिखी गई होगी उसके लिखनेके समय प्रक्षिप्त किये गये होंगे । संभवतः कुलभूषण या कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनिकी देख-रेखमें ही वह प्रतिलिपि की गई होगी । यदि विद्यमान ताड्पत्र की प्रति लिखनेके समय ही वे पद्म डाले गये हों, तो कहना पड़ेगा कि वह प्रति शककी दशवीं

१. जैन शिलालेखसंग्रह, लेख नं. ४०

^{3.} Sukrabara Basti Inscription of Kolhapur, in Graham's Statistical Report on Kolhapur.

न्यायक्रस्यच्य, भूमिका पू. ११४ आहि.

शतान्दिके मध्य भागके लगभग लिखी गई है। इन्हीं प्रतियों में सहीं एक और कहीं दोके प्रशस्थात्मक पद्य धवलाकी प्रतिमें और भी बीच बीचमें पाये जाते हैं जिनका परिचय व संप्रह आगे यथावसर देनेका प्रयत्न किया जायगा।

धवलाके अन्तकी प्रशस्ति

मूड़िबद्रीकी ताड़पत्रीय प्रतिके प्रसंगमें हमारी दृष्टि स्वमावतः धवलाकी प्राप्त प्रतियोंके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्ति पर जाती है। धवलाके अन्तमें धवलाकार वीरसेनाचार्यसे सम्बंध रखनेवाली वे नो गाथाएं पाईं जातीं हैं जिनको हम प्रथम मागमें प्रकाशित कर चुके हैं। उन गाथाओंके पश्चात् निम्न लम्बी प्रशस्ति पाई जाती है, जिसके कनाड़ी अंश पूर्वोक्त प्रो. कुंदनगार व प्रो. उपाध्याय द्वारा बड़े परिश्रमसे संशोधित किये गये हैं।

१

शब्दब्रह्मोति शाब्दैर्गणधरमुनिरित्येव राख्यम्तविद्धिः, साक्षाःसर्वेज्ञ एवेःयभिहितमतिभिः सूक्ष्मवस्तुप्रणीतः । यो दृष्टो विद्वविद्यानिधिरिति जगित प्राप्तमष्ट्रारकाख्यः, स श्रीमान् वीरसेनो जयित परमतध्वान्तभित्तन्त्रकारः ॥ १ ॥

ą

श्रीचारित्रसमृद्धिमङ्कविजयश्रीकर्मविच्छित्तपूर्वकं ज्ञानावरणीयमुखनिर्नाशनं भूचक्रेशं वेसकेच्ये संदर्भमुनिवृन्दाधीववरर्क्कन्दकुन्दाचार्थर्धतधेर्य । गर्यतिथिने (?)] नाचार्यरोळवर्यरु जितमद्विनिर्गतमञ्ज्वीतुरं-गुळचारणद्भिनिरतर्गणधर िरेरेकै तिंगे (?)] गुगगणधरर यतिपतिगणधररेनिसिद कुँद्कुन्दाचार्यर्। अवरन्तय-दोळ् सिद्धान्तविद्दर्भा करणवेदिगळ् षट्त केप्रवणिद्धिसिद्धसंजुत्तपिस्तुत्तरप्य गृष्टिपच्छाचार्यधेर्यपरनैंगर्दगांभीर्य-गुणोद्धिगळुचितशमद्मयमताव्यर्थरेने गृद्धिंच्छाचार्यर शिष्यर्थलाकविच्छाचार्यगुणनन्दिपंडितनिज्ञगुणनन्दि-पंडितजनंगळं मेश्विसि मैगुणद् पेसरेसेथे विद्वद्गणतिलक्ष्मिकलम्ननीन्द्रशिष्यर्षदार्थदोळर्थशास्त्रदोळ् विनागम-दोळु तंत्रदोळु महाचरितपुराणसंततिगळोळ परमागमदोळ पेरसीमं दोरे सरि पाटिपासटि समानमेनल् कृत-गुणनन्दिपण्डितशिष्याचितितविद्रगी विद्यरारेनित्तरे ब्रघ होटिसंदर्भवीतळहोळ । सुनुर्वराशिष्यरोळ तपश्चरणसिद्धान्तपारायणरेणिकेगोळक्कपेतिर्वर्तपोविच्छिक्चानंगरेथी महिमेथिनेसदेवीधियेतंतुदारस्वंच्छदिनकर-किरणमे बेळगे देवेन्द्रसिद्धान्तरु ॥ अन्तुनेगर्तेवेश्ववर शिष्यकदम्बक्रदोळ् समस्तसिद्धान्तमहापयोनिधियेनिसि तडंबरेगं तपोबलाकान्तमनोजरागि मदवर्जितरागि पोगर्तेवेत्तराशांतं नेगर्दं कीर्त्ति वसुनन्दिम्नीन्द्ररदात्तवृत्ति-विनुद्धिगे कलाधरं पुट्टिद्ने-तवर्गे शिष्यरादर् गुणदोळेदडे रविचंद्रसिद्धांतदेवरेंबर् जगद्विशेषकचरितर् । अंतु द्यावनीधरकृतोद्यनाद्शशांकनिंदे शार्वरिं गित्तु धरातलमं मत्ते दुर्णयप्तान्तविद्यातमागिरे तदुःअवरि सके पूर्णचन्द्रसिद्धान्तम्नीन्द्र निगदितान्तप्रतिशासनम् जैनशासनम् ॥

[🤋] अ. प्रतिमें ' शार्वरिकपराविगितु ' ऐसा पाठ है।

इन्दु शरदद बेळ् दिंगळ् पुदिवुदु देसेदेसेथोळोनेप जसदोळपं ताळिद दामनिन्दिसिद्धान्तदेवर-वरप्रशिष्यरिधगततस्वर् ।

शान्ततेवेत्तिका जनोळाद विरोधिमिदेत ? निस्पृहर् ।
स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळितु नेग ळते वेत्तिदा ॥
नींतन [रिन्मरा (?)] रेने [जन्य ?] जिनेन्द्रवीरनिन्दिसद्धान्तमुनीन्द्रेरं सुचिरितक्रमदे।ळू विपरीत चृत्तरी ॥
बोधितभव्यरचित-वर्धमान श्रीधरदेवरेंबर वर्गप्रतन्भवरादरा...।
श्रीधरर्गादशिष्यरवरोळनेगळ्दर् मळधारिदेवरं श्रीधरदेवरं ॥
नतनरेन्द्रिकरीटतदार्चितकमर् अनुवशनागि वर्षनेनगांबुरुहोदरनोदे पृविनं ।
विनोळे बसक्के बंदने भवं जळजासननेत्रमीनके ॥
तन मनकं...............' करीन्द्रमदोद्धत नध्य चित्तज— ।
नमनेन्छ [दोरलन्मने ?] नेमिचन्द्रमळधारिदेव [रंतेरेयेन ?] ॥

श्रुतधर [बिलात्तिने ?] मेर्यनोमेंथुं तुरिसुबुदिल्ल निहेवरेमर्गुलनिक्कृषुदिल्ल वागिलं किस्तेरे युबुदिल्ल गुर्वदिल्ल (महेन्द्रजु) नेरे [ओण ?] बण्जिसल् गुणगणावलियं मलधारिदेवरं ॥

आमरुपारिदेवसुनिमुख्यर शिष्यरोळश्राण्यक्विमहित [र्कवायपुर्व ?] जितकपायक्रोध रे ले:भमान-मायामदवर्जितनैगर्दरिन्दुमरीचिगळंद्र (दिं ?) यशः श्री नेमिचन्द्रकीर्तिसुनिनाथक्दात्तचरित्रवृत्तिथि ॥ मरुपारिदेवरिंदं । बेळगिदुदु जिनेन्द्रशासनं मुक्तं निर्मलमागि मत्तमीगळ् । बेळगिद्युदु चन्द्रकीर्तिभद्वारकिं ॥

> बेळगुव कीर्तिचंद्रिके सृदृ।क्तिसुधारसपूर्णसूर्तयो ळूबेळेदमलं पोददं सितलांछनमागिरे चन्द्रनंदमं ॥ तळेदु जनं मनंगोळे दिगंतरविकसितो— ज्वलक्षुभचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरिदें विबुधाभिवंद्यरो ॥

(पियं रं?) प्रसरिकरणारातीय चन्द्रकीर्तिमुनोद्धराशांतवर्त्तिकीर्त्तिगळ् मुनिष्ट्-द्वंदितराद्दरा. शांतिचित्तर शिष्यरादिदेवाकरणंदिसिद्धान्तदेविरदें जिनागमवाधिपारगरादरी । इदाबुदिरदेंदिकिकेय्दु सिद्धान्तवारिधिय तळदेवंदरंदोडानेन्गुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणंदिसिद्धांतदेवराखिष्ठागममक्तरमार्गमंतिम-सुधांबुप्रचुरप्रनिकरं व्याख्यानघोपं मरुखलितोतुंगतरंगधोपमेने मिकौदार्यदि दोषनिर्मेलधर्मामृतदिन-संकरिसि गंभीरखमं ताळ मृवलयके पवित्रशागि नेगळ्दरा सिद्धान्तररनाकरर् ॥ अवरम्रशिष्यर्

मरेदुमदोम्भे लोकिकद्वातेयनाडद केत्तबागिलं । तेरेयद भानुवस्तमित्तभागिरेपोगद मेथ्यनोम्मेयुं ॥ तुरिसदकुक्कुटासनके सोलद गंडविमुक्तवृत्तियं । मरेयदघोरदुश्वरसपश्चरितं मळघारिदेवर ॥ अवरग्रशिष्यर

ş

श्रीदः श्रीगणवाधिवधंनकरश्चन्द्रावदातोल्वणः स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिनः पुत्रः पवित्रो भुवि ।

१ अ. प्रातिमें यहां 'तत्तदिवप्रकर ' ऐसा पाठ है।

२ स. प्रतिमें ' गुर्वजितकवायकोध ' इतना पाठ नहीं है।

सद्भैंकशिखामणिर्जितपतेर्भव्येकचिन्तामणिः स श्रीमान् ग्रुभचन्द्रदेवसुनिपः सिद्धान्तविद्यानिषिः ॥१॥

ર

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसस्ताक्षींस्लसस्तंभके (?) साहित्यस्यधिकाश्मभित्तिचिते (?) ज्योतिर्मये मंद्रले । सद्रत्तत्रयमूलरत्नकल्यो स्याद्वादहर्म्यं मुदा, यो (?) देवेन्द्रसुराचितैदिविषदैस्सद्विविरेजुस्तु (?) तत् ॥ २ ॥

3

देवेन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्रपादपंकेजशृंगः घुमचन्द्रदेवः । यदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हुतुँमछं समर्थः॥ ३॥

8

परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेंदी । धरे वण्णिसुगुं गुणगणधररं ग्रुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥

Eq

श्रीमजिनेन्द्रपद्पप्रपरागतुङ्गः श्रीजेनशासनसमुद्रतवार्धिचन्द्रः । सिद्धान्तशास्त्रविहिताङ्कितदिब्यवाणी धर्मप्रबोधमुङ्करः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥

٤

चित्तोद्भूतमदेभकन्दद्छनप्रोःकण्ठकण्ठीरवो भग्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विद्वजनानन्दकृत् । स्थेयाःकुनद्दिमेनदुनिर्मलयशोवलीसमालम्बनः स्तम्भः श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तरःनाकरः ॥ ६॥

S

कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातमिस्रे विकसितसुनितश्वे सजानानन्दवृते । विदित्तविमळनानासःकलान्विद्धमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्वाजतेऽयस् ॥ • ॥

1

दिग्दंतिदन्तान्तरवर्त्तिकीर्षिः रश्नत्रयाकंकृतचारुमूर्तिः । जीयाचिरं श्रीग्रभचन्द्रदेवो भन्यान्जिनीराजितराजद्वंसः ॥ ८॥

9

श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणज्योतिस्धोतितांब्रिः, भन्याम्भोजातजातप्रमद्करनिधिस्त्यक्तमायामयादिः । इत्यत्कन्दर्पदर्पप्रवल्तिगिलितस्त्र्णितस्रार्यशस्यः, जीयाजैनान्जभास्वाननुपमविनयो नोत्तसिद्धान्तदेवः (?) ॥ ९ ॥

१०

जीयादसावनुषमं श्रुभचन्द्रदेवो भावोज्जवोज्जवविनाशनसूळमंत्रः । निस्तन्द्रसान्द्रविबुधस्तुतिभृरिपात्रं त्रैळोक्यगेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

88

मूर्चिश्शमस्य नियमस्य विनृतपात्रं क्षेत्रं श्रुतस्य यशसोऽनवजन्मसूत्रिः । सूवि मृतश्रितवतासुरभोजकस्पानक्षायुधाविवसताष्क्रभचन्त्रदेवः ॥११॥ स्वितः श्रीसमस्तगुणगणालंकृतसत्यशौचाचारचारचारचित्रनयशीलसंपशेयुं विद्वध्यप्रसन्नेयुं नाहाराभयभैषण्यशास्त्रदानिवनोदेयुं गुणगणाव्हादेयुं जिनस्तवनसमयसमुच्छिलतिद्वयगःधवन्पुरगंधोस्कपवित्रगात्रेयुं गोत्रपवित्रेयुं सम्यक्तवच्दामणियुं मण्डलिनादश्रीभुजवलगंगपेमांडिदेवरचेयस्मप् रिवदेवि
(?) यकं श्रुतपंचित्रयं नोंतुज्जवणेयानाडवित्रयक्षेरेयुतुंगचैत्यालयदाचार्यरं भुवनविख्यातरुमेनिसिद्तम्म
गुरुगालु श्रीद्युप्तव्यात्र्यात्रेयं भृतपूज्यं माडि वरियिसि कोष्ट धवलेयं पुस्तकं मंगलमहा ॥
श्रीकुपणं (कोषणं) प्रसिद्धपुरमापुरदोळगे वंशवाधि शोभाकरम् जितं निखलसाक्षारिकास्यविलासदर्पणं ।
नाकजनायवंग्रजिनपादपयोरुद्देश्वक्रनेन्दु भूलोकमेदं वर्णिपुदु जिल्लमनं मनुनीतिमार्गनं ।
जित्रपदपद्माराधकमनुपमविनयांबुराशिदानिधनोदं मनुनीतिमार्गनस्तीजनदूरं लीकिकार्थदानिगजिलम् ।
वारिनिधियोळगेमुत्तम् नेरिद्वं केंड् कोरेदु वरुणं मुद्दिं भारतियकोरळोळिकिद्दहारमननुकरिसछेसवरेवों जिल्लम्॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और संभवतः स्वलन-प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कनाड़ी दोनों पाये जाते हैं। विना मूड़िबदीकी प्रतिके मिळान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतित होता है। लिपिकारोंने कहीं कहीं कनाड़ीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पड़ता है जिससे बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होगई है। उदाहरणार्थ—कर्ता एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको बिद्धान् संशोधकोंने खूब संभाला है। पर कई स्वलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कनाड़ी पद्य भी बहुत श्रष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये हैं जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बाते स्पष्टतः समझमें आती है:—

- १. धवलाकी प्रति बिकायकेरे चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य ग्रुभचन्द्र सिद्धान्तदेवको समर्पित की गई थी।
- २. शुमचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरंपरामें उनसे पूर्व कुन्दकुन्द, गृद्धिष्छ। बलाकिष्छ, गुणनिन्द, देवेन्द्र, बधुनान्दि, रिवचन्द्र, दामनिन्दि, वीरनिन्दि, श्रीधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनिन्द आचार्य हुए।
- ३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडिलनाडुके भुजबलगंगपेमीडिदेवकी काकी देमियकने श्रुत-पंचमी त्रतके उद्यापनके समय किया था।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरंपरा परसे उनका पता लगाना बुलम हो गया । उक्त परम्परा, एक दो नामों के कुछ भेदके साथ प्रायः वहीं है, जो श्रवणबल्गुलक शिलालेख नं. ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद ज्योंके ल्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्य नं.१२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है—

वाणाम्भोधिनभइशशांकतुखिते जाते शकाब्दे ततो वर्षे शोभकृताद्भये ब्युपनते मासे पुनः आवणे। पक्षे कृष्णविपक्षवर्तिनि सिते वारे दशम्यां तिथी स्वर्यातः शुभचन्द्रदेवगणसृत् सिद्धांतवारांनिषिः॥

अर्थात् शुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्क १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ। उनकी निषद्या पोय्सल-नरेश विष्णुवर्धनके मंत्री गंगराजने निर्माण कराई थी।

शिमोगसे मिले हुए एक दूसरे शिलालेखमें बिन्नयकेरे चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं० १०३५ दिया हुआ है और उसमें मन्दिरके लिये मुजबलगंगपेमीडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है। अन्तमें देशीगणके शुभचंद्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है। (एपी- प्राफिआ कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख नं० ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली श्राविका देमियकका पता भी श्रवणवेल्गुलके शिलालेखोंसे चल जाता है। लेख नं० ४६ में शुभचन्द्र मुनिकी जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तित दंडनायिकिति लकले, देमित और बूचिराजका उल्लेख है और बूचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिप्रह ल्याग पूर्वक स्वर्गवासी हुए और उन्होंकी स्मृतिमें सेनापित गंगने पाषाण स्तम्भ आरोपित कराया। लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचंद्र सिद्धान्तदेवके शिष्य बूचणकी निषद्या 'ऐसा कहा गया है। इस लेखमें जो बूचणकी ज्येष्ट भगिनी देमितका उल्लेख आया है, उसका सिवस्तर वर्णन लेख नं० ४९ (१२९) में पाया जाता है जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है। यहां उनके नाम—देमित, देमवती, देवमती तथा दोबार देमियक दिये गये हैं और उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्टिराज चामुण्डकी पत्नी कहा है। उनकी धर्मबुद्धिकी प्रशंसा तो लेखों खूब ही की गई है। उन्हें शासन देवताका आकार कहा है, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शास्तदानकी स्तुति की गई है। उस लेखके कुछ प्रम इस प्रकार हैं:—

१ आहारं त्रिजगजनाय विभयं भीताय दिन्योपधं, व्याधिन्यापद्वेतदीनपुष्ति श्रोत्रे च शास्त्रागमम् । एवं देवमतिस्सदेव ददती प्रप्रक्षये स्वायुषामईदेवमतिं विधाय विधिना दिन्यो वधूः प्रोदभूत् ॥ ४ ॥

2

भासीत्परक्षोभकरप्रतापाशेषावनीपाछकृतादरस्य । चामुण्डनाम्नो वणिजः प्रिया स्त्री मुख्या सती या भुवि देमतीति ॥ ५ ॥

à

भूकोकचेत्याख्यचेत्रपूजाव्यापारकृत्यादरतोऽवतीर्णा । स्वर्गात्युरस्रीति विस्तोक्यमाना पुण्येन सावण्यगुणेन यात्र ॥ ६ ॥

8

भाहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यलं वर्णचतुष्टयाय । पश्चारसमाधिक्रियया मृदन्ते स्वस्थानवरस्वः प्रविवेश योचैः ॥ ७ ॥

Q

सद्मेशत्रुं किलकालराजं जित्वा व्यवस्थापितधर्मवृत्या । तस्या जयस्तम्भनिभं शिलाया स्तम्भं व्यवस्थापयति स्म लक्ष्मीः ॥ ८ ॥

छेखके अन्तमें उनके संन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है-

श्री मूलसंघद देशिगगणद पुस्तकगच्छद ग्रुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर् गुड्डि सक वर्ष १०४२ नेय विकारि संवत्सरद फाल्गुण व. ११ बृहवार दन्दु संन्यासन विधिय देमियक मुडिपिदलु ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुस्तकगच्छके ग्रुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियकने शक १०४२ विकारिसंवत्सर फाल्गुन व. ११ वृहस्पतिवारको संन्यासविधिसे शरीरत्याग किया ।

उक्त परिचय परसे संभव तो यही जान पड़ता है कि धवलाकी प्रतिका दान करनेबाली धर्मिष्ठा साध्वी देमियक ये ही होंगीं, जिन्होंने राक १०४२ में समाधिमरण किया। तथा
उनके भतींजे भुजबिल्र गंगपेमीडिदेव जिनका धवलाकी प्रशस्तिमें उल्लेख है उनके भाता
ब्चिराजके ही सुपुत्र हों तो आश्चर्य नहीं। उस व्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्गवास हो
चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है। यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी
प्रति जो संभवतः मूडबिद्रीकी वर्तमान ताड़पत्रीय प्रति ही हो और जो राक ९५० के लगभग
लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्गवासके पश्चात् और देमियकके स्वर्गवासके पूर्व अर्थात् राक १०३७
और १०४२ के बीच शुभचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकलता है। पर यह भी
संभव है कि श्रीमती देमियकने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर शुभचंद्रको प्रदान की और
उसमें पूर्व प्रतिके बीच—बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हों।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कनार्ड़ांके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपणं ' आदिमें कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और शेष दो पद्यों में जिन्न नामके किसी श्रावकके यशका वर्णन किया गया है। कोपण प्राचीन कार्ल्मे जैनियोंका एक बड़ा तीर्थस्थान रहा है।

[×] युजबलबीर होय्सल नरेशोंकी उपाधि पाई जाती है। देखी शिलालेख नं० १३८, १४३, ४९१, ४९४, ४९७.

चामुंडराय पुराणके ' असिधारा व्रतिदेदे ' आदि एक पचसे अवगत होता है कि तस्काजीन केनी कोपणों सहेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुष्पप्रंद मानते थे। श्रवणबेल्गीलंके अनेक लेखीं इस पुष्प भूमिका उल्लेख पाया जाता है। लेख नं० ४७ (१२७) शक संवत् १०३७ का है। इसके एक पद्यों कहा गया है कि सेनापित गंगने असंख्य अणि जैनमंदिरोंका खहार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेश को 'कोपण 'तिर्थ बना दिया। यथा—

मित्तन मातवन्तिरिक्त जीर्ण जिनाश्रयकीरिय कर्म बेत्तिरे मुक्तिनितरनित्रगैकोळं नेरे माश्चित्तम— स्युचमपात्रदानदोदवं मेरेबुचिरे गक्तवाहितो— म्बचर सासिरं कोपणमादद् गक्तणदण्डनाधनि ॥ ३९॥

इससे कोपण तीर्थकी भारी महिमाका परिचय मिलता है।

लगभग राक सं० १०८७ के लेख नं. १३७ (३४५) में हुछ सेनापतिहारा कोपण महातीर्थमें जैन मुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिये बहुत सुवर्ण व्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है। यथा—

> प्रियदिन्दं हुइसेनापति कोपणभहासीयदोळघात्रियुंवा— वियमुद्धकं चतुर्विशति—जिन—मुनि संबक्के निश्चिन्तमाग भय दानं सङ्व पाक्कि बहु—कनक—मना—क्षेत्र—जिर्गाषु सद्बृ— त्तियनिन्तीछोक मेह्रम्योगळे विडिसिदं पुण्यपंजैकधामं ॥ २७ ॥

इससे ज्ञात होता है कि यहां मुनि आचार्योका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभ-वतः कोई जैन शिक्षालय भी रहा होगा।

लगभग १०५७ के लेख नं. १४४ (३८४) के एक प्रयमें सेनापित एक द्वारा कोपण व अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है। यथा —

> माडिसिदं जिनेन्द्रभवनङ्गलना कोपणादि तथिव्यु स्टियिनेस्दो-वेसेसेव वेस्गोलद् बहुत्तिश्रभित्यं। मोडिदरं मनङ्गोलि पुवेन्दिनसेष-चङ्गूपनर्श्य कै-गृहे धारित्रिकोण्यु कोनेदाडे जसन्निहदाडे कीलेपि ॥ १३॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायच्र जिलेमें एक कोष्पल नामका प्राम है, यही प्राचीन कोपण सिद्ध होता है। वर्तमानमें वहां एक दुर्ग तथा चहार दीवाली है जो चालुक्य कालीन कलाके बोतक समझे जाते हैं। इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिखाई दे रहा है। एक जगह दीवालमें कोई बीस शिलालेखोंके दुकड़े चुने हुए पाये

जाते हैं। इस स्थानपर व उसके आसपास कोई दस बीस कोसकी इर्दगिर्दमें अशोकके कालसे छगाकर इस तरफके अनेक लेख व अन्य प्राचीन स्मारक पाये जाते हैं।

कोपणके समीप ही पाल्कीगुण्डु नामक पहाड़ी पर, अशोकके शिलालेखके पास वरांग-चितके कर्ता जटासिंहनन्दि के चरणचिन्ह भी, पुरानी कन्नडमें लेखसिंहत, अंकित हैं। (वरांग-चित्त, भूमिका पृ. १७ आदि)

इसप्रकार यह स्थान बड़ा प्राचीन, इतिहास प्रसिद्ध और जैनधर्म के छिये बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है *।

२. सत्प्ररूपणा विभाग

षट्खंडागमकी पूर्व प्रकाशित प्रथम पुस्तक तथा अब प्रकाशित होनेवाली द्वितीय पुस्तकको हमने 'सत्प्ररूपणा' के नामसे प्रकट किया है। प्रथम जिल्दके प्रकाशित होनेपर रंका उठाई गई है कि उस प्रथको सत्प्ररूपणा न कहकर 'जीवस्थान-प्रथम अंश' ऐसा लिखना चाहिये था। इसके उन्होंने दो कारण बतलाये हैं। एक तो यह कि इस विभागके भीतर जो मंगलाचरण है वह केवल सत्प्ररूपणाका नहीं है बल्कि समस्त जीवस्थान खंडका है और दूसरे यह कि इसके आदिमें जो विषय-विवरण पाया जाता है वह सत्प्ररूपणाके बाहरका है, सत्प्ररूपणाका अंग नहीं ×। इन दोनों आपत्तियोंपर विचार करके भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमने जो इस विभागको 'जीवस्थानका प्रथम अंश' न कहकर 'सत्प्ररूपणा' कहा है वही ठीक है। इसके कारण निम्न प्रकार हैं—

१. यह बात ठीक है कि आदिका मंगलाचरण केवल सध्यरूपणाका ही नहीं, किन्तु समस्त जीवस्थानका है। पर, अवान्तर विभागोंकी दृष्टिसे सख्यरूपणाके भीतर उसे लेनेसे भी वह समस्त जीवस्थानका बना रहता है। सब प्रंथोंमें मंगलाचरणकी यहीं व्यवस्था पार्थी जाती है कि वह प्रंथके आदिमें किया जाता है और जो भी खंड, स्कंध, स्मा, अध्याय व विषयविभाग आदिमें हो उसीके अन्तर्गत किये जाने पर भी वह समस्त प्रंथका समझा जाता है। समस्त प्रंथपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिये उसका एक स्वतंत्र विभाग नहीं बनाया जाता। अतएव जीवस्थान ही क्यों, जहांतक प्रन्थमें सूत्रकारकृत दूसरा मंगलाचरण न पाया जावे वहांतक उसी मंगलाचरणका अधिकार समझना चाहिये, चाहे विषयकी दृष्टिसे प्रंथमें कितने ही विभाग क्यों न पड़ गये हों। स्वयं धवलाकारने आगे वेदनाखंड व कृति अनुयोगद्वारके आदिमें आये दृष्ट मंगलाचरणको शेष दोनों खंडों व तेवीस अधिकारोंका भी मंगलाचरण कहा है। यथा—

^{*} देस्रो जैनसि. सा. ५, २ पृ. ११०

[×] अनेकाम्स, वर्ष २, किरण ३, पू. २०१

उविर उचमाणेसु तिसु खंडेसु कस्तेवं संगळं ? तिण्णं खंडाणं । × × कथं वेयणाए आदीए उत्तें मंगळं सेस-दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिम्ब उत्तस्स एदस्स मंगळस्स सेस-तेबीस-अणि योगहरिसु पठत्ति-दंसणादो ।

ऐसी अवस्थामें णमोकार मंत्ररूप मंगलाचरणके साम्ररूपणाके आदिमें होते हुए भी उसके समस्त जीवस्थानके मंगलाचरण समक्षे जानेमें कोई आपत्ति तो नहीं होना चाहिये।

- २. ययार्थतः तो वह मंगलाचरण सत्प्ररूपणाका ही है । आचार्य पुष्पदन्तने उस मंगला-चरणको आदि लेकर सत्प्ररूपणा मात्रके ही सूत्रोंकी तो रचना की है । यदि हम इसे भूतबिल आचार्यकी आगेकी रचनासे पृथक् कर लें तो पुष्पदन्तकी रचना उस मंगलसूत्र सहित सत्प्ररूपणा ही तो कहलायगी । जीवस्थानका प्रथम अंश यही सत्प्ररूपणा ही तो है ।
- ३. यदि इस अंशको सत्प्ररूपणा न कह कर जीवस्थानक। प्रथम अंश कहते तो पाठक उससे क्या समझते ! इस नामसे उसके विषय पर क्या प्रकाश पड़ता ! वह एक अज्ञात कुलशील और निरुपयोगी शीर्षक सिद्ध होता ।
- ४. हमने जो प्रंथका विषय-विभाग किया है वह मूलप्रन्थ पुष्पदन्त और भूतबिकृत षट्खंडागमकी अपेक्षासे है, और उसमें सल्ररूपणासे पूर्व किसी और विषयविभागके लिये स्थान नहीं है। मंगलाचरणके पश्चात् छह सात सूत्रोंमें सल्ररूपणाका यथोचित स्थान और कार्य बतलाने के लिये चौदह जीवसमासों और आठ अनुयोगद्वारोंका उल्लेखमात्र करके सल्प्ररूपणाका विवेचन प्रारम्भ कर दिया गया है। धवलाटीका के कर्ताने उन सूत्रोंकी व्याख्याके प्रसंगसे जीवस्थानकी उत्यानिकाका कुछ विस्तारसे वर्णन कर डाला तो इससे क्या उस विभागको सल्प्ररूपणासे अलग निर्दिष्ट करने के लिये एक नये शीर्षककी आवश्यकता उत्पन्न होगई ? ऐसा हमें जान नहीं पड़ता। षट्खंडागमके मीतर जो सूत्रकारद्वारा निर्दिष्ट विषय विभाग हैं उन्हींके अनुसार विभाग रखना हमने उचित समझा है। धवलाकारने भी आदिसे लगाकर १७७ सूत्रोंकी क्रमसंख्या लगातार रखी है और उनकी एक ही सिलसिलेसे टीका की है जिसे उन्होंने 'संतसुत्तविवरण 'कहा है जैसा कि प्रस्तुत भागके प्रारंभिक वाक्यसे स्पष्ट है। यथा—

' संपष्टि संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसि परूवणं भणिस्सामो '।

३. वर्गणाखंड-विचार

षट्खंडागमके छह खंडोंका परिचय प्रथम जिल्दकी सूमिकामें कराया जा चुका है। वहां यह बतलाया गया है कि उन छह खंडोंमें से प्रथम पांच अर्थात् जीवडाण, खुदाबंध, बंधसा-मित्तिवचय, वेदणा और वगगणा उपलब्ध धवलाकी प्रतियोंमें निबद्ध हैं तथा शेष छठवां अर्थात् महाबंध स्वतंत्र पुस्तकारूढ़ है, निसकी प्रतिलिपि अभीतक मूडविदी मठके बाहर उपलब्ध नहीं

है। इनमेंसे चार खंडोंके सम्बंधमें तो कोई मतभेद नहीं है, किन्तु वेदना और वर्गणा खंडकी सीमाओंके सम्बंधमें एक रांका उत्पन्न की गई है जो यह है कि "धवछप्रंथ वेदना खंडके साथ ही समाप्त हो जाता है—वर्गणाखंड उसके साथमें छगा हुआ नहीं है"। इस मतकी पुष्टिमें जो युक्तियां दी गई हैं वे संक्षेपतः निम्न प्रकार हैं—

- १. जिस कम्मपयिडिपाहुडके चौवीस अधिकारोंका पुष्पदन्त-भूतबिछिने उद्घार किया है उसका दूसरा नाम 'वेयणकासिणपाहुड 'भी है जिससे उन २४ अधिकारोंका 'वेदनाखंड 'के ही अर्न्तगत होना सिद्ध होता है।
- २. चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्गणा नामका कोई अनुयोगद्वार भी नहीं है। एक अवान्तर अनुयोगद्वारके भी अवान्तर भेदान्तर्गत संक्षिप्त वर्गणा प्ररूपणाको 'वर्गणाखंड ' कैसे कहा जा सकता है ?
- ३. बेदनाखंडके आदिके मंगलसूत्रोंकी टीकामें वीरसेनाचार्यने उन सूत्रोंको ऊपर कहे हुए वेदना, बंधसामित्रविचय और खुदाबंधका मंगलाचरण बतल्या है और यह स्पष्ट सूचना की है कि बर्गणाखंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है उपकर्ध धवलाके सेष भागमें सूत्रकारकृत कोई दूसरा मंगलाचरण नहीं देखा जाता, इससे वह वर्मणाखंडकी कस्पना गलत है।
- ४. धवलामें जो 'वेयणाखंड समत्ता' पद पाया जाता है वह अशुद्ध है । उसमें पड़ा हुआ 'खंड' शब्द असंगत है जिसके प्रक्षित होनेमें कोई सन्देह माल्यम नहीं होता ।
- ५. इन्द्रनिद व बिजुधश्रीधर जैसे प्रयक्तारोंने जो कुछ छिखा है वह प्रायः किंवदिन्तर्ये अथवा धुने धुनाये आधारपर छिखा जान पड़ता है। उनके सामने मूळ प्रय नहीं थे, अतएव उनकी साक्षीको कोई महत्व नहीं दिया जा सकता।
- ६. यदि वर्गणाखंड धवलाके अन्तर्गत या तो यह भी हो सकता है कि लिपिकास्ने शीव्रता वश उसकी कापी न की हो और अधूरी प्रतिपर पुरस्कार न मिल सकने की आशंकासे उसने प्रंथकी अन्तिम प्रशस्तिको जोड़कर अंथको पूरा प्रकट कर दिया हो। ×

अब इम इन युक्तियोंपर अमशः विचार कर ठीक निष्कर्ष पर पहुंचनेका प्रयत्न करेंगे ।

१. वेयणकासणपाहुड और वेदनाखंड एक नहीं हैं।

पह बात सत्य है कि कम्मपयिद्याहुडका दूसरा नाम वेयणकसिणपाहुड भी है और यह गुण नाम भी है, क्योंकि वेदना कमोंके उदयको कहते हैं और उसका निरवशेषरूपसे जो वर्णन

[×] श्रेनसिद्धान्त सास्का ६, १ पू. ४२; अनेकान्त ३, १ पू. ३.

करता है उसका नाम वेयणकि सिणपाहुड (वेदनकृष्टनप्रामृत) है। किन्तु इससे यह आवश्यक नहीं हो जाता कि समस्त वेयणकि सिणपाहुड वेदनाखंड के ही अन्तर्गत होना चाहिये, क्योंकि विदे ऐसा माना जावे तब तो छह खंडोंकी अवश्यकता ही नहीं रहेगी और समस्त पट्खंड वेदनाखंड के ही अन्तर्गत मानना पडेंगे चूंकि जीवहाण आदि सभी खंडोंमें इसी वेयणकि सिणपाहुड के अंकों का ही तो संग्रह किया गया है जैसा कि प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये गये मानचित्रों तथा संतपक्ष्वणा पृ. ७ ४ आदिके उल्लेखोंसे स्पष्ट है। यह खंड —कल्पना कम्मपयि दिये गये मानचित्रों तथा संतपक्ष्वणा पृ. ७ ४ आदिके उल्लेखोंसे स्पष्ट है। यह खंड —कल्पना कम्मपयि दियाहुड या वेयणकि सिणपाहुड के अवान्तर भेदोंकी अपेक्षासे की गई है किसी एक खंड को समूचे पाहुड का अधिकारी नहीं बनाया गया। स्वयं धवलाकारने वेदनाखंड को महाकम्मपयि दिपाहुड समझ लेने वेदद पाठकों को सतर्क कर दिया है। वेदनाखंड के आदिमें मंगलके निबद्ध अनिबद्धका विवेक करते समय वे कहते हैं —

' ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयिदपाहुदं, अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो '

अर्थात् वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिप्राभृत नहीं है, क्योंकि अवयवको अवयवी मान छेनेमें विरोध उत्पन्न होता है। यदि महाकर्मप्रकृतिप्राभृतके चौवीसों अनुयोगद्वार वेदनाखंडके अन्तर्गत होते तो धवलाकार उन सबके संप्रहको उसका एक अवयव क्यों मानते ? इससे विख्कुल स्पष्ट है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत उक्त चौवीसों अनुयोगद्वार नहीं हैं।

२. क्या वर्गणा नामका कोई पृथक् अनुयोगद्वार न होनेसे उसके नामपर खंड संज्ञा नहीं हो सकती ?

कम्मपयि पाइडिं चौबीस अनुयोगद्वारों में वर्गणा नामका कोई अनुयोगद्वार नहीं है, यह विक्कुर सत्य है, किन्तु किसी उपभेदके नामसे वर्गणाखंड नाम पड़ना कोई असाधारण घटना तो नहीं कही जा सकती। यथार्थतः अन्य खडों में एक वेदनाखंडको छोड़कर अन्य रेाष सब खडों के नाम या तो विषयानुसार कल्पित हैं, जैसे जीवदाण, खुदाबंध, व महाबंध । या किसी अनुयोगद्वारके, उपभेदके नामानुसार हैं, जैसे बंधसामित्तविचय । उसीप्रकार यदि वर्गणा नामक उपविभाग पदसे उसके महत्त्वके कारण एक विभागका नाम वर्गणाखंड रखा गया हो तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है । चौबीस अधिकारों मेंसे जिस अधिकार या उपभेदका प्रधानत्व पाया गया उसीके नामसे तो खंड संज्ञा की गई है, जैसा कि धवलाकारने स्वयं प्रश्न उठाकर कहा है कि कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृतिका भी यहां प्ररूपण होनेपर भी उनकी खंडपंय संज्ञा न करके केवल तीन ही खंड कहे जाते हैं क्योंकि रेाषमें कोई प्रधानता नहीं है और यह उनके संक्षेप प्रदूपणसे जाना जाता है × । इसी संक्षेप प्रदूपणका प्रमाण देकर वर्गणाको भी खंड संज्ञासे

[×] दंखो संतपरूपणा, जिल्द ?, भूमिका पृ. ६५ टिप्पणी.

च्युत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक शब्द हैं, अतएव वर्गणाका प्ररूपण धवलामें संक्षेपसे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारों के विस्तारसे मिछान द्वारा ही जाना जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारों के प्ररूपण-विस्तार को देखिये। बंधसामित्ताविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पश्चात् मंगलाचरण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रों में, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रों में, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रों में, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रों में, प्रकृतिका ११५९ से ११०६ तक ५०० पत्रों में और बंधन के बंध और बंधनीयका १२०९ से १३६२ तक १२३ पत्रों में प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रों में संका प्ररूपण प्रथम १० पत्रों में समाप्त करदिया गया है, यह कहकर कि—

' एरथ उद्देसे खुद्दाबंधस्स एक्कारस-अणियोगद्दाराणं परूवणा कायन्त्रा ' ।

इसके आगे कहा गया है कि---

' तेण बंधणिङज-परूवणे कीरमाणे वग्गण-परूवणा णिष्छएण कायब्वा, अण्णहा तेवीस-वग्गणासु इमा चेव वग्गणा बंधपाओग्गा अण्णाओ बंधपाओग्गाओ ण होति ति अवगमाणुववसीदो । वग्गणाणमणु-मग्गणहुवाप् तथ्य इमाणि अह अणियोगहाराणि णादब्बाणि भवंति ' इत्यादि ।

अर्थात् बंधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्गणा की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्गणाओंमें ये ही वर्गणाएं बंधके योग्य हैं अन्य वर्गणाएं बंधके योग्य नहीं है, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता। उन वर्गणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातन्य हैं। इत्यादि।

इस प्रकार पत्र १२१९ से वर्गणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहां कहा गया है कि—

' एवं विस्ससोवचयपरूवणाए समताए बाहिरियवग्गणा समत्ता होदि '।

इसप्रकार वर्गणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अधिकारोंमेंसे वेदनाको छोड़कर रोष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुदाबंधखंड १७५ से ५७६ तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५७६ से ६६७ तक ९१ पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगद्वारके अवान्तरके भी अवान्तर भेद वर्गणाका विस्तार इन दोनों खंडोंसे अधिक है। ऐसी अवस्थामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त कहना चाहिये या विस्तृत और उससे उसे खंड संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसका या नहीं, यह पाठक विचार करें।

२. वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण और कीन कीन खंडोंका है ?

बेदनाखंडके आदिमें मंगलसूत्र पाये जाते हैं। उनकी टीकामें धवलाकारने खंडविमाग व उनमें मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी जो सूचना दी है उसको निम्न प्रकार उद्धृत किया जाता है—

' बविर उश्वमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगळं ? तिण्णं खंडाणं । कुदो ? वग्गणा-महाबंधाणमादीप् मंगळकरणादो । ण च मंगळेण विणा भूद्बिलभडारओ गंथस्स पारमिद, तस्स अणाह्रियचपसंगादो xx कदि-पास-क्रम्म-प्रयक्षि-अणियोगद्दाराणि वि एत्थ परूबिदाणि, वैसिं खंडगंथसण्णमकाद्धण तिण्णि चेव खंडाणि चि किमहं उश्वदे ? ण, तेसिं पहाणचाभावादो । तं पि कुदो णव्यदे ? संखेवेण परूबणादो '।

वर्गणाखंडको धवलान्तर्गत स्वीकार न करनेवाले विद्वान् इस अवतरणको देकर उसका यह अभिप्राय निकालते हैं कि—'' वीरसेनाचार्यने उक्त मंगलसूत्रोंको उत्तर कहे हुए तीनों खंडों वेदना, बंधसामित्तविचओ और खुदाबंधो—का मंगलाचरण वतलाते हुए यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणा-खंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक मंगलाचरण किया गया है, मंगलाचरणके दिना भूतबिल आचार्य मंथका प्रारंभ ही नहीं करते हैं। साथ ही यह भी बतलाया है कि जिन कदि, फास, कम्म, पयि (बंधण) अणुयोगद्वारोंका भी यहां (एथ)—इस वेदनाखंडमें प्रक्षपण किया गया है उन्हें खंडप्रंथ संज्ञा न देनेका कारण उनके प्रधानताका अभाव है, जो कि उनके संक्षेप कथनेसे जाना जाता है। उक्त फास आदि अनुयोगद्वारोंमेंसे किसीके भी ग्रह्कमें मंगलाचरण नहीं है और इन अनुयोगद्वारोंकी प्रक्षपणा वेदनाखंडमें की गई है, तथा इनमेंसे किसीको खंडप्रंथकी संज्ञा नहीं दी गई यह बात उत्परके शंका समाधानसे स्पष्ट है।"

अब इस कथनपर विचार कीजिये। ' उबिर उच्चमाणेखु तिसु खंडेसु ' का अर्थ किया गया है 'ऊपर कहे हुए तीन खंड, अर्थात् वेदना, बंधसामित्त और खुदाबंध '। हमें यहांपर यह याद रखना चाहिये कि खुदाबंध और बंधसामित्त खंड दूसरे और तीसरे हैं जिनका प्ररूपण हो चुका है, और अभी वेदनाखंडके केवल मंगलाचरणका ही विषय चल रहा है, खंडका विषय आगे कहा जायगा। ' उबिर उच्चमाण ' की संस्कृत छाया, जहांतक मैं समझता हूं ' उपिर उच्यमान ' ही हो सकती है, जिसका अर्थ ' ऊपर कहे हुए ' कदािय नहीं हो सकता। ' उच्यमान ' का ताल्पर्य केवल प्रस्तुत या आगे कहे जानेवालेसे ही हो सकता है। फिर भी यदि 'ऊपर कहे हुए' ही मानलें तो उससे ऊपरके दो और आगेक एक का समुन्चय कैसे हो सकता है ! ऊपर कहे हुए तीन खंड तो जीवहाण आदि तीन हैं, बाकी तीन आगे कहे जानेवाले हैं । इसप्रकार उपर्युक्त वाक्यका जो अर्थ लगाया गया है वह बिलकुल ही असंगत है ।

अब आंगेका रांका-समाधान देखिये। प्रश्न है यह कैसे जाना कि यह मंगळ 'उबीर

उत्तर दिया जाता है 'क्योंकि वर्गणा और महाबंध के आदिमें मंगल किया गया है । यदि यहां जिन खंडोंमें मंगल किया गया है उनको अलग निर्दिष्ट कर देना आचार्यका अभिप्राय था तो उनमें जीवट्ठाणका भी नाम क्यों नहीं लिया, क्योंकि तमी तो तीन खंड रोष रहते, केवल वर्गणा और महाबंधको अलग कर देनेसे तो चार खंड रोष रह गये। फिर आगे कहा गया है कि मंगल किये बिना भूतबिल भट्टारक ग्रंथ प्रारंभ ही नहीं करते, क्योंकि उससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है। पर उक्त व्यवस्थाके अनुसार तो यहां एक महीं, दो दो खंड मंगलके बिना, केवल प्रारंभ ही नहीं, समाप्त भी किये जा चुके; जिनके मंगलचरणका प्रबंध अब किया जा रहा है, जहां स्वयं टीकाकार कह रहे हैं कि मंगलचरण आदिमें ही किया जाता है, नहीं तो अनाचार्यत्वका दोष आ जाता है। इससे तो धवलाकारका मत स्पष्ट है कि प्रस्तुत ग्रंथरचनामें आदि मंगलका अनिवार्य रूपसे पालन किया गया है। हमने आदिमंगलके अतिरक्त मध्यमंगल और अन्तमंगलका भी विधान पढ़ा है। किन्तु इन प्रकारोंमेंसे किसी भी प्रकार हारा वेदनाखंडके आदिका मंगल खुदाबंधका भी मंगल सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसप्रकार यह शंका समाधान विषयको समझानेकी अपेक्षा अधिक उलझनमें ही काल वाल है।

आगेके रांका समाधानकी और भी दुर्दशा की गई है। प्रश्न हे कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां प्रकृपित हैं, उनकी खंडसंज्ञा न करके केवल तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं! यहां स्वभावतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यहां कौनसे तीन खंडोंका अभिप्राय है! यहां स्वभावतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यहां कौनसे तीन खंडोंका अभिप्राय है! यदि यहां भी उन्हीं खुदाबंध, बंधसामित्त और वेदनाका अभिप्राय है तो यह वतलानेकी आवश्यकता है कि प्रस्तुतमें उनकी क्या अपेक्षा है । यदि चौवीस अनुयोगद्वारोंमेंसे उत्पत्तिकीं यहां अपेक्षा है तो जीवस्थान, वर्गणा और महाबंध भी तो वहींसे उत्पन्न हुए हैं, फिर उन्हें किस विचारसे अलग किया गया! और यदि वेदना, वर्गणा और महाबंधसे ही यहां अभिप्राय है तो एक तो उक्त कममें भंग पड़ता है और दूसरे वर्गणाखंडके भी इन्हीं अनुयोगद्वारोंमें अन्तर्भावका प्रसंग आता है। जिन अनुयोगद्वारोंकी ओरसे खंड संज्ञा प्राप्त न होनेकी शिकायत उठाथी गई है उनमें वेदनाका नाम नहीं है। इससे जाना जाता है कि इसी वेदना अनुयोगद्वार परसे वेदनाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है। पर यदि 'एत्थ' का ताल्पर्य "इस वेदनाखंडमें " ऐसा लिया जाता है तब तो यह भी मानना पड़ेगा कि वे तीनों खंड जिनका उल्लेख किया गया है, वेदनाखंडके अन्तर्गत हैं। पयडिके आगे बन्धन और क्यों अपनी तरफसे जोड़ा गया जबिक वह मूलमें नहीं है, यह भी कुछ समझमें नहीं आता। इसप्रकार यह प्रश्न भी बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न करनेवाला सिद्ध होता है।

अतः वेदनाखंडके आदिमें आये हुए मंगळाचरणको खदावंध और बंधसामित्तका भी सिद्ध

करना तथा कृति आदि चौवीसों अनुयोगद्वारोंको वेदनाखंडान्तर्गत बतलाना बड़ा वेतुका, वे आधार और सारे प्रसंगको गड़वड़ोंमें डालनेवाला है। यह सब कल्पना किन भूलोंका परिणाम है और उक्त अवतरणोंका सच्चा रहस्य क्या है यह आगे चलकर बतलाया जायगा! उससे पूर्व शेष तीन युक्तियोंपर और विचार करलेना ठीक होगा।

४. वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका

धवलामें जहां वेदनाका प्ररूपण समाप्त हुआ है वहां यह वाक्य पाया जाता है—
एवं वेयण-अपाबहुगाणिओगहारे समले वेयणासंड समला।

इसके आगे कुछ नमस्कार वाक्योंके पश्चात् पुनः लिखा मिलता है 'वेदनाखंड समाप्तम्'। ये नमस्कार वाक्य और उनकी पृष्पिका तो स्पष्टतः मूलप्रयक्ते अंग नही हैं, वे लिपिकार द्वारा जोडे गये जान पडते हैं। प्रश्न है प्रथम पुष्पिकाका जो मूल प्रयक्ता आवश्यक अंग है। पर उसमें भी 'वेयणाखंड समत्ता ' वाक्य व्याकरण की दृष्टिसे अग्रद्ध है । वहां या तो 'वेयणाखंडो समत्ता ' या ' वेयणाखंडं समत्तं ' वाक्य होना चाहिये था । समाछोचकका यह भी अनुमान गलत नहीं कहा जा सकता कि इस वाक्यमें खंड शब्द संभवतः प्रक्षित है, उस शब्दको निकाल देनेसे 'वेयणा समता' वाक्य भी ठीक बैठ जाता है। हो सकता है वह लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त हुआ। हो। पर विचारणीय बात यह है कि वह कब और किस लिये प्रक्षिप्त किया गया होगा। इस प्रक्षेपको आधानिक लिपिकारकृत तो समालोचक भी नहीं कहते। यदि वह प्रक्षिप्त है तो उसी लिपिकारकृत हो सकता है जिसने मूडिविदीकी ताड्पत्रीय प्रति लिखी। हम अन्यत्र बतला चुके हैं कि वह प्रति संभवतः शक्की ९ वी १० वी शताब्दिकी, अर्थात आजसे कोई हजार आठसी वर्ष परानी है । उस प्रक्षिप्त बाक्यमे उस समयके कमसे कम एक व्यक्तिका यह मत तो मिछता ही है कि वह वहां वेदनाखंडकी समाप्ति समज्जता था। उससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस लेखककी जानकारोंने वहींसे दूसराखंड अर्थात् वर्गणाखंड प्रारंभ हो जाता था, नहीं तो वह वहां वेदनाखंडके समाप्त होनेकी विश्वासपूर्वक दो दो वार सूचना देने की धृष्टता न करता। यदि वहां खंडसमाप्ति होनेका इसके पास कोई आधार न होता तो उसे जबर्दस्ती खंड शब्द डालनेकी प्रश्नित ही क्यों होती ! समालोचक लिपिकारकी प्रक्षेपक-प्रवृत्ति को दिखलाते हुए कहते हैं कि अनेक अन्य स्थलोंपर भी नानाप्रकारके वाक्य प्रक्षिप्त पाये जाते हैं । यह बात सच है, पर जो उदाहरण उन्होंने बतलाया है वहां, और जहांतक में अन्य स्थल ऐसे देख पाया हं वहां सर्वत्र यहा पाया जाता है कि लेखकने अधिकारोंकी संधि आदि पाकर अपने गुरु या देवता का नमस्कार या उनकी प्रशस्ति संबंधी बाक्य या पद्म इधर उधर डाले हैं। यह पुराने लेखकोंकी शैली सी रही है। पर ऐसा स्थल

एक भी देखनेमें नहीं आता जहां पर छेखकने अधिकार संबंधी सूचना गलत सलत अपनी ओरसे जोड़ या घटा दी हो। अतएव चाहे वह खंड शब्द मौलिक हो और चाहे किसी लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त, उससे वेदना खंडके वहां समाप्त होने की एक पुरानी मान्यता तो प्रमाणित होती ही है।

५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता

इन्द्रनन्दि और विव्ध श्रीघरने अपने अपने श्रुतावतार कथानकों में षट्खंडागमकी रचना व धवछादि टीकाओंके निर्माणका विवरण दिया है। विबुध श्रीधरका कथानक तो बहुत कुछ काल्पनिक है, पर उसमें भी धवलान्तर्गत पांच या छह खंडोंवाली वार्तामें कुछ अविश्वसनीयता नहीं दिखती । इन्द्रनन्दिने प्रकृत विषयसे संबंध रखनेवाली जो वार्ता दी है उसको हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें पू. ३० पर लिख चुके हैं। उसका संक्षेप यह है कि वीरसेनने उपरितन निबन्धनादि अठारह अधिकार लिखे और उन्हें ही सत्कर्मनाम छठवां खंड संक्षेपरूप बनाकर छह खंडोंकी बहत्तर हजार प्रयप्रमाण, प्राकृत संस्कृत भाषा मिश्रित धवलाटीका बनाई । उनके शब्दोंका धवलाकारके उन शन्दोंसे मिलान कीजिये जो इसी संबंधके उनके द्वारा कहे गये हैं। निवन्धनादि विभागको यहां भी ' उबरिम प्रंथ ' कहा है और अठारह अनुयोगद्वारोंको संक्षेपमें प्ररूपण करनेकी प्रतिज्ञा की गई है। धरसेन गुरुद्वारा श्रुतोद्धारका जो विवरण इंद्रनन्दिने दिया है वह प्रायः ज्यों का त्यों धवला-कार के बतान्त से मिलता है। यह बात सच है कि इन्द्रनन्दि द्वारा कही गयी कुछ बाते धवला-न्तर्गत वार्तासे किंचित भेद रखती हैं। किन्तु उनपरसे इन्द्रनन्दिको सर्वथा अप्रामाणिक नहीं ठहराया जा सकता, विशेषतः खंडविभाग जैसे स्थूल विषयपर । यद्यपि इन्द्रनन्दिका समय निर्णात नहीं है, पर उनके संबंधमें पं. नाथुरामजी प्रेमीका मत है कि ये वे ही इन्द्रनिद हैं जिनका उल्लेख आचार्य नेमिचन्द्रने गोम्मटसार कर्मकाण्डकी ३९६ वी गाशामें गुरुरूपसे किया है जिससे वे विक्रमकी ११ हवीं शतान्दिके आचार्य ठहरते हैं *। इसमें कोई आश्चर्य भी नहीं है। वीरसेन ब धवलाकी श्चनाका इतिहास उन्होंने ऐसा दिया है जैसे मानो वे उससे अच्छी तरह निकटतासे सपरिचित हों । उनके गुरु एळाचार्य कहां रहते थे, बीरसेनने उनके पास सिद्धान्त पढ़कर कहां कहां जाकर, किस मंदिरमें बैठकर, कौनसा प्रंथ साम्हने खकर अपनी टीका छिखी यह सब इन्द्रनन्दिने अच्छी तरह बतलाया है जिसमें कोई बनावट व कृत्रिमता दृष्टिगोचर नहीं होती, बल्कि बहुत ही प्रामाणिक इतिहास जंचता ह । उन्होंने कदाचित् धवला जयधबलाका सूक्ष्मावलोकन मले ही न किया हो और शायद नोट्स ले रखनेका भी उस समय रिवाज़ न हो, पर उनकी सूचनाओंपरसे यह बात सिद्ध नहीं होती कि धवल

^{*} सा. दि. जै. प्रंथमाळा नं. १३, प्रतिका पु. २

जयधवळ प्रंथ उनके साम्हने मौजूद ही नहीं थे। उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं छिखी जिसकी इन प्रंथोंकी वार्तासे इतनी विषमता हो जो पढ़कर पाँछे स्पृतिके सहारे छिखनेवाछे हारा न की जा सकती हो। इसके अतिरिक्त उनका प्रंथ अभीतक प्राचीन प्रतियोंपरसे सुसंपादित भी नहीं हुआ है। किसी एकाध प्रतिपरसे कभी छाप दिया गया था, उसीकी कापी हमारे साम्हने प्रस्तुत है। उन्होंने जो वार्ता किवदिन्तयों व सुने सुनाये आधारपरसे छिखी हो वह भी उन्होंने बहुत सुन्य-विषयत करके, भरसक जांच पड़तालके पश्चात्, लिखी है और इसीतरह वे बहुतसी ऐसी बातों-पर प्रकाश डाल सके जो धवलादिमें भी न्यवस्थित नहीं पायी जाती, जैसे धवलासे पूर्वकी टीकायें व टीकाकार आदि। वे कैसे प्रामाणिक और निर्भाक तथा अपनी कमजोरियों को स्वीकार करलेनेवाले निष्पक्ष ऐतिहासिक थे यह उनके उस वाक्य परसे सहज ही जाना जा सकता है जहां उन्होंने साफ साफ कह दिया है कि गुणधर और धरसेन गुरुओंकी पूर्वापर आचार्य परम्परा हम नहीं जानते क्योंकि न तो हमें वह बात बतलानेवाला कोई आगम मिला और न कोई मुनिजन ×। कितनी स्पष्टवादिता, साहित्यिक सचाई और नैतिकवल इस अज्ञानकी स्वीकारतामें भरी हुई है! क्या इन वाक्योंको लिखनेवालेकी प्रामाणिकतामें सहज ही अविश्वास किया जा सकता है!

६. मूडविद्रीसे प्रतिलिपि करनेवाले लेखककी प्रामाणिकता

जिस परिस्थितिमें और जिस प्रकारसे धवला और जयधवलाकी प्रतियां मूडिबेद्रीसे बाहर निकली हैं उसका हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें निवरण दे आये हैं। उस परसे उपलब्ध प्रतियोंकी प्रामाणिकतामें नाना प्रकारके सन्देह करना स्वामानिक है। अतएव जो धवलाके मीतर वर्गणाखंडका होना नहीं मानते उन्हें यह भी कहनेको मिल जाता है कि यदि मूल धवलामें वर्गणाखंड रहा भी हो तो उक्त लिपिकारने उसे अपना परिश्रम बचानेके लिये जानवृक्षकर छोड़ दिया होगा और अन्तिम प्रशस्ति आदि जोड़कर अपने प्रंथको पूरा प्रकट कर दिया होगा ताकि उसके पुरस्कारादिमें फरक न पड़े। इस कल्पनाकी सचाई झुठाई का पूरा निर्णय तो तभी हो सकता है जब यह प्रंथ ताल्पत्रीय प्रतिसे मिलाया जा सके। पर उसके अभावमें भी हम इसकी संभावनाकी जांच दो प्रकारसे कर सकते हैं। एक तो उस लेखकके कार्यकी परीक्षा द्वारा और दूसरे विद्यमान धवलाकी रचना की परीक्षा द्वारा। धवलाके संशोधन संपादन संबंधी कार्यमें हमें इस बातका बहुत कुछ परिचय मिला है कि उक्त लेखकने अपना कार्य कहांतक ईमानदारीसे किया है। हमें जो प्रतिया उपलब्ध हुई हैं वे मूडिवेदीसे आई हुई कनाड़ा प्रतिलिपिकी नागरी प्रतिकी कापी की भी कापियां हैं। वे बहुत कुछ सखलन—प्रचर और अनेक प्रकारसे दोष पूर्ण हैं।

[×] संतपरूषणा, जिल्द १, मूमिका पू. १५

पर तो मी तीन प्रतियों में मिछानसे ही पूरा और ठिक पाठ बैठा छेना संभव हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि जो स्खलन इन आगेकी प्रतियों में पाये जाते हैं वे उस कनाड़ी प्रतिलिपिमें नहीं हैं। यथिप कुछ स्थल इन सब प्रतियों के मिलानसे भी पूर्ण या निस्सन्देह निर्णात नहीं हो पाते और इसिलिये संभव है वे स्खलन उसी प्रथम प्रतिलिपिकार द्वारा हुए हों, पर इस प्रथकी लिपि, भाषा और विषय संबंधा कितिनाइयों को देखते हुए हमें आश्चर्य इस बातका नहीं है कि वे स्खलन हैं, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखका हों, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखका है। अपनी शाक्तिभर सावधानों रखनेपर भी, हो सकते हैं। जो लेखक एक खंडके खंडको छोड़कर प्रशस्ति आदि मिलाकर प्रथको पूरा प्रकट करनेका दुःसाहस कर सकता है, उसके हारा शेष लिखाई भी ईमानदारीके साथ किये जानेकी आशा नहीं की जा सकती। पर उक्त लेखकका अभी तक हम जो परिचय धवलापर परिश्रम करके प्राप्त कर सके हैं, उसपरसे हम दढ़ताके साथ कह सकते हैं। के उसने अपना कार्य भरसक ईमानदारी और परिश्रमसे किया है। उसपरसे उसके द्वारा एक खंडको छोड़कर प्रथको पूरा प्रकट कर देने जैसे छल-कपट किये जानेकी शंका करनेको हमारा जी बिलकुल नहीं चाहता।

पर यदि ऐसा छल कपट हुआ है तो धवलाकी जांच द्वारा उसका पता लगाना भी कितन नहीं होना चाहिये । धवलाकी कुल टीकाका प्रमाण इन्द्रनन्दिने बहत्तर हजार और ब्रह्महेमने सत्तर हजार बतलाया है । हमारे सन्मुख धवलाकी तीन प्रतियां मौजूद है, जिनकी क्षोक संख्याकी हमने पूरी कठोरतासे जांच की । अमरावतीकी प्रतिमें १४६५ पत्र अर्थात् २९३० पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठपर १२ पंक्तियां लिखी गई है । प्रत्येक पंक्तिमें ६२ से ६८ तक अक्षर पाये जाते हैं जिससे औसत ६५ अक्षरोंकी ली जा सकती है । तदनुसार कुल प्रथमें २९३० × १२ × ६५ × = २२८५४०० अक्षर पाये जाते हैं जिनकी क्षोकसंख्या ३२ का भाग देकर ७१,४१५ आई । इसे सामान्य लेखेमें चाहे आप सत्तर हजार कहिये, चाहे बहत्तर हजार । कारंजा व आराकी प्रतियोंकी भी उक्त प्रकारसे जांच द्वारा प्रायः यही निष्कर्ष निकलता है । इससे तो अनुमान होता है कि प्रतियोंमेंसे एक खंडका खंड गायब होना असंभवसा है, क्योंकि उस खंडका प्रमाण और सब खंडोंको देखते हुए कमसे कम पांच सात हजार तो अवश्य रहा होगा । यह कमी प्रस्तुत प्रतियोंमें दिखाई दिये बिना नहीं रह सकती थी ।

विषयके तारतम्यकी दृष्टिसे भी धवला अपने प्रस्तुत रूपमें अपूर्ण कहीं नज़र नहीं आती। प्रथम तीन खंड तो पूरे हैं ही | चौथे वेदना खंडके आदिसे कृति आदि अनुयोगद्वार प्रारम्भ हो जाते हैं | इनमें प्रथम छह कृति, वेदना, फास, कम्म, पयि और बंधन स्वयं भगवान् भूतबिल्ध-द्वारा प्ररूपित हैं | इनके अन्तमें धवलाकारने कहा है—

^{&#}x27; शूदबिक मडारएण बेगेर्द झुर्च देसामासियभावेण किहिदं तेणेदेण सुचिद-सेस-अहारस-अणि-वोशसराणं किंचि संसेवेण परूवणं करसामो (घवका अ. पत्र १३३१).

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आचार्य मृतबिलकी रचना यहीं तक है। किन्तु उक्त प्रतिज्ञा वाक्यके अनुसार शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका वर्णन धवलाकारने स्वयं किया है और अपनी इस रचनाको उन्होंने चूलिका कहा है—

एत्तो उवरिमगंथो चुलिया णाम ।

इन्हीं अठारह अनुयोगद्वारोंकी वीरसेनद्वारा रचनाका विशद इतिहास इन्द्रनिदने अपने श्रुतावतारमें दिया है * । इसी चूलिका विभागको उन्होंने छठवां खंड भी कहा है । इसप्रकार चौवीसों अनुयोगद्वारोंके कथनके साथ प्रंय अपने स्वाभाविक रूपसे समाप्त होता है । अब यदि इन्हीं अनुयोगद्वारोंके भीतर वर्गणाखंड नहीं माना जाता तो उसके लिये कौनसा विषय व अधिकार शेष रहा और वह कहांसे छूट गया होगा ? लेखकद्वारा उसके छोड़ दिये जानेकी आशंकाको तो इस रचनामें बिलकुल ही गुंजाइश नहीं रही ।

वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ

वेदनाखंडके आदि मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी सूचनाका जो अर्थ लगाया जाता है और उससे जो गड़बड़ी उत्पन्न होती है उसका हम ऊपर परिचय करा चुके हैं। अब हमें यह देखना आवश्यक है कि उक्त भूलोंका क्या कारण है और उन अवतरणोंका ठीक अर्थ क्या है। 'उबरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु 'का अर्थ 'ऊपर कहे हुए तीन खंड ' तो हो ही नहीं सकता। पर ऐसा अर्थ किये जानेक दो कारण मालूम होते हैं। प्रथम तो 'उबरि 'से सामान्य ऊपर अर्थात् पूर्वोक्त का अर्थ ले लिया गया है और दूसरे उसकी आवश्यकता भी यों प्रतीत हुई क्योंकि आगे वर्गणा और महाबंधमें अलग मंगल करनेका उल्लेख पाया जाता है। पर खोज और विचारसे देखा जाता है कि 'उबरि ' शब्दका धवळाकारने पूर्वोक्तके अर्थमें कहीं उपयोग नहीं किया। उन्होंने उस शब्दका प्रयोग सर्वत्र 'आगे 'के अर्थमें किया है और पूर्वोक्तके लिये 'पुल्व ' या पुल्वुक्त का। उदाहरणार्थ, संतपक्षत्रणा, पृष्ट १३० पर उन्होंने कहा है—

संपिद्ध पुट्यं उत्त-पथाडिसमुक्कित्तणा · · · · · · · एदण्हं पंचण्हमुविर संपिद्ध पुट्युत्त-जहण्णद्विदि · · · · · · · · च पिक्सित्ते चूलियाए णव अहियारा भवंति ।

अर्थात् पूर्वोक्त प्रकृति समुरकीर्तनादि पांचोंके ऊपर अभी कहे गये जघन्यस्थिति आदि जोड़ देनेपर चूलिकाके नौ अधिकार हो जाते हैं। यहां ऊपर कहे जा चुकेके लिये 'पुब्बं उत्त' व 'पुब्बुत्त' शब्द प्रयुक्त हुए हैं और 'उबिर 'से आगेका तार्थिय है।

पृ. ७३ पर ' उनिर' से बने हुए उनरीदो (उपरितः) अन्ययका प्रयोग देखिये | आचार्य कहते हैं—

(money

पुरवाणुपुरवी परशाणुपुरवी जत्यसत्याणुपुरवी चेदि तिविहा आणुपुरवी। जं मूलादो परिवाडीए उच्चदे सा पुरवाणुपुरवी। तिस्से उदाहरणं 'उसहमित्रयं च वंदे'। इच्चेवमादि। जं उवरीदो हेटा परिवाडीए उच्चिद सा परशाणुपुरवी। तिस्से उदाहरणं-एस करोमि य पणमं जिणवरवसहस्स बहुमाणस्स। सेसाणं च जिणाणं सिवसुहक्षंसा विलोमेण॥

यहां यह बतलाया है कि जहां पूर्वसे पश्चात्की ओर क्रमसे गणना की जाती है उसे पूर्वानु-पूर्वी कहते हैं, जैसे 'ऋषभ और अजितनाथको नमस्कार'। पर जहां नीचे या पश्चात्से ऊपर या पूर्वकी ओर अर्थात् विलोमक्रमसे गणना की जाती है वह पश्चादानुपूर्वी कहलाती है जैसे मैं बर्द्धमान जिनेशको प्रणाम करता हूं और शेष (पार्श्वनाय, नेमिनाथ आदि) तीर्थंकरोंको भी। यहां 'उबरीदो' से तार्थ्य 'आगे' से है और पाँछे की ओरके लिये हेट्टा [अध:] शब्दका प्रयोग किया गया है।

धवलामें आगे बंधन अनुयोगद्वारकी समाप्तिके पश्चात् कहा गया है 'एत्तो उवरिमगंथो चूलिया णाम '। अर्थात् यहांसे ऊपरके ग्रंथका नाम चूलिका है। यहां भी 'उवरिम' से तास्पर्य आगे आनेवाले ग्रंथविभागसे है न कि पूर्वोक्त विभागसे।

और भी धवलामें सैकड़ें। जगह 'उबीर ' शब्दका प्रयोग हमारी दृष्टिमें इसप्रकार आया है "उबिर भण्णमाणचुण्णिषुत्तादों, " 'उबिरमिषुत्तं भणिद ' आदि । इनमें प्रस्नेक स्थलपर निर्दिष्ट सूत्र आगे दिया गया पाया जाता है। उबिरेका पूर्वेकिक अर्थमें प्रयोग हमारी दृष्टिमें नहीं आया

इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि उबरिका अर्थ आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है, प्रबेक्सि नहीं । और किर प्रकृतमें तो 'उच्चमाण 'पद इस अर्थको अध्यो तरह स्पष्ट कर देता है क्योंकि उसका अमिप्राय केवल प्रस्तुत और आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है । पर यदि आगे कहे जानेवाले तीन खंडोंका यह मंगल है तो इस बातका वर्गणा और महाबंधके आदिमें मंगलाचरणकी सूचनासे कैसे सामझस्य बैठ सकता है ! यही एक विकट स्थल है जिसने उपर्युक्त सारी गड़बड़ी विशेषरूपसे उत्पन्न की है । समस्त प्रकरणपर सब दृष्टियोंसे विचार करने पर हम स्मारी गड़बड़ी विशेषरूपसे उत्पन्न की है । समस्त प्रकरणपर सब दृष्टियोंसे विचार करने पर हम सम्पामहाबंधाणमादीर मंगल-करणादो ' की जगह 'वग्गणामहाबंधाणमादीए मंगलाकरणादो ' पाठ होना चाहिये । दीर्घ 'आ' के स्थानपर उस्व 'अ' की मात्रा की अशुद्धियां तथा अन्य स्वरोंमें भी इहस्व दीर्घके व्यवस्य इन प्रतियोंमें भरे पड़े हैं । हमें अपने संशोधनमें इसप्रकारके स्थार सैकड़ों जगह करना पढ़े हैं । यथार्थतः प्राचीन कन्नड लिपिमें इस्व और दीर्घ स्वरोंमें बहुधा विवेक नहीं किया जाता था × । हमारे अनुमान किये हुए सुधारके साथ पढ़नेसे पूर्वोक्त

[×] डा. रपाध्ये, प्रमात्मत्रकाश, भूमिका, पृ. ८३.

समस्त प्रकरण व शंका-समाधानकम ठीक बैठ जाता है। उससे उक्त दो अवतरणोंके वीचमें आये हुए उन शंका समाधानोंका अर्थ भी सुख्झ जाता है जिनका पूर्वकथित अर्थसे विख्कुछ ही सामझस्य नहीं बैठता बल्कि विरोध उत्पन्न होता है। यह पूरा प्रकरण इस प्रकार है—

उदिर उद्यमणिसु तिसु खंदेसु कस्सेदं मंगलं ? तिण्णं खंदाणं । कुदो ? वग्गणा-महाधंधाणमादीए मंगलाकरणादो । ण च मंगलेण विणा भृतविलभदारओं गंथस्स पारभिद, तस्स अणाहरियत्तपसंगादो । कधं वेयणाए आदीए उत्तं मंगलं सेस दो-खंदाणं होदि ? ण, कदीए आदिम्ह उत्तस एदस्सेव मंगलस्स सेसवैषीस अणियोगहरेसु प्रतिदंसणादो । महाकम्मप्यीदपाहुहत्त्रणेण चडवीसण्हमणियोगहराणं भेदाभावादो एगतं, तदो एगस्स एयं मंगलं तथ्य ण विक्त्रप्तदे । ण च एदेसि तिण्हं खंदाणमेयत्तमेगलंहतपसंगादो ति, ण एस दोसो, महाकम्मप्यदिपाहुहत्त्रणेण एदेसि पि एगत्तदंसणादो । कदि-पास-मम्मप्यदि-अणियोगहराणि वि एथ्य पह्नविदाणि, तेसि खंदगंथसण्णमकाळण तिण्णे चेव खंदाणि वि किमटुं उखदे ? ण, तेसि पहाणताभावादो । तं पि कुदो णवादे ? संसेवेण पह्नवणादो ।

इसका अनुवाद इस प्रकार होगा--

शंका—आगे कहे जाने वाले तीन खंडो (वेदना वर्गणा और महाबंध) में से किस खंड का यह मंगलाचरण है ?

समाधान - तीनों खंडोंका !

शंका - कैसे जाना ?

समाधान — वर्गणाखंड और महाबंध खंडके आदिमें मंगल न किये जानेसे। मंगल-किये विना तो भूतबिल भट्टारक प्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते क्योंकि इससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है।

शंका - वेदनाके आदिमें कहा गया मंगल शेष दो खंडोंका भी कैसे हो जाता है !

समाधान—क्योंकि कृतिके आदिमें किये गये इस मंगलकी शेष तेबीस अनुयोगद्वारींमें भी प्रवृत्ति देखी जाती है।

श्रंका — महाकर्मप्रकृतिपाहु डत्वकी अपेक्षासे चौवीसों अनुयोगद्वारों में येद न होनेसे उनमें एकत्व है, इसाछिये एकका यह मंगछ रोप तेवीसोंमें विरोधको प्राप्त नहीं होता। परंतु इन तीनों खंडोंमें तो एकत्व है नहीं, क्योंकि तीनोंमें एकत्व मान छेनेपर तीनोंके एक खंडत्वका प्रसंग आजाता है?

समाधान — यह कोई दोप नहीं, क्योंकि-महाकर्मप्रकृतिपाहुड त्वकी अपेक्षासे इनमें भी एकत्व देखा जाता है।

श्रंका — कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां (प्रंथके इस भागमें) प्ररूपित किये गये हैं, उनकी भी खंड प्रंथ संज्ञा न करके तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं ! समाधान—क्योंकि इनमें प्रधानताका अभाव है। भंका—यह कैसे जाना ? समाधान—उनका संक्षेपमें प्ररूपण किया गया है इससे जाना।

इस परसे यह बात रुपष्ट समझमें आजाती है कि उक्त मंगळाचरणका सम्बन्ध बंध-सामित और खुदाबंध खंडोंसे वैठाना बिलकुल निर्मूल, अस्वाभाविक, अनावस्यक और धवलाकार के मतसे सर्वथा विरुद्ध है। हम यह भी जान जाते हैं कि वर्गणाखंड और महाबंधके आदिमें कोई मंगलाचरण नहीं है. इसी मंगलाचरणका अधिकार उनपर चाल रहेगा। और हमें यह भी सूचना मिल जाती है कि उक्त मंगलके अधिकारान्तर्गत तीनों खंड अर्थात बेदना, बर्गणा और महाबंध प्रस्तुत अनुयोगद्वारोंसे बाहर नहीं हैं। वे किन अनुयागद्वारोंके भीतर गर्भित हैं यह भी संकेत धवलाकार यहां स्पष्ट दे रहे हैं। खंड संज्ञा प्राप्त न होने की शिकायत किन अनुयोग-द्वारोंकी ओरसे उठाई गई? कदि, पास, कम्म और पयिंड अनुयोगद्वारोंकी ओरसे। बेदणा-अनयोगद्वारका यहां उल्लेख नहीं है क्योंकि उसे खंड संज्ञा प्राप्त है। धवळाकारने बंधन अनुयोगद्वारका उल्लेख यहां जान बुझकर छोडा है क्योंिक बंधनके ही एक अवान्तर भेद वर्गणासे वर्गणाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है और उसके एक दूसरे उपभेद बंधविधानपर महाबंधकी एक मध्य इमारत खडी है। जीवहाण, खुडाबंध और बंधसामित्ताविचय भी इसीके ही भेट प्रभेदोंके सुफल हैं। इसलिये उन सबसे भाग्यवान पांच पांच यशस्वी संतानके जन्यिता बंधनको खंड संज्ञा प्राप्त न होने की कोई शिकायत नहीं थी। शेष अठारह अनयोगद्वारोंका उद्घेख न करनेका कारण यह है कि भूतबिल भट्टारकने उनका प्रह्मपण ही नहीं किया। भूतबिलकी रचना तो बंधन अनुयोगद्वारके साथ ही, महाबंध पूर्ण होने पर, समाप्त हो जाती है जैसा हम जपर बतला चुके हैं।

इसी अवतरणसे ऊपर धनलाकारने जो कुछ कहा है उससे प्रकृत विषयपर और भी बहुत विशद प्रकाश पड़ता है। वह प्रकरण इसप्रकार है—

तत्थेदं किं णिबद्धमाहो अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्धमंगलिमेदं महाकम्मपयशीपाहुडस्स किंद्-यादि-चउवीसअणियोगावयवस्य भादीए गोदमसामिणा परुविदस्स भूतविलभडारएण वेथणाखंडस्स आदीए मंगलट्टं तत्तो आणेद्ण ठिवदस्स णिबद्धत्तविरोहादो । ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयडीपाहुडं अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो । ण च भूतवली गोदमो विगलसुद्धारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदबिलस्स सयल-सुद्धारयबद्धमाणंतेवासिगोदमत्तविरोहादो । ण चाण्णो पयारो णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो आध्य । तम्हा अणिबद्धमंगलिमेदं । अधवा होतु णिबद्धमंगलं । कथं वेयणाखंडादिखंडगयस्स महाकम्मपयिष्ठपाहुडतं ? ण, किद्या (दि) चडवीस-अणियोगइरिहितो एयंतेण पुधभूदमहाकम्मपयिष्ठपाहुडाभाषादो । एदेसिमाणियोगइराणं कम्मपयिष्ठपाहुडते संते पाहुड-चड्तं पसजदे ? ण एस दोसो, कथंबि इष्डिज्ञमाणतादो । कथं वेयणाए महापरिमाणाप् उवसंहारस्य इमस्य वेषणासंबद्ध वेषणा-मावो १ण, अवयवेद्दितो पृषंतेण पुष्पपूर्त्स अवयविद्स्य अगुवलंभादो। ण च वेषणाए बहुतमणिद्धिमिष्ण्यमाणतादो । कवं भृदविक्ष्य गोदमतं १ किं तस्य गोदमतेण १ कथमण्णहा मंगलस्य णिवदत्तं १ ण, भृदविक्षस्य खंड-गंथं पढि कतारतामाणादी । ण च अण्णेण कथ-गंथा-हियाराणं एगदेसस्य प्रत्वहा (पुष्टिवल्ल) सदस्य-संदद्धस्य प्रस्वको कतारो होदि, अह्प्यसंगादो । अथवा भृदवल्ली गोदमो चेव एगाहिष्णावतादो । तदो हिन्दं णिवद्धमंगलतं पि । उवि विकास हिन्दु संदेष्ठ ... इत्यादि ।

१ शंका - इनमें से, अर्थात् निबद्ध और अनिबद्ध मंगलों मेंसे, यह मंगल निबद्ध है या अनिबद्ध ?

समाधान—यह निबद्ध मंगल नहीं है, क्यों।के कृति आदि चीवीस अवयवींबाले महाकर्मप्रकृतिपाहुडके आदिमें गोतमश्वामीद्वारा इसका प्ररूपण किया गया है । भूतबिल श्वामीने उसे वहांसे लाकर वेदनाखंडके आदिमें मंगलके निमित्त रख दिया है। इसलिये उसमें निबद्धत्वका विरोध है। वेदनाखंड कुछ महाकर्मप्रकृतिपाहुड तो है नहीं, क्योंकि अवयवकी ही अवयवी माननेमें विरोध आता है। और भूतबिल गौतमस्त्रामी हो नहीं सकते, ब्योंकि विकल श्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य ऐसे भूतबिल में सकलश्रुतके धारक और वर्धमानस्वामीके शिष्य ऐसे गौतमपनेका विरोध है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगलपनेका हेतु होता नहीं है, इसलिये यह मंगल अनिबद्ध मंगल है। अथवा, यह निबद्ध मंगल भी हो सकता है।

२ शंका — वेदन। खंड अ। दि खंडों में समाविष्ट (प्रंथ) को महाकर्मप्रकृतिपाहुड पना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान—क्योंकि कृति आदि चौत्रीस अनुयोगद्वारों से सर्वया पृथक्भूत महाकर्मप्रकृति-पाइडकी कोई सत्ता नहीं है।

३ शंका—इन अनुयोगद्वारोंमें कर्मप्रकृतिपाहुडल मान छेनेसे तो बहुतसे पाहुड माननेका प्रसंग आ जाता है !

समाधान — यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि यह बात कथंचित् अर्थात् एक दृष्टिसे अभी है।

४ श्रंका—महापरिमाणवाली वेदनाके उपसंहाररूप इस वेदनाखंडको वेदना अनुयोगद्वार कैसे माना जाय!

समाधान — ऐसा नहीं है, क्योंकि अवयवोंसे एकान्ततः पृथक्भूत अवयवी तो पाया नहीं जाता । और इससे यदि एकसे अधिक वेदना माननेका प्रसंग आता है तो वेदनाके बहुत्वसे कोई अनिष्ट भी नहीं, क्योंकि वह बात इष्ट ही है ।

५ शंका-भूतबिक्की गीतम कैसे मान लिया जाय ?

समाधान-भूतबिको गौतम माननेका प्रयोजन ही क्या है ?

६ शंका - यदि भूतविको गौतम न माना जाय तो मंगळको निवद्धपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान - क्योंकि भूतबिलके खंडप्रंथके प्रति कर्तापनेका अभाव है। कुछ दूसरे के द्वारा रचे गये प्रंथाधिकारोंमेंसे एक देशका पूर्व प्रकारसे ही शब्दार्थ और संदर्भका प्रक्रपण करनेवाला प्रंथकर्ता नहीं हो सकता क्योंकि इससे तो अतिप्रसंग दोष अर्थात् एक प्रंथके अनेक कर्ता होनेका प्रसंग आ जायगा। अथवा, दोनोंका एक ही अभिप्राय होनेसे भूतविल गीतम ही है। इसप्रकार यहां निबद्ध मंगलत्व भी सिद्ध हो जाता है।

यहांपर प्रथम शंका समाधानमें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत पूरा
वेदना और वर्गणामहाकम्मपयिद्धपाहुडका विषय नहीं है—वह उस पाहुडका एक अवयव
मात्र है, अर्थात् उसमें उक्त पाहुडके चौबीसों अनुयोगद्वारोंका अन्तर्भाव
नहीं किया जा सकता। महाकर्मप्रकृतिपाहुड अवयवी है और वेदनाखंड
सीमाओंका निर्णय
उसका एक अवयव।

दूसरे शंका समाधानसे यह सूचना मिलती है कि कृति आदि चौवांस अनुयोगद्वारोंमें अकेला वेदनाखंड नहीं फैला है, वेदना आदि खंड हैं अर्थात् वर्गणा और महाबंधका भी अन्तर्भाव वहीं है। तीसरे शंका समाधानमें कर्भप्रकृतिपाहुड के कृति आदि अवपवोंमें भी एक दृष्टिसे पाहुडपना स्थापित करके चौथेमें स्पष्ट निर्देश किया गया है कि वेदनाखंडमें गौतमस्यामीकृत बड़े विस्तारवाले वेदना अधिकारका ही उपसंहार अर्थात् संक्षेप है। यह वेदना धवलाकी अ. प्रतिमें पृ. ७५६ पर प्रारम्भ होती है जहां कहा गया है—

कम्महजणियवेयण-उवहि-समुत्तिण्णए जिणे णमिउँ । वेयणमङाहियारं विविद्वहियारं परूवेमो ॥

और वह उक्त प्रतिके ११०६ वें पत्रपर समाप्त होती है जहां लिखा मिलता है--

इसप्रकार इस पुष्पिकावाक्यमें अशुद्धि होते हुए भी वहां वेदनाखंडकी समाप्तिमें कोई श्रेका नहीं रह जाती।

पांचवें और छठवें शंका समाधानमें भूतबिल और गौतममें प्रंथकर्ता व अभिप्रायकी अपेक्षा एकत्व स्थापित किया गया है जो सहज ही समझमें आजाता है। इसप्रकार उक्त मंगल निबद्ध भी सिद्ध करके बता दिया गया है।

इसप्रकार उक्त शंका समाधानसे वेदनाखंडकी दोनों सीमार्थे निश्चित हो जाती हैं। कृति तो वेदनाखंडके अन्तर्गत है ही क्योंकि उक्त शंका समाधानकी सूचनाके अतिरिक्त मंगला-चरणके साथ ही वेदनाखंडका प्रारंभ माना ही गया है।

वेदनाखंडके विस्तारका एक और प्रमाण उपलब्ध है । टीकाकारने उसका परिमाण सीलह हजार पद बतलाया है। यया, 'खंडगंथं पडुच वेयणाए सोलसपदसहस्साणि''। यह पद—संख्या भूतबिकृत सूत्र—प्रंथकी अपेक्षासे ही होना चाहिये। अतएव जबतक यह न क्वात हो जावे कि पदसे यहां धवलाकारका क्या तायर्थ है तथा वेदनादि खंडोंके सूत्र अलग करके उन पर वह माप न लगाया जावे तबतक इस सूचनाका हम अपनी जांचमें विशेष उपयोग नहीं कर सकते। तो भी चूंकि टीकाकारने एक अन्य खंडकी भी इसप्रकार पद संख्या दी है और उस खंडकी सीमादिके विषयमें कोई विवाद नहीं है इसिल्ये हमें उनकी तुलनासे कुछ आपेक्षिक ज्ञान अवश्य हो जायगा। धवलाकारने जीवहाण खंडकी पद संख्या अठारह हजार बतलाई है—'पदं पडुच अहारहपदसहरसं' (संत प. पृ. ६०). इससे यह ज्ञात हुआ कि वेदनाखंडका परिमाण जीवहाणसे नवमांश कम है। जीवहाण के ४७५ पत्रोंका नवमांश लगभग होना चाहिये। उत्पर निर्धारित सीमाके अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रत्यक्षमें ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रत्यक्षमें ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रत्यक्षमें ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुसार वेदनाकी अपेक्षा वेदनालंड धवला के तिगुनेसे भी अधिक बड़ा हो जाता है।

जब वेदनाखंडका उपसंहार वेदनानुयोगद्वारके साथ हो गया तब प्रश्न उठता है कि वर्गणा निर्णय उसके आगेके फास आदि अनुयोगद्वार किस खंडके अंग रहे ? ऊपर वेदनिद तीन खंडोंके उल्लेखोंके निवेचन से यह स्पष्ट ही है कि वेदनाके पश्चात् वर्गणा और उसके पश्चात् महाबंधकी रचना है। महाबंधकी सीमा निश्चितरूपसे निर्दिष्ट है क्योंकि धवलामें स्पष्ट कर दिया गया है कि बन्धन अनुयोगद्वारके चौथे प्रभेद बन्धविधानके चार प्रकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशबंधका विधान भूतबिल भट्टारकने महाबंधमें विस्तारसे लिखा है, इसिल्ये वह धवलाके भीतर नहीं लिखा गया। अतः यहींतक वर्गणाखंडकी सीमा समझना चाहिये। वहांसे आगेके निबन्धनादि अठारह अधिकार टीकाकी सूचनानुसार चूलिका स्प हैं। वे टीकाकार कृत हैं भूतबल्कि रचना नहीं हैं।

उक्त खंड विभागको सर्वभा प्रामाणिक सिद्ध करनेके क्रिये अब केवळ उस प्रकारके किसी प्राचीन विश्वसनीय स्पष्ट उद्घेलमाञ्जली अपेक्ष्ण और रह जाती है। सीमाम्बसे पेक्स पक्र उद्घेख भी हमें प्राप्त हो गया है। मृडविद्रीके पं. छोकनायजी शासीने वीरवाणीविछास जैन सिद्धांतमवनकी प्रथम वार्षिक रिपोर्ट (१९३५) में मृडविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिपरसे महाधवछ (महाबंध) का कुछ पिरचय अवतरणों सिहत दिया है। इससे प्रथम बात तो यह जानी जाती है कि पंडितजीको उस प्रतिमें कोई मंगछाचरण देखनेको नहीं मिछा। वे रिपोर्ट में छिखते हैं "इसमें मंगछाचरण छोक, प्रथकी प्रशस्ति वगैरह कुछ भी नहीं है।" पं. छोकनाथजी की यह रिपोर्ट महत्वपूर्ण है क्योंकि पंडितजीने प्रथको केवछ उत्पर नीचे ही नहीं देखा—उन्होंने कोई चार वर्षतक परिश्रम करके पूरे महाधवछ प्रथकी नागरी प्रतिछिपि तैयार की है जैसा कि हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें बतछा आये हैं। अतएव उस प्रथका एक एक शब्द उनकी दिष्ट और कछमसे गुजर चुका है। उनके मतसे पूर्वोक्त 'मंगछकरणादो ' पदमें हमारे 'मंगछाकरणादो' कप सुधार की पृष्टि होती है—

दूसरी बात जो महाधवलके अवतरणोंमें हमें भिलती है वह खंडिविभागसे संबंध रखती है। महाबंधरर कोई पंचिका भी उस प्रतिमें प्रयित है जैसा कि अवतरणकी प्रथम पंक्तिसे ज्ञात होता है—

' वोच्छामि संतक्षमे पंचियरूवेण विवरणं सुमहर्थं ?

इसी पंचिकाकारने आगे चलकर कहा है--

' महाक्रमपयदिपाहुहस्स कदि-वेदणाओ(दि) चौव्वीसमणियोगहारेसु तत्य कदि-वेदणा ति जाणि अणियोगहाराणि वेदणाखंडिन्ह, पुणो पास (-क्रम-पयहि-बंधणाणि) चत्तारि अणियोगदारेसु तत्य बंध बंधणिजाणामणियोगेहि सह वरगणाखंडिन्ह, पुणो बंधविधाणमाणियोगो खुदाबंधिन सप्पवंचेण परूबिदाणि। पुणो वेहितो सेसद्वारसणियोगदाराणि सत्तकम्मे सन्वाणि परूबिदाणि। तो वि तस्सद्वंभीरत्तादो अत्यविसम-पदाणमत्ये थोस्द्वयेण पंचियसरूवेण अणिदसामो ' ×।

इस अवतरणमें शब्दोंमें अशुद्धियां हैं। कोण्टकके भीतरके सुधार या जोड़े हुए पाठ मेरे हैं। पर उसपरसे तथा इससे आगे जो कुछ कहा गया है उससे यह स्पष्ट जान पड़ा कि यहां निबंधनादि अठारह अधिकारोंकी पंजिका दी गई है। उन अठारह अधिकारोंका नाम 'सत्तकम्म' या, जिससे इन्द्रनन्दिके सत्कर्मसंबंधी उल्लेखकी पूरी पुष्टि होती है। प्राप्त अवतरण परसे महाधवलकी प्रति व उसके विषय आदिके संबंधमें अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं, और प्रतिकी परीक्षाकी बड़ी अभिलाषा उत्पन्न होती है, किन्तु उस सबका नियंत्रण करके प्रकृत विषय-पर आनेसे उक्त अवतरणमें प्रस्तुतोपयोगी यह बात स्पष्ट रूपसे माल्रम हो जाती है, कि कृति

× यह अवतरण सं. प. जिल्द १ की भूमिका पृ. ६८ पर दिया जा चुका है। ' पर वहां भूछसे 'पुणी ते-हिंतो ' आदि बाक्य छूट गया है। जतः प्रकृतीपयोगी उस अवतरणको वहां फिर पूरा दे दिया है। और वेदना अनुयोगद्वार वेदनाखंडके तथा फास, कम्म, पयिंड और बंधनके बंध और बंधनीय भेद वर्गणाखंडके भीतर हैं। इससे हमारे विषयका निर्विवादरूपसे निर्णय हो जाता है।

प्रथम जिल्दकी भूमिकामें ठीक इसीप्रकार खंडविभागका परिचय कराया जा चुका है उस परिचयकी ओर पाठकोंका ध्यान पुनः आकर्षित किया जाता है।

४. णमोकार मंत्रके आदिकर्ता.

8

जो स्याति और प्रचार हिन्दुओं में गायत्री मन्त्रका है तथा बौद्धों में त्रिसरण मन्त्रका था, वहीं जैनियों में णमोकार मन्त्रका है। धार्भिक तथा सामाजिक सभी कृत्यों व विधानों के आरम्भमें जैनी इस मन्त्रका उच्चारण करते हैं। यही उनका दैनिक जपमन्त्र है। इसकी प्रस्थातिका एक प्रा निम्न प्रकार है, जो नित्य पूजनविधान में उच्चारण किया जाता है—

एसो पंच-णमोयारो सन्वपापप्पणासणो | मंगलाणं च सन्वेसि पढमं होह मंगळं ॥

अर्थात् यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलोंमें प्रथम [श्रेष्ठ] मंगल है।

इस मन्त्रका प्रचार जैनियोंके तीनों सम्प्रदायों -दिगम्बर, श्वेताम्बर और स्थानकवासियोंमें समानरूपसे पाया जाता है। तीनों सम्प्रदायोंके प्राचीनतम साहित्यमें भी इसका उल्लेख मिलता है। किंतु अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इस मन्त्रके आदिकर्ता कीन हैं। यथार्थतः यह प्रश्न ही अभी तक किसी ने नहीं उठाया और इस कारण इस मन्त्रको अनादिनिधन जैसा पद प्राप्त हो गया है।

किन्तु षट्खंडागम और उसकी टीका धवलाके अवकोकनसे इस णमोकार मन्त्रके कर्तृत्वके सम्बन्धमें कुछ प्रकाश पड़ता है, और इसीका यहां परिचय कराया जाता है।

षट्खंडागमका प्रथम खण्ड जीवट्ठाण है और इस खंडके प्रारम्भमें यही सुप्रसिद्ध मन्त्र पाया जाता है। टीकाकार वीरसेनाचार्यके अनुसार यही उक्त प्रन्यका स्त्रकारकृत मंगळाचरण है। वे लिखते हैं कि—

मंगल-णिमित्त-हेऊ-परिमाणं णाम तह य कत्तारं । वागरिय छप्पि पच्छा वक्साणड सत्थमाइरियो ॥ इदि णायमाइरिय-परंपरागयं मणेणावहारिय पुष्वाइरियायार।णुसरणं तिरयणहेउ ति पुष्कदंताइ-रियो मंगळादीणं छण्णं सकारणाणं परूवणहं सुत्तमाइ---

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्ज्ञायाणं, णमो छोए सब्बसाइ्णं॥ (सं॰ प॰ ३, पृ॰ ७)

अर्थात् ' मंगल, निमित्त, हेतु परिमाण, नाम और कर्ता. इन छहीं का प्रकरण करके

पश्चात् आचार्यको शास्त्रका व्याख्यान करना चाहिये। ' इस आचार्य परम्परागत न्याय को मनमें धारण करके पुष्पदन्ताचार्य मंगलादि छहोंके सकारण प्ररूपणेक लिये सूत्र कहते हैं, ' णमो अरिहंताणं ' आदि।

इसके आगे धवलाकारने इसी मंगलसूत्रको 'तालपलंब' सूत्रके समान देशामर्पक बतलाकर पूर्वोक्त मंगल, निमित्त आदि छहों का प्ररूपक सिद्ध किया है। तत्पश्चात् मंगल शब्दकी ब्युत्पत्ति व अनेक दृष्टियोंसे भेद प्रभेद बतलाते हुए मंगलके दो भेद इसप्रकार किये हैं—

तच मंगरुं दुविहं णिबद्धमणिबद्धमिदि । तत्थ णिबद्धं णाम जो सुत्तस्तादीण सुत्तकत्तारेण णिबद्ध-देवदा-णमोक्कारो तं णिबद्ध-मंगरुं । जो सुत्तस्तादीण सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिबद्ध-मंगरुं । इदं पुण जीवट्टाणं णिबद्ध-मंगरुं, यत्तो 'इमेसिं चोइसण्हं जीवसमाणं ' इदि एदस्स सुत्तस्सादीण णिबद्ध-'णमो अरिहंताणं 'इच्चादिदेवदा-णमोक्कारदंसणादो ।

(सं॰ प॰ १, पृ० ४१)

अर्थात् मंगल दे। प्रकारका है, निबद्ध और अनिबद्ध । सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा जो देवता-नमस्कार निबद्ध किया जाय वह निबद्ध मंगल है और जो सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा देवताको नमस्कार किया जाता है (किन्तु वह नमस्कार लिपिबद्ध नहीं किया जाता) वह अनिबद्ध-मंगल है। यह जीवट्ठाणं निबद्ध मंगल है, क्योंकि इसके 'इमेसि चोद्दसण्हं' आदिसूत्रके पूर्व 'णमो आरिहंताणं' इस्यादि देवतानमस्कार पाया जाता है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि जीवट्टाणके आदिमें जो यह णमोकार मंत्र पाया जाता है वह स्त्रकार पुष्पदन्त आचार्य द्वारा ही वहां रखा गया है और इससे उस शास्त्रको निबद्ध-मंगल संज्ञा प्राप्त हो जाती है। किन्तु इससे यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि यह मंगलस्त्र खयं पुष्प-दन्ताचार्यने रचकर यहां निबद्ध किया है, या कहीं अन्यत्र से लेकर यहां रख दिया है। पर अन्यत्र धवलाकार ने इसका भी निर्णय किया है।

वेदनाखंडके आदिमें 'णमो जिणाणं ' आदि मंगलसूत्र पाये जाते हैं, जिनकी टीका करते हुए धवलाकारने उनके निबद्ध आनिबद्ध स्वरूप का विवेचन किया है। वे लिखते है—

तत्थेदं कि णिबद्धमाहो अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्ध-मंगलिमदं, महाकम्मपयिद्धपाहुदस्स किदियादि-चउवीस-अणियोगावयवस्स आदीण गोदमसामिणा परूविदस्स भूदबलिभडारण्ण वेयणाखंडस्स आदीण मंगलहं तत्तो आणेद्ण ठिवदस्स णिबद्धत्त-विरोहादो । ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयिद्धपाहुढं अवयवस्स अवयित्तविरोहादो । ण च भूदबली गोदमो, विगल्खदुदधारयस्स धरसेणाहरियसीसस्स भूदबलिस्स स्यलसुद्धारयबङ्कमाणंतेवासि-गोदमत्तविरोहादो । ण चाण्णो पयारे णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अरिथ ।

अर्थात् यह मंगल (णमो जिणाणं, आदि) निबद्ध है या अनिबद्ध ! यह निबद्ध-मंगल तो नहीं है क्योंकि महाकर्मप्रकृतिपाद्धडके कृति आदि चौवीस अनुयोगद्वारोंके आदिमें गौतमस्वामीने इस मंगलका प्ररूपण किया है और भूतबिल भट्टारकने उसे वहांसे उठाकर मंगलार्थ यहां वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, इससे इसके निबद्ध-मंगल होनेमें विरोध आता है। न तो वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिपाहुड है, क्योंकि अवयवको अवयवी माननेमें विरोध आता है। और न भूतबली ही गौतम हैं क्योंकि विकलश्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य मूतबलिको सकलश्रुतके धारक और वर्धमानस्वामीके शिष्य गौतम माननेमें विरोध उत्पन्न होता है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगलत्वका हेतु हो नहीं सकता।

आगे टीकाकारने इस मंगलको निवद्धमंगल भी भिद्ध करने का प्रयत्न किया है, पर इसके लिये उन्हें प्रस्तुत प्रन्थका महाक्षेप्रकृतिपाहुडसे तथा भूतबिल्स्वामीका गौतमस्वामीसे बड़ी खींचातानी द्वारा एकत्व स्थापित करना पड़ा है। इससे धवलाकारका यह मत बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि दूसरेके बनाये हुए मंगलको अपने प्रन्थमें जोड़ देनेसे वह शास निवद्ध—मंगल नहीं कहला सकता, निवद्ध—मंगलत्वकी प्राप्तिके लिये मंगल प्रन्थकारकी ही मौलिक रचना होना चाहिये। अतएक जब कि धवलाकार जीवहाणको णमोकार मन्त्रकृत मंगलके होनेसे निवद्ध—मंगल मानते हैं तब वे स्पष्टतः उस मंगलस्वको स्वकार प्रवदन्तकी ही मौलिक रचना स्वीकार करते है, वे यह नहीं मानते कि उस मंगलको उन्होंने अन्यत्र कहीं से लिया है। इससे धवलाकार आचार्य वीरसेनका यह मत सिद्ध हुआ कि इस सुप्रसिद्ध णमोकार मंत्रके आदिकर्ता प्रातः स्मरणीय आचार्य पुष्पदन्त ही हैं।

2

णमोकार मंत्रके संबन्धमें श्वेताम्बर सम्प्रदायकी क्या मान्यता है और उसका पूर्वोक्त मतसे कहां तक सामञ्जरय या वेपम्य है, इस पर भी यहां कुछ विचार किया जाता है। श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत छह छेदसूत्रोंमें से द्वितीय सूत्र ' महानिशीय ' नामका है। इस सूत्रमें णमोकार मन्त्रके विषयमें निम्न वार्ता पायी जाती है —

एवं तु जं पंचमंगलमहासुयवर्षंघस्स वक्षाणं तं मह्या प्रवंधेणं अणंतगमप्रजावेहिं सुत्तस्स य पियभूयाहिं जिज्जुत्ति-भास-चुन्नीहिं जहेव अणंत-नाण-दंशणधरेहिं तिरथयरेहिं वक्ष्याणियं तहेव समासओ वक्षाणियं तं आसि । अहऽन्नया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ णिय्जुत्ति-भास-चुन्नीओ वुव्छिन्नाओ । इओ य वश्वेतंणं कालेणं समण्णं महिड्डियते प्याणुसारी वहरसामी नाम दुवालसंगसुभहरे समुपन्ने । तेण य पंच-मंगल-महासुयक्षंघस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मञ्जे लिहिओ । मूलसुत्तं पुण सुत्तप्ताणु गणहरेहिं अथ्यत्ताणु भरिहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतिरथयरेहिं तिलोगमहिणुहिं वीरजिणिदेहिं पन्नवियं ति एस बुङ्कसंप्याओ ।

(महानिशीय सूत्र, अध्याय ५)

इसका अर्थ यह है कि इस पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका व्याख्यान महान प्रबंधसे, अनन्त गम और पर्यायों सहित, सूत्रकी प्रियभूत निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियों द्वारा जैसा अनन्त ज्ञान-दर्शनके पश्चात् आचार्यको शास्त्रका व्याख्यान करना चाहिये। ' इस आचार्य परम्परागत न्याय को मनमें धारण करके पुष्पदन्ताचार्य मंगलादि छहोंके सकारण प्ररूपणेक लिये सूत्र कहते हैं, ' णमो अरिहंताणं ' आदि।

इसके आगे धवलाकारने इसी मंगलमूत्रको 'तालपलंब' सूत्रके समान देशामर्पक बतलाकर पूर्वोक्त मंगल, निमित्त आदि लहीं का प्ररूपक सिद्ध किया है। तस्पश्चात् मंगल शब्दकी ब्युत्पत्ति व अनेक दृष्टियोंसे भेद प्रभेद बतलाते हुए मंगलके दो भेद इसप्रकार किये हैं—

तच मंगलं दुविहं णिबद्धमणिबद्धमिदि । तत्थ णिबद्धं णाम जो सुत्तस्तादीए सुत्तकत्तारेण णिबद्ध-देवदा-णमोक्कारो तं णिबद्ध-मंगलं । जो सुत्तस्तादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिबद्ध-मंगलं । इदं पुण जीवद्वाणं णिबद्ध-मंगलं, यत्तो 'इमेसिं चोइसण्हं जीवसमाणं ' इदि एदस्स सुत्तस्तादीए णिबद्ध-'णमो अरिहंताणं 'इच्चादिदेवदा-णमोक्कारदंसणादो ।

(सं० प० १, पू० ४१)

अर्थात् मंगल दो प्रकारका है, निबद्ध और अनिबद्ध । सूत्रके आदिमें सूत्रकर्त्ता द्वारा जो देवता-नमस्कार निबद्ध किया जाय वह निवद्ध मंगल है और जो सूत्रको आदिमें सूत्रकर्त्ता द्वारा देवताको नमस्कार किया जाता है (किन्तु वह नमस्कार लिपिबद्ध नहीं किया जाता) वह अनिबद्ध-मंगल है । यह जीबद्धाणं निबद्ध मंगल है, क्योंकि इसके 'इमेसि चोइसण्हं' आदिसूत्रके पूर्व 'णमो अरिहंताणं' इस्यदि देवतानमस्कार पाया जाता है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि जीबट्टाणके आदिमें जो यह णमोकार मंत्र पाया जाता है वह सूत्रकार पुष्पदन्त आचार्य द्वारा ही वहां रखा गया है और इससे उस शासको निवद्ध-मंगल संज्ञा प्राप्त हो जाती है। किन्तु इससे यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि यह मंगलसूत्र खयं पुष्प-दन्ताचार्यने रचकर यहां निबद्ध किया है, या कहीं अन्यत्र से लेकर यहां रख दिया है। पर अन्यत्र धवलाकार ने इसका भी निर्णय किया है।

वेदनाखंडके आदिमें 'णमो जिणाणं' आदि मंगलसूत्र पाये जाते हैं, जिनकी टीका करते हुए धवलाकारने उनके निबद्ध अनिबद्ध स्वरूप का विवेचन किया है। वे लिखते है--

तत्थेदं कि णिबद्धमाहो अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्ध-मंगलिमदं, महाकम्मपयिद्वपाहुउस्स किदियादि-चउवीस-अणियोगावयवस्स आदीए गोदमसामिणा परूविदस्स भूद्रबलिभडारएण वेयणाखंडस्स आदीए मंगलट्टं तत्तो आणेद्रण ठिवदस्स णिबद्धत-विरोहादो । ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयिद्वपाहुडं अवयवस्स अवयवित्तिरोहादो । ण च मूद्रबली गोदमो, विगलसुद्रधारयस्स धरसेणाह्रियसीसस्स मूद्रबलिस्स स्रयलसुद्रधारयबङ्कमाणंतेवासि-गोद्मत्तिविरोहादो। ण चाण्णो प्यारा णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अरिथ ।

अर्थात् यह मंगल (णमो जिणाणं, आदि) निबद्ध है या अनिबद्ध ! यह निबद्ध-मंगल तो नहीं है क्योंकि महाकर्मप्रकृतिपाद्धडके कृति आदि चौवीस अनुयोगद्वारोंके आदिमें गौतमस्त्रामीने इस मंगलका प्ररूपण किया है और भूतबिल भद्रास्कने उसे बहांसे उठाकर मंगलार्थ यहां वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, इससे इसके निबद्ध-मंगल होनेमें विरोध आता है। न तो वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिपाहुड है, क्योंकि अवयवको अवयवी माननेमें विरोध आता है। और न भूतबली ही गौतम हैं क्योंकि विकलश्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य भूतबिलको सकलश्रुतके धारक और वर्धमानस्वामीके शिष्य गौतम माननेमें विरोध उत्पन्न होता है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगललका हेतु हो नहीं सकता।

आगे टीकाकारने इस मंगलको। निबद्धमंगल भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया है, पर इसके लिये उन्हें प्रस्तुत प्रन्थका महाकमप्रकृतिपाहुडसे तथा भूतबिलस्वामीका गौतमस्वामीसे बड़ी खींचातानी द्वारा एकत्व स्थापित करना पड़ा है। इससे धवलाकारका यह मत बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि दूसरेके बनाये हुए मंगलको अपने प्रन्थमें जोड़ देनेसे वह शास्त्र निबद्ध—मंगल नहीं कहला सकता, निबद्ध—मंगलत्वकी प्राप्तिके लिये मंगल प्रन्थकारकी ही मीलिक रचना होना चाहिये। अतल्ब जब कि धवलाकार जीवहाणको एमोकार मन्त्रकृप मंगलके होनेसे निबद्ध—मंगल मानते है तब वे स्पष्टतः उस मंगलस्वत्रको स्त्रकार पुष्पदन्तकी ही मीलिक रचना स्वीकार करते हैं, वे यह नहीं मानते कि उस मंगलको उन्होंने अन्यश्च कहीं से लिया है। इससे धवलाकार आचार्य वीरसेनका यह मत सिद्ध हुआ कि इस सुप्रसिद्ध एमोकार मंत्रके आदिकर्ता प्राप्तः स्मरणीय आचार्य पुष्पदन्त ही है।

5

णमोकार मैलके संबन्धमें श्वेनाम्बर सम्प्रदायकी क्या मान्यता है और उसका पूर्वोक्त मतसे कहां तक सामञ्जस्य या वेपम्य है, इस पर भी यहां कुछ विचार किया जाता है। श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत छह छेदसूत्रोंमेंसे द्वितीय सूत्र ' महानिशीय ' नामका है। इस सूत्रमें णमोकार मन्त्रके विषयमें निम्न वार्ता पायी जाती है —

एवं तु जं पंचमंगलमहासुयक्लंधस्स वक्लाणं तं महया पबधेणं अणंतगमप्रजावेदि सुत्तस्स य पियभूयाहि णिउजुति-भास-चुन्नीहि जहेव अणंत-नाण-दंशणधरेहि तित्थयरेहि वक्लाणियं तहेव समासओ वक्लाणिउनं तं आसि । अहऽन्नया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ णिउजुत्ति-भास-चुन्नीओ वुच्छिन्नाओ । इश्रो य वक्षंतेणं कालेणं समण्णं महिड्डिपत्ते पयाणुसारी वहरसामी नाम दुवालसंगसुअहरे समुपन्ने । तेण य पंच-मंगल-महासुयक्लंधस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मज्मे लिहिओ । मूलसुत्तं पुण सुत्तत्ताणु गणहरेहि अत्थन्नाण् भरिहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतिरथयरेहिं तिलोगमहिण्हिं वीरजिणिदेहिं पन्नवियं ति एस बुङ्कसंपयाओ ।

(महानिशीध सूत्र, अध्याय ५)

इसका अर्थ यह है कि इस पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका व्याख्यान महान प्रबंधसे, अनन्त गम और पर्यायों सहित, सूत्रकी प्रियभूत निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियों द्वारा जैसा अनन्त ज्ञान-दर्शनके धारक तीर्षंकरोंने किया था उसीप्रकार संक्षेपमें व्याख्यान करने योग्य था। किन्तु आंग काल-परिद्यानिके दोषसे वे निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियां विच्छिन हो गई। फिर कुछ काल जानेपर यथासमय महाऋदिको प्राप्त पदानुसारी वहरसामी (वैरस्वामी या वजस्वामी) नामके द्वादशांग श्रुतके धारक उत्पन्न हुए। उन्होंने पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका उद्धार मूलसूत्रके मध्य लिखा। यह मूलसूत्र सूत्रत्वकी अपेक्षा गणधरों द्वारा तथा अर्थकी अपेक्षासे अरहंत भगवान, धर्मतीर्थकर त्रिष्ठोकमहित वीरजिनेंद्रके द्वारा प्रज्ञापित है, ऐसा वृद्धसम्प्रदाय है।

यद्यपि महानिशीथसूत्रकी रचना श्वेताम्बर सम्प्रदायमें बहुत कुछ पीछेकी अनुमान की जाती है, प्रत्यापि उसके रचियताने एक प्राचीन मान्यताका उल्लेख किया है जिसका अभिप्राय यह है कि इस पंचमंगळरूप श्रुतस्कंधके अर्थकर्ता भगवान् महावीर हैं और सूत्ररूप प्रंयकर्ता गौतमादि गणधर हैं। इसका तीर्थंकर कथित जो व्याख्यान था वह कालदोषसे विष्ठिच हो गया। तब द्वादशांग श्रुतधारी वहरस्वामीने इस श्रुतस्कंधका उद्धार करके उसे मूळ सूत्रके मध्यमें लिख दिया। श्वेताम्बर आगममें चार मूळ सूत्र माने गये हैं—आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और पिंडनिर्मुक्ति। इनमें से कोई भी सूत्र वज्रसूरिके नामसे सम्बद्ध नहीं है। उनकी चूर्णियां मद्रबाहुकृत कही जाती हैं। उन मूळ सूत्रोमें प्रथम सूत्र आवश्यकके मध्यमें णमोकार मंत्र पाया जाता है। अतएव उक्त मान्यताके अनुसार संभवतः यही वह मूळसूत्र है जिसमें वज्रसूरिने उक्त मंत्रको प्रक्षित किया।

कल्पसूत्र स्थिवरावर्लामें 'वहर' नामके दो आचार्योंका उल्लेख मिलता है जो एक दूसरेके गुरु-शिष्य थे। यथा—

धेरस्स णं अञ्ज-सीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कीसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवहरे गोयमसगुरे। धेरस्स णं अजवहरस्स गोयमसगुरस्स अंतेवासी थेरे अज्जवहरसेणे उक्कोसियगुत्ते*।

अर्थात् कौशिक गोत्रीय स्थिनर आर्य सिंहगिरिके शिष्य स्थिनर आर्य वहर गोतम गोत्रीय हुए, तथा स्थिनर आर्य वहर गोतम गोत्रीयके शिष्य स्थिनर आर्य वहरसेन उक्कोसिय गोत्रीय हुए।

विक्रमसंबत् १६४६ में संगृहीत तपागच्छ पट्टावलीमें वहरखामीका कुछ विशेष परिचय पाया जाता है। यथा—

तेरसमो वयरसामि गुरू।

ड्याख्या—तेरसमो ति श्रीसीहगिरिपट्टे त्रयोदशः श्रीवज्ञस्वामी यो बाल्यादिप जातिस्मृतिभाग्, नभोगमनविद्यया संघरकाकृत्, दक्षिणस्यां बौद्धराज्ये जिनेन्द्रपूजानिमित्तं पुष्पाचानयनेन प्रवचनप्रभावनाकृत्,

x. Winternity: Hist. Ind. Lit. II, P. 465.

^{*} पहाबली समुचय, (पृ. ३)

देवाभिवंदितो दशपूर्वविदामपश्चिमो वज्रशास्त्रोत्वास्त्रास्त्राह्म । तथा स भगवान् चण्णवत्वधिकचतुःशत ४९६ वर्षान्ते जातः सन् अष्टो ८ वर्षाणि गृहे, चतुन्नत्वारिशत् ४४ वर्षाणि व्रते, पद्त्रिशत् ३६ वर्षाणि युगम् । सर्वायुरप्टाशीति ८८ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवरिशत् चतुरशीत्यधिकपंचशत ५८४ वर्षान्ते स्वर्गमाक् । श्रीवज्रस्वामिनो दशपूर्व-चतुर्थ-संहननसंस्थानानां स्युच्छेदः ।

चतुःकुलसमुत्पत्तिपितामहमहं विशुम् । दशपूर्वविधि वन्दे वज्जस्वामिमुर्वाश्वरम् ॥ *

इस उछेखपरसे वहरखामीके संबंधमें हमें जो बार्ते ज्ञात होती हैं वे ये हैं कि उनका जन्म वीरिनिर्वाण से ४९६ वर्ष पश्चात् हुआ या और खर्मवास ५८४ वर्ष पश्चात् । उन्होंने दक्षिण दिशामें भी विहार किया या तथा वे दशपूर्वियोंमें अपश्चिम थे । बीरवंशावलीमें भी उनके उत्तरदिशासे दक्षिणापथको विहार करनेका उछेख किया गया है, अशेर यह भी कहा गया है कि वहांके 'तुंगिया' नामक नगरमें उन्होंने चातुर्मास व्यतीत किया था । वहांसे उन्होंने अपने एक शिष्यको सोपारक पत्तन (गुजरात) में विहार करनेकी भी आज्ञा दी थी । इन उछेखोंपरसे उनके पुष्पदन्ताचार्यकी विहारभूमिसे संबन्ध होनेकी सूचना मिलती है ।

तपागच्छ पट्टाबर्छीमें वहरस्वामीसे पूर्व आर्यमंगुका उल्लेख आया है जिनका समय नि. सं. ४६७ बतलाया गया है। यथा—

सप्तपष्ट्यभिकचतुःशतवर्षे ४६७ आर्थमंगुः।

आर्यमंगुका कुछ विशेष परिचय नन्दीसूत्र पद्दावलीमें इसप्रकार आया है 🕹 —

भणगं करगं सरगं पश्चावगं णाण-दंसण-गुणाणं । वंदामि अज्जमंगुं सुयसागरपारगं धीरं ॥ २८ ॥

अर्थात् ज्ञान और दर्शन रूपी गुणोंके वाचक, कारक, धारक और प्रभावक, तथा श्रुतसागरके पारगामी धीर आर्थमंगुकी में वन्दना करता हूं। इसके अनन्तर अज्ञधम्म और भरगुक्ते उल्लेखके पश्चात् अज्ञवयरका उल्लेख है। इन उल्लेखिंगरसे जान पड़ता है कि ये आर्थमंगु अन्य कोई नहीं, धवला जयधवलामें उल्लिखित आर्यमंखु ही हैं; जिनके विषयमें कहा गया है कि उन्होंने और उनके सहपाठी नागहत्यीने गुणधराचार्य द्वारा पंचमपूर्व ज्ञानप्रवादसे उद्धार किये हुए कसायपाहुडका अध्ययन किया या और उसे जइबसह (यतिवृषभाचार्य) को सिखाया या। उक्त नन्दीसूत्र पद्यावलीमें अज्ञवयरके अनन्तर अज्ञरिखअ और अज्ञ नन्दिल्खमणके पश्चात् अज्ञ नागहत्यी का भी उल्लेख इसप्रकार आया है—

[#] पट्टावली समुच्चय, पू. ४७.

[×] बैन साहित्र संशोधक १, २, परिशिष्ट, पृ. १४.

[📫] पद्दावली समुख्य, पू. १३.

षष्टु वायगवंसी जसवंसी अज-नागहस्थीणं। वागरण-करणभंगिय-कम्मपयडी-पहाणाणं॥ ३०॥

अर्थात् व्याकरण, करणभंगी व कभेष्रकृतिमें प्रधान आर्य नागहस्तीका यशस्वी वाचक वंश वृद्धिशील होते।

इसमें सन्देहको स्थान नहीं कि ये ही वे नागहत्थी हैं जो धवलादि प्रेथोंमें आर्यमेंखु के सहपाठी कहे गये हैं। उनके ज्याकरणादिके अतिरिक्त 'कम्मपयडी ' में प्रधानताका उल्लेख तो बड़ा ही मार्मिक है। खेताम्बर साहित्यमें कम्मपयडी नामका एक प्रंथ शिवशर्मसूरि कृत पाया जाता है जिसका रचनाकाल अनिश्चित है। एक अनुमान उसके वि. सं. ५०० के लगभगका लगाया जाता है। अतएव यह प्रंथ तो नागहस्ती के अध्ययनका विषय हो नहीं सकता। किर या तो यहां कम्मपयडीसे विषयसामान्य का ताल्पय समझना चाहिये, अथवा, यदि किसी प्रंथ-विशेष से ही उसका अभिष्राय हो तो वह उसी कम्मपयडी या महाकम्मपयडिपाइड से हो सकता है जिसका उद्धार पुण्यत्त और भूतबाल आचार्योंने षट्खंडागम रूपसे किया है।

तपाग•छ पृद्वावलीसे कोई सबा तीनसी वर्ष पूर्व वि. सं. १३२७ के लगभग श्री धर्मघोप सूरि द्वारा संगृहीत 'सिरि-दुसमाकाल-समणसंघ-थयं' नामक पृद्वावकीमें तो 'बहर' के पृथ्वात् ही नागहिष्यका उल्लेख किया गया है। यथा—

> बीए तिवीस **वर्र च नागहिंथ** च रेवईमिर्छ । सीहं नागःजुर्ण मृहदिश्चिणं काल्यं चंदे× ॥ १३ ॥

ये बहर, बहर द्वितीय या कल्पसूत्र पद्टावलीके उक्कोसिय गोत्रीय वर्हसेन हैं जिनका समय इसी पद्टावलीकी अवचूरीमें राजगणनासे तुलना करते हुए नि. सं. ६१७ के पश्चात् बतलाया गया है। यथा—

पुष्पित्र (दुर्बिकिका पुष्पित्र) २०॥ तथा राजा नाहरः॥१०॥ (एवं) ६०५ शाक्संवरसरः॥ अत्रा-न्तरे बोटिका निर्गता । इति ६१७ ॥ प्रथमोद्यः । वयरसेण ३ नागहस्ति ६९ रेवतिमित्र ५९ बंभदीवगसिंह ७८ नागार्जुन ७८

पणसयरी सयाई तिकि सय-समक्षिकाई अहकमऊं। विक्रमकालाओं तभो बहुकी (बलभी) भंगो समुप्पको ॥१॥

इसके अनुसार वीरसंबत्के ६१७ वर्ष पश्चात् वयरसेनका काछ तीन वर्ष और उनके अनन्तर नागहस्तिका काछ ६९ वर्ष पाया जाता है।

पूर्वोक्त उल्लेखोंका मिथतार्थ इस प्रकार निकलता है-श्रेताम्बर पट्टाबलियोंमें 'वहर' नामके दो आचार्योका उल्लेख पाया जाता है जिनके नाममें कहीं कहीं 'अज वहर' और 'अज वहरसेन'

[×] पट्टावकी सम्बद्ध, पृ. १६.

इसप्रकार भेद किया गया है। कल्पसूत्र स्थितावलीमें एकको गौतम गोत्रीय और दूसरेको उक्को-सिय गोत्रीय कहा है और उन्हें गुरु-शिष्य बतलाया है। किन्तु अन्य पीछेकी पृष्टाविलयोंमें उनके बीच कहीं कहीं एक दो नाम और जुड़े हुए पाये जाते हैं। प्रथम अजबहरेक समयका उल्लेख उनके बीरनिर्वाणके ५८४ वर्षतक जीवित रहनेका मिलता है व अङ्ज बहरसेनका उल्लेख बीर-निर्वाणसे ६१७ वर्ष पृथात्का पाया जाता है। इन दोनों आचार्योसे पूर्व अञ्जमगुका उल्लेख है, तथा उनके अनन्तर नागहिषका। अतः इन चारों आचार्योका समय निम्न प्रकार पड़ता है—

बीर निर्वाण संवत्

अज मंगु **१६७**अज वहर **१९६-५८**१
अज वहरसेन **६१७-६२०**अज नागहत्थी ६२०-६८९

अउज वहर दक्षिणापथको गये, वे दशपूर्वोके पाठी हुए और पदानुसारी थे तथा उन्होंने पंच णमोकार मंत्र का उद्धार किया । नागहत्थी कम्मपयिडिमें प्रधान हुए ।

दिगम्बर साहित्योछेखोंके अनुसार आचार्य पुष्पदन्तने पहले पहले 'कम्मपयडी ' का उद्घार कर सूत्ररचना प्रारंभ की और उसीके प्रारंभमें णमोकार मंत्र रूपी मंगल निबद्ध किया, जो धवलाटीकाके कर्ता वीरसेनाचार्यके मतानुसार उनकी मौलिक रचना प्रतीत होती है । अज्जमंखु और नागहित्य—दोनोंने गुणधराचार्य रचित कसायपाहुडको आचार्य परंपरासे प्राप्तकर यति- वृषभाचार्यको पढ़ाया, और यतिवृषभाचार्यने उसपर चूर्णिसूत्र रचे, ऐसा उल्लेख धवलादि प्रयोंमें मिलता है। यतिवृषभकृत 'तिलोयपण्णति 'में 'बइरजस ' नामके आचार्यका उल्लेख मिलता है जो प्रजाश्रमणोंमें अन्तिम कहे गये हैं। यथा—

पण्हसमणेसु चरिमो वहरजसो णाम । ×

आश्चर्य नहीं जो ये अन्तिम प्रज्ञाश्रमण वहरजस (वज्रयश) श्वेताम्बर पृष्टाविष्योंके पदानुसारी वहर (वज्रस्वामी) ही हों । पदानुसारित्व और प्रज्ञाश्रमणत्व दोनों ऋद्वियोंके नाम हैं और
ये दोनों ऋद्वियां एक ही बुद्धि ऋद्विके उपमेद हैं *। धवलान्तर्गत वेदनाखंडमें निबद्ध गौतमस्वामीकृत मंगलाचरणमें इन दोनों ऋद्वियोंके धारक आचार्योंको नमस्कार किया गया है, यथा—

णमो पदानुसारीणं ॥ ८ ॥ णमो पण्हसमणाणं ॥ १८ ॥

[×] संतपरूबणा १, भूभिका पृ. ३०, फुटनोट

^{*} राजदार्तिक पृ. १४३

इसप्रकार इन आचायोंकी दिगम्बर मान्यताका कम निम्न प्रकार सूचित होता है-



बहरजसका नाम यतिष्ट्रमभेसे पूर्व ठीक कहां आता है इसका निश्चय नहीं। आर्यमंखु और नागहरणिके समकालीन होनेकी स्पष्ट सूचना पाई जाती है क्योंकि उन दोनोंने क्रमसे यितिष्ट्रमभको कसायपाहुड पढ़ाया था। क्रमसे पढ़ानेसे तथा आर्यमंखुका नाम सदैव पहले लिये जानेसे इतना ही अनुमान होता है कि दोनोंमें आर्यमंखु संभवतः जेठे थे। ये दोनों नाम श्वेताम्बर पष्टाबिखयोंमें कोई १३० वर्षके अन्तरसे दूर पढ़ जाते हैं जिससे उनका समकालीनल नहीं बनता। किन्तु यह बात बिचारणीय है कि श्वेताम्बर पट्टाबिखयोंमें ये दोनों नाम कहीं पाये जाते हैं और कहीं छोड़ दिये जाते हैं, तथा कहीं उनमेंसे एकका नाम मिलता है दूसरेका नहीं। उदाहरणार्य, सबसे प्राचीन 'कल्पसूत्र स्थिवरावली' तथा 'पट्टाबली सारोद्धार' में ये दोनों नाम नहीं हैं, और 'गुरु पट्टाबली ' में आर्यमंगुका नाम है पर नागहरणिका नहीं है×। फिर आर्यमंखु और नागहरणीने जिनका रचा हुआ कसायपाहुड आचार्य-परंपरासे प्राप्त किया था वे गुणधराचार्य दिगम्बर उल्लेखोंके अनुसार महावीर स्वामीसे आचार्य-परंपरासे प्राप्त किया था वे गुणधराचार्य दिगम्बर उल्लेखोंके अनुसार महावीर स्वामीसे आचार्य-परम्पराकी अट्टाईस पीढ़ी पश्चात् निर्वाण संवत्की सातवीं शताब्दिमें हुए सूचित होते हैं जब कि श्वेताम्बर पट्टाबिख्योंमें उन दोनोंमें से एक पाचवीं और दूसरे सातवीं शताब्दिमें पड़ते हैं। इसप्रकार इन सब उल्लेखों परसे निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं:—

- १. क्या 'तिलोय-पण्णत्ति' में उल्लिखित 'वइरजस' और महानिशीधसूत्रके पदानुसारी 'वहरसामी' तथा श्वेतांबर पदाविलयोंके 'अञ्ज वहर' एक ही हैं ?
- २. 'वइरस्वामीने मूलसूत्रके मध्य पंचमंगलश्रुतस्कंधका उद्घार लिख दिया ' इस महानि-शीयसूत्रकी सूचनाका तात्पर्य क्या है ! क्या उनकी दक्षिण यात्राका और उनके पंचमंगलसूत्रकी प्राप्तिका कोई सम्बन्ध है ! क्या धवलाकारद्वारा सूचित णमोकार मंत्रके कर्तृत्वका इससे सामक्षस्य बैठ सकता है !
- ३. क्या धवलादिश्रुतमें उल्लिखित आर्यमंखु और नागहत्थी तथा श्रेताम्बर पद्मावलियोंके अञ्जमंगु और नागहत्थी एक ही हैं ! यदि एक ही हैं, तो एक जगह दोनोंकी समसामयिकता

[×] देखो पहानकी समुच्चय ।

प्रकट होने और दूसरी जगह उनके बीच एकसी तीस वर्षका अन्तर पड़नेका क्या कारण हो सकता है ? प्रश्वित्यों में भी कहीं उनके नाम देने और कहीं छोड़ दिये जानेका भी कारण क्या है ?

- 8. जिस कम्मपयडीमें नागहत्यीने प्रधानता प्राप्त की थी क्या वह पुष्पदन्त भूतविष्ठ द्वारा उद्धारित कम्मपयाडिपाहुड हो सकता है !
- ५. दिगम्बर और श्वेताम्बर पद्याविष्यों आदिमें उक्त आचार्योंके कालनिर्देशमें वैषम्य पड़नेका कारण क्या है ?

इन प्रश्नोंमेंसे अनेकके उत्तर पूर्वोक्त विवेचनमें स्चित या ध्वनित पाये जावेंगे, फिर मी उन सबका प्रामाणिकतासे उत्तर देना विना और मी विशेष खोज और विचारके संमव नहीं है। इस कार्यके लिये जितने समयकी आवश्यकता है उसकी भी अभी गुंजाइश नहीं है। अतः यहां इतना ही कहकर यह प्रसंग छोड़ा जाता है कि उक्त आचार्यों संबंधी दोनों परम्पराओं के उल्लेखोंका भारी रहस्य अवश्य है, जिसके उद्घाटनसे दोनों सम्प्रदायों के प्राचीन इतिहास और उनके बीच साहित्यिक आदान प्रदानके विषय पर विशेष प्रकाश पड़नेकी आशा की जा सकती है।

इस प्रकरणको समाप्त करनेसे पूर्व यहां यह भी प्रकट कर देना उचित प्रतीत होता है कि श्वताम्बर आगमके अन्तर्गत भगवतीसूलमें जो पंच-नमोकार-मंगल पाया जाता है उसमें पंचम पद अर्थात् ' णमो लोए सन्वसाहूणं ' के स्थानपर ' णमो बंभीए लिवीए ' (ब्राह्मा लिपिको नमस्कार) ऐसा पद दिया गया है । उड़ीसाकी हाथीगुफामें जो कलिंग नरेश खारबेलका शिलालेख पाया जाता है और जिसका समय ईस्वी पूर्व अनुमान किया जाता है, उसमें आदि मंगल इसप्रकार पाया जाता है —

णमो अरहंताणं । णमो सव सिधाणं ।

ये पाठमेद प्रासंगिक हैं या किसी परिपाटीको लिये हुए हैं, यह विषय विचारणीय है। श्रेताम्बर सम्प्रदायमें किसी किसीके मतसे णमोकार सूत्र अनार्ष है x।

५ बारहवें श्रुताङ्ग दृष्टिवादका परिचय

हम सत्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कह आये हैं कि बारहवां श्रुतांग दृष्टिवाद श्रेताम्बर मान्यताके अनुसार भी विश्वित्र होगया, तथा दिगम्बर मान्यतानुसार उसके कुछ अंशोंका

^{× &#}x27; ये तु वदन्ति नमस्कारपाठ एव नार्ष 'इलादि । देखो अभिधानराजेन्द्र-णमोकार, पृ. १८३५.

उद्धार षट्खंडागम और कषायप्राभृतमें पाया जाता है। किन्तु रोप भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका संक्षिप्त परिचय दोनों सम्प्रदायोंके साहित्यमें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः छुप्त दुए श्रुतांगके इस परिचयको हम दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत प्रंथोंके आधारपर यहां तुष्ठनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिख्छा सकें और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिपूरकताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूछाधार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायांगसूत्र हैं तथा दिगम्बर सम्प्रदायके धवछ और जयधवछ प्रंथ।

धबलामें दृष्टिबादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है---

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूपं निरूप्यते । कोरकल-काणोविद्धि-काँशिक-दृश्चिमश्च-मांद्यपिक-रोमश-दृशित-सुम्ब-अक्षर्ययादीनां क्रियाबाद्दृष्टीनामशीतिशतम्, मरीचि-किपलोल्क-गार्य-ज्याक्रभूति-वाद्वृलि-माठर-मीक्रल्ययादीनामक्रियावाद्दृष्टीनां चतुरशितः, शाक्त्य-वरुकल-कुथुमि-साल्यमुग्नि-नारायण-कण्व-माध्यंदिन-मोद-पैप्पलाद-बाद्द्रश्चण-स्वेटकृद्दैतिकायन-वसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिकदृष्टीनां सम्रष्टिः, विशष्ट-पाराशर-जतु-कर्ण-बाद्यमिक-रोमदृष्णी-सल्यद्त्त-व्यासैलापुत्रोपमन्यवेन्द्रद्त्तायस्थूणादीनां वैनथिकदृष्टीनां द्वात्रिशत् । एषां दृष्टिश्चातां त्रयाणां त्रिष्ट्युत्तराणां प्ररूपणं निम्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते । (सं. प., पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० कियावाद, ८४ अकियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वैनियकवाद, इसप्रकार कुछ ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निप्रह अर्थात् खंडन किया गया है। इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओं को नाम दिये गये हैं, उनमें से अनेक नाम वैदिक धर्मके भिन्न भिन्न साहित्यांगोंसे सम्बद्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, हारीत, विराष्ठ, पाराशर सुप्रसिद्ध स्मृतिकारोंके नाम हैं। व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण सुविल्यात है, पर धर्मशास्त्रसंबंधी उनका बनाया प्रंय नहीं पाया जाता। आश्वलायन श्रीतसूत्र भी प्रसिद्ध है। गर्मका नाम एक ज्योतिषसंहितासे सम्बद्ध है। कव्य ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बंध रखता है। माध्यंदिन एक वैदिक शाखाका नाम है। बादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं। किन्तु शेष अधिकांश नाम बहुत कुछ अपिरिचितसे हैं। इन नामोंके साय उन उन दृष्टियोंका संबंध किन्हीं प्रंयोंपरसे चला है या उनकी चलाई कोई अलिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है। पर तात्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत-मतान्तरोंका परिचय और विवेक कराया गया या। दृष्टिवादके जो भेद आगे बतलाये गये हैं उनमें सूत्र और प्रवेक भीतर ही इन वादोंके परिशीलनकों गुंजाइश दिखाई देती है।

श्चेताभ्वर मान्यता विद्विवाद' के ५ भेद		दिगम्बर मान्यता दिद्धिवाद' के ५ भेद				
	परिकम्म ^९	१ परिकम्म ^९				
२	सुत्त	२ सुत्त				
ş	पुब्बगय	३ पढमाणिओग				
S	अणुओग	८ तेच्चगत				
ч	चूिरया	५ चूलिया				

दोनों संप्रदायों हि हिवादके इन पांच भेदोंके नामों कोई भेद नहीं है, केवल अणियोगकी जगह दिगम्बर नाम पदमाणियोग पाया जाता है। इसका रहस्य आग बताये हुए प्रभेदोंसे जाना जायगा। दूसरा कुछ अन्तर पुल्यगय और अणियोगके क्रममें है। श्वेताम्बर पुल्यगयको पहले और अणियोगको उसके पश्चात् गिनाते हैं; जब कि दिगम्बर पटमाणियोगको पहले और पुल्यगयको उसके अनन्तर रखते हैं। यह भेद या तो आकस्मिक हो, या दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन पटनकमके भेदना दोतक हो। दिगम्बरीय क्रमकी सार्थकता आगे पूर्वोंके विवेचनमें दिखायी जावेगी।

परिकर्मके ७ भेद	परिकर्मके ५ भेद				
१ सिद्धसेणिआ	१ चंदपणती				
२ मणुरससेणिआ	२ सूरपण्णती				
३ पुडसेणिआ	३ जंबूदीवपःणती				
४ ओगाढसेणिआ	४ दीवसायरपण्णती				
५ उवसंपजणसेणिआ	५ वियाहपण्णती				
६ विप्तजहणसेणिआ					

र अथ कोऽयं दृष्टिनादः ? हप्टयो दर्शनानि, नदनं नादः ! दृष्टीनां नादो दृष्टिनादः । अथना पतनं पातः, दृष्टीनां पातो यत्र स दृष्टिपातः ।

७ चुआचुअसेणिआ

(नंदीसूत्र टीका)

तत्र परिकर्म नाम योग्यतापादनम् । तद्धेतुः श्वालमिष परिकर्म । ××× तथा चोक्तं नूणां-परिकम्मे
िष योग्यताकरणं । जह गणियस्स सीळस परिकम्मा
तग्गाहिय-एक्तथो सेस गणियस्स जोग्गो भनइ, एवं
गहियपरिकम्मस्त्रथो सेस-स्ताइ-दिद्विवायस्स जोग्गो
भनइ ति । (नंदीसूत्र टीका)

१ दृष्टीना त्रिषष्टयुत्तरत्रिश्चतसंख्याना निष्यादर्शनाना बादोऽतुबादः, तन्निराकरणं च बस्मिन्तियते तद दृष्टिवादं नाम ।

(गोम्मटसार टीका)

 परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तन् परिकर्म ।

(गोम्मटसार टीका)

ये परिकर्मके भेद दोनों सम्प्रदायोंमें संख्या और नाम दोनों बातोंमें एक दूसरेसे सर्वधा भिन्न हैं | सिद्धश्रेणिकादि भेदोंका क्या रहस्य था, यह ज्ञात नहीं रहा | समवायांगके टीकाकार कहते हैं—

' एतम सर्वं समूलोत्तरभेदं सूत्रार्थतो व्यवव्छिश्नं '

अर्थात् यह सब परिकर्मशास्त्र अपने मूळ और (आगे बतलाये जानेबाले) उत्तर भेदों शहित सूत्र और अर्थ दोनों प्रकारसे नष्ट होगया। किन्तु सूत्रकार व टीकाकारने इन सात भेदों के सम्बन्ध में कुछ बाते ऐसी बतलायी हैं जो बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं। परिकर्मके सात भेदों के सम्बन्ध में वे लिख़ित हैं—

इश्वेयाइं छ परिकम्माइं ससमङ्याइं, सत्त आजीवियाइं; छ चटक-णङ्याइं, सत्त तेरासियाइं । (समवायांगस्य)

गुतेषां च परिकर्मणां पट् आदिमानि परिकर्माणि स्वसामियकान्येव । गोशालक-प्रवादिताणीविक-पासाण्डक-सिद्धान्तमतेन पुनः च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्मसिहितानि सस प्रज्ञाण्यन्ते । इदानीं परिकर्मसु नय-चिन्ता । तत्र नैगमो द्विविधः सांमाहिकोऽसांमाहिकश्च । तत्र सांमाहिकः संमहं प्रविष्टोऽसांमाहिवश्च व्यवहारम् । तस्मास्सम् । क्यवहार क्रजुसूतः काव्दादयश्चेक गुवेस्येवं चन्तारो नयाः । गृतेश्वतुभिनेयः पट् स्वसामियकानि परिकर्माणि चिन्त्यन्ते, अतो भणितं ' छ चउक्क-नयाहं ' ति भवन्ति । त एव चार्जाविकाश्चराशिका भणिताः । कस्माद् श उच्यते, यस्माने सर्वं व्यात्मकमिच्छन्ति, यथा जीवोऽजीवो जीवाजीवः, लोकोऽलोको लोकालोकः, सत् असत् सदसत् इत्येवमादि । नयचिन्तायामित ते त्रिविधं नयमिच्छन्ति । तद्यया द्व्याधिकः पर्यायाधिकः उम्मायिकः । अतो भणितं 'सत्त तरासिय' ति । सप्त परिकर्माणि त्रैराशिकपाखिककाकिविधया नयचिन्तया चिन्तयन्तिश्यर्थः । (समवायांग टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि परिकर्मके जो सात भेद ऊपर गिनाये गये हैं उनमेसे प्रथम छ भेद तो स्वसमय अर्थात् अपने सिद्धान्तके अनुसार है, और सातवां भेद आजीविक सम्प्रदायकी मान्यताके अनुसार है। जैनियांके सात नयोमेंसे प्रथम अर्थात् नगम नयका तो संप्रह और ध्वंभूत राब्दनयमें प्रविष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार मुख्यतासे उनके चार ही नय रहते हैं, संप्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र और शब्द। इस अपेक्षासे जैनी चउक्कणइक अर्थात् चतुष्कनयिक कहलाते हैं। आजीविक सम्प्रदायवाले सब वस्तुओंको त्रि-आत्मक मानते है, जैसे जीव, अजीव और जीवाजीव; लोक, अलोक और लोकालोक; सत्, असत् और सदसत्, इस्यादि। नयका चिन्तन भी वे तीन प्रकारसे करते हैं-द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक और उमयार्थिक। अतः आजीविक तेरासिय अर्थात् त्रेराशिक भी कहलाते हैं। उन्हींकी मान्यतानुसार परिकर्मका सातवां भेद ' चुआचुअसेणिआ ' जोड़ा गया है।

इस सूचनासे जैन और आजीवक सम्प्रदायोंके परस्पर सम्पर्कपर बहुत प्रकाश पड़ता है। मंखिलगोशाल महाबीरस्वामी व बुद्धदेवके समसामयिक धर्मोपदेशक थे। उनके द्वारा स्थापित आजीविक सम्प्रदायके बहुत उल्लेख प्राचीन बीद्ध और जैन प्रंथोंमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत सूचना पर से जाना जाता है कि उनका शास और सिद्धान्त जैनियोंके शास और सिद्धान्तके बहुत ही निकटवर्ती था, केवल कुछ कुछ मेद-प्रभेदों और दिष्टकोणोंमें अन्तर था। भूमिका जैनियों और आजीविकोंकी प्रायः एक ही थी। आगे चलकर, जान पड़ता है, जैनियोंने आजीविकोंकी मान्यताओं को अपने शास्त्रमें भी संप्रह कर लिया और इसप्रकार धीरे धीरे समस्त आजीविक पंथका अपने ही समाजमें अन्तर्भाव कर लिया। उत्परकी सूचनामें यद्यपि टीकाकारने आजीविकोंको पालंडी कहा है, पर उनकी मान्यताको वे अपने शास्त्रमें स्वीकार कर रहे हैं।

परिकर्मके पूर्वोक्त सात भेद दिगम्बर मान्यतामें नहीं पाये जाते। पर इस मान्यताके जो पांच भेद चंदपण्णित आदि है, उनमें से प्रथम तीन तो श्वेताम्बर आगमके उपांगोंमें गिनाये हुए मिळते हैं, तथा चौथा दीवसायरपण्णको व जंबूदीवपण्णती और चंदपण्णक्तीके नाम नंदीसूत्रमें अंगबाह्य श्रुतके आवश्यकव्यतिरिक्त भेदके अन्तर्गत पाये जाते हैं। किन्तु पांचवां भेद वियाहपण्णितिका नाम पांचवें श्रुतांगके अतिरिक्त और नहीं पाया जाता।

सिद्धसोणिआ परिकम्मके १४ उपभेद

- १. माउगापयाई
- २. एगट्टिअपयाई
- ३. अट्ट या पादोट्ट पयाई
- ४. पाढोआमास या आगास^र पयाई
- ५. केउभूअं
- ६. रासिबद्धं
- ७. एगगुणं
- ८. दुगुणं
- ९. तिगुणं
- १०. केउभूअं
- ११. पडिग्गहो
- १२. संसारपडिग्गहो
- १३. नंदावत्तं
- १४. सिद्धावत्तं

मणुस्ससेणिआ परिकम्मके भी १४ भेद हैं जिनमें प्रथम १३ भेद उपर्युक्त ही हैं। १४

- चंद्पण्णसी— छत्तीसल्रक्खपंचपदसहरसेहि (३६०५०००) चंदायु-परिवारिद्धि-गइ-विबुस्सेह-वण्णणं कुणइ।
- सूर्यणाची-पंचलक्खितिण्णिसहस्सेहि
 पदेहि (५०३०००) सूरस्सायु-भोगोबभोग-परिवारिद्धि-गइ-बिंबुस्सेह-दिणिकरणुज्जोब-बण्णं कुणइ।
- ३. जंबूदीवपण्णाची—तिण्णिळक्खपंचवीस—
 पदसहस्सेहि (३२५०००) जंबूदीवे
 णाणाविहमणुयाणं भोग-कम्मभूमियाणं
 अण्णेसि च पन्वद-दह-णइ-वेइयाणं
 वस्सावासाकट्टिमजिणहरादीणं वण्णणं कुणह ।
- ४. दीवसायरपण्णत्ती— वावण्णलक्खल्लतीस— पदसहस्सेहि (५२३६०००) उद्घार—

र. ये पाडमेद नदीसूत्र और समवायांगके हैं।

वां भेद ' मणुस्सावतं ' नामका है ।

पुष्टसेणिआदि शेष पांच परिकर्मोंमें प्रत्येक
के ११ उपभेद हैं जो प्रथम तीनको छोड़ कर
शेष पूर्वीक्तही हैं । अन्तिम भेदके स्थानमें
स्थनामसूचक भेद है, जैसे पुद्धावत्तं, ओगादावत्तं, उवसंपज्जणावत्तं, विष्पजहणावत्तं और
चुआचुआवत्तं । इसप्रकार ये सब मिळकर
८३ प्रभेद होते हैं ।

पञ्चपमाणेण दीवसायरपमाणं अण्णं पि दीवसायरंतन्भूदत्यं बहुभेयं वण्णेदि ।

५. वियाहपणाची - च उरासीदिलक्खलतीस-पदसहस्सेहि (८४३६०००) रूबि -अजीवदव्वं अरूबि-अजीवदव्वं मवसिद्धिय-अमबसिद्धियरासि च वण्णेदि ।

परिकर्मके इन माउगापयाइं आदि उपभेदोंका कोई विवरण हमें उपलम्य नहीं है। किन्तु मातृकापदसे जान पड़ता है उसमें लिपि विज्ञानका विवरण था। इसीप्रकार अन्य भेदें।में शिक्षाके मूळविवय गणित, न्याय आदिका विवरण रहा जान पड़ता है।

सुत्तके ८८ भेद

- १. उञ्जुसुयं या उजुगं
- २. परिणयापरिणयं
- 🤁 बहुमांगिअं
- **४. बिजयचरियं,** विष्पचइयं या विनयचरियं
- ५. अणंतरं
- ६. परंपरं
- ७. मासाणं (समाणं-स. अं.)
- ८. संज्हं (मासाणं- ,,)
- ९. संभिणां
- १०. आहब्बायं (अहाब्चायं-स. अं.)
- ११. सोवियअवत्तं
- १२. नंदावत्तं
- १३. बहुलं
- १४. पुट्टापुट्टं
- १५. विआवत्तं

सुत्तके अन्तर्गत विषय

युत्तं अहासीदिलम्खपदेहि (८८००००) अबंधओ, अवलेवओ, अकत्ता, अभोत्ता, णिगगुणो, सन्वगओ, अणुमेत्तो, णार्थ जीवो, जीवो चेव अत्थि, पुटिबयादीणं समुदएण जीवो उपज्जह, णिच्चेयणो, णाणेण विणा, सचेयणो, णिच्चो, अणिच्चो अप्पेत्ति वण्णेदि । तेरासियं, णियदिवादं, विण्णाणवादं, सहवादं, पहाणवादं, दन्व-वादं, पुरिसवादं च वण्णेदि । उत्तं च-

अहासी अहियारेखु चउण्हमहियाराणमात्ये णिदेसो । पढमा अबंधयाणं, विदियो तेरासियाण बोद्धव्वो ॥ तदियो य णियइपक्ले हवइ चउन्यो ससमयम्मि । (धवला सं. प., पृ. ११०)

सिद्धतेणिकादिपरिकर्म मूलमेदतः सप्तिष्यं, उत्तरभेदतस्तु व्यशीतिविधं मानृकापदादि ।
 (समवायांग टीका).

१६. एवं भुञं

१७. दुयावसं

१८. वत्तमाणप्पयं

१९. समभिरूढं

२०. सन्वओभइं

२१. पस्सासं (पणामं-स. अं.)

२२. दुप्पडिगाहं

ये ही २२ सूत्र चार प्रकारसे प्ररूपित हैं-

१ । छिण्णछेअ-णइयाणि

२ अछिण्णछेअ-णइयाणि

३ तिक-णइयाणि

४ चउक-णइयाणि

इसप्रकार सूत्रोंकी संख्या २२×४=८८

हो जाती है।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें सूत्रके मुख्य भेद बाबीस हैं। उनके अठासी भेदोंकी सूचना समवायांगमें इस प्रकार दी गई है—

हचेयाई वावीसं सुत्ताई छिण्णछेअणइआई ससमय-सुत्तपिश्वादीप्, इचेआई वावीसं सुत्ताई अछिन्नछेयमह्याई आजीवियसुत्तपिश्वादीप् । इचेआई वावीसं सुत्ताई तिक-णइयाई तेरासियसुत्तपिश्वादीप्, इच्चेआई वावीसं सुत्ताई चउळणइयाई ससमयसुत्तपिश्वादीप् । एवमेव सपुरवावरेणं अट्टासीदि सुत्ताई भनंतीति मक्सयाई ।

यहां जिन चार नयोंकी अपेक्षासे वाशीस सूत्रोंके अठासी मेद हो जाते हैं, उनका स्पष्टी-करण टीकामें इसप्रकार पाया जाता है—

एतानि किल ऋजुकादीनि द्वाविंशतिः सूत्राणि, तान्येव विभागतोऽष्टाशीतिर्भवन्ति । कवस् ? उच्यते—' इच्चेद्रयाहं वावीसं सुत्ताहं जिक्कछेयनह्याहं ससमयसुत्तपरिवादिण् ' ति । इह यो नयः सूत्रं छिकं छेदेनेच्छिति स छिक्रच्छेद्रनयो, यथा 'धम्मो मंगलमुक्किहं ' इत्यादि श्लोकः सूत्रार्थतः प्रत्येकछेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकमपेक्षते, प्रत्येकछित्तपर्यन्त इत्यर्थः । एतान्येव द्वाविंशतिः स्वसमयसूत्रपरिपाक्या सूत्राणि स्थितानि । तथा इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि अध्छिक्षच्छेद्रनयिकान्याजीविकस्त्रपरिपाक्येति, अयमर्थः — इह यो नयः सूत्रमध्यक्षं छेदेनेच्छित सोऽछिक्षछेद्रनयो यथा, 'धम्मो मंगलमुक्किहं, ' इत्यादि श्लोक एवार्यतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमणो द्वितीयादयश्च प्रथमिति अन्योऽन्यसपेक्षा इत्ययः । एतानि द्वाविंशतिराजीविकगोशास्त्रक्षमपेक्षमणे द्वितीयाद्वस्त्रम् प्रत्याविक्षाक्षमपेक्षमणे स्वन्ति । 'इच्वेयाहं ' इत्यादिस्त्रम् । तत्र तिकणइयाहं ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिन्यमपेक्ष—माणानि सवन्ति । 'इच्वेयाहं ' इत्यादिस्त्रम् । तत्र तिकणइयाहं ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिन्यम् हत्यर्थ-क्षराविकाश्चाजीविका एवोच्यन्ते इति । तथा 'इच्वेयाहं ' इत्यादिस्त्रं । तत्र ' वउक्कणइयाहं ' ति

सुचे अडासीदि अत्याहियारा, ण तेसिं णामाणि जाणिजंति, संपिट विसिद्धुवएसा-मावादो (जयधवस्रा) नय चतुरकाश्रिप्रायताक्षिण्यन्त इति भावना, एवभेवेत्यादिस्त्रम् । एवं चतस्रो द्वाविंशतयोऽष्टाशीतिः स्त्राणि भवन्ति ।

इस विवरणसे ज्ञात होता है कि उपर्युक्त वावीस सूत्रोंका चार प्रकारसे अध्ययन या व्याख्यान किया जाता था। प्रथम परिपाटी छिन्नछेदन्य कहलाती थी जिसमें सूत्रगत एक एक वाक्य, पद या श्लोकका स्वतंत्रतासे पूर्वापर अपेक्षारहित अर्थ लगाया जाता था। यह परिपाटी स्वसमय अर्थात् जैनियोंमें प्रचलित थी। दूसरी परिपाटी आछिन्नछेदन्य थी जिसके अनुसार प्रत्येक वाक्य, पद या श्लोकका अर्थ आगे पीछेके वाक्योंसे संबंध लगाकर बैठाया जाता था। यह परिपाटी आजीविक सम्प्रदायमें चलती थी। तीसरा प्रकार त्रिकन्य कहलाता था जिसमें द्रव्यार्थिक, पर्यायाधिक और उभयार्थिक व जीव, अजीव और जीवाजीव आदि उपर्युक्त त्रि-आत्मक व त्रिन्य करत्से वस्तुस्वक्ष्पका चिन्तन किया जाता था। पूर्वोक्तानुसार यह परिपाटी आजीवकोंकी थी। तथा जो वस्तुचिन्तन पूर्वकथित चार नयोंकी अपेक्षासे चलता था वह चतुर्नय परिपाटी कहलाती थी और वह जैनियों की चीज़ थी। इस प्रकार निरपेक्ष शब्दार्थ और चतुर्नय चिन्तन, ये दो परिपाटियां आजीविकोंकी मिलकर वावीस सूत्रोंके अठासी भेद कर देती थीं। आजीविक ज्ञानशैलीको जैतियोंने किसप्रकार अपने ज्ञानमंडारमें अन्तर्भृत कर लिया यह यहां भी प्रकट हो रहा है।

दिगम्बर सम्प्रदायमें सूत्रोंके भीतर प्रथम जीवका नाना दृष्टियोंसे अध्ययन और फिर दूसरे अनेक वादोंका अध्ययन किया जाता था, ऐसा कहा गया है। इन वादों में तरासिय मतका उल्लेख सर्व प्रथम है जिससे तार्ल्पय त्रैराशिक-आजीविक सिद्धान्तसे ही है, जो जैन सिद्धान्तके सबसे अधिक निकट होनेके कारण अपने सिद्धान्तके पश्चात् ही पढ़ा जाता था। धवलामें सूत्रके ८८ अधिकारोंका उल्लेख है जिनमेंसे केवल चारके नाम दिये है। जयधवलामें स्पष्ट कह दिया है। के उन ८८ अधिकारोंके अब नामोंका भी उपदेश नहीं पाया जाता। किन्तु जो कुछ वर्णन दिगम्बर सम्प्रदायमें शेष रहा है उसमें विशेषता यह है कि वह उन लुप्त प्रंथोंके विषयपर बहुत कुछ प्रकाश डालता है; श्वेताम्बर श्रुतमें केवल अधिकारोंके नाममात्र शेष हैं जिनसे प्रायः अब उनके विषयका अंदाज लगाना भी कठिन है।

पुञ्चगयके १४ भेद तथा उनके अन्तर्गत बत्थू और चूलिका	पुच्चगयके १४ भेद तथा उनके अन्तर्गत वत्थू					
१. उप्पायं (१० वत्थू + ४ चूलिआ)	१. उप्पाद (१० वत्थू)					
२. अग्गाणीयं (१४ वत्थू + १२ चूळिआ)	२. अग्गे।णियं (१४ वन्धू)					
३. वीरिअं (८ ,, + ८ ,,)	३. वीरियाणुपवादं (८ ")					
४. अत्यिणात्यि प्पवायं (१८ + १०)	४. अत्यिणत्यिपवादं (१८,,)					

ц.	नाणप्पवायं	(१२	वत्थृ	()	ч.	णाणपवादं	(१२ मध्य)
ξ.	सच्चपवायं	(ર	")	ξ.	सन्चपवादं	(१२ 📆)t
৩.	आयणवायं	(१६	")	৩.	आदपवादं	(88 ")	ľ
۷.	कम्मप्पवायं	(३०	")	۷.	कम्मपवादं	(२०,,))
٩.	पञ्चक्खाणप्पवायं	(२०	,,)	९.	पञ्चक्खाणं	(३० ,,))
ξο.	विज्जागुष्पवायं	(१५	55)	₹0.	विजाणुवादं	({ 4 ,,))
22.	अवंशं	(१२	")	११.	कल्लाणवादं	((0 ,,))
१२.	पाणाऊ	(१३	33)	१२.	पाणावायं	((0 ,,))
१ ३.	किरिआविसालं	(३०	,,)	१३.	कि रियाविसा लं	(१०,,))
88.	लोकविंदुसारं	(२५	,,)	88.	लोकविंदुसारं	(% 0 ,,)	

दृष्टिवादके इस विभागका नाम पूर्व क्यों पड़ा, इसका समाधान समवायांग व नन्दीस्त्रकी टीकाओं हसप्रकार किया गया है—

अथ किं तत् प्वंगतं ? उच्यते । यस्मातिर्थंकरः तीर्थप्रवर्त्तनाकाले गणधराणां सर्वस्त्राधारम्वेन पूर्व पूर्वगत स्वार्थं भाषते तस्मात पूर्वाणीति भणितानि । गणधराः पुनः भुतरचनां विद्धाना आचारादि-क्रमेण रचयन्ति स्थापयन्ति च । मतान्तरेण तु पूर्वगतस्वार्थः पूर्वमहेता भाषितो गणधरेरपि पूर्वगतश्चतमेव पूर्व राचितं, पश्चादाचारादि । नन्वेवं यदाचारनिर्धुन्यामभिद्दितं 'सब्वेसिं आयारो पढमो ' इन्यादि, तन्कथम् ? उच्यते । तत्र स्थापनामाधिन्य तथोक्तमिह न्वक्षररचनो प्रतीन्य भणित पूर्व पर्वाणि कृतानीति ।

(समवायांग टीका)

इसका तात्पर्य यह है कि तीर्थप्रवर्तनके समय तीर्थकर अपने गणधरोंको सबसे प्रथम पूर्वगत सूत्रार्थका ही व्याख्यान करते है, इससे इन्हें पूर्वगत कहा जाता है। किन्तु गणधर जब श्रुतकी प्रंथरचना करते हैं तब वे आचारादिक्रमसे ही उनकी रचना व व्यवस्था करते हैं, और इसी स्थापनाकी दृष्टिने आचारांगकी निर्युक्तिमे यह बात कही गई है कि सब श्रुतांगोमें आचारांग प्रथम है। यथार्थतः अक्षररचनाकी दृष्टिने पूर्व ही पहले बनाये गये।

एक आधानिक मत× यह भीहै कि पूर्वोंने महाबीरखामीसे पूर्व और उनके समयमें प्रचित मत-मतान्तरोंका वर्णन किया गया था, इस कारण वे पूर्व कहलाये।

चाँदह पृवींके नामोंमें दोनों सम्प्रदायोमें कोई विशेष मेद नहीं है, केवल ग्यारहवें पूर्वकों खेताम्बर अवंशं 'कहते हे और दिगम्बर 'कल्लाणवाद '। अवंशंका जो अर्थ टीकाकारने अवंध्य अर्थात् 'सफल 'बतलाया है वह 'कल्याण' के शब्दार्थके निकट पहुंच जाता है, इससे संभवतः वह उनके विषयमेदका द्योतक नहीं है। छठवें, आठवें, नवमें और ग्यारहसे चौदहवें तक इस

× डॉ. जैकोबी; कल्पसूत्रभूमिका,

प्रकार सात पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओंकी संख्यामें दोनों सम्प्रदायोंमें मतभेद है। शेष सात पूर्वोकी वस्तु-संख्यामें कोई भेद नहीं है। स्रेताम्बर मान्यतामें प्रथम, चार पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओंके अतिरिक्त चूलिकाओंकी संख्या भी दी गई है, और दृष्टिवादके पंचमभेद चूलिकाके वर्णनमें कहा है कि वहां उन्हीं चार पूर्वोकी चूलिकाओंसे अभिप्राय है। यदि ये चूलिकाएं पूर्वोके अन्तर्गत थीं, तो यह समझमें नहीं आता कि उनका फिर एक खतंत्र विभाग क्यो रक्षा गया। दिगम्बरीय मान्यतामें पूर्वोके भीतर कोई चूलिकाएं नहीं गिनायी गई और चूलिका विभागके भीतर जो पांच चूलिकाएं बतलायी है उनका प्रथम चार पूर्वोसे कोई सबंध भी ज्ञात नहीं होता।

समवायांग और नन्दीसूत्रमें पूर्वेकि अन्तर्गत वस्तुओं और चृष्टिकाओंकी संख्या-सूचक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती हैं—

> दस चोइस अट्टट्टारसेव बारस दुवे य वस्यूणि । सोलस तीसा वीसा पण्णरस अणुष्यवायंति ॥ १ ॥ बारस एकारसमे वारसमे तेरसेव वन्यूणि । तीसा पुण तेरसमे चउदसमे पन्नवीसाओ ॥ २ ॥ चत्तारि दुवाळस अट्ट चेव दस चेव च्लवस्यूणि । आइ्ह्याण चउण्हं सेसाण च्लिया णिय ॥ ३ ॥

धवलामें (वेदनाखंडके आदिमें) पूर्वीके अन्तर्गत वस्तुओ और वस्तुओंके अन्तर्गत पाइडोंकी संख्याकी द्योतक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती है—

दस चोहस अट्टारस (अट्टारस) वारस य दोसु पुटवेसु । सोलस वीसं तीसं दसमंमि य पण्णरस वत्थू ॥ १ ॥ एदेसिं पुटवाणं एविदेओ वत्थुसंगहो भणिदो । सेसाणं पुटवाणं दस दस वत्थू पणिवयामि ॥ २ ॥ एकेकिम्ह य वत्थू वीसं वीसं च पाहुडा भणिदा । विसम-समा हि य वत्थू सब्वे पुण पाहुडेहि समा ॥ ३ ॥

इनके अंक भी धवछामें दिये हुए है जिन्हें हम निम्न तालिकाद्वारा अच्छीतरह प्रकट कर सकते हैं।

पूर्व	2	ર	ą	૪	٤	Ę	b	۷	९	१०	११	१ २	93	१४	कुल
बत्थू	१०	१४	6	90	१२	१२	१६	२०	30	94	90	१०	90	१०	१९५
पाहुड	२००	२८०	960	३६०	२४०	२४०	३२०	800	€00	₹00	200	२००	300	₹00	३९००

सन्ब-बरथु-समासो पंचाणउदिसदमेत्रो १९५ | सन्ब-पाहुड-समासो ति-सहस्स-णव-सद्-मेत्रो ३९०० | जयधवलामें यह भी बतलाया गया है कि एक एक पाहुडके अन्तर्गत पुनः चौवीस चौबीस अनुयोगद्वार थे। यथा—

एदेसु अन्थाहियारेसु एकेकस्स अन्धाहियारस्स वा पाहुडसाण्णदा वीस वीस अन्धाहियारा । तेसिं पि अन्धाहियाराणं एहेडस्स अन्धाहियारस्स चडवीसं चडवीसं अणिओगदाराणि सण्णिदा अन्धाहियारा ।

इससे स्पष्ट है कि पूर्वों के अन्तर्गत वस्तु अधिकार थे, जिनकी संख्या किसी विशेष नियमसे नहीं निश्चित थी। किन्तु प्रत्येक वस्तुके अवान्तर अधिकार पाहुड कहलाते थे और उनकी संख्या प्रत्येक वस्तुके भीतर नियमतः वीस वीस रहती थी और फिर एक एक पाहुडके भीतर चौवीस चौवीस अनुयोगद्वार थे। यह विभाग अव हमारे लिये केवल पूर्वोकी विशालता मात्रका घोतक है क्योंकि उन वन्धुओं और उनके अन्तर्गत पाहुडोंके अब नाम तक भी उपलब्ध नहीं है। पर इन्हीं ३९०० पाहुडोंमेसे केवल दो पाहुडोंका उद्धार पट्खंडागम और कसायपाहुड (धवला और जयधवला) में पाया जाता है जैसा कि आगे चलकर बतलाया जायगा। उनसे और उनकी उपलब्ध टीकाओंसे इस साहित्यकी रचनाशैली व कथनोपकथन पद्धिका बहुत कुल परिचय मिलता है।

चौदह पूर्वीका विषय व परिमाण

- १ उप्पादपुट्यं—तत्र च सर्वद्रव्याणां पर्यवाणां चोत्पादभावमंगीकृत्य प्रज्ञापना कृता । (१००००००)
- २ अग्गेणीयं-तत्रापि सर्वेषां द्रव्याणां पर्य-वाणां जीवविशेषाणां चाग्रं परिमाणं वर्ण्यते। (९६००००)
- ३ वीरियं-तन्नाध्यजीवानां जीवानां च सक्तर्भे-तराणां वीर्थं प्रोच्यते । (७०००००)
- अत्थिणात्थिपवादं—यद्यक्ळोके यथास्ति यथा वा नास्ति, अथवा स्याद्वादाभिप्रायतः तदे-वास्ति तदेव नास्तीस्थेवं प्रवदिति । (६०००००)
- ५ णाणपवादं-तस्मिन् मितज्ञानादिपंचकस्य भेदप्ररूपणा यस्मात्कृता तस्मात् ज्ञानप्रवादं। (९९९९९)

चौदह पूर्वीका विषय व पदसंख्या

- **१ उप्पादपुर्व्वं** जीव-काल-पोग्गलाणमुप्पाद-वय-धुवत्तं वण्णेह । (१००००००)
- २ अग्गेणियं अंगाणमग्गं वण्णेइ। अंगाणमग्गं-पदं वण्णेदि त्ति अग्गेणियं गुणणामं। (९६००००)
- वीरियाणुपनादं अप्पिविरियं परिविरियं उभ-यिविरियं खेत्तिविरियं भविविरियं तविविरियं वण्णेइ। (७००००००)
- ४ अत्थिणित्थपवादं जीत्राजीवाणं अस्य-णिथत्तं वण्णेदि । (६०००००)
- ५ णाणपवादं पंच णाणाणि तिण्णि अण्णा-णाणि वण्णेदि । (९९९९९९)

- **६ सचपवादं**—सत्यं संयमं सत्यवचनं वा तवत्र सभेदं सप्रतिपक्षं च वर्ण्यते तत्सत्य-प्रवादम्। (१०००००६)
- ७ आद्पवादं-आत्मा अनेकधा यत्र नयदर्शने-र्वर्ण्यते तदात्मप्रवादं । (२६००००००)
- ८ कम्मपवादं ज्ञानावरणादिकमप्रविधं कर्भ प्रकृतिस्थित्वनुभागप्रदेशादिभिर्भेदरन्येश्वीत्तरी-त्तरभेदैर्यत्र वर्ण्यते तत्कमप्रवादम् । (१८०००००)
- ९ पचक्खाणं—तत्र सर्वे अन्याख्यानखरूपं वर्ण्यते। (८४००००)
- १० विजाणुवादं-तत्रानेके विद्यातिशया वर्णिताः। (११०००००)
- ११ अवंज्झं—वन्ध्यं नाम निष्पत्लम्, न वन्ध्यम-वन्ध्यं सफलमिस्वर्थः। तत्र हि सर्वे ज्ञानतपः-संयमयोगाः शुभफलेन सफला वर्ण्यन्ते, अप्रशस्ताश्च प्रमादादिकाः सर्वे अशुभफला वर्ण्यन्ते, अतोऽबन्ध्यम् ।

(250000000)

१२ पाणावायं—तत्राप्यायुःप्राणविधानं सर्व सभेदमन्ये च प्राणा वर्णिताः । (१५६०००००)

- ६ सचपवादं-वाग्गुप्तिः वाक्संस्कारकारण-प्रयोगो द्वादशधा मापावकारश्च अनेक-प्रकारं मृपामिधानं दशप्रकारश्च सत्य-सद्भावो यत्र निरूपितस्तत्सत्यप्रवादम्। (१०००००६)
- आदपवादं आदं वण्णेदि वेदेति वा विण्हु त्ति वा मोत्तेति वा बुद्रेति वा इच्चादिसरू-वेण।
 (२६००००००)
- ८ कम्मपत्रादं अङ्गिहं कम्मं वण्णेदि । (१८०००००)
- ९ पच्चक्खाणं दन्त्र—भात्र—परिमियापरिमिय-पच्चक्खाण उत्तरासिविहिं पंच समिदीओ निष्णि गुत्तीओ च परूत्रेटि । (८४०००००)
- १० विज्ञाणुवादं अंगुष्टप्रसेनादीनां अल्पविद्यानां सप्तरातानि रोहिण्यादीनां महाविद्यानां पञ्च-रातानि अन्तरिक्ष--भौमाङ्गस्वर-स्वप्न-लक्षण-व्यजनिक्षनान्यहो महानिमित्तानि च कथयति। (११००००००)
- ११ कल्याणं रिव—शशि-नक्षत्र-तारागणानां चारोपपाद-गति-विपर्ययफ्लानि शकुन-व्याहतमहेंद्वलदेव – वासुदेव – चक्रधरादीनां गर्भावतरणादिमहाकल्याणानि च कथयति । (२६००००००)
- १२ पाणाबायं कायि चिकित्सा वष्टांगमा युर्वेदं भूतिकर्म जांगुल्पिक्रमं प्राणापानविभागं च विस्तरेण कथयित । (१३००००००)

१३ किरियाविसालं-तत्र कायिक्यादयःक्रिया विशाल ति समेदाः संयमित्रया छन्दिक्रया-विधानानि च वर्ण्यन्ते।

(90000000)

- १४ लोकविंदुसारं-तच्चास्मिन् लोके श्रुतलोके वा विन्दुरिवाक्षरस्य सर्वोत्तमिति, सर्वाक्षर-सिन्निपातप्रतिष्ठितत्वेन च लोकविन्दुसारं भणितम्। (१२५०००००)
- १३ किरियाविसालं छेखादिकाः द्वासप्ततिकछाः स्रैणांश्चतुःपष्टिगुणान् शिल्पानि कान्यगुण-दोपिक्रयां छन्दोविचितिक्रियां चिक्ययिति । (९००००००)
- १४ लोकविंदुसारं अष्टी व्यवहारान् चत्वारि बीजानि मोक्षगमनिकयाः मोक्षसुखं च कथयति। (१२५००००००)

पूर्वोंके अन्तर्गत विषयोंकी सूचना समयायांग व नन्दीसूत्रोंमें नहीं पायी जाती, वहां केवल नाम ही दिये गये हैं। विषयकी सूचना उनकी टीकाओंमें पायी जाती है। उपर्युक्त खेताम्बर मान्यताका विषय समयायांग टीकासे दिया गया है। उस परसे ऐसा ज्ञात होता है कि वहां विषयका अंदाज बहुत कुछ नामकी व्युत्ति द्वारा लगाया गया है। धवलान्तर्गत बिषय-सूचना कुछ विशेष है। पर विषयनिर्देशमें शब्दमेदको छोड़ कोई उछेखनीय अन्तर नहीं है। अवन्ध्य और कल्याणवादमें जो नामभेद है, उसिप्रकार विषयस्चनामें भी कुछ विशेष है। धवलामें उसके अन्तर्गत फलित ज्योतिष और शकुनशास्त्रका स्पष्ट उछेख है जो अवन्ध्यके विषयमें नहीं पाया जाता। उसी प्रकार बारहवें प्राणावाय पूर्वके भीतर धवलामें कायचिकित्सादि अष्टांगायुर्वेदकी सूचना स्पष्ट दी गई है, वैसी समवायांग टीकामें नहीं पायी जाती। वहां केवल 'आयुपाणविधान' कहकर छोड़ दिया गया है। तेरहवें कियाविशालमें भी धवलामें स्पष्ट कहा है कि उसके अन्तर्गत लेखादि बहत्तर कलाओं, चौसठ स्त्री कलाओं और शिल्पोंका भी वर्णन है। यह समवायांग टीकामें नहीं पाया जाता।

पद्रमाण दोनों मान्यताओं में तेरह पूर्वोका तो ठीक एकसा ही पाया जाता है, केवल बारहवें पूर्व पाणावायकी पदसंख्या दोनों में भिन्न पाई जाती है। धवलाके अनुसार उसका पद्रमाण तेरह कोटि है जब कि समवायांग और नन्दीसूत्रकी टीकाओं में एक कोटि छपन लाख (एका कोटी षट्पञ्चाशच पदलक्षाणि) पाया जाता है।

प्रथम नौ पूर्वोका विषय तो अध्यातमिवशा और नीति-सदाचारसे संबंध रखता है किन्तु आगिके विद्यानुवादादि पांच पूर्वोमें मंत्र तंत्र व कला कौशल शिल्प आदि लौकिक विद्याओंका वर्णन था, ऐसा प्रतीत होता है। इसी विशेष भेदको लेकर दशपूर्वी और चौदहपूर्वी का अलग अलग उल्लेख पाया जाता है। धवलाके वेदनाखंडके आदिमें जो मंगलाचरण है वह स्वयं इन्द्रभूति गीतम गणधरकृत और महाकम्मप्यदिपाहुदके आदिमें उनके द्वारा निबद्ध कहा गया है। वहींसे

उठाकर उसे भूतबि आचार्यने जैसाका तैसा वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, ऐसी धवला-कारकी सूचना है। इस मंगलाचरणमें ४४ नमस्कारात्मक सूत्र या पद हैं। इनमें बारहवें और तेरहवें सूत्रोंमें क्रमसे दशपूर्वियों और चौदह पृर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया गया है, जिसके रहस्यका उद्घाटन धवलाकारने इसप्रकार किया है—

णमो दसपुव्वियाणं ॥ १२॥

णुष्य दसपुन्तिणो भिण्णाभिण्णभेणुण दुविहा होति । तथ्य एकसरसंगाणि पाढिऊण पुणो परियम्मसुत्तपढमाणिगोगपुन्नगयचूलिया ति पंचिहियारणियद्धदिद्विवादे पढिज्ञमाणे उपपायपुन्नमादि कादूण पढंताणं
दसपुन्नीविज्ञापवादे समत्ते रोहिणी-आदिपंचसयमहाविज्ञाई अंगुट्टपसेणादिसत्तसयदहरविज्ञाहि अणुगयाओ
किं भयवं आणवेवति दुक्कंति । एवं दुक्षाणं सन्वविज्ञाणं जो लोभो गच्छित सो भिण्णदसपुन्नी । जो पुण
ण तासु लोभं करेदि कम्मक्खयायी हांतो सो अभिण्णदसपुन्नी णाम । तथ्य अभिण्णदसपुन्नीजिणाणं णमोक्वारं करेमि ति उत्तं होदि । भिण्णदसपुन्नीणं वथं पडिणिनिसी ? जिणसदाणुन्नतिदो, ण च तेसि जिणसमिथ,
भग्गमहन्नपुस जिणसाणुन्नतिहो ।

णमो चोदसपुव्चियाणं ॥ १३॥

जिणाणिमिदि एत्थाणुवहदे । सयलसुद्रणाणधारिणो चोइसपुष्टिंगणो, तेसिं चोइसपुष्टवीणं जिणाणं णमी हिद उत्तं होदि । सेसहेट्टिमपुष्टवीणं णमोकारी किण्ण कदो ? ण, तेसिं पि कदो चेव तेहिं विणा चोइसपुष्टवाणुववत्ति । चोइसपुष्टवस्सेव णामणिहेसे काट्ण किमट्टं णमेकारो कीरदे ? विज्ञाणुपवादस्स समतीए इव चोइससपुष्टवसमतीए वि जिणवयणप्रध्यवदंसणाहो । चोइसपुष्टवसमत्तीए को पच्चओ ? चोइसपुष्टवाणि समाणिय रिंदं काउससम्गेण टिदस्स पहादसमण् भवणवासियवाणवेत्तरजोदिसियकप्यवासियदेवेहि कयमहापृजा संखकाहलात्ररवसंखला । होदु एदेसु दोसु ट्राणेसु जिणवयणप्रच्चओवलंभो, जिणवयणत्त्रणं पिंदं सब्दंगपुष्टवाणि समाणाणि त्ति तेसिं सब्दोसिं णामणिइसं काऊण णमोक्मारो किण्ण कदो ? ण, जिणवयणत्त्रणेण सब्दंगपुष्टविस्सिरिस्ते संते वि विज्ञाणुप्पवादलोगविदुसाराणं महल्लकान्ति, एरथेव देवपूरोवलंभादो । चोइसपुष्टवहरो मिच्छर्णं ण गच्छिद तिम्ह भवे असंजर्म च ण पिंदवज्ञित, एसो एदस्स विमेसो ।

यहां धवलाकारने दशपूर्वियों और चौदहपूर्वियोंको अलग अलग नामनिर्देशपूर्वक नमस्कार किये जानेका कारण यह बतलाया है, कि जब श्रुतपाटी आचारांगादि ग्यारह श्रुतोंको पट चुकता है और दृष्टिवादके पांच अधिकारोंका पाट करते समय कमसे उत्पादादि पूर्व पढ़ता हुआ दशम पूर्व विद्यानुवादको समाप्त कर चुकता है, तब उससे रोहिणी आदि पांच सी महाविद्याएं और अंगुष्टप्रसेणादि सात सी अलप विद्याएं आकर पूछती है 'हे भगवन्, क्या आज्ञा है '? इसप्रकार सब विद्याओंके प्राप्त हो जानेपर जो लोभमें पड़ जाता है वह तो भिन्नदशपूर्वी कहलाता है, और जो उनके लोभमें न पड़कर कर्मक्षयार्थी बना रहता है वह अभिन्नदशपूर्वी होता है। ये अभिन्नदशपूर्वी ही 'जिन ' संज्ञाको प्राप्त करते हैं और उन्हींको यहां नमस्कार किया गया है। किन्तु जो महाव्रतोंका भंग कर देनेसे जिनसंज्ञाको प्राप्त नहीं कर पाते उन्हें यहां नमस्कार नहीं किया गया।

आगे यह प्रश्न उठाया गया है कि जब दश और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया तब बीचके ग्यारहपूर्वी, बारहपूर्वी और तेरहपूर्वियों को भी क्यों नहीं पृथक् नमस्कार किया । इसका उत्तर दिया गया है कि उनको नमस्कार तो चौदहपूर्वियोंके नमस्कारमें आ ही जाता है, पर जैसा जिनवचनप्रस्थय विद्यानुवादकी समाप्तिके समय देखा जाता है वैसा ही चौदहपूर्विकी समाप्तिक रात्रिमें श्रुत-केवली कायोत्सर्गसे विराजमान रहते हैं तब प्रभात समय भवनवासी, बाणव्यंतर, ज्योतिषी, और कल्पवासी देव आकर उनकी शंखत्र्यके साथ महापूजा करते हैं । इसप्रकार यद्यपि जिनवचनत्वकी अपेक्षासे सभी पूर्व समान हैं, तथापि विद्यानुप्रवाद और लोकबिन्दुसारका महत्त्व विशेष है, क्योंकि यहीं देवोंद्वारा पूजा प्राप्त होती है । दोनो अवस्थाओमे विशेषता केवल इतनी है कि चतुर्दशपूर्वधारी फिर मिध्यात्वमें नहीं जा सकता और उस भवमें असंयमको भी प्राप्त नहीं होता ।

इससे जाना जाता है कि श्रुतपाठियोंकी विद्या एक प्रकारसे दशम पूर्वपर ही समाप्त हो जाती थी, वहीं वह देवपूजाको भी प्राप्त कर लेता या और यदि लोममें आकर पथश्रष्ट न हुआ तो 'जिन' संज्ञाका भी अधिकारी रहता था। इससे दिगम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके प्रथमानुयोग नामक विभागको पूर्वगतसे पहले रखने की सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। यदि पूर्वगतके पश्चात प्रथमानुयोग रहा तो उसका तात्पर्य यह होगा कि दशपूर्वियोंको उसका ज्ञान ही नहीं हो पायगा। अतएव इस दशपूर्विकी मान्यताके अनुसार प्रथमानुयोगको पूर्वोसे पहले रखना बहुत सार्थक है। आगेके रेाप पूर्व और चूलिकाएं लोकिक और चमकारिक विद्याओंसे ही संबंध रखती है, वे आत्मशुद्धि बढ़ानेमें उतनी कार्यकारी नहीं है, जितनी उसकी दढ़ताकी परीक्षा करानेमें हैं।

भिन्न और अभिन्न दशपूर्वीकी मान्यताका निर्देश नंदीसूत्रमें भी है, यथा-

'इखें दुवालसंगं गणिपिडगं चोहसपुव्विस्स सम्मसुअं अभिण्णदसपुव्विस्य सम्मसुअं, तेण परं भिण्णेसु भयणा से तं सम्मसुअं ' (सृ. ४१)

टीकाकारने भिन्न और अभिन्न दशपूर्वीका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है-

' इत्येतद् द्वादशांग गणिपिटकं यश्चतुर्दंशपूर्वा तत्र्य सकलमिप सामायिकादि बिन्दुसार-पर्यवसानं नियमात् सम्यक् श्रुतं । ततो अधोमुखपरिहान्या नियमतः सर्वं सम्यक् श्रुतं तावद् वनत्तव्यं यावदिभिन्नदश-प्रिवणः—सम्पूर्णदशपूर्वधरस्य । सम्पूर्णदशपूर्वधरस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णदशप्रदेशस्य । सम्पूर्णिन दशप्रदेशस्य । सम्पूर्णिन प्रदेशस्य । सम्पूर्णिन सम्य सम्पूर्णिन सम्पूर्णिन सम्पूर्ण सम्पूर्णिन सम्पूर्णिन सम्पूर्णिन

इसका ताल्पर्य यह है कि जो सम्मग्दृष्टि होता है वह तो दश पूर्वोका अध्ययन कर छेता है और आगे भी बदता जाता है, किन्तु जो मिथ्यादृष्टि होता है वह कुछ कम दश पूर्वोतक तो पढता जाता है, किन्तु वह दशमेको भी पूरा नहीं कर पाता । इसका उदाहरण उन्होंने एक अभव्यका दिया है जो किसी ग्रंथि-देशपर आजानेसे उस ग्रंथिका मेदन नहीं कर पाता । पर टीकाकारने यह नहीं बतलाया कि कुछ कम दशवें पूर्वमें श्रुतपाठी कौनसी ग्रंथि पाकर रुक जाता है और उसका भेदन क्यों नहीं कर पाता ।

अनुयोगके दो भेद

- १. मूलपदमाणुओग
- २. गंणिआणुओग

मूळप्रथमानुयोगका विषय
अरहंताणं मगवंताणं पुन्वभवा देवगमणाइं आउंचवणाइं जम्मणाइं अभिसेआ रायवरितरीओ पन्वजाओ तवा य उग्गा केवलनाणुष्पयाओ तित्यपवत्तणाणि सीसा गणा गणहरा अजपवित्याओ।
संघरस चउन्विहस्स जं च परिमाणं जिण मण
पज्जव आहिनाणी सम्मत्त सुअनाणिणो वाई
अणुत्तरगई उत्तरवेडान्विण्णो मुणिणो जित्या।
सिद्धा सिद्धावहो जहदेसिओ जिन्नरं च कालं
पाओवगया जे जेहिं जात्तियाइं भत्ताई छेइता।
अंतगढे मुणिवरत्तमे तमरओधविष्पमुक्के मुक्खसुहमणुत्तरं च पत्ते एवमने अ एवमाइभावा
मूलपढमाणुओगे कहिआ।

गंडिआणुओग

गंडिआणुओंगे कुलगर-तित्यथर-चक्कविंद-दसार-वलदेव-वासुदेव-गणधर-महवाहु-तवाक्कम-हरिवंस-उस्सिप्पणी-चित्तंतर-अमर-नर-तिरिय-निरय-गइग-मण-विविह्परियट्टणेसु एवमाइआओ गंडिआओ आधविउजंति पण्णाविज्जंति।

प्रथमानुयोगका विषय

पदमाणिओए चउवीस अत्याहियारा तित्ययरपुराणेस सन्वपुराणाणमंतन्मावादो (जयधवला)
पदमाणियोगो पंच-सहस्सपदेहि (५०००)
पुराणं वण्णेदि । उत्तं चवारसिवहं पुराणं जं दिट्टं जिणवरेहि सन्वेहिं ।
तं सन्वं वण्णेदि ह जिणवंसे रायवंसे य ॥ १ ॥
पदमो अरहंताणं विदियो पुण चक्कविवेसो
दु । विज्जाहराण तिदयो चज्रथओ वासुदेवाणं ॥२॥ चारणवंसो तह पंचमो दु छहो य
पण्णसमणाणं । सत्तमओ कुरुवसो अहमओ तह
य हिवंसो ॥३॥ णवमो य इक्खयाणं दसमो वि य
कासियाणं बोद्धन्वो । वाईणेक्कारसमो वारसमा
णाहवंसो दु ॥ ४ ॥

श्वताम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके चौथे भेदका नाम अणुयोग है जिसके पुनः दो प्रभेद होते हैं, मूलप्रथमानुयोग और गंडिकानुयोग । दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोग ही दृष्टिवादका तीसरा भेद हैं । अनुयोगका अर्थ समवायांग टीकामें इसप्रकार दिया है— अनुरूरोऽनुकृलो वा योगोऽनुयोगः सूत्रस्य निजेनाभिधेयेन सार्द्रमनुरूपः सम्बन्ध इत्यर्थः ।

अर्थात् — सूत्रद्वारा प्रतिपादित अर्थके अनुकूछ संबंधका नाम ही अनुयोग है। तात्पर्य यह कि जिसमें सूत्र कथित सिद्धांत या नियमें। अनुकूछ दृष्टान्त और उदाहरण पाये जार्थे वह अनु-थोग है। उसके दो भेद करनेका अभिप्राय नंदीसूत्रकी टीकामें यह बतलाया गया है कि —

इह मूलं धर्मप्रणयनात् तीर्थकरास्तेषां प्रथमः सम्यक्त्वाप्तिलक्षणपृर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो मूल-प्रथमानुयोगः। इक्ष्वादीनां पूर्वापरपर्वपरिष्टिक्षो मध्यभागो गण्डिका, गण्डिकेव गण्डिका, एकार्थाधिकारा प्रथपद्वतिरित्यर्थः। तस्या अनुयोगो गण्डिकानुयोगः।

इसका अभिप्राय यह है कि धर्मके प्रवर्तक होनेसे तीर्थंकर ही मूळ पुरुष हैं, अतएव उनका प्रथम अर्थात् सम्यक्तवप्राप्तिलक्षण पूर्वभव आदिका वर्णन करनेवाला अनुयोग मूळप्रथमानुयोग है। और जैसे गन्ने आदिकी गंडेरी आजू बाजूकी गांठोंसे सीमित रहती है ऐसे ही जिसमें एक एक अधिकार अलग अलग हो उसे गंडिकानुयोग कहते है, जैसे कुळकरगंडिका आदि। किन्तु यह विभाग कोई विशेष महत्व नहीं रखता क्योंकि दोनोमें विषयकी पुनरावृत्ति पायी जाती है। जैसे तीर्थंकर और उनके गणधरोका वर्णन दोनो विभागोंमे आता है। दिगम्बरोंमें ऐसा कोई विभाग नहीं किया गया और साफ सीधे तौरसे बतलाया गया है कि दृष्टिवादके प्रथमानुयोगमें चौवीस अधिकारोंद्वारा बारह जिनवंशों और राजवंशोंका वर्णन किया गया है

दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोगका अर्थ इसप्रकार किया गया है-

प्रथमं मिथ्याद्यष्टिमञ्चतिकमञ्युत्पक्षं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः (गोम्मटसार टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि ' प्रथमं ' का ताल्पर्थ अन्नती और अन्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि शिष्यसे हे और उसके छिये जिस अनुयोग की प्रवृत्ति होती है वह प्रथमानुयोग कहलाता है। इसिके भीतर सन पुराणोंका अर्न्तभाव हो जाता है। किन्तु इसका पद-प्रमाण केवल पांच हजार बतलाया गया है। इससे जान पड़ता है कि दृष्टिवादके अन्तर्गत प्रथमानुयोगमें सर्व कथावर्णन बहुत संक्षेपमे किया गया था। पुराणवादका विस्तार पीछे पिछे किया गया होगा।

निन्दसूत्रकी टीकामें गंडिकानुयोगके अन्तर्गत चित्रान्तरगण्डिकाका बड़ा ही विचित्र और विस्तृत परिचय दिया है। पहळे उन्होंने बतलाया है कि—

' कुळकराणां गण्डिकाः कुळकरगण्डिकाः, तत्र कुळकराणां विमळवाहनादीनां पूर्वभवजन्मादीनि सप्रपञ्चपुपवर्ण्यन्ते । एवं तीर्थकरगण्डिकादिष्वाभिधानवशतो भावनीयं ' जाव चित्तंतरगंडिश्राउ ' सि ।

अर्थात् कुलकरगण्डिकामें विमलवाहनादि कुलकरोंके पूर्वभव जन्मादिका सविस्तर वर्णन किया गया है। इसीप्रकार तीर्थकरादि गंडिकाओंमें उनके नामानुसार विषय वर्णन समझ लेना चाहिये जहांतक कि चित्रान्तरगंडिका नहीं आती । फिर चित्रान्तरगण्डिकाका परिचय इस प्रकार प्रारम्भ किया गया है—

' चित्रा अनेकार्थाः, अन्तरे ऋषभाजिततीर्थकरापान्तराले गण्डिकाः चित्रान्तरगण्डिकाः । एतदुक्तं भवित—ऋषभाजिततीर्थकरान्तराले ऋषभवंशसमुद्भूतभूपतीनां शेषगतिगमनन्युदासेन शिवगतिगमनानुत्तरोपपातप्राप्तिपतिपतिपादिका गण्डिकाश्चित्रान्तरगण्डिकाः । तासां च प्ररूपणा पूर्वाचौरेरेवमकारि – इह सुबुद्धिनामा सगरचक्रवर्तिनो महामात्योऽष्टापद्पर्वते सगरचक्रवर्तिसुतेभ्य आदित्ययशःप्रभृतीनां भगवद्यभवंशजानां भूपर्तानामेवं संख्यामाख्यानुमदक्रमते स्म । आह च—

" आइरचजसाईणं उसभस्स परंपरानस्वईणं। सम्बरसुयाण सुकुद्धी इणमो संखं परिकहेट ॥ १ ॥

भादित्ययशःप्रभृतयो भगवजाभेयवंशजािस्स्वण्डभरतार्द्धभनुपास्य पर्यन्ते पारमेश्वरी द्रीक्षामिभगृद्ध तत्रभावतः सक्छक्रमेश्वयं कृत्वा चतुर्दश छक्षा निरन्तरं सिद्धिमगमन । तत एकः सर्वार्थमिद्धी, ततो भूयोऽपि चतुर्दश छक्षा निरन्तरं निर्वाणे, ततोऽप्येकः सर्वार्थसिद्धे महाविमाने । एवं चतुर्दश छक्षान्तरितः सर्वार्थसिद्धायेकेकस्तावद्ध-कृष्यो यावत्तेऽप्येकका असंख्येया भवन्ति । ततो भूयश्चतुर्दश छक्षा नरपतीनां निरन्तरं निर्वाणे, ततो द्वी सर्वार्थसिद्धे । एवं चतुर्दश छक्षा नरपतीनां निरन्तरं निर्वाणे, ततो द्वी सर्वार्थसिद्धे । एवं चतुर्दश छक्षा न रक्षान्तरितां द्वी र सर्वार्थसिद्धे । एवं चतुर्दश छक्षा न र छक्षान्तरितां द्वी र सर्वार्थसिद्धे तावद्वक्तव्याः यावत्तिऽपि द्विक र संख्यया असंख्येया भवन्ति । एवं त्रिक र संख्यादयोऽपि प्रत्येकमसंख्येयास्तावद्वक्तव्याः याविक्तरन्तरं चतुर्दश छक्षा निर्वाणे। ततः प्रज्ञानसर्वार्थसिद्धे । एवं प्रज्ञानसर्वार्थसिद्धे । ततां भूयोऽपि चतुर्दश छक्षा निर्वाणे। ततः प्रज्ञानसर्वार्थसिद्धे । एवं प्रज्ञानसर्वाया अपि चतुर्दश र छक्षान्तरितास्तावद्वक्तव्या यावत्तेऽप्यसंख्येया भवन्ति । उक्तंच—

'' चोहस छक्छा सिद्धा णिवईणेक्को य होह सब्बट्टे । एतेक्केके ठाणे पुरिसजुगा होतिऽसंखेउजा ॥ १ ॥ पुणरिष चोहस छक्छा सिद्धा निब्बईण दो वि सब्बट्टे । दुगठाणेऽवि असंखा पुरिसजुगा होति नायब्बा ॥ २ ॥ जाव य छक्छा चोहस सिद्धा पण्णास होति सब्बट्टे । पक्षासट्टाणे वि उ पुरिसजुगा होतिऽसंखेउजा ॥ ३ ॥ एगुक्तरा उ ठाणा सब्बट्टे चैव जाव पक्षासा । एकेकंतरठाणे पुरिसजुगा होति असंखेउजा ॥ ३ ॥

इसका ताल्पर्य यह है कि ऋषम और अजित तीर्थंकरोंके अन्तराल काल्में ऋषम वंशके जो राजा हुए उनकी और गितयोंको छोड़कर केवल शिवगित और अनुत्तरोपपातकी प्राप्तिका प्रतिपादन करनेवाली गंडिका चित्रान्तरगंडिका कहलाती है। इसका पूर्वाचार्योंने ऐसा प्ररूपण किया है कि सगरचक्रवर्तीके सुबुद्धिनामक महामात्यने अष्टापद पर्वतपर सगरचक्रवर्तीके पुत्रोंको मगवान् ऋषमके वंशज आदित्ययश आदि राजाओंकी संख्या इस प्रकार बताई—उक्त आदित्ययश आदि नाभयवंशके राजा त्रिखंड भरतार्थका पालन करके अन्त समय पारमेश्वरी दीक्षा धारण कर उसके प्रभावसे सब कमेंका क्षय करके चौदह लाल निरन्तर क्रमसे सिद्धिको प्राप्त हुए और

अनन्तर एक सर्वार्थसिद्धिको गया। फिर चौदह छाख निरन्तर मोक्षको गये और पश्चात् एक फिर सर्वार्थसिद्धिको गया। इसीप्रकार कमसे वे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको तबतक जाते रहे जबतक कि सर्वार्थसिद्धिमें एक एक करके असंस्य होगये। इसके पश्चात् पुनः निरंतर चौदह चौदह छाख मोक्षको ओर दो दो सर्वार्थसिद्धिको तबतक गये जबतक कि ये दो दो भी सर्वार्थसिद्धिमें असंस्य होगये। इसीप्रकार कमसे फिर चौदह छाख मोक्षगामियोंके अनन्तर तीन तीन, फिर चार चार करके पचास पचास तक सर्वार्थसिद्धिको गये और सभी असंस्य होते गये। इसके पश्चात् कम बदछ गया और चौदह छाख सर्वार्थसिद्धिको जाने के पश्चात् एक एक मोक्षको जाने छगा और पूर्वोक्त प्रकारसे दो दो फिर तीन तीन करके पचास तक गये और सब असंस्य होते गये। फिर दो छाख निर्वाणको, फिर दो छाख सर्वार्थसिद्धिको, फिर तीन तीन छाख। इस प्रकारसे दोनों ओर यह संस्या भी असंस्य तक पहुंच गई। यह सब चित्रान्तरगंडिकामें दिखाया गया था। उसके आगे चार प्रकारकी और चित्रान्तरगंडिकायें थीं—एकादिका एकोत्तरा, एकादिका हक्तरा, एकादिका ह्यतरा, एकादिका ह्यतरा और स्वार्थने हिक्को जानेवाछोंकी संस्याएं वतायों गई थीं।

जान पड़ता है, इन सब संख्याओंका उपयोग अनुयोगके विषयकी अपेक्षा गणितकी मिन-भिन्न धाराओंके समझानेमें ही अधिक होता होगा ।

चूलिका

प्रथम चार पूर्वोकी चूलिकाएं ही इसके अन्त-र्गत हैं । उन चूलिकाओंकी संख्या ४+१२+ ८+१०=३४ है

पांच चृलिकाओंके अन्तर्गत विषय

- ? जलगया—जलगमण —जल्खंभण-—कारण— मंत-तंत-तपन्छरणाणि वण्णेदि ।
- २ थलगया भूमिगमणकारण-मंत-तंत-तव-च्छरणाणि वत्थुविज्ञं भूमिसंबंधमण्णं पि घुद्दा-घुहकारणं वण्णेदि ।
- ३ मायागया-इंदजाछं वण्णेदि
- ४ रूवगया—सीह—हय-हरिणादि--- रूवायारेण परिणमणहेदु—मंत-तंत-तवच्छरणाणि चित्त-कड्ड-लेप-लेणकम्मादि-लक्खणं च वणोदि ।
- ५ आयासगया— आगासगमणणिमित्त-मंत-तंत-तवग्छरणाणि वण्णेदि ।

श्वेताम्बर प्रथोंमें यद्मि चूलिका नामका दृष्टिवादका पंचिवां भेद गिना गया है, किन्तु उसके भीतर न तो कोई प्रथ बताये गये और न कोई बिषय, केवल इतना कह दिया गया है कि-

से किं तं चृत्तिभाओ ? चृत्तिभाओ आइलाणं चउण्हं पुन्वाणं चृत्तिआ, सेसाई पुन्वाई अचूतिआई, से तं चृत्तिभाओ ।

अर्थात् प्रथम चार पूर्वोकी जो चूलिकाएं बता आये हैं वे ही चूलिकाएं यहां गिन लेना चाहिये। किन्तु, यदि ऐसा है तो चूलिकाको पूर्वोका ही भेद रखना था, दृष्टिवादका एक अलग भेद बताकर उसका एक दूसरे भेदके अन्तर्गत निर्देश करनेसे क्या विशेषता आई ? फिर भी टीकाकार यह तो स्पष्ट बतलाते है कि दृष्टिवादका जो विषय परिकर्म, सूत्र, पूर्व और अनुयोगमें अनुक्त रहा वह चूलिकाओं में संप्रह किया गया—

' इह चूला शिलरमुच्यते, यथा मेरी चूला। तत्र चूला इव चूला। दृष्टिवादे परिकर्म-सूत्र-पूर्वानुयोगेऽ नुकार्थमंत्रहपरा प्रथपदृतयः। × × × एताश्च सर्वस्थापि दृष्टिवादस्योपि किल स्थापितामधेव च पट्यन्ते। ' (नन्दीसूत्र दीका)

इससे तो जान पडता है कि उन्हे पूर्वोंके भीतर बतलानेमे कुछ गडवड़ी हुई है।

दिगम्बर मान्यतामें पूर्वों के भीतर कोई चृष्टिकाएं नहीं दिखाई गईं। उसके जो पांच प्रभेद वतलाये गये है उनका प्रथम चार पूर्वोंसे विषयका भी कोई सम्बंध नहीं है। वे जल, थल, माया, रूप और आकाश सम्बंधी इन्द्रजाल और मंत्र-तंत्रात्मक चमत्कारका प्ररूपण करती है, तथा अन्तिम पांच पूर्वोंके मंत्रतंत्रात्मक विषयकी धाराको लिये हुए हैं। प्रलेक चूलिकाकी पदसंख्या २०९८९२०० बतलाई है, जिससे उनके भारी विस्तारका पता चलता है।

अब यहां पूर्वोके उन अंशोंका विशेष परिचय कराया जाता है जो धवछा जयधवछाके भीतर प्रथित हैं और जिनकी तुछनाको कोई सामग्री श्वेताम्बरीय उपर्युक्त आगमोंमें नहीं पाया जाती। इनकी रचना आदिका इतिहास सत्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिया जा चुका है जिसका सारांश यह है कि भगवान् महावीरके पश्चात् क्रमशः अर्डाईस आचार्य हुए जिनका श्रुतज्ञान धीरे धीरे कम होता गया। ऐसे समयमें दो भिन्न भिन्न आचार्योने दो भिन्न भिन्न पूर्वोके अन्तर्गत एक एक पाइडका उद्धार किया। धरसेनाचार्यने पुष्पदंत और भूतबछिको जो श्रुत पढ़ाया उसपरसे उन्होंने दितीय पूर्व आग्रायणीके एक पाइडका उद्धार सूत्ररूपसे किया। आग्रायणीपूर्वके अन्तर्गत निम्न चौदह कस्तु ' नामक अधिकार थे—पुन्वंत, अवरंत, धुव, अधुव, चयणलद्भी, अद्धुवम, पणिधिकष्प, अट्ठ, भौम्म, वयादिय, सन्बट्ट, कष्पणिज्ञाण, अतीद-सिद्ध-बद्ध और अणागय-सिद्ध-बद्ध।

हम ऊपर बतला ही आये है कि पूर्वोक्षी प्रलेक वस्तुमें नियमसे वीस वीस पाहुड रहते थे । अग्रायणी पूर्वकी पंचम वस्तु चयनलिश्चिक वीस पाहुडोमें चौथे पाहुडका नाम कम्मपयडी या महाकम्मपयडी अथवा वेयणकिसणपाहुड x था । इसीका उद्धार पुष्पदंत और मृतबिलेने

🗴 कम्भाणं पर्यात्सस्त्वं वण्णेदि, तेण कम्मपयिष्ठिपाहुडे ति गुणणामं । वेयणकसिणपाहुडे ति वि तस्त विदियं णाममस्य । वेयणा कम्माणग्रदयो त कसिण णिखसेसं वण्णेदि अदो वेयणकसिणपाहुडमिदि एदमिव गुणणामभेव (सं. प. १, पृ. १२४, १२५) सूत्ररूपसे षट्खंडागमके भीतर किया। इस पाहुडके जो चौबीस अवान्तर अधिकार थे, उनके विपयका संक्षेप परिचय धवलाकारने बेदनाखंडके आदिमें कराया है जो इस प्रकार है —

- १ कदि—कदीए ओरालिय-बेडाव्यय-तेजाहार-कम्मइयसरीराणं संघादण-परिसादणकदी-ओ भव-पढमापढम-चरिमम्मि द्विदजीवाणं कदि-णोकदि-अवत्तव्यसंखाओ च पर्क्वि— ज्जंति ।
- २ वेदणा-वेदणाए कम्म-पोग्गलाणं वेदणा-सण्णिदाणं वेदण-णिक्खेवादि-सोलसेहि अणिओगहारेहि पस्तवणा कीरदे ।
- ३ फास-फासणिओगहाराम्म कम्म-पोगगलाणं णाणावरणादिमेएण अहमेदसुवगयाणं फास-गुणसंबंधेण पत्त-फासणीमाण-फासणिक्ले-वादिसोळसेहि अणियोगदारेहि परूबणा कीरदे।
- ४ कम्म-कम्मेति अणिओगहारे पोम्मलाणं णाणावरणादिकप्मकरणक्खमत्तणेण पत्त-कम्मस्रणाणं कम्मणिक्खेवादिसोलसेहि अणियोगहारेहि प्रक्षवणा कीरदे ।
- ५ प्याडि-प्याडि ति अणियोगहारम्हि पोमालाणं कदिम्हि प्रकृतिद-संघादाणं वेदणाए
 पण्णित्रदावत्थाविसेस-प्रच्यादीणं फासम्मि
 णिकृतिद-वावाराणं प्याडिणिक्खेबादि-सोलसअणियोगहारेहि सहाब-प्रकृतणा कीरदे।

- १ कृति—कृति अर्थाधिकारमें औदारिक, वैक्रियिक, तैजस, आहारक और कार्मण, हन पाचें। शरीरोंकी संघातन और परि-शातनरूप कृतिका तथा भवके प्रथम, अप्रथम और चरम समयमें स्थित जीवोंके कृति, नोकृति और अवक्तव्यरूप संस्या-ओंका वर्णन है।
- २ वेदना-वेदना अर्थाधिकारमें वेदनासंज्ञिक कर्मपुद्रलोंका वेदनामिक्षेप आदि सोल्ह अधिकारोंके द्वारा वर्णन किया गया है।
- ३ स्पर्श-स्पर्श अर्थाधिकारमें स्पर्श गुणके संबन्धसे प्राप्त हुए स्पर्शनिर्माण, स्पर्श-निक्षेप आदि सोल्ह अधिकारीके द्वारा ज्ञानावरणादिके भेदसे आठ भेदको प्राप्त हुए कर्मपुद्रलोंका वर्णन किया गया है।
- ४ कर्म-कर्म अर्थाधिकारमें कर्मनिक्षेप आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादि कर्मकरणमें समर्थ होनेसे जिन्हें कर्मसंज्ञा प्राप्त हो गई है, ऐसे पुत्रलोंका वर्णन किया गया है।
- 4 प्रकृति-प्रकृति अधीधकारमें कृति अधि-कारमें कहे गये संघातनरूप, वेदना अधि-कारमें कहे गये अवस्थाविशेष प्रस्पयादि-रूप, स्पर्शमें कहे गये जीवसे संबद्ध और जीवके साथ संबद्ध होनेसे उत्पन्न हुए गुणके द्वारा कर्म अधिकारमें कवित रूपसे व्यापार करनेवाले पुद्गलोंके स्वभाव

६ बंधण-जं तं बंधणं तं चउिवंहं-बंधो बंधगा बंधणिडजं बंधविधाणमिदि । तत्थ बंधो जीवकम्मपदेसाणं सादियमणादियं च बंधे वण्णेदि । बंधगाहियारो अहिबहकम्म-बंधगे पह्रवेदि, सो च खुदाबंधे पह्रविदो । बंधणिडजं बंधपाओग्ग-तदपाओग्ग-पोग्गल-द्वं पह्रवेदि । बंधविहाणं प्यादिबंधं टिदिबंधं अणुभागबंधं प्रदेसबंधं च पह्रवेदि ।

७ णिबंधण-णिबंधणं मूल्तरपयडीणं निबं-धणं वण्णेदि । जहा चिक्लंदियं रूविम णिबद्ध, सोदिंदियं सहिम णिवद्धं, धाणिदियं गंधिम णिबद्धं, निन्भंदियं रसिम णिबद्धं, प्रासिंदियं कक्षदादिफासेसु णिबद्धं, तहा हमाओ पयडीओ एदेसु अत्थेसु णिबद्धाओ ति णिबंधणं पह्नदेदि, एसो भावत्यो।

ट प्रक्रम-पद्भमित अणियोगद्दारं अकम्मसरू-वेण हिदाणं कम्मइयवग्गणाखंधाणं मूलतर-पयिदसरूवेण परिणममाणाणं पयिद्ध-हिदि-अणुभागविसेसेण विसिद्धाणं पदेसपरूवणं

- का निरूपण प्रकृतिनिक्षेप आदि सोल्ह अधिकारोंके द्वारा किया गया है।
- ६ बन्धन-बन्ध, बन्धक, बन्धनीय और बन्धविधान, इसप्रकार बन्धन अधिकारके चार मेद हैं। उनेमेंसे बन्ध अधिकार जीव और कर्मप्रदेशोंका सादि और अनादिरूप बन्धका वर्णन करता है। बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मोंके बन्धकका प्रतिपादन करता है जिसका कथन क्षुक्लकन्धमें किया जा चुका है। बन्धके योग्य पुद्रलद्भव्यका कथन बन्धनीय अधिकार करता है। बन्धविधान अधिकार प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुमाग-बन्ध और प्रदेशबन्ध, इन चार बन्धके मेदोंका कथन करता है।
- ७ निवन्धन-निबन्धन अधिकार म्लप्रकृति और उत्तरप्रकृतियोंके निबन्धनका कथन करता है । जैसे, चक्षुरिन्दिय रूपमे निबद्ध है । श्रोत्रेन्द्रिय शब्दमें निबद्ध है । प्राणेन्द्रिय गन्धमें निबद्ध है । जिह्ना इन्द्रिय रसमें निबद्ध है और स्पर्शनेन्द्रिय कर्कश आदि स्पर्शमें निबद्ध है । उसी-प्रकार ये म्लप्रकृतियां और उत्तरप्रकृतियां इन विषयोंमें निबद्ध हैं, इसप्रकार निब-न्धन अर्थाधिकार प्ररूपण करता है यह भावार्थ जानना चाहिये ।
- ८ प्रक्रम-प्रक्रम अयाधिकार जो वर्गणास्कन्ध अभी कर्मरूपसे स्थित नहीं हैं, किंतु जो मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिरूपसे परिणमन करनेवाले हैं और जो प्रकृति, स्थिति और

कुणदि ।

९ उवकम - उवक्कमित्त अणियोगदारस्स चत्तारे अहियारा — बंधणोवक्कमो उदीरणोवक्कमो उदीरणोवक्कमो जेदि। उवसामणोवक्कमो बंधविदियसमयण्पद्वाडि अ-इण्णं कम्माणं पयडि-द्विदि - अणुभाग-पदेसाणं बंधवण्णणं कुणदि। उदीरणोवक्कमो पयडि-द्विदि - अणुभाग-पदेसाणं व्यवसामणोवक्कमो पसत्योवसामणमण्पसत्योवसामणाणं च पयडि-द्विदि - अणुभाग-पदेसभेदाभिण्णं पर्वेदि। विपरिणाममुव-क्कमो पयडि-द्विदि - अणुभाग-पदेसाणं देस-णिज्जरं स्वयङ्गिज्जरं च पर्वेदि।

- १० उदय-उदयाणियोगहारं पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेमुदयं परूवेदि ।
- ११ मोक्ख-मोक्खो पुण देस-सयलिण ज्जराहि परपयि संकमोक इणुक्क इण-अद्धि दिगल-णेहि पयि - हिंदि - अणुभाग-पदेसिभणं मोक्खं वण्णेदि ति अत्यभेदो ।
- १२ संकम-संकमित्त अणियोगदारं पयडि-हिदि -अण्यभाग-पदेससंकमे परूवेदि ।

- अनुभागकी विशेषतासे वैशिष्ट्यकी प्राप्त हैं ऐसे कर्मधर्मणास्कर्न्योंके प्रदेशोंका प्ररूपण करता है।
- अर्थाधिकारके ९ उपक्रम-उपक्रम अधिकार हैं बन्धनीपक्रम, उदीरणीपक्रम, उपशामनीपऋम और विपरिणामोपऋम । उनमेंसे बन्धनीपऋम अधिकार बन्ध होनेके दूसरे समयसे छेकर प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशरूप ज्ञानावरणादि आठों कमीके बन्धका वर्णन करता है। उदीर-णोपक्रम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी उदीरणाका कथन करता है। उपशामनोपक्रम अधिकार, प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे भेदको प्राप्त हुए प्रशस्तोपशमना और अप्रशस्तो-पशमनाका कथन करता है। विपरिणा-मोपऋम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशोंकी देशनिर्जरा और सकलनिजराका कथन करता है।
- १० उदय-उदय अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके उदयका कथन करता है।
- ११ मोक्ष-मोक्ष अर्थाधिकार देशनिर्जरा और सकलनिर्जराकेद्वारा परप्रकृतिसंक्रमण, उत्क-र्षण अपकर्षण और स्थितिगळनसे प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्धका आत्मासे भिन्न होना मोक्ष है, इसका वर्णन करता है।
- १२ संक्रम—संक्रम अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके संक्रमणका प्रकृपण करता है।

- **१३ लेस्सा**-छेस्सेत्ति अणिओगद्दारं छद्ब्बले-स्साओ परुवेदि ।
- १४ लेस्सायम्म-लेस्सापरिणामिति अणियोग-दारमंतरंग-छलेस्सा-परिणयजीवाणं बज्ज-कज्जपरूपणं कुणदि।
- १५ लेस्सापरिणाम-लेस्सापरिणामेत्ति अणि-योगदारं जीव-पोग्गलाणं दन्य-भावलेस्साहि परिणमणविहाणं वण्णेदि ।
- १६ सादमसाद—सादमसादेति अणियोगद्दारमे-यंतसाद-अणेयंततोदाणं (१) गदियादि-मग्गणाओ अस्सिदृण पक्तवणं कुणइ।
- १७ दिहेरहस्स-दिहेरहरसेति अणिओगदारं पयडि-हिदि-अणुभाग-पदेसे अस्सिद्ण दीहरहस्सत्तं परुवेदि ।
- १८ भवधारणीय-भवधारणीए ति अणियोग-दारं केण कम्मेण णेरइय-तिरिक्ख-मणुस-देवभवा धरिङजंति ति पहत्वेदि ।
- १९ पोरमस्त-पोरमस्अत्येति अणिओगद्दारं गह-णादो अत्ता पोरमस्रा परिणामदो अता पोरमस्रा उवभोगदो अत्ता पोरमस्रा आहारदो अता पोरमस्रा ममत्तीदो अत्ता पोरमस्रा परिग्महादो अत्ता पोरमस्रा ति अप्पणिउजाणप्पणिउज-पोरमस्राणं पोरमस्राणं संबंधेण पोरमस्तं पत्तजीवाणं च पर्स्स्वणं कुणदि ।

- १३ लेक्या—छेखा आनुयोगद्वार छह दब्य छेक्याओंका प्रतिपादन करता है।
- १४ लेक्याकर्म-लेक्याकर्म अर्थाधिकार अन्तरंग छह लेक्याओंसे परिणत जीवोंके बाह्य कार्योंका प्रतिपादन करता है।
- १५ लेक्यापरिणाम लेक्यापरिणाम अर्थाधिकार जीव और पुद्रलोंके द्रव्य और भावन्द्रप्रेसे परिणमन करनेके विधानका कथन करता है।
- १९ सातासात-सातासात अर्थाधिकार एकान्त सात, अनेकान्त सात, एकान्त असात, अनेकान्त असातका गति आदि गार्गणा-ओंके आश्रयसे वर्णन करता है।
- १७ दीर्घ-हस्त्र—दीर्घ-हस्य अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुमाग और प्रदेशोंका आश्रय छेकर दीर्घता और हस्त्रताका कथन करता है।
- १८ भवधारणीय—भवधारणीय अर्थाधिकार, किस कर्मसे नरकभव प्राप्त होता है, किससे तिर्यचभव, किससे मनुष्यभव और किससे देवभव प्राप्त होता है, इसका कथन करता है।
- १९ पुद्रलाच-पुद्रलार्थ अनुयोगद्वार दण्डाटिके प्रहण करनेसे आत्त पुद्रलोंका, मिथ्या- लादि परिणामोंसे आत्त पुद्रलोंका, उपभोगसे आत्त पुद्रलोंका, आहारसे आत्त पुद्रलोंका, ममतासे आत्त पुद्रलोंका और परिप्रहसे आत्त पुद्रलोंका, इसप्रकार आत्मसात् किये हुए और नहीं किये हुए

- २० णिधत्तमणिधत्त णिधत्तमणिधत्तमिदि
 अणियोगदारं पयाडि-दिदि -अणुमागाणं
 णिधत्तमणिधत्तं च पह्नवेदि । णिधत्तमिदि
 कि ? जं पदेसग्गं ण सक्कमुद्रण् दादुं
 अण्णपथांडि वा सक्कामेदं नं णिधत्तं णाम ।
 निव्ववश्यमणिधत्तं ।
- २१ णिकाचिदमणिकाचिद- णिकाचिदमणि-काचिदमिदि आणियोगहारं पयिङ-शिंद -अणुभागाणं णिकाचण परूवेदि । णिकाच-णिमदि कि ! जं पंदसम्ग ण सक्कमोक-श्रिदुमण्णपयिङ संकामेदुमुदए दाटु वा तिण्णकाचिद णाम । तिव्ववरीदमणिका-चिदं ।
- २२ **कम्मद्विदि**-कम्मीइदि ति अणियोगद्दार सन्वकम्माणं सत्तिकम्मीद्विसुक्कङ्कणोकङ्कण-जणिदद्विदिच पक्षेवि ।
- २३ पिच्छमक्तंध-पिच्छमक्त्वंधित अणिओग-दारं दंड-कपाट-पदर-लोगपूरणाणि तत्थ दिदि-अणुभागग्वंडयघादणाविहाणं जोग-किद्योओ काऊण जोर्गाणरोहसम्ब्वं कम्म-क्खवणविहाणं च प्रक्वेदि ।

- पुद्रलोंका तथा पुद्रलके संबन्धसे पुद्रलखको प्राप्त हुए जीवोंका वर्णन करता है ।
- २० निधत्तानिधत्त-निधत्तानिधत्त अयोधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निधत्त और अनुभागके निधत्त और अनिधत्तका प्रतिपादन करता है । जिसमें प्रदेशाय उदय अर्थात् उदीरणामें नहीं दिया जा सकता है और अन्य प्रकृतिकृप संक्रमणका भी प्राप्त नहीं कराया जा सकता है, उसे निधत्त कहते है । अनिधत्त इससे विपरीत होता है ।
- २१ निकाचितानिकाचित--निकाचितानिकाचित अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निकाचित और अनिकाचितका
 वर्णन करता है। जिसमें प्रदेशाप्रका उत्कपण, अपकर्पण, परप्रकृतिसंक्रमण नहीं हां
 सकता और न वह उदय अथवा उदीरणा
 म ही दिया जा सकता है उसे निकाचित
 कहते हैं। अनिकाचित इससे विपरीत
 होता है।
- २२ कमिस्थिति-कमिस्थिति अनुयोगद्वार संपूर्ण कमींकी राक्तिरूप कमिस्थितिका और उन्कर्पण तथा अपकर्षणसे उत्पन हुई कमिस्थितिका वर्णन करता है।
- २३ पिरचमस्कन्ध-पश्चिमस्कन्य अयोधिकार दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरणरूप समुद्धातका, इस समुद्धातमें होनेवाले स्थितिकांडकघात और अनुभागकाण्डक-घातके विधानका, योगोंकी कृष्टि करके होनेवाले योगिनरोधके खरूपका और कर्मक्षपणके विधानका वर्णन करता है।

२४ अप्पाबहुग — अपाबहुगाणिओगहारं २४ अल्पबहुत्व — अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारं अदीदसन्याणिओगहारेषु अपाबहुगं अतीत संपूर्ण अनुयोगद्वारों में अल्पबहुत्वका परुत्रेदि । प्रतिपादन करता है ।

इन चौवीस अधिकारोंके विषयका प्रतिपादन पुष्पदन्त और भूतबिलने कुछ अपने खतंत्र विभाग से किया है जिसके कारण उनकी कृति षट्खंडागम कहलाती है । उक्त चौवीस अधिकारोंमें पांचवां बंधन विषयकी दृष्टिसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। इसीके कुछ अवान्तर अधिकारोंको लेकर प्रथम तीन खंडों अर्थात् जीवट्ठाण, खुदाबंध और बंधसामित्तीवचयकी रचना हुई है। इन तीन खंडोंमें समानता यह है कि उनमें जीवका बंधककी प्रधानतासे प्रतिपादन किया गया है। उनका मंगलाचरण भी एक है। इन्हीं तीन खंडोंपर कुन्दकुन्दद्वारा परिकर्म नामक टीका लिखी कही गयी है। इन्हीं तीन खंडोंके पारंगत होनेसे अनुमानतः त्रेविद्यदेवकी उपाधि प्राप्त होती था। इन्हीं तीन खंडोंका संक्षेप सिद्धान्तचक्रवर्ती नेमिचन्द्रकृत गोम्मटसारके प्रथम विभाग जीवकांडमें पाया जाता है।

इन तीन खंडोंके पश्चात् उक्त चौवीस अधिकारोंका प्ररूपण कृति वेदनादि क्रमसे किया गया है और प्रथम छह अर्थात् बंधन तकके प्ररूपणको अधिकार व अवान्तर अधिकारकी प्रधानता- उसार अगले तीन खंडों वेदणा, वरगणा और महाबंधमें विभाजित कर दिया गया है। इन तीन खंडोंके विषय-विवेचनकी समानता यह है कि यहां बंधनीय कर्मकी प्रधानतासे विवेचन किया गया है। इनमें अन्तिम महाबंध सबसे बड़ा है और स्वतंत्र पुस्तकारूढ़ है। जो उपर्युक्त तीन खंडोंके अतिरिक्त इन तीनोंमें भी पारंगत हो जाते थे, वे सिद्धान्तचक्रवर्ती पदके अधिकारी होते थे। सि. च. नेमिचन्द्रने इनका संक्षेप गोम्मटसार कर्मकांडमें किया है।

भूतबिक रिचत सूत्रग्रंथ छठवें बंधन अधिकारके साथही समाप्त हो जाता है। शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका प्ररूपण धवला टीकाके रचयिता बीरसेनाचार्यकृत है, जिसे उन्होंने चूलिका कहकर पृथक् निर्देश कर दिया है।

उपर्युक्त खंडिबभागादिका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये हुए मानचित्रोंसे स्पष्ट-तया समझमें आजाता है । उन चित्रोंमें बतलायी हुई जीवद्वाणकी नवमीं चूलिका गित-आगितकी उत्पक्तिके विषयमें एक सूचना कर देना आवश्यक प्रतीत होता है । वह चूलिका धवलोंमें वियाह-पण्णित से उत्पन्न हुई कही गया है । मानचित्रमें व्याख्याप्रकृतिके आगे (पांचवां अंग) ऐसा लिख दिया गया है, क्योंकि यह नाम पांचवें अंगका पाया जाता है । किन्तु दृष्टिवादके प्रथम विभाग परिकर्मके पांच भेदोंमें भी पांचवां भेद वियाहपण्णित्त नामका पाया जाता है । अतएव संभव है कि गित-आगित चूलिकाकी उत्पादक वियाहपण्णित्तसे इसीका अभिप्राय हो ! पांचें पूर्व णाणपवाद (ज्ञानप्रवाद) के एक पाहुडका उद्घार गुणधराचार्यद्वारा गायाहरपेंमं किया गया। णाणपवादकी बारह वस्तुओं मेंसे दशम वस्तुके तीसरे पाहुडका नाम 'पेज ' या 'पेजदोस' या 'कसाय' पाहुड था। इसीका गुणधराचार्यने १८० गाथाओं (और ५३ विवरण-गाथाओं में) उद्धार किया, जिसका नाम कसायपाहुड है। इसका परिचय स्वयं सूत्रकार व टीका-कारके शब्दों में संक्षेपतः इसप्रकार है—

पुरुविम पंचमिन हु दसमें चर्धिम्म पाहुहे तदिये। पेजं ति पाहुहिम हु हवदि कसायाण पाहुहं णाम ॥ १ ॥

*

गाहासदे असीदे अध्ये पण्णरसभा विहत्तम्म । वोच्छामि सुत्तगाहा जह गाहा जम्मि अध्यम्म ॥

टीका—सोलमपदसहस्सेहि वे कोडाकोडिएकसिट्टिलक्ख-सत्तावण्यसहस्स-वेसद्-बाणउदिकोटि - वासिट्टिलक्ख-अट्टमहस्सक्षरूपाणोहि जं भणिदं गणहरदेवेण इंदभूदिणा कसायपाहु हं तमसीदि -सदगाहाहि वेव जाणाविमि ति गाहामदे अमीदे ति पडमपइजा कदा । तथ्य अणेगेहि अध्याहियारेहि पक्षिदं कसाय-पाहुडमेथ्य पण्णारसेहि वेत अध्याहियारेहि पक्ष्वेमि ति जाणावणट्टं अध्ये पण्णारसभा विद्दत्तम्मि ति विदियपद्वज्ञा कदा । × × × ।

* *

संगिष्ट कसायपाहु इस्स पण्णारस-अध्यादियार-परूपण्टं गुणहरभ हारको दो सुत्तगाहाको पठित्-पेज्ञहोम-विहत्ती[ट्टीट्-अणुभागे च बंधगे चैय | वेदगण्वजोगे वि य चउट्टाण-वियंजणे चे य || सम्मत-देसविरयी संजम-उवसामणा च खरणा च । दंसण-चित्तमोहे अद्धापिरमाणणिहेसो ||

इसका ताल्यं यह है । कि यह कसायपाहुड पंचम पूर्वकी दसम वस्तुके पे जनामक तृतीय पाहुडसे उल्पन्न हुआ है । इन्द्रभृति गौतमकृत उस मूलप्रंथका परिमाण बहुत भारी था और अधिकार भी अनेक थे । प्रस्तुत कसायपाहुडमें १८० गाथाएं १५ अधिकारों ने बिभक्त हैं । गाथाओं में सूचित पन्द्रह अधिकार जयधवलाकारने तीन प्रकारसे बतलाये हैं । इनमें से जो विभाग उन्होंने चूर्णिकार यतिकृषमके आधारसे दिये हैं, वे निम्नप्रकार हैं —

?	पेजदोस	५ उदय (कर्मोंदय) } वेदग ६ उदीरणा (अकर्मोदय) } वेदग
र	विहत्ती-हिदि-अणुभाग	६ उदीरणा (अकर्मोदय) ∫ ^{चद्र} ा
₹	बंधग (अक्षमंबंध))	७ उवजोग
8	बंधग (अकर्मबंध)) संकाम (कर्मबंध)} बंधग	८ चउट्टाण

९	वं जण्	१३ चरित्तमोहणीयस्स उत्रसामणा । १४ ,, ,, स्वयणा ।
१०	दंसणगोहणीयस्य उनसामगा ।	१४ ,, ,, खबणा (जन
8 8	दंत्रणगोहणीयस्य उनसामगा है समन	१५ अद्वापरिमाणाणिदेस ।
१२	देसविरदी	

इस प्राचनके आगे पीछेका इतिहास संक्षेपमें ववत्याकारने इसप्रकार दिया है —

' एसं। अ थे। विज्ञितिस्मध्ययथेण परवक्तिक्य-तिकालगोयरछ्ट वेण वृहुमाणसङ्गरएण गोदम— धेरस्य किह्ने । पुणे से। अ-थे। आइस्यिपरंपराए आगंत्र गुणहरभडारयं संपने। । पुणे तने। आइस्यिपरंपराए आगंत्र अज्ञमैग्यु-नागहरथीणं भटारयाणं सृत्यं पते। । पुणे तिहि देहि विक्रमेण जिद्यसहसङ्गरस्य वक्ताणिहो । तेण वि × × सिस्माणुगाहटूं चुण्णिसुने लिहिट्रे। '।

अर्थात् इस कसायपाह् इका मूल विषय वर्षमान स्वामीने विपुत्रा वलपर गाँतम गणधरको कहा। वही आचार्य-परंपरासे गुणधर भद्रारकको प्राप्त हुआ। उनसे आचार्य-परंपरादारा वहा आधिमेल, और नागहस्ती आचार्याके पास आया, जिन्होने कमसे यतिवृषम भद्रारकको उसका व्याग्तान किया। यतिवृष्यमेन फिर उसपर वृणिस्त्र रचे।

गुणधराचार्यकृत गाथामा कसायपाहुड और यितृष्ट्रपाकृत चूर्णमूत्र विरक्षेन और जिनसेना-चार्यकृत जयध्वत्रहामें प्रथित है जिसका परिमाण ६० हजार छोक है। इस टीकामें आर्यमंख और नागहृत्थिके अलग अलग व्यान्यानके तथा उच्चारणाचार्यकृत वृत्तिसूत्रके भी अनेक उद्धेष पाये जाते है। यितृष्ट्रपाके चूर्णिमूत्रोंकी संस्था हह हजार और वृत्तिमृत्रोकी वारह हजार वताई जाती है।

नंदीसृत्रमें पूर्विक प्रभेदोंमें पाहुडे। और पाहुटिकाओंका मी निसप्रकार उद्घेग्य हे, किन्तु उनका विशेष पश्चिय कुल नहीं पाया जाता —

े से णं अंगद्रयाण बारममे अंगे एंग सुअक्षंधं चोदम पुट्याई, संखेडता वस्थ्, संखेजा चुरुवस्थ्न, संखेजा पाहुडा, संखेडता पाहुडपाहुडा, संखेडताओं पाहुटिआओ, संखेडताओं पाहुटपाहुटिआओं संखेडताई पयसहस्माई प्रयमोणं संखेडता अक्खरा, अणंता गमा अणंता पडतवा े आदि

६. ग्रंथका विषय

सन्त्ररूपणाके प्रथम भागमें आचार्य गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंका विवरण कर जुके हैं। अब इस गागमें पूर्वोक्त विवरणके आश्रयसे धवलाकार वीरसेन स्वामी उन्हींका विशेष प्ररूपण करते हैं—

संपद्दि संतसुत्तविवरणसमत्तार्णतरं तेनि परूवणं भणिस्यामी । (१. ४६१)

किन्तु इस विशेष प्रक्षपणमें उन्होंने गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति आदि वीस प्रक्षपणाओं द्वारा जीवोंकी परीक्षा की है। यह वीस प्रक्षपणाओंका विमाग पूर्वोक्त सत्प्रक्षपणाके सूत्रोंमें नहीं पाया जाता, और इसीछिये टीकाकारने एक रांका उठाकर यह वतला दिया है कि सूत्रोंमें स्पष्टतः उल्लिम्बित न होने पर भी इन बीत प्रक्षपणाओंका सूत्रकारकृत गुणस्थान और मार्गणास्थानोंके गेदोंमें अन्तर्गाव हो जाता है, अतः ये प्रस्तपणाएं सूत्रोक्त नहीं है, ऐसा नहीं कहा जा सकता (पृ ४१४)।

'सूत्रेण सृचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विश्वतिविधानेन प्ररूपणंज्यते '। 'न पौनहत्त्वस्थि स्थंचित्तेभ्यं। भेदान '। (ए. ४१५)

इससे यह तो स्पष्ट है कि यह बीस प्रकारणास्ता निमाग पुष्पदन्ताचार्यकृत नहीं है। वह स्थयं व्यव्यकारकृत भी नहीं है, क्योंकि उन्होंने उन प्रकारणाओंका नामनिर्देश करनेवाली एक प्राचीन गाथाको 'उक्तं च ' रूपसे उद्युत किया है। इस विचागका प्राचीनतम निरूपण होंगे यित्रम्मावार्य कृत ति वेयपण्णत्तिमें मिलता है। यथा—

गुण-जीवा पडजर्सी पाणा सण्या य सम्मामा कससी । उवजीमा कहिद्दा **णारहयाणे** जहाजीमां ॥२७३॥

*

गृग-र्जावा पञ्जनी पाणा सण्णा य मग्गणा कमसी | अवजोगा कहिद्द्या एदाण **कुमारदेवाणे ॥१८३**॥

आदि.

किन्तु यह अमा निश्चयतः नहीं कहा जा सकता कि इस वीस प्ररूपणारूप विमामका आदिकर्ता कीन है ! यह विषय अन्तेषणीय है ।

गुणस्थानों व मार्गणास्थानके अनेक भेद प्रभेदोंका विशिष्ट जीवोंकी अपेक्षासे सामान्य, पर्याप्त व अपर्याप्त रूप प्ररूपण करनेसे आलापोंकी संख्या कई सी पर पहुंच जाती है। इस आलाप विभागका परिचय विषय—मूर्चाको देखनेसे मिल सकता है। अतः उस सम्बंधमें यहां विशेष कथनकी आवश्यकता नहीं है। प्रथम मागकी भूमिकामें गुणस्थानों और मार्गणाओंका सामान्य परिचय देकर यह सूचित किया गया था कि अगले खंडमे विषयका विशेष विवेचन किया जायगा। किन्तु इस मागका कलेकर अपेक्षासे अधिक वह गया है और प्रस्तावना भी अन्य उपयोगी विषयोंकी चर्चासे यथेष्ट विस्तृत हो चुकी है। अतः हम उक्त विषयके विशेष विवेचन करनेकी आकांक्षाका अभी फिर मी नियंत्रण करते हैं।

७. रचना और भाषाशैली

प्रस्तुत प्रंथविभागमें सूत्र नहीं हैं। सत्प्रक्ष्यणाका जो विषय ओव और आदेश अर्थात् गुणस्थान और मार्गणास्थानोंद्वारा प्रथम १७७ सूत्रोंमें प्रतिपादित हो चुका है उसीका यहां वीस प्रक्ष्यणाओं द्वारा निर्देश किया गया है।

इस बीस प्रकारकी प्ररूपणाके आदिमें टीकाकारने 'ओघेण अतिथ मिच्छाइड्डी॰ सिद्धा चिद्धि ' इस प्रकारसे सूत्र दिया है और उसे ओधसूत्र कहा है। हमारी अ. प्रतिमें इसपर ७४, आ. में १७४, तथा स. में १७५ की संख्या पायी जाती है जो उन प्रतियों की पूर्व सूत्रगणनाके क्रमसे है। पर स्पष्टतः वह सूत्र पृथक् नहीं है, धवलाकारने पूर्वीक ९ से २३ तकके ओघ सूत्रोंका प्रकृत विषयकी बहांसे उत्पत्ति बतलाने के लिये समिष्टिक्पसे उल्लेख मात्र किया है।

इस भागमें गाथाएं भी बहुत थोडी पायी जाती है, जिसका कारण यहां प्रतिपादित विषयकी विशेषता है। अवतरण गाथाओकी संख्या यहां केवळ १३ है जिनमेसे एक (नं २२०) कुंद-कुंदके बोधपाहुडमें और दो (२२३, २२४) प्राकृत पंचसंप्रहमें * भी पायी जाती हैं। गाथा नं.(२२८) 'उत्तं च पिंडियाए 'ऐसा कहकर उद्भृत की गई है। हमने इस गाथाकी खोज कराई, पर वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने हमें सूचित किया कि यह गाथा न तो प्राकृत पंचसंप्रह में है न तिल्लायपण्णितमें और न श्वेताम्बरीय कर्मप्रकृति, पंचसंप्रह, जीवसमास विशेषावस्यक आदि प्रन्थोंमें है। जान पड़ता है 'पिंडिका' नामका कोई प्राचीन प्रंथ रहा है जो अबतक अज्ञात है। इन तीन गाथाओंको लोड़कर शेष सब कहीं जैसी की तैसी और कहीं किंचित् पाठभेद को लिये हुए गोम्मटसार जीवकांडमें भी संगृहीत है।

इस विभागमें संस्कृत केवल प्रारंभमें थोड़ी सी पायी जाती है। शेप समस्त रचना प्राकृतमें ही है। पर यहां विपयकी विशेषना ऐसी है कि उसमें प्रतिपादन और विवेचनकी गुंजा-इश कम है। अतएव जैसी साहित्यिक वाक्यशैली प्रथम विभागमें पायी जाती है वेसी यहां बहुत कम है। जहां कहीं शंका-समाधानका प्रसंग आ गया है, वहीं साहित्यिक शैली पायी जाती है। ऐसे शंका समाधान इस विभागमें ३३ पाये जाते हैं। शेष भागमें तो गुणस्थान और मार्गणास्थानकी अपेक्षा जीवविशेषोमें गुणस्थान आदि वीस प्ररूपणाओंकी संख्या मात्र गिनायी गयी है, जिसमें वाक्य रचनाकी व्याकरणात्मक शुद्धिपर ध्यान नहीं दिया गया। पद कहीं सविभिक्तिक हैं और कहीं विभक्ति-रहित अपनेप्रांति पदिक रूपमें। समास-बंधन भी शिथिलसा पाया जाता है, उदाहरणार्थ 'आहारभयमेहणसण्णा चेदि ' (पृ. ४१३)। चेदि से पूर्वके पद समास-

यह मंथ अभी अभी ' भीरसेवा मन्दिर सरसावा ' द्वारा प्रकाशमें लाया जा रहा है। उसमें उक्त गाधा-आंके होनेकी सूचना हमें वहांके पं. परमानन्दजी शास्त्री द्वारा मिळी ।

युक्त समझे जांय, या अलग अलग ? यदि अलग अलग लें तो वे सब विभक्तिहीन रह जाते हैं, यदि समासक्तप लें तो 'च' की कोई सार्यकता नहीं रह जाती । संशोधनमें यह प्रयत्न किया गया है कि यथाशांकि प्रतियोंके पाठको सुरक्षित रखते हुए जितने कम सुधारसे काम चल सके उतना कम सुधार करना । किंतु अविभक्तिक पदोंको जानबूझकर विना यथेष्ट कारणके सविभक्तिक बनानेका प्रयत्न नहीं किया गया । इस कारण प्रक्रपणाओं में बहुतायतसे विभक्तिहीन पद पाये जांयगे ।

इन प्ररूपणाओं में आलापोंके नामनिर्देश खभावतः पुनः पुनः आये हैं। प्रतियों में इन्हें प्रायः संक्षेपतः आदिके अक्षर देकर जिन्दु रखकर ही सूचित किया है, जैसे 'गुणहाण 'के स्थानपर गुण , 'पज्जांओ 'के स्थानपर प० आदि। यदि सब प्रतियों में ये संक्षिप्त रूप एकसे होते, तो समझा जाता कि वे मूलादर्श प्रतिके अनुसार है, अतः मुद्रितरूपमे भी उन्हें वैसे ही रखना कदाचित् उपयुक्त होता। किन्तु किसी प्रतिमें एक अक्षर लिखकर, किसीमें दो अक्षर लिखकर आदि भिन्नरूपसे संक्षेप बनाये गये हैं और किसी प्रतिमें वे पूरे रूपमें भी लिखे है। इसप्रकार बिन्दुसहित संक्षिपरूप कारंजाकी प्रतिमें सबसे अधिक और आराकी प्रतिमें सबसे कम हैं। इस अन्यवस्थाको देखते हुए आदर्श प्रतिमें बिन्दु हैं या नहीं, इस विषयमें शंका हो जानेके कारण हमने इन संक्षिप्त रूपोंका उपयोग न करके पूरे शब्द लिखना ही उचित समझा।

प्रत्येक आलापमें बीस बीस प्ररूपणाएं हैं। पर कहीं कहीं प्रतियोंमें एक राब्दसे लगा-कर पूर आलाप तक भी छूटे हुए पाये जाते हैं। इनकी पूर्ति एक दूसरी प्रतियोंसे हो गई है, किन्तु कहीं कहीं उपलब्ध सभी प्रतियोमें पाठ छूटे हुए है जैसा कि पाठ-टिप्पण व प्रति-मिलान और छूटे हुए पाठोंकी तालिकासे ज्ञात हो सकेगा। इन पाठोंकी पूर्ति विषयको देख समझकर कर्ताकी रैलीमें ही उन्हींके अन्यत्र आये हुए राब्दोंद्वारा करदी गई है। जहां ऐसे जोड़े हुए पाठ एक दो राब्दोंसे अधिक बड़े है वहां वे कोष्ठकके भीतर रख दिये गये है।

मूलमें जहां कोई विवाद नहीं है वहां प्ररूपणाओंकी प्रत्येक स्थानमें संख्या मात्र दी गई है। अनुवादमें सर्वत्र उन प्ररूपणाओंकी स्पष्ट सूचना कर देनेका प्रयत्न किया गया है और मूलका सावधानीसे अनुसरण करते हुए भी वाक्यरचना यथाशक्ति मुहाबरेके अनुसार और सरल रखी गई है।

मूर्लमें जो आलाप आये है उनको और भी स्पष्ट करने तथा दृष्टिपातमात्रसे ज्ञेय बनानेके लिये प्रत्येक आलापका नकशा भी बनाकर उसी पृष्टपर नीचे दे दिया गया है। इनमें संख्याएं अंकित करनेमें सावधानी तो पूरी रखी गई है, फिर भी संभव है दृष्टिदोषसे दो चार जगह एकाध अंक अशुद्ध छप गया हो। पर मूळ और अनुवाद साम्हने होनेसे उनके कारण पाठकोंको कोई अम न हो सकेगा। नकशोंका मिलान गोम्मटसारके प्रस्तुत प्रकरणसे भी कर लिया गया है।

सत्वरूपणा-आलापस्ची

	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
अ	ाय आलाप		४१५-४४८	आदेश आलाप		
	सामान्य		85.4	१ गतिमार्गणा		
	पर्याम्	স্	४२०	१ नरकर्गात		
	अपर्याप्त	ર	ક રર	सामान्य	46	884
Ş	मिथ्यादृष्टि		ĺ	पर्याप्त	૨ ૦,	886
	सामान्य	3	૪૨ ૨	अपर्याप्त	30	४५०
	पर्याप्तू	ક	४२४	मिथ्यादृष्टि		- ,
	अपर्याप	•	धर५	सामान्य	ક ર્	ક પર
ર	सासादनसम्यग्ह			पर्यात	રૂ ર	ક્ષપ્ર
	सामान्य	É	४२६	अपर्याप्त	३३	४५२
	पर्याप्त	G	કરદ	सासादनसम्यग्दा	ट्रे ३४	४ ५३
_	अपर्याप्त	6	४२७	सम्योगमध्याद्दष्टि	34	843
	सम्यागमध्याद्या		४२८	असंयतसम्यग्दिष्ट		
8	असंयतस म्य ग्हा ⁶			सामान्य	36	848
	सामान्य	१०	४२८	पर्याप्त	३७	४५४
	पर्याप्त	8 5	કર ૧	अपर्याप्त	3८	844
	अपर्याप्त	१२	४३०	प्रथमपृथिवी		
	संयतासंयत	१३	४३१	सामान्य	३९	४५६
દ્	प्रमत्तसंयत्त	१४	ध३२	पर्याप्त	80	४५७
	अप्रमृत्तसंयत	84	४३३	अपर्याप्त	કર	846
	अपूर्वकरण	१६	४३४	मिथ्यादृष्टि		
९	अनिवृत्तिकरण			सामान्य	કર	840
	प्रथम भाग	१७	४३५	पर्याप्त	४३	840
	डितीय ,,	१८	४ ३६	अपर्याप्त	४४	४६०
	तृतिय ,,	१५	४३ ६	सासादनसम्यग्दा	प्र ४५	કદર્
	चतुर्थ ,,	२०	४३७	सम्यग्मिथ्याद्दापृ	38	४६१
	पंचम "	२१	४३८	असंयतसम्यग्द्धि		
80	सूक्ष्मसाम्पराय	२२	४३८	सामान्य	89	४६ २
११	उ पशान्तक पाथ	२३	४३९.	पर्याप्त.	४८	४६३
१२	क्षी णक षाय	રક	880	अपर्याप्त	કર	1,
१३	सयोगिकेवरी	ર્ષ	४४०	द्धितीयपृथिषी		',
१४	अयोगिकेवली	२६	४४५	सामान्य	५०	ક્રફક
१५	सिद्ध	२७	ଌଌୢଌ	पर्याप्त	48	४६५

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	r ५२	,,	पर्याप्त	<0	11
मिध्यादृष्टि		• •	अपर्याप्त	૮१	866
सामान्य	পৃষ্	४६६	सम्यग्मिध्यादृष्टि		४८९
पर्याप्त	લક	४६७	असंयतसम्यग्हा	Ì	
अपर्याप्त	। ५५	**	सामान्य	૮રૂ	४८९
सासादनसम्य	ाहिए ५६	४६८	पर्याप्त	૮૪	४९०
सम्यागमध्यादः		४६९	अपर्याप्त	64	४९१
असंयतसम्यग्ह	छि ५८	४६ ९	संयतासंयत	८६	४ ९१
तृतीयादि पृथि	वियोंके		पंचेन्द्रियतिर्यचपर्या	प्त	४९ २
-	आलाप	800	पंचेन्द्रियतिर्येचयोनि	मती	
२ तिर्यंचगति-			सामान्य	<19	४९ २
न्यामान्य	40	४७१	पर्याप्त	16	86'ई
पर्याप्त	६०	४७ २	अपर्याप्त	29,	ક ९ક
अपर्याप्त	ह र	४७३	मिथ्याद्यप्रि		
मिध्यादिष्ट		4	सामान्य	९०	४९४
सामान्य	६२	४७४	पर्याप्त	९,१	86.4
पर्याप्त	६३	४७५	अपर्याप्त	९२	४९ ६
अ प र्याप्त	r ६४	35	सासादनसम्यग्ह	प्रि	
सासादनसम्यग	द प्टि	,	सामान्य	९३	४९७
सामान्य	Eca	<i>३७६</i>	पर्याप्त	९४	४९७
पर्याप्त	६६	७०४	अपर्याप्त	99	४९८
अपर्याप्त	६७	80<	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	,	४९८
सम्यग्मिथ्याद्यी	ष्ट्रे ६८	8७८	असंयतसम्यग्दि	5,0	४ ९९
असंयतसम्यग्ह	प्रि]	संयतासंयत	95	400
सामान्य	६ ०,	४७९	पंचेन्द्रिय ् तिर्थे च ल	ब्ह्य-	
पर्याप्त	So	860	पर्याप्तक	९९	400
अपर्याप्त	. ७ १	8<0	३ मनुष्यगति		
संयतासंयत	'૭૨	8८१	सामान्य	२००	408
पंचेन्द्रियतिर्यं	r		पर्याप्त	१०१	५०२
सामान्य	७३	8८२	अपूर्याप्त	२०२	403
पर्याप्त	ક્ષ	४८३	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	এ শ	8<8	सामान्य	२०३	५०५
मिध्यादृष्टि			पर्याप्त	१०४	باهب
सामान्य	કદ	864	अपर्याप्त	२०५	५०६
पर्याप्त	39	,,	सासादनसम्यग्द	ष्ट	
अपर्याप्त		४८६	सामान्य	३०६	400
सासाद्नसम्यग	रा प्र	ļ	पर्याम्	50.0	,,
सामान्य	૭ ୧	४८७ ।	अपर्याप्त	805	406

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ ने.	विषय	नक्ष्या नं	पृष्ठ नं.
सम्यग्मिथ्याद	ष्ट्रि १०९	406	४ देवगति		
असंयतसम्यग		1	सामान्य	१ १४०	५३१
सामान्य		५०९	पर्याप्त	१४१	५३२
पर्याप्त	१११	५१०	अपर्याद	त १४२	५३६
अपर्याप्त	११२	५१०	मिथ्यादृष्टि		
संयतासंयत	११३	५११	सामान्य	र १४३	५३७
प्रमत्त्तं यता दि	•	५१२	पर्याप्त	१५४	,,
मजुष्यपर्याप्त		५१२ ।	अपर्याद	त १४५	५३८
मनुष्यनी			सासादनसम्य	ग्हाष्टि	
सामान्य	११४	५१३	सामान		५३८
पर्याप्त	१ १ ५	५१४	पर्याप्त	•	५३९
अपर्याप्त	११६	षष्ट्	अपर्याप	-	५४०
मिथ्यादृष्टि		į.	सम्यग्मिथ्याह	ઉંઘ १४९	480
सामान्य	११७	५१६	असंयतसम्य		
पर्याप्त	११८	५१७	सामान	* -	५४१
अपर्याप्त		11	पर्याप्त		५४२
सासादनसम्य	ग्ह(ध्र		अपर्याप	त १५२	34
सामान्य		५१८	भवनत्रिक		
पर्याप्त	१२१	५१९	सामान्य	-	५४३
अपर्याप्त		9.9	पर्याप्त	-	५४४
सम्यग्मिथ्याह	-	५२०	अपर्याप	त १५५	37
असंयतसम्यग	-	५२०	मिथ्यादृष्टि		
संयतासंयत	કૃ ર હ્ય	५२१	सामान	•	વ્યક્રેપ
प्रमत्तसंयत	१२६	पर्र	पर्याप्त	_	५४६
अप्रमृत्तसंयत		५२२	अपर्याः		4.9
अपूर्वकरण	१२८	५२३	सासादनसम		
अनिवृत्ति०प्रथा		' १२४	सामान		५४७
,, द्विनीय	भाग १३०	५२४	पर्याप्त		५४८
🕠 तृतीय्	,, २३१	५२५	अपर्याप	न्त १६१	5 3
,, चतुर्थ	,, १३२	५२६	सम्योगमध्या	हाप्टि १६२	५४९
🕠 पंचम	,, १३३	५२६	असंयतसम्य	म्हाप्टे १६३	५५०
सूक्ष्मसाम्परा	य १३४	५२७	भवनत्रिक पु	रुषवेदी	५५०
उपशान्तकष	य १३५	५२८	भवनत्रिक स		,,
क्षीणकषाय	१ ३६	५२८	सौधर्म-पेश		, ,
सयोगिकेवर्ल		५२९	सामान		५५१
अयोगिकेवर्ल		५३०	पर्याप्त		५५१
लब्ध्यपर्याप्त		५३०	अपर्या		५५२

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			सुक्ष्म एकेन्द्रिय		
सामान्य	१६७	५५३		१८९	इंग्रं
पर्याप्त	१६८	५५४		१९०	408
अपर्याप्त	r १६ <i>९</i> ,	77		१०१	"
सासादनसम्य	र ाष्ट्र		स्क्ष्म एकेन्द्रिय प	र्याप्त	به ره ره
सामान्य		بعابعا		यपर्याप्त	,,
पर्याप्त		५५६	२ द्वीन्द्रिय		• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •
अपर्याप्त	१७२	11	सामान्य	१९२	५७५
सम्यग्मिथ्यादा		6,40	पर्याप्त	१९३	५७६
असंयतसम्यग्ह	ছে		अपर्याप्त	१९४	५७७
सामान्य	-	6,410	इीन्द्रिय पर्याप्त	•	<i>ওও</i> ?
पर्याप्त		19196	,, लन्ध्यपर्य	न	77
	१ १ ७६	646	३ त्रीन्द्रिय		
सौधर्म पेशान पुर	षवेदी	५६०	सामान्य	३०,७	७७७
सौधर्म पेशान स्र	विदी	५६०	पर्याप्त	१०,ह	400
सानत्कुमार म	ाहे न्द्र		अपर्याप्त		0,00
सामान्य	-	७,६३	त्रीन्द्रिय पर्याप्त		५७९
पर्याप्त	•	५६२	,, त्रव्ध्यपय		33
अपर्याप्त	२ ७०,	,,	४ चतुरिन्द्रिय		
मिथ्याद्ययादि		५६३	सामान्य	१९८	408
ब्रह्म संनी प्रैटे	ां यक	५६३	पर्याप ्त	१००	460
नो अनुदिश प	व अनुत्तर		अपर्याप्त	२००	५८१
मामान्य	840	હ્ટ્ય	चतुरिन्द्रियपर्या	प्त	422
पर्याप्त	१८१	५६५	,, लञ्ध्यपर्या	प्त	,,
अपर्याप्त	१८२	1982	५ पंचेन्द्रिय		
५ सिद्धगति		'•६८	न्नामान्य	२०१	462
२ इन्द्रियमार्गणा		1	पर्याप्त	२०२	५८३
_			अपूर्याप्त	२०३	4.68
१ एकेन्द्रिय			मिध्याद्यप्रि		
सामान्य		७ हरू	साम्रान्य	२०४	463
पर्याप्त	१८४	6.00	पर्याप्त	२०५	ded
अपर्याप्त	260	66%	अपर्याप्त	२०६	५८६
बाद्दर एकेन्द्रिय	Γ		सासादनादि		450
सामान्य		५७३	असंब्रीपंचेन्द्रिय		
पर्याप्त		५७२	सामान्य	२०७	५८७
्अपर्याप्त		,,	पर्याप्त	२०८	,,
बादर एकेन्द्रिय प		५ ७३	अपर्याप्त		466
,, ,, ভঃ	व्यपर्याप्त	५७३	पंचेन्द्रियलब्ध्यपर्या	प्त २१०	५८९

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
संबीपंचेन्द्रिय ,,	२११	५८६	बाद्रसाधारणव	नस्पति	
असंबीपंचेन्द्रिय ,,	२१ २	५९०	सामान्य	२३१	६१८
६ अनिन्द्रिय		५९०	पर्याप्त	२३२	६१९
३ कायमार्गणा		ļ	अपर्याप्त	२३३	६२०
	२१३	५९६	बादरसाधारणप	र्याप्त	६२०
सामान्य पर्याप्त	२१४ २१ ४	६०१	,, लब्ध्य	।पर्याप्त	,,
अपर्याप्त अपर्याप्त		६०२	सुक्ष्मसाधारण		,
मिथ्या दृष्ट्यां दि	_	६०४	६ त्रसकायिक		
१ पृथिवीकायि			सामान्य	२३४	६२१
सामान्य	२१६	६०४	पर्याप्त	२३५	६२२
पर्याप्त		६०५	अपर्याप्त	२३६	६२३
अपर्याप्त		ફ ૦ફ	मिथ्यादृष्टि		
बादरपृथिवीका	_	. ,	सामान्य	२३७	६२४
सामान्य	२ १९	६०७	पर्याप्तू	२३८	६६५
पर्याप्त	२२०	६०८	अपर्याप्त	२३९	६२६
अपर्याप्त	२२१	**	या सादनादि		६२७
बाद्रपृथिवीकायि	कपर्याप्त	६०६,	७ अकायिक	ૂ રક્ષ	६२७
,, स्टब्स्यप		"	त्रसकायिक पय		६२७
सूक्ष्मपृथिवीका	यिक	**	,, लब्धवर्या	न्त २४१	"
२ अप्कायिक		६०६	४ योगमार्गणा		
३ अग्निकायिक		६१०	१ मनोयोगी	ર કર	६२८
४ वायुका यिक		ह १३	मिथ्याद्दाष्टि	રકર	६२९
'< वनस्पतिका	थिक		सासाद्रन०	રક્ષક	६३०
सामान्य	२२२	દ8્ર	सम्यग्मिथ्यार	इष्टि २४५	६३०
पर्याप्त	२२३	हर्इ	असंयतसम्य		६३१
अपर्याप्त	२२४	,,	संयतासंयत		६३२
प्रत्येकवन र पतिका	यिक		प्रमत्तसंयत	_	६३२
सामान्य	२२५	६१४	अप्रमत्त्संयत	•	६३३
पर्याप्त	२२६	६१५	सत्यमनोयोगं		31
अपर्याप्त		91	असत्यमृपाम		1)
प्रत्यकवनस्पतिक।	यिक पर्याप्त	८१६	मृषामनोयोर्ग	૧ ૨૪૧	६३३
	वपर्याप्त	"	मिथ्यादृष्यादि		६३४
बादरनिगोदप्रतिशि		,,	२ वचनयोगी	र'५०	६३४
साधारणवनस्पति			मिथ्यादृष्टि	२५१	६३५
सामान्य		६१६	सासादनादि		६३६
पर्याप्त	२२९	६१७	सत्यवचनयो		६३६
अपर्याप्त	r २३०	६१८	मृष(वचनयोग	Ti (17

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा ने.	पृष्ठ नं.
सत्यमृषःवच	। नयोगी	,,	सम्योग्मध्याद्दीष्ट	२८२	६६३
असत्यमृषां		11	असंयतसम्यग्दिष	: २८३	11
३ काययोगी			वैकियिकामिश्रकाययं	ोगी २८४	६६४
सामान्य	२५२	६३७	मिथ्यादिष्टि	264	६६५
पर्याप्त	२५३	६३८	सासादनसम्यग्ह	ष्टि २८६	६६५
अपर्याप्त	२'५'ड	हरू	असंयतसम्यग्हापृ	३८७	दहह
मिथ्य।दाष्ट			आहारककाययोगी	266	६६७
सामान्य	२५५	६४०	आहारक।मिश्रकायय	ोगी २८९	६६८
पर्याप्त	२५६	દેકદ્	कार्मणकाययोगी	20.0	६६८
अपर्याप्त	२५७	1)	मिथ्यादिष्ट	२९१	६७०
सासादनसम्यग	दृष्टि		सासादनसम्यग्ह	ष्टि २९२	६७०
सामान्य	२५८	६४२	असंयतसम्यग्हि		६७१
पर्याप्त	२५०	६४३	सयोगिकेवली	30'8	६७२
अपर्याप्त	२६०	31	४ अयोगी		६७२
सम्योग्मध्याद्या	_	६४४	५ वेदमार्गणा		
असंयतसम्यग्द					
सामान्य	२६२	દકક	१ स्त्रीवेदी	501	5 63
पर्याप्त	२६३	६४५	सामान्य पर्याप्त	૨९ ५ ૨ ९ ६	६७३ ६७४
अपर्याप्त		દ્વક્ષદ	अपूर्याप्त अपूर्याप्त	۲ <i>۱۹</i> عوبع	
संयतासंयत	२६५	६४६	भूषाना मिथ्यादृष्टि	4.10	* *
प्रमत्तसंयत	२६६	६४७	सम्बद्धाः सामान्य	२९ ८	E 514
अप्रमृत्तसंयत्	२६७	६४८	पर्याप्त	20,0	₹ ७ ₹
अपू र्वक् रणादि		६४८	अपर्याप्त अपर्याप्त	300	
सयोगिकेवली	२६८	६४८		_	,,,
औदारिककाययोर्ग		६४९	सासादनसम्यग्हा सामान्य	।ट ३०१	७७३
मिथ्याद्दप्रि	२५०	६५०	पर्याप्त	३०२ ३०२	\$ 9 6
सासादनसम्यग		६५१	अपर्याप्त अपर्याप्त	२०२ ३०३	
सम्यग्मिथ्याही	_	६५१	अपयान सम्याग्मध्यादृष्टि	३०४	,, ६७९
असंयतसम्यग्हा		६५२	सम्याग्मव्याहार असंयतसम्यग्हिः		5.5°.
संयतासंयतादि	_	99	अस्यतसम्बद्धाः संयतासंयत	ક ૨ ૦૧ ૨૦ ૬	660
ओद्रारिकमिश्रकाय		६५३	प्रमत्त्रसंयत प्रमत्त्रसंयत	309	६८१
मिध्याद्यप्रि	२७५	६५५	अमत्तस्यत अक्रमत्तसंयत	२० <i>७</i> २०८	६८२
सासःदनसम्यग		<i>६५६</i>	अपूर्वकरण अपूर्वकरण	૨ <i>૦૮</i> ૨૦ ૦ ,	५८५ ६८३
असंयतसम्यग्द।		93		રું. કે ર્રે૦	
सयोगिकेवर्ला वैक्रियिककाययोगी	૨ ૭૮	६५८ sss	अनिवृत्तिकरण 	२ ९०	६८३
वाकायककाययाग मिथ्यादृष्टि		६६१	२ पुरुषवेदी	5.00	5 413
	२८० 	६६२	सामान्य	३११	६८४
सासादनसम्यग	दृष्टि २८१	६६२	पर्याप्त	३१२	६८४

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय र	कशा नं.	પૃષ્ટ નં.
अपर्याप्त	३१३	६८५	सासादनसम्यग्हरि	ģ	
मिध्याद्यप्रि			सामान्य	३३८	८०४
सामान्य	३१४	६८६	पर्याप्त	३३९	1900
पर्याप्त	384	,,	अपर्याप्त	380	400
अपर्याप्त	३१६	६८७	सम्यग्मिध्यादिष्ट	३४१	७०६
सासादनादि		६८८	असंयतसम्यग्दिष्		
३ नपुंसकवदी		ĺ	सामान्य	३ ४२	७०७
सामान्य	३१७	६८८	पर्याप्त	३४३	,,
पर्याप्त	३१८	६८९	अपर्याप्त	३४४	500
अपर्याप्त	३१ ९	६०,०	संयतासंयत	384	७०९
मिध्यादृष्टि			प्रमत्तसंयत	३४६	५० ९
सामान्य	३२०	ह्९०	अप्रमत्तसंयत	३४७	७१०
पर्याप्त	३२१	६५.१	अपूर्व क रण	385	७११
अपर्याप्त	३२२	६०,२	अनिवृत्तिकरण		
सासादनसम्यन्द्र	T		प्र० भा०	રૂ પ્રવ	ওগ্র
सामान्य	३२३	६९३	,, डि॰ मा॰	340	७१२
पर्याप्त	३२४	19	मान, माया और		
अपर्याप्त	३२५	६०,४	लो भक्रपा यी		७१२
सम्यग्मिध्याद्दष्टि	३२६	Est.	अक्रपायी	3,45	७१३
असंयतसम्यग्दिष्	Ĭ	1	उपद्यान्तकपायादि		७१४
सामान्य	३२७	हर्ष	७ ज्ञानमार्गणा		७१४
पर्याप्त	324	86.8	_		- 10
अपर्याप्त	३२९	80.00	मति-श्रुत-अज्ञानी	51.5	
संयतासंयत	३३०	50.0	सामान्य	३५२	७१४
प्रमत्तसंयतादि		86.7	पर्याप्त	३५३	७१५
४ अपगतवेदी	३३१	80.4	अपर्याप्त	३५४	७१६
अनिवृत्तिकरण		1	मिथ्यादिष्ट	20.0	
द्वितीय भागादि		800	सामान्य	३७५ २००	७१ह
६ कपायमार्गणा		}	पर्याप्त	३ ५६	७१७
<u> </u>			अपर्याप्त	३५७	७१८
क्रोधकपायी	222	1	सासादनसम्यग्हिष्		1050
मामान्य पर्याप्त	३३२	500	सामान्य पर्याप्त	३५८ ३५०	'८१०,
	३३३	1308	पयाप्त अपर्याप्त	३५९ ३६०	"
अपर्याप्त	३३४	29			७२०
मिध्यादप्ट	22.		विभंगश्चानी	३६१	७२०
<i>सामान्य</i> पर्याप्त	३३५	७०२	मिथ्यादि ए	३६२	७२१
	३३६	७०३	सासादनसम्यग्दृष्टि	इंटर	७२२
अपर्याप्त	इ३७	४०४	मतिश्रुतश्चानी		

হি ৰ থ	नकझा नं.	पृष्ठ नं. ।	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सामान्य	३६४	७२२	अपर्याप्त	३८६	<i>હ</i> કર
पर्याप्त	384	७२३	सासादनसम्यग्हष्ट	गदि	७४३
अपर्याप्त	३६६	७२४	२ अचशुदर्शनी		
असंयतसम्यग्			सामान्य	360	७३३
सामान्य		७२४	पर्याप्त	366	७४३
पर्याप्त	३ ६८	७२५	अपर्याप्त	३८९	,,
अपर्याप्त		७२६	मिथ्यादृष्टि		
संयतासंयतादि		७२६	सामान्य	30,0	ভস্ত
अवधिक्रानी		७२६	पर्याप्त	३९१	<i>હ</i> કદ
मनः पर्ययञ्जानी		७२७	अपर्याप्त	३ ९,२	७४७
व्रमत्तरं	ता दि	७२९	सासादनसम्यग्हष्ट	ग(दि	७४७
केवलज्ञानी	३७१	७२९	३ अवधिदर्शनी		
सयोगी व	भा दि	७ ३०	सामान्य	३९३	536
८ संयममार्गणा	३७२	७३०	पर्याप्त	३९४	<i>હ</i> ક્ટ
प्रमत्तसंय	ात ३७३	७३१	अपर्याप्त	३९५	ડ કર
	वंचत ३७४	७३२	असंयतसम्यग्हण्ट्य	दि	७५०
अपूर्वकर		७३२	४ केवलदर्शनी		540
सामायिकशुद्धिसंग		७३३	१० लेस्यामार्गणा		040
श्रमत्तसं यतादि		७३३	१ कृष्णलेखा		
छेदोपस्थापनासं य	ব	,,,	सामान्य	३०,६	5'30
परिद्वारशुद्धिसंयत		હ રેર	पर्याप्त	30.0	ড 'ন ?
प्रमत्तसंयतादि		७३४	अपर्याप्त	રે ૧૮	७ ५२
मूक्ष्मसाम्परायस	वत	७३५	मिथ्याद्याप्ट	•	
यथाख्यातसंयत	३७७	७३ ५	सामान्य	३०,०	७'१३
उपशान्तकषाय	गदि	७३५	पर्याप्त	800	17
असंयत			अपर्याप्त	४०१	ভ'শ ্ব
सामान्य	३७८	उ ३६	सासादनसम्यग्ह	_	
पर्यात्	३७९	5 9	सामान्य	૪૦૨	७५५
अपर्याप्त	३८०	७३७	पर्याप्त	४०३	-
मिथ्यादण्ट्या	₹	७३८	अपर्याप्त		,, ও'ৰ্
९ दर्शनमार्गणा			सम्यग्मिथ्यादृष्टि		७५७
१ चक्षुदर्शनी			असंयतसम्यग्दर्श		- ,-
सामान्य	३८१	उ ३८	सामान्य	30६	७५ ७
पर्याप्त	३८ २	७३ ९	पर्याप्त	300	545
अ पय ीत	3<3	ઙ૪૦	अपर्याप्त	४०८	७५९
मिध्यादृष्टि			२ नीललेश्या	•	<i>७</i> ५९
सामान्य	३८४	<i>७</i> ४१	३ कापोतलेश		
पर्याप्त	३८५	,, 1		४०६	७'५९

۷۰		सत्प्ररू	पणा		
विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
पर्याप्त	४ ६०	७६०	अपर्याप् त	४४०	७८१
अपर्याप्त	धरुर	९३७	मिध्यादृष्टि		
मिध्यादृष्टि			सामान्य	કક ર	७८१
सामान्य	४ १२	७६२	पर्याप्त	४ ४२	७८२
पर्याप्त	ઝ શ્રૂ	७६२	अपर्याप्त	४४३	७८३
अपर्याप्त	धर्ध	७ह३	सासादनसम्यग्ह	લપ્રે	
सासादनसम्यग्	ा ष्ट	1	सामान्य	ત્રક્ષક	७८३
सामान्य	४१ ५	ध३२	पर्याप्त	४४ ५	७८४
पर्याप्त	४१ ६	,,	अपर्याप्त	388	७८५
अपर्याप्त	<i>४१७</i>	550	सम्यग्मिथ्यादिष्	580	७८५
सम्योग्मध्याद्यी	इ ४१८	उइइ	असंयतसम्यग्दर्श	<u>પ્ર</u>	
असंयतसम्यग्हा	छ		सामान्य	885	७८६
सामान्य	ક ફર્	330	पर्याप्त	<i>ઇઇ</i> લ્	७८६
पर्याप्त	४२०	છ કેર	अपर्याप्त	800	७८७
अपर्याप्त	४ २२	७६ ८	संयतासंयत	84१	966
४ तेजोलेइय	T		प्रमत्तसंयत	४५ २	966
सामान्य	ધરર	332	अप्रमत्तसंयत	843	७८ ९
पर्याप्त	धर३	७६९	६ शुक्कलेस्य।	•	
अ प र्याप्त	४ २४	550	सामान्य	४५४	७९०
मिध्याद्यप्रि	•		पर्याप्त	४५५	<i>७</i> ०,१
सामान्य	४ २५	۽ ي	अ पर्याप्त	४५ ६	1 9
पर्याप्त	४२६	99	मिथ्यादृष्टि		
अ प र्याप्त	४२७	جىي	सामान्य	४५.५	७९.२
मासादनसम्यग	द्यप्र		पर्याप्त	846	७९३
सामान्य	४२८	इग्र	अपर्याप्त	846	,,
पर्याप्त	ઝર્	39	सासादनसम्यग्	इप्टि	
अपर्याप्त		ક હેંઘ	सामान्य	980	७ ९,४
सम्यग्मिश्यादा		કહ ્	पर्याप्त	ક્ષદ્ધ	७९५
असंयतसम्यग्रह।			अपर्याप्त	४६ २	७९६
सामान्य	ध३२	કેરફ	सम्यागमध्याद्या	दे ४६३	30.8
पर्याप्त	४३३	27	अ संयतसम्य ग्हा	प्रे	
अपर्याप्त		કહેંક	सामान्य	કદક	७६ ५
संयतासंयत	४३५	555	पर्याप्त	88.	56.5
प्रमनसंयन	ક રેદ	'S 5 2	अपर्याप्त	. 388	,,
अप्रमंत्तसर्यंत	४३ ७	૩ ૭૬	संयतामंयत	ં કદક	હર્ ર
५ एदालेइया		}	प्रमत्तसंयत	८६८	७९९
सामान्य	४३८	55¢.	अप्रमत्तसंयत	८६०,	600
पर्याप्त	ક રેલ્	960	अपूर्वकरणादि		८०१

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
७ बहेस्य		८०१	अपयाध्त	ક્ષ્	८१९
११ भन्यमार्गणा		1	असंयतसम्यग्ह	ष्टि	
भव्यसिद्धिक			सामान्य	४९५	८२०
भ्रुष्यसिद्धिक अभ्रुष्यसिद्धिक	33	77	पर्याप्त	४९६	,,
सामान्य सामान्य	४७०	८०१	अपर्याप्त	890	८२१
पर्याप्त	४७१	८०२	संयतासंयत	४९८	८२१
अपर्याप्त	४७२	८०३	प्रमत्तसंयत	४ ९९	८२२
भव्याभन्य-विमु		८०३	अप्रमृत्तसंयत	400	८२३
१२ सम्यक्त्वमार्गण			अपूर्वकरणादि		८२५
			मिथ्यात्वादि		८२५
सामान्य	४७३	८०३	१३ संज्ञिमार्गणा		
पर्याप्त	<i>४७</i> ४	८०४	१ संज्ञी		
अपर्याप्त	४७५	८०५	सामान्य	५०१	८ २५
असंयतसम्यग्हा	_ ~	८०६	पर्याप्त	402	८२६
१ क्षायिकसम्य		4	अपर्याप्त	५०३	220
सामान्य पर्याप्त	<i>३७६</i>	603	मिध्यादृष्टि		
पयाप्त अ पर्या प्त	८७७	८०८	सामान्य	५०४	८२७
अपयाप्त असंयतसम्यग्ह	_	37	पर्वाप्त	404	626
अस्यतसम्बन्धः सामान्य		८०९	अपर्याप	५ ५०६	८२९
सामान्य पर्याप्त	४७९	८१०	सासादनसम्य	ग्दष्टि	
पयाप्त अपर्याप्त	850	८११	सामान्य	५०७	८२९
जपयान्त संयतासंयत	४८१ ४८२	<i>حور</i> حوو	पर्याप्त	406	८३०
सम्तासयत प्रमत्तसंयतादि	964	८१२	अपर्याप्त	१ ५०९	11
त्रम् तस्यताद २ वेदकसम्यग्	rfir	614	सम्यग्मिध्याह	ष्टि ५१०	८३१
सामान्य	अट३	८१२	असंयतसम्यग	दृष्टि	
पर्याप्त	४८४	८१३	सामान्य	५१ १	८३२
अपर्याप्त अपर्याप्त			पर्याप्त	५१२	८३२
असंयतसम्यग्ह		"	अपर्याद		८३३
सामान्य	।ट ४८६	૮રઘ	संयतासंयनारि	₹	८३३
पर्याप्त	४८७	૮ ૧ે	२ असंशी		
अपर्याप्त			सामान्य	। ५१४	८३४
संयतासंयत	४८९	,, ८१६	वर्याप्त	५१५	,,
प्रमत्तसंयत	४९०	८१६	अपर्याप	त ५१६	८३५
अप्रमन्तसंयत	ક ર્	૮ ૧ે૭	१४ आहारमार्गण	T	
३ उपशमसम	_		सामान्य		८३६
सामान्य	४९२	८१८	पर्याप्त		ट३७
पर्याप्त	ક્ષરર	८१८	अपर्याप	_	८३८

विषय	नकशा नं	प्रष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्याद्दाप्ट			अप्रमत्तसंयत	५३२	८४६
सामान्य	५२०	८३९	अपूर्वकरण	५३३	८४७
पर्याप्त	५२१	,,	अनिवृत्तिकरण	५३४	11
अपर्याप्त	५२२	८ ४०	सङ्मसाम्पराय	५३५	282
सासादनसम्यग			उपशान्तकवाय	५३६	८४९
सामान्य	५२३	८৪०	क्षीणकषाय	430	"
पर्याप्त	५२४	८४१	सयोगिकेवली	५३८	640
अपर्याप्त	५२५	८४२	अनाहारी	५३९	८५१
सम्यग्मिथ्यादि		>>	मिथ्यादृष्टि	480	८५२
असंयतसम्यग्ह सामान्य	। ५२७	૮૪૨	सासादनसम्यग्ह	ष्टि ५४१	"
पर्याप्त	५२८	27	अ संयत् सम्यग्हार	કે ५४૨	८५३
अपर्याप्त	५२९	८ 88	सयोगिकेवली	५४३	८५४
संयतासंयत	५३०	८४५	अयोगिकेवली	લકક	,,
प्रमत्तसंयत	५३१	77	सिद्धभगवान्	લકલ	699

सत्प्ररूपणाके आलापान्तर्गत विदेाष विषयोंकी सूची

ऋम	नं. विषय	पृष्ठ नं.	क्रम नं.	विषय	પૃષ્ઠ નં.
\$	प्ररूपणाका स्वरूप और भेद- निरूपण	४ ११		ोप्त कालमें तीनों सम्य । कारण	क् त्वांके ४३०
	प्राणका स्वरूप और प्राणोंका पृथक निर्देश कथन	४१२		हेदयाके स्वरूपमें मतभे 1 निराकरण	द और ४३१
	संज्ञाके भेद और उनका पृथक् निर्देश	ध१३	होनेमे		४३३
	उपयोगका स्वरूप और उसका पृथक् निर्देश	४१३	और	करण गुणस्थानमें वस् काययोगके होनेका क	ारण ४३४
	प्ररूपणाओंका सूत्रोक्तत्व-अनुकत्व विचार और भेराभेद निरूपण	કરક	शुक्रवे	स्तकषायादि गुणस्य इंदया द्वीनेका कारण	४३९
ૅ	अपयीप्तकालमें द्रव्यलेख्या कापोत और शुक्र ही क्यों होती है, इस	1	द्धातग	ट, प्रतर और लोकपूर गत केवलीके पर्याप	त-अप-
v	बातका विचार अपर्याप्त कालमें छहाँ भावलेक्या	•	१४ भावेर्ा	त्वका विचार नेद्रयका लक्षण और वे	४४१ वलीक
	ओंके होनेका कारण	ક રર	उसके	अभावका समर्थन	કકક

क्रम	नं. विषय	पृष्ठ ने ∤	कम	नं. विषय	पृष्ठ नं.
१६	अयोगिकेवलीके एक आयुप्राणका समर्थन कालाकालाभास द्रव्यलेश्याका स्वरूप तिर्थचोंके अपर्याप्तकालमें शायिक	884 884	३१	सम्यग्दाष्ट जीवें के भावसे छहीं लेक्याओं के अस्तित्वका प्रतिपादन औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगि- केवलीके आयु और कायबल प्राणों के अतिरिक्त दोष प्राणों के	६५६
	और क्षायोपक्षीमक सम्यक्त्वका समर्थन संयतासंयत तिर्थचेंकि झायिक- सम्यक्त्वके अभावका कारण	धटर धटर	३२	अभावका समर्थन औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगि- केवलीके केवल एक कापोतलेश्या होनेका समर्थन	६'4 <i>!</i> ६६०
	अयोगिकेवलीके अनाहारकत्व- समर्थन असंयतसम्युक्तवी मनुष्यके अप-	५०३	 ३३ 	आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद नपुंसकवेद, मनःपर्ययज्ञान और परिदारीव शृद्धि संयमके अभावेके	440
૨ ૄ	र्याप्त कालमें एक पुरुषवेद तथा भावलेश्याओं के होनेका कारण मनुष्यनियों के आहारकशरीर न	५१०	3 3	कारणका प्रतिपादन कार्मणकाययोगी जीवोंके अनाहार- कत्वका समर्थन	६६ ७ ६६९
	हानेका कारण देवोंके पर्याप्तकालमें छहों द्रव्य- लेक्याओंका समर्थन	५१ २ ५३२	ţ	स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयतके परिहार- संयमादिके अभावका प्रतिपादन विविक्षित ज्ञान और दर्शनमार्ग-	६८१
	देवांके अपर्याप्तकालमें उपशम- सम्यक्तका सङ्गाव-समर्थन अनुदिशादि देवोंके पर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्तके अभावका	५५९	1	णाके आलाप कहनेपर दोष ज्ञान और दर्दानके नहीं बतानेके कारण का प्रतिपादन	હરદ
२५	उपरामसम्बन्धक अमावका विशिष्ट समर्थन जीवसमासोंके एकसे लगाकर ५७ भेदों तकका निरूपण	५६६ ५९१	30	मनःपर्ययज्ञानके साथ द्वितीयोप- शमसम्यक्त्वके होने और प्रथमो- शमसम्यक्त्वकं नहीं होनेका	
	बादर जलकायिक जीवोंके वर्णक विचार मने(योगियोंके वचन और काय-		34	कारण इंक्ष्णलेक्यावाले जीवेंकि अपर्याप्त- कालमें वेदकसम्यक्त्वके अस्ति-	७२७
	प्राणके अस्तित्वका समर्थन सयोगिकेवलीके जीवसमासके अस्तित्वका समर्थन	६२८ ६५३	39	त्वका प्रतिपादन . शुक्कुलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोगके	હિલ્ફ
२ ९	औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतलेक्या अथवा छहों लेक्याएं और भावसे छहों			अभावका प्रतिपादन उपरामसम्यक्त्वीके मनःपर्ययक्षानः सङ्काव-असङ्कावका विचार	८२२
३०	लेश्याओं के अस्तित्वका प्रतिपादन औदारिकमिश्रकाययोगी असंयत	६५३	। ४१	संयमादि मार्गणार्थोमें असंयमादि विपक्षी भावोंके बतानेका कारण	८२५

शुद्धि पत्र

(पुस्तक-१))		(g	स्तक−२)	
पृष्ठ पंक्ति अशुद्ध	হ্যুব্ধ	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७ २ [ब्हें.] पीले सरसों	इवेत सरसों	ध २१ २	छन्भे	दं द्विदा	छ ब्मे द द्विदा
६८ ७ [हिं] इस दोनों	इम दोनों	४२८ ८		-	तिण्णि वेद
१०३ ६ [हिं.] इन सवकी	साधु इन दृशोंका	४३१ ६	केई		केई
दशाका	de dans	४४३ २०	[हिं] औ	र संयता-	संयतासंयत
११० १३ [हिं.] निर्गुण ही है	निर्गुण ही है,		संयर		और संयतींके
१३८ १९ [हिं.] नामकर्मका	सर्वगत ही है,	४४६ ६	[हिं] हो	ते हैं।	होते हैं। यह प्राण अस्प
उदय	नामकर्मका सत्त्व				प्राण है या
१७५ ३ [मूल] नान्यन्तरेण					अप्रधान है।
१८२ ११ [हिं.] ११ वीं पंक्तिसे आगे	r ×	४५० ९	[हि] रुतर	य कृवेदक-	कृतकृत्यवेदक-
्राप × दांका-क्षपकश्चेणीमें होने		४५३ ८	तिहि	•	तीहिं
कर्मोका क्षपण कारण है. औ	र उपशमश्रेणीमें	४५९ २२	मिथ्य	राद्दष्टि	मिध्यादृष्टि
होनेवाले परिणामोंमें कर्मोका है, इसलिए इन भिन्न भिन्न प					सामान्य
केंसे बन सकती है ?	रिणामाम यकता	५०६ नं,१	(०४ स . ट		स. १
समाधान-नहीः क्योंकि,		। '५६९ :		ासंजदा	् संजदासंजदा
शमक जीवोंके होनेवाले अपूर्वत्वके प्रति समानता पार्	उन पार्णामाम	400		सयवेद	णबुंसयवेद
जपूरायक शांत समानता पा उनमें एकता बन जाती है।	र्जाता ६ रतन	ı	टे.) पाठव	•	पाठब्युत्कमः
२३० ७ [।है.] अपेक्षा पर	अपेक्षा भी	७५२ नं	-	द <u>ु</u> .	₹.
	पर पदार्थसे		4 10	१	\$
२४० २ [मूल] –मिति ,, १ [हि.] चाहिये।	-मिति। चाहिये। अर्थात्	२(परि.	१) (परि	દે. મા. ૨)	(परि. भा. २)
,, ર [ાદ.] આદ્યા	वनस्पतितकके		१६	१६	१५
	जीवोंके एक	६(परि.	१) ९		२२८ लेस्सा
	स्पर्शनोन्द्रिय होती है।				य द्व्वभावं
३१८ ५ [हि.] पूर्ण होनेकी				.5.	८८ (पिंडिका १)

संतपह वणा-आलाप



सिरि-भगवंत-पुप्पदंत-भूदबलि-पणीर्षे

छक्खंडागमे

जीवट्टाणं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइया टीका

धवला

संपिद्ध संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसि परूवणं भिणस्सामो । परूवणाः णाम किं उत्तं होदि ? ओघादेसेहि गुणेसु जीवसमासेसु पज्जतीसु पाणेसु सण्णासु गदीसु इंदिएसु काएसु जोगेसु वेदेसु कसाएसु णाणेसु संजमेसु दंसणेसु हेस्सासु भविएसु अभविएसु सम्मत्तेसु सिण्ण-असण्णीसु आहारि-अणाहारीसु उवजोगेसु च पज्जत्तापज्ञत्व-विसेसणेहि विसेसिऊण जा जीव-परिक्खा सा परूवणा णाम । उत्तं च—

गुण जीवा पज्जची पाणा सण्णा य मग्गणाओ य । उबजोगो वि य कमसो वीसं तु परूषणा भणिया ॥२१७॥

सत्यरूपणाके सूत्रोंका विवरण समाप्त हो जानेके अनन्तर अब उनकी महरपणाका वर्णन करते हैं---

शंका-प्रकपणा किसे कहते हैं!

समाधान — सामान्य और विशेषकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें, जीवसमासोंमें, पर्याक्षियोंमें, प्राणोंमें, संक्षाओंमें, गितयोंमें, इन्द्रियोंमें, कार्योमें, योगोंमें, वेदोमें कथायोंमें, द्वानोंमें, संक्षाओंमें, अध्योंमें, अभ्योंमें; सम्यक्त्योंमें, संक्षी-असंक्षियोंमें, आदारी-अनाद्वादियोंमें और उपयोगोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणोंसे विशेषित करके को जीवोंकी परीक्षा की जाती है, उसे प्रकृपणा कहते हैं। कहा भी है—

गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, भाण, संका, चौद्द्र मार्गणापं और उपयोग, १कः प्रकार कमसे वीस प्रकाणांच कही गई हैं ॥ २१७ ॥ सेसाणं परूवणाणमत्थो वृत्तो । पाण-सण्णा-उवजोग-परूवणाणमत्थो वृत्तदे । प्राणिति जीवित एभिरिति प्राणाः । के ते १ पश्चिन्द्रियाणि मनेविकं वाग्वलं कायवलं उच्छ्वासिनः इवासा आयुरिति । नैतेपामिन्द्रियाणामकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिश्वयोपश्वमनिबन्धनानामिन्द्रियाणामकेन्द्रियादिजातिभिः साम्याभावात्। नेन्द्रियपर्याप्तावन्तर्भावः; चक्षुरिन्द्रियाद्यावरणक्षयोपश्चमलक्ष्योन्द्रियाणां क्षयोपश्चमापेक्षया बाह्यार्थग्रहणशक्तयुत्पत्तिनिमित्तपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वविरोधात्। न च मनोबलं मनःपर्याप्तावन्तर्भवितः मनोवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नात्मवलस्य चैकत्वविरोधात् । नापि वाग्वलं भाषापर्याप्तावन्तर्भवितः आहारवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नायाः भाषावर्गणासकन्धानां श्रोत्रेद्रियग्राह्यपर्यायेण परिणमनशक्तेश्च साम्याभावात् । नापि कायवलं शरीरपर्यासावन्तर्भवितः वीर्यान्तरायजनितक्षयोपश्चमस्य खलरसभागनिमित्तशक्तिनिबन्धनपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वाभावात् । तथोच्छ्वासिनश्चासप्राणपर्याप्त्योः कार्यकारणयोरात्मपुद्गलोपादा-

वीस प्ररूपणाओं में से तीन प्ररूपणाओं को छोड़कर रोष प्ररूपणाओं का अर्थ पहले कह आपे हैं, अतः यहां पर प्राण, संज्ञा, और उपयोग इन तीन प्ररूपणाओं का अर्थ कहते हैं। जिनके हारा जीव जीता है उन्हें प्राण कहते हैं।

शंका-वे प्राण कौनसे हैं?

समाधान — पांच दिन्द्रयां, मनोबल, वचनबल, कायबल, उच्छुास-निश्वास और आयु ये दश प्राण हैं।

इन पांचों इन्द्रियोंका एकेन्द्रियजाति आदि पांच जातियों में अन्तर्भाव नहीं होता है। क्योंिक, चश्चिरिन्द्रयावरण आदि कमें के क्ष्योपशमके निमित्तन्ते उत्पन्न हुई इन्द्रियोंकी एकेन्द्रियजाति आदि जातियों के साथ समानता नहीं पाई जाती है। उसीप्रकार उक्त पांचों इन्द्रियोंका इन्द्रियपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंिक, चश्चिरिन्द्रय आदिको आवरण करनेवाले कमोंके क्षयोपशमस्वरूप इन्द्रियोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाह्य पदार्थोंको प्रहण करनेवी शक्तिके उत्पन्न करनेमें निमित्तमृत पुद्वलींके प्रचयको एक मान लेनेमें विरोध आता है। उसीप्रकार मनेवालका मनःपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंिक, मनोवर्गणाके स्कन्योंसे उत्पन्न हुए पुद्वलप्रचयको और उससे उत्पन्न हुए आत्मबल (मनोवल) को एक माननेमें विरोध आता है। तथा वचनबल भी भाषापर्याप्तिमें अन्तर्भृत नहीं होता है, क्योंिक, आहारवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्वलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई भाषावर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्वलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई भाषावर्गणाके स्कन्धोंका अभिन्द्रयके हारा ग्रहण करने योग्य पर्यायसे परिणमन करनेरूप शक्तिका परस्पर समानताका अभाव है। तथा कायबलका भी शरीरप्रयाप्तिमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंिक, वीर्यान्तरायके उद्याभाव और उपशमसे उत्पन्न हुए क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्तन्तरायके उद्याभाव और उपशमसे उत्पन्न हुए क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्तन्तरायके कारण पुद्रलप्रचयकी एकता नहीं पाई जाती है। इसीप्रकार उच्छ्वासनिःश्वास प्राण कार्य है और आत्मोपावानकारणक है तथा उच्छ्वासिःश्वासपर्याप्ति कारण है और पुद्रलोपा

नयोर्भेदोऽभिघातव्य इति ।

सण्णा चउ विवहा आहार-भय-मेहुण-परिग्गह-सण्णा चेदि । मैथुन संज्ञा वेदस्यानत्मवतीति चेन्न, वेदन्नयोदयसामान्यनिवन्धनमैथुन संज्ञाया वेदोदयविशेषलक्षणवेदस्य
चैकत्वानुपवत्तेः । परिग्रह संज्ञापि न लोभेनैकत्वमास्कन्दितः, लोभोदयसामान्यस्यालीढबाह्यार्थलोभतः परिग्रह संज्ञामादधानतो भेदात् । यदि चतस्रोऽपि संज्ञा आलीढबाह्यार्थाः,
अन्नमत्तानां संज्ञाभावः स्यादिति चेन्न, तन्नोपचारतस्तत्सन्त्राम्युपगमात् । स्वपरम्रहणपरिणाम उपयोगः । न स ज्ञानदर्शनमार्गणयोरन्तर्भवतिः ज्ञानहगावरणकर्मक्षयोपशमस्य
तदुभयकारणस्योपयोगत्वितिरोधात् ।

अथ स्यादियं विश्वतिविधा प्ररूपणा किम्रु सूत्रेणोक्ता उत नोक्तेति ? किं चातः ? यदि नोक्ता, नेयं प्ररूपणा भवतिः स्त्राचुक्तप्रतिपादनात्। अथोक्ता, जीवसमासप्राणपर्या-

दाननिमित्तक है, अतएव इन दोनोंमें भेद समझ छेना चाहिये।

संज्ञा चार प्रकारकी है; आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मेथुनसंज्ञा और परिप्रद्वसंज्ञा । क्रीका—मेथुनसंज्ञाका वेदमें अन्तर्भाव हो जायगा ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, तीनों वेदोंके उदय सामान्यके निमित्तसे उत्पन्न हुई मैथुनसंज्ञा और वेदोंके उदय-विदोप स्वरूप वेद, इन दोनोंमें एकत्व नहीं बन सकता है। इसीप्रकार पिरग्रहसंज्ञा भी लोभकपायके साथ एकत्वकी प्राप्त नहीं होती है। क्योंकि, बाह्य पदार्थीको विषय करनेवाला होनेके कारण पिरग्रहसंज्ञाको धारण करनेवाले लोभक लोभकषायके उदय-रूप सामान्य लोभका भेद है। अर्थान् बाह्य पदार्थीके निमित्तसे जो लोभ होता है उसे परिप्रहसंज्ञा कहते हैं। अर्थान् बाह्य पदार्थीके निमित्तसे जो लोभ होता है उसे परिप्रहसंज्ञा कहते हैं।

शंका — यदि ये चारों ही संज्ञाएं वाह्य पदार्थों के संसमें से उत्पन्न होती हैं तो अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीवों के संज्ञाओं का अभाव हो जाना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तीमें उपचारसे उन संक्षाओंका सङ्गाव स्वीकार

स्व और परकी ग्रहण करनेवाले परिणामिश्रीपकी उपयोग कहते हैं। वह उपयोग श्वानमार्गणा और दर्शनमार्गणामें अन्तर्भृत नहीं होता है। क्योंकि, श्वान और दर्शन इन दोनोंके कारणक्रप श्वानावरण और दर्शनावरणके क्षयोपशमको उपयोग माननेमें विरोध आता है।

शंका — यह बीस प्रकारकी प्रस्तवणा रही आओ, किन्तु यह बतलाइये कि यह प्रस्त्रवणा स्त्रानुसार कही गई है, या नहीं ?

प्रतिशंका-इस प्रश्नसे क्या प्रयोजन है ?

शंका — यदि स्त्रानुसार नहीं कहीं गई है तो यह प्ररूपणा नहीं हो सकती है, क्योंकि, यह स्त्रमें नहीं कहे गये विषयका प्रतिपादन करती है। और यदि स्त्रानुसार कही गई है, तो जीवसमास, प्राण, पर्याप्ति, उपयोग और संझामरूपणाका मार्गणाओं में

प्यापोगसंद्रानां मार्गणासु यथान्तर्भावो मवति तथा वक्तव्यमिति । न द्वितीयपक्षोक्त-दोषोऽनम्युपगमात् । प्रथमपक्षेऽन्तर्भावो वक्तव्यव्यवेदुच्यते । पर्याप्तिजीवसमासाः काये-निद्रयमार्गणयोर्निलीनाः; एकद्वित्रिचतुःपश्चेन्द्रियस्भ्मवादरपर्याप्तापर्याप्तमेदानां तत्र प्रति-पादितस्वात् । उच्छ्वासभाषामनोवलप्राणावच तत्रेव निलीनाः; तेषां पर्याप्तिकार्यस्वात् । कायवलप्राणोऽपि योगमार्गणातो निर्गतः; वललक्षणत्वाद्योगस्य । आयुःप्राणो गतौ मिलीनः; द्वयोरन्योन्याविनामावित्वात्। इन्द्रियप्राणा ज्ञानमार्गणायां निलीनाः; भावेन्द्रियस्य ज्ञानावरणक्षयोपश्चमह्मपत्वात्'। आहारे या तृष्णा कांक्षा साहारसंज्ञा । सा च रतिह्मपत्वा-न्मोहपर्यायः । रतिरपि रागह्मपत्वान्मायालोमयोरन्तर्भवति । ततः कषायमार्गणाया-माहारसंज्ञा द्रष्टव्या । भयसंज्ञा भयात्मिका । भयश्च क्रोधमानयोरन्तर्लीनम्; द्रेषह्मपत्वात् । ततो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रमवा । मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रमेदः; स्त्रीपुंनपुंसकवेदानां तीत्रोदयह्मपत्वात् । परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्गणोद्धताः वाद्यार्थालीवलोमह्मरत्वात् । साका-

जिसमकार अन्तर्भाष होता है उसमकार कथन करना चाहिये ?

समाधान-इसरे पक्षमें दिया गया दूषण तो यहां पर आता नहीं है; क्योंकि, वैसा भाका कहीं गया है। तथा प्रथम पक्षमें जो जीवसमास आहिके चौदह मार्गणाओंमें अन्तर्भाव करनेकी बात कही है. सो कहा जाता है। पर्याप्ति और जीवसमास प्ररूपणा काय और इन्द्रिय जार्गणामें अन्तर्भृत हो जाती हैं; क्योंकि, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, त्रतरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सहस्र, बाहर, पर्याप्त और अपयोप्तकप भेदोंका उक्त दोनों मार्गणाओं में श्रतिपादन किया गया है। उच्छासनिः स्वास, ववनवल और मनोबल, इन तीन प्राणींका भी उक्त दोनों मार्गणाओं में अस्तर्भाव होता है। क्योंकि, ये तीनों प्राण पर्याप्तियोंके कार्य हैं । कायबलप्राण भी योगमार्ग-जासे विकला है। क्योंकि, योग काय, वचन और मनोबलस्वक्ष होता है। आयुप्राण गति-मार्गणामं अन्तर्भत है। क्योंकि, मायू और गति ये होनों परस्पर अविनाभावी हैं। अर्थात विवासित गतिके उदय होने पर तज्जातीय आयुका उदय होता है और विवासित आयुके उदय होने पर तज्जातीय गतिका उदय होता है। इन्द्रियमाण झानमार्गणामें अन्तर्लीन हो जाते हैं, क्योंकि, भावेन्द्रियां ज्ञानावरणके अयोपरामरूप होती हैं। आहारके विषयमें जो तृष्णा या आकांका होती है उसे आहारसंबा कहते हैं। यह रतिस्वरूप होनेसे मोहकी पर्याय (भेद) है। रति भी रागक्रप होनेके कारण माया और लोभमें अन्तर्भृत होती है। इसलिये कपायमार्गणामें आहार-संद्रा समझना चाहिये। भयसंद्रा भयकप है, और भय द्वेषकप होनेके कारण कोध और मानमें अन्तर्भत है. इसिछये अयसंहा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई समझना चाहिये। मैथनसंहा बेइमार्गणाका प्रभेद है; क्योंकि, वह मैथुनसंहा स्वीबेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके तीव उदयहए है। परिष्रहसंबा भी कवायमार्गणासे उत्पन्न हुई है। क्योंकि, यह संबा बाह्य पदार्थोंमें ब्याप्त स्रोअरूप है। साकार उपयोग बानमार्गणामें और अनाकार उपयोग दर्शनमार्गणामें

१ इंडियकाए कीना जीवा पञ्जित आणभासमणी। जीगे काओ जाने अन्सा गदिमगाणे आज ॥ गी. जी. ५.

२ मायाकोहे रिदेषुम्बाहारं कोहमाणगन्हि सयं । वेदे मेहुणसण्या छोहन्हि परिग्नहे सण्या ॥ गो. अ. ६.

रोपयोगो झानमार्गणायामनाकारोपयोगो दर्शनमार्गणायां (अन्तर्भवति) तयोर्कानदर्शन-रूपत्वात् । न पौनरुत्त्यमपि; कथि त्रे असे भेदात् । प्ररूपणायां किं प्रयोजनामिति चेदुच्यते, स्रत्रेण सचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विंशतिविधानेन प्ररूपणोज्यते ।

तत्थ 'ओघेण अत्थि मिन्छाइडी सिद्धा॰ चेदि' एदस्स ओघ-सुत्तस्स ताव परूत्रणा वृच्चदे । तं जहा – *अत्थि चोइस गुणट्टाणाणि चोइस-गुणट्टाणादीद-गुणट्टाणं पि अत्थि । अत्थि चोइस जीवसमासा । के ते १ एइंदिया दुविहा बादरा सुहुमा ।

अन्तर्भृत होते हैं; क्योंकि, वे दोनों झान और दर्शनरूप ही हैं। ऐसा होते हुए भी उक्त प्ररूपणाओंके स्वतन्त्र कथन करनेमें पुनरुक्ति दोष भी नहीं आता है; क्योंकि, मार्गणाओंसे उक्त प्ररूपणाएं कथंचित् भिन्न है।

शंका - प्ररूपणा करनेमें क्या प्रयोजन है ?

समाधान — सुत्रके द्वारा स्वित पदार्थीके स्पर्धकरण करनेके छिये बीस प्रकारसे प्रक्रपणा कही जाती है।

'सामान्यसे मिध्यादिए, सासाइनसम्यग्दिष्ट, सम्यग्मिध्यादिष्ट, असंयत्तसम्यग्दिष्ट, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रिविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपदामक और क्षपक, अनिवृत्तिकरण प्रविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपदामक और अपक, स्क्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपदामक और अपक, उपदांतकषाय-वीतराग-छन्नस्थ, श्लीणकषाय-वीतराग छन्नस्थ, सयोग-केवली और अयोगकेवली जीव होते हैं। तथा सिद्ध भी होते हैं। पहले इस सामान्य स्वकी प्रकृपणा कहते हैं। वह इसप्रकार है-चौद्दों गुणस्थान हैं और चौद्द गुणस्थानोंसे अतीतगुणस्थान भी है। चौद्दों जीवसमास हैं।

शंका-वे चौदहां जीवसमास कौनसे हैं ?

१ सागारो उनजीनो णाणे मग्गस्हि दंसणे मग्गे। अणगारा उनजीनो र्राणा चि जिणेहि णिहिट्टं॥ गो. जी. ७. २ जी. स. सू. ९-२३.

सामान्य जीवोंके सामान्य आछाप.

ग्र.	जी.	ч.	সা-	सं	ग.	ŧ.	का.	थो.	वे.	南	.	स.	褌.	ਲੇ.	म.	ਜ.	सं.) आ.	₹.
₹ ¥ 9	જ. લી. જ	५प.५अ. ४प ४अ. के के	१०,७ ९,७ ८,६ ७,५ ६.४ ४,३ ४,३ ४,३	12	ति, सः ल	জ, বা, ,		١.	अपना, व. 🔑		<	জ্ঞান ভ		द. ६ सा. ६	भ. अ. 'È' हर	Ę	र सं. असं. १९७	२ आहा. अना.	२ साका, बमा, तथा यु. उ.

बादरा दुविहा पज्जता अपज्जता। सुहुमा दुविहा पज्जता अपज्जता। वीइंदिया दुविहा पज्जता अपज्जता। तीइंदिया दुविहा पज्जता अपज्जता। चर्डारेदिया दुविहा पज्जता अपज्जता। पंचिदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो। सण्णिणो दुविहा पज्जता अपज्जता। असण्णिणो दुविहा पज्जता अपज्जता। असण्णिणो दुविहा पज्जता अपज्जता हिंदें। एदे चोहस जीवसमासा अदीद-जीवसमासा वि अत्थि। अत्थि छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ पंच पज्जतीओ पंच अपज्जतीओ चत्तारि पज्जतीओ चत्तारि अपज्जतीओ अदीद-पज्जती वि अत्थि। आहारपज्जती सरीरपज्जती इंदियपज्जती आणापाणपज्जती मासापज्जती मणपज्जती चेदि। एदाओ छ पज्जतीओ सण्णिपज्जताणं। एदेसि चेव अपज्जत्तकाले एदाओ चेव पंच पज्जतीओ असण्णि-पंचिदिय-पज्जत्तप्दुि जाव बीइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति। तेसि चेव अपज्जत्ताणं एदाओ चेव अण्जत्ताणं एदाओ चेव अर्थान्तत्ताले चित्रा चतारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जताणं भवंति। एदाओ चेव भासा-मणपज्जत्तीहि विणा चतारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति। एदािस छण्हम-

समाधान—' पकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, बादर और सृक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । सृक्ष्म जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । हिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । जीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । असंबी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । असंबी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । असंबी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । इसप्रकार थे चौदह जीवसमास होते हैं।

अतीत-जीवसमास भी जीब होते हैं। छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां और चार अपर्याप्तियां हैं। तथा अतीतपर्याप्ति भी है। आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, शिन्द्रयपर्याप्ति, आनापानपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मनःपर्याप्ति ये छह पर्याप्तियां हैं। ये छहां पर्याप्तियां संशी-पर्याप्ति हें। इन्हीं संशी जीवोंके अपर्याप्त-कालमें पूर्णताको प्राप्त नहीं हुई ये ही छह अपर्याप्तियां होती हैं। मनःपर्याप्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याप्तियां असंशी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तों के केकर हीन्द्रिय-पर्याप्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याप्तियां असंशी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तों के अपूर्णताको प्राप्त वे ही पांच अपर्याप्तिक होती हैं। आषापर्याप्ति और मनःपर्याप्तिके विना ये ही चार पर्याप्तियां एकेन्द्रिय पर्याप्तिके होती हैं। इन्हीं एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालमें अपूर्णताको प्राप्त ये ही चार अपर्याप्तियां होती हैं। तथा इन छह पर्याप्तियोंके अभावको अतीतपर्याप्ति

१ जी संस् स् ३४-३५.

भावो अदीद-पज्जत्ती णाम । उत्तं च--

आहार-सरीरिंदिय-पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो । चत्तारि पंच छन्ति य एइंदिय-निगल-सण्णीणं ॥२१८॥ जह पुण्णापुण्णाइं गिह-घड-बत्याइयाइ दन्नाइं । तह पुण्णापुण्णाओ पज्जतियरा मुणेयन्ना ॥ २१९॥

आत्थि दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छप्पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण दोण्णि पाण एक पाण अदीद-पाणो वि अत्थि। चक्ख-सोद-घाण-जिब्भ-फासिमिदि पंचिदियाणि, मणबल विवल कायबल इदि तिण्णि बला, आणापाणो आऊ चेदि एदे दस पाणा। उत्तं च—

पंच वि इंदिय-पाणा मण-वचि-काएण तिथ्णि बल्रपाणा । आणप्पाणप्पाणा आउगपाणेण होंति दस पाणा ॥ २२०॥

कहते हैं। कहा भी है-

आहार, द्वारीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन ये छह पर्या<mark>प्तियां हैं</mark>। उनमेंसे एकेन्द्रिय जीवोंके चार, विकलत्रय और असंक्षी-पंचेन्द्रियोंके पांच और संक्षी जीवोंके छह पर्याप्तियां होती हैं ॥ २१८॥

जिसप्रकार गृह, घट और वस्त्र आदि द्रव्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकारके होते हैं, उसीप्रकार जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकारके होते हैं उनमेंसे पूर्ण जीव पर्याप्तक और अपूर्ण जीव अपर्याप्तक कहलाते हैं ॥ २१९ ॥

दश प्राण, सात प्राण; नो प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण होते हैं तथा अतीतप्राणस्थान भी है। चक्षुरिन्द्रिय, थ्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय. जिह्नेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय ये पांच इन्द्रियां; मनोबल, वचनबल, कायबल ये तीन बल, श्वासोच्छ्रास और आयु ये दश प्राण होते हैं। कहा भी है—

पांची इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल और कायबल स्वासोच्छ्रास और आयु ये दश प्राण हैं ॥ २२०॥

१ गो. जी. ११९.

२ गो. जी. ११८.

३ गो. जी. १३०.

पदे दस पाणा पंचिदिय-सण्णिपज्जताणं । आणापाण-भासा-मणेहि विणा सण्णि-पंचिदिय-अपज्जताणं सत्त पाणा भवंति । दसण्हं पाणाणं मज्झे मणेण विणा णव पाणा असण्णि-पंचिदिय-पज्जताणं भवंति । एदेसिं चेव अपज्जताणं भासा-आणापाण-पाणेहि विणा सत्त पाणा भवंति । पुव्विल्ल-णव-पाणेसु सोदिंदिय-पाणे अवणिदे चदुरिंदिय-पज्जत्तस्स अहु पाणा भवंति । एदेसिं चेव चदुरिंदिय-अपज्जत्ताणं आणावाण-भासाहि विणा छप्पाणा भवंति । पुव्धिल-अहुण्हं पाणाणं मज्झे चिन्धिदिए अवणिदे तीइंदिय-पज्जत्तयस्स सत्त पाणा भवंति । तेसु सत्तमु आणावाण-भासापाणे अवणिदे तीइंदिय-अपज्जत्तयस्स पंच पाणा भवंति । तीइंदियस्स वृत्त-सत्तण्हं पाणाणं मज्झे घाणिदिए अवणिदे बीइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । तेसु आणावाणपाणे भासापाणे अवणिदे एइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । तेसु आणावाणपाणे अवणिदे एइंदिय-पज्जत्तयस्स तिण्णि पाणा भवंति । उत्तं च —

दस सण्णोणं पाणा सेसेगूणंतिमस्स वे ऊणा । पजन्तेसिदरेसु य सत्त दुगे सेसगेगूणां ॥ २२१ ॥

पूर्वीक्त दश प्राण पंचेन्द्रिय-संझी-पर्याप्तकों के होते हैं। आनापान, वचनबल और मनेश्वल इन तीन प्राणों के विना शेष सात प्राण संझी-पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तकों के होते हैं। दश प्राणों में से मनोबल के विना शेष नी प्राण असंझी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तकों के होते हैं। और अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त इन्हीं अधिके वचनबल और आनापान प्राणके विना शेष सात प्राण होते हैं। पूर्वीक नी प्राणों में से श्रोन्नेन्द्रिय प्राणको कम कर देने पर शेष आठ प्राण चतुरिन्द्रिय पर्याप्त अधिके होते हैं। इन्हीं चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त जीविंके आनापान और वचनबलके विना शेष छह प्राण होते हैं। पूर्वीक्त आठ प्राणों में से चशु इन्द्रियके कम कर देने पर शेष सात प्राण निद्र्य पर्याप्त जीविंके होते हैं। उन सात प्राणों में आनापान और वचनबल प्राणके कम कर देने पर शेष पांच प्राण निद्र्य-अपर्याप्तकों के होते हैं। निद्रय जीवों के कहे गये सात प्राणों में आनापान और वचनबलके कम कर देने पर शेष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकों के होते हैं। इतिद्रय-पर्याप्तकों के कहे गये छह प्राणों में से आनापान और वचनबलके कम कर देने पर शेष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकों के होते हैं। इतिन्द्रय-पर्याप्तकों के कहे गये छह प्राणों में से सनोन्द्रय-अपर्याप्तकों के होते हैं। इतिन्द्रय-पर्याप्तकों के कहे गये छह प्राणों में से सनोन्द्रय-अपर्याप्तकों के होते हैं। उनमें से आनापान प्राणके कम कर देने पर शेष चार प्राण एकेन्द्रिय-अपर्याप्तकों के होते हैं। उनमें से आनापान प्राणके कम कर देने पर शेष तीन प्राण एकेन्द्रिय-अपर्याप्तकों के होते हैं। कहा भी है—

संब्री जीवोंके द्दा प्राण होते हैं। रोष जीवोंके एक एक प्राण कम करना चाहिये।

१ इंदियकायाऊणि य पुण्णापुण्णेसु पुण्णाने आणा । वीइदियादिपुण्णे बचीमणो सण्णिपुण्णेव ।। गी. जी. १३२.

२ गो. अपी. १३३.

दसण्हं पाणाणमभावो अदीदपाणो णाम । अत्थि चत्तारि सण्या, खीणसण्या वि अत्थि । काओ चत्तारि सण्णाओ इदि चे १ युखदे-आहारसण्णा भयसण्णा मेहुणसण्णा परिगाहसण्णा चेदि । एदासिं चउण्हं सण्णाणं अभावो खीणसण्णा णाम । अत्थि चत्तारि गदीओ, सिद्धगदी वि अत्थि । एइंदियादी पंच जादीओ, अदीद-जादी वि अत्थि । अत्थि पुढविकायादी छक्काया, अदीदकाओ वि अत्थि । अत्थि पण्णरह जोगा, अजोगो वि अत्थि । अत्थि तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि । अत्थि अह्र णाणाणि । अत्थि सत्त संजमा, णेव संजमो णेव संजमासंजमो णेव असंजमो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि दंसणाणि । दृष्य-भावेहि छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि । मवसिद्धिया वि अत्थि । सम्मत्ताणि अत्थि । सिण्णा वि अत्थि । साम्मताणि अत्थि । साम्मता वि अत्थि । साममता वि साममता वि

किन्तु अन्तिम अर्थात् एकेन्द्रिय जीवेंकि दे। प्राण कम होते हैं। यह कम पर्याप्तकोंका है। किन्तु अपर्याप्तक जीवेंमिं संबी और असंबी पंचेन्द्रियोंके सात, सात प्राण होते हैं। तथा रोष जीवेंकि उत्तरोत्तर एक एक कम प्राण होते हैं॥ २२१॥

विशेषार्थ—केवली भगवान्के पांच इन्द्रियां और मनोबलको छोड़कर शेष चार प्राण होते हैं। तथा योग निरोधके समय वचनबलका अभाव हो जाने पर कायबल आनापान और भागु ये तीन प्राण होते हैं और अन्तमें कायबल और आगु ये दो प्राण होते हैं। तथा चौदहवें गुणस्थानमें केवल एक आगुप्राण होता है।

इन दशों प्राणोंके अभावको अतीत-प्राण कहते हैं। खारों संझाएं होती हैं और क्षीण-संझा भी होती है।

शंका-वे चार संझाएं कौनसी हैं ?

समाधान—आहारसंत्रा, भयसंत्रा, मैथुनसंत्रा और परिप्रहसंत्रा ये चार संत्रापं हैं। इन चारों संत्राओंके अभावको श्रीणसंत्रा कहते हैं।

चार गतियां होती हैं और सिद्धगित भी है। एकेन्द्रियादि पांच जातियां होती हैं और अतीत-जातिकप स्थान भी है। पृथिवीकाय आदि छह काय होते हैं और अतीतकाय स्थान भी है। पन्द्रह योग होते हैं और अयोग स्थान भी है। तीन वेद होते हैं और अपगतवेद स्थान भी है। चार कवायें होती हैं और अकवाय स्थान भी है। जाठ बान होते हैं। सात संयम होते हैं और संयम, संयमासंयम और असंयम रहित भी स्थान है। चार दर्शन होते हैं। द्रव्य और भावके भेदले छह छेश्याएं होती हैं और अलेश्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक जीव होते हैं, अभस्य-सिद्धिक जीव होते हैं और भव्यसिद्धिक तथा अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। छह सम्यक्त्व होते हैं। संबी भी होते हैं, असंबी भी होते हैं और संबी तथा, असंबी

वि अत्थि, अणाहारिणो नि अत्थि । सागारुवजुत्ता वि अत्थि, अणागारुवजुत्ता वि अत्थि, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता नि अत्थि ।

पजत-विसिद्धे ओघे भण्णमाणे अत्थि चोइस गुणद्वाणाणि, अदीदगुणद्वाणं णित्थः; पज्जत्तेसु तस्स संभवाभावादो । सत्त जीवसमासा, अदीदजीवसमासो णित्थः; छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, अदीदपज्जत्ती णित्थः; दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, अदीदपाणा णित्थः; चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थः; चत्तारि गदीओ, सिद्धगदी णात्थः; एइंदियादी पंच जादीओ अत्थि, अदिदजादी णित्थः; पुढवीकायादी छक्षाया अत्थि, अकाओ णित्थः; ओरालिय-वेउव्विय-आहारिमस्स-कम्मइयकायजोगेहि विणा एक्षारह जोग, अजोगो वि अत्थिः तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थः चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थः अह णाण, सत्त संजम, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो णित्थः चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि

विकल्प रहित भी स्थान होता है। आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगसे युक्त भी होते हैं अनाकार उपयोगसे भी युक्त होते हैं और साकार उपयोग तथा अनाकार उपयोग इन दोनोंसे युगपत युक्त भी होते हैं।

छ लस्साओ, अलेस्सा वि अत्थिः द्व्वेण छ लेस्सेचि भणिदे सरीरस्स छव्वण्णा घेत्तव्वा×। भावेण छ लेस्सा चि भणिदे जोग-कसाया छन्भेदं द्विदा घेचव्वा*। भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, णेव भवासिद्धिया णेव अभवासिद्धिया णित्थः, छ सम्मन्ताणि, सिण्णिणो असिण्णिणो, णेव सिण्णिणो णेव असिण्णणो वि अत्थः, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा, सागारणगारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थिः।

संपिं अपजाति-पजाय-विसिट्टे ओघे भण्णमाणे अत्थि मिच्छाइही सासणसम्मा-इही असंजदसम्माइही पमत्तसंजदा सजागिकवाले ति पंच गुणद्वाणाणि, सच जीव-समासा, छ अपजातीओ पंच अपजातीओ चतारि अपजातीओ, सत्त पाण सत्त पाण

हैं और अलेश्यास्थान भी होता है। द्रव्यसे छहीं लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर शारीरसंबन्धी छह वर्णोंका ग्रहण करना चाहिये। भावसे छहीं लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर योग और कवायोंकी छह भेदोंको प्राप्त मिश्रित अवस्थाका ग्रहण करना चाहिये। भन्यसिद्धिक होते हैं और अभन्यसिद्धिक होते हैं, किंतु भन्यसिद्धिक और अभन्यसिद्धिक हत दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान नहीं होता है। छहीं सम्यक्त्य होते हैं। संब्री होते हें, असंब्री भी होते हैं, तथा तेरहवें और बौदहवें गुणस्थानकी अपेक्षा संब्री और असंब्री विकल्प रहित भी जीव होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं अगर साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे गुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

अब अपर्याप्ति-पर्यायसे युक्त अपर्याप्तक जीवोंके, ओद्यालाप कहने पर—मिध्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान होते हैं। अपर्याप्तकप सात जीवसमास होते हैं। अपर्याप्त संझीके छहां अपर्याप्तियां, अपर्याप्त असंझी और विकलन्योंके पांच अपर्याप्तियां और अपर्याप्त एकेन्द्रिय जीवोंके चार अपर्याप्तियां होती हैं। संझी, असंझी, चतुरिन्द्रिय,

× वण्णोदयेण जिल्हों सरीरवण्णों द दन्त्रदों लेस्सा ॥ गी. जी. ४९४.

* जीगपडची लेस्सा कसायउदयाणुराजिया होई ॥ गी. जी. ४९०.

नं, १ पर्याप्त जीवोंके सामान्य-आ**रुा**प

]गःजी प श्रा∗ संग इं	का यो	वे कज्ञा	संय द छे.	म. स	सक्षे. आ उ.
१४ ७ ६ प, १०।९।४ ४।५	६ ११	₹ ४ ८	9 X X.	६ २ ६	२ २ २
प. ५प. ८।७	औ मि.	÷ 16	मा-	६ स-	स. आहा साका
४प. श्४	वे मि	अपनः. असः		अम.	असं. अना. अनाका.
	आ. मि			Į	यु. स.
	कार्मः के विना	f ₁ , 1	t		

छर्पाण पंच पाण चनारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, अद्दिसण्णा वि अत्यिः, चनारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, ओरालियिमस्स-वेजिवयमिस्स-आहारिमस्स-कम्मइयकायजोगेति चत्तारि जोगा, तिण्णि वेद, अवगद्वेदो वि अत्थः, चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थः, मणपज्जव-विभंगणाणेहि विणा छण्णाण, चत्तारि संजम सामाइय-छेदोवद्वावण-जहाकसादासंजमेहि, चत्तारि दंसण, दव्वेण काज-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओः, जम्हा सव्व-कम्मस्स विस्ससोवचओ सुकिलो भवदि तम्हा विग्गहगदीए वद्दमाण-सव्व-जीवाणं सरीरस्य सुकलेस्सा भवदि । पुणो सरीरं घेन्ण जाव पज्जत्तीओ समाणेदि ताव छव्वण्ण-परमाणु-पुंज-णिप्पज्जमाण-सरीरत्तादो तस्स सरीरस्स लेस्सा काउलेस्सोत्त भण्णदे , एवं दो सरीर-लेस्साओ भवंति । भावेण छ लेस्सोत्ते वृत्ते णेरइय-तिरिक्ख-भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेवाणमपज्जत्रकाले किण्ह-णील-काउलेस्साओ भवंति । सोधम्मादि-उवरिम-

श्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंकी अपेक्षा क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों सङ्गापं होती हैं और अतीत-संब्रारूप स्थान भी होता है। चारों गतियां होती हैं। एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां होती हैं। प्रथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं। औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाय इसप्रकार चार योग होते हैं। तीनों वेद होते हैं और अपगतवेदरूप भी स्थान होता है। चारों कषायें होती हैं और कषायरहित भी स्थान होता है। मनःपर्यय और विभंग-क्रानके विना छह क्रान होते हैं। सुक्ष्मसांपराय, परिहार-विद्यद्धि और संयमासंयमके विना सामायिक, छेदोपस्थापना, यथाख्यात और असंयम ये चार संयम होते हैं। चारों दर्शन होते हैं। द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा कापीत और शक्ल लेश्या होती है और भाव लेक्याकी अपेक्षा छहीं लेक्याएं होती हैं। अपर्योप्त अवस्थामें द्रव्यकी अपेक्षा कापीत और शक्ल लेश्याएं ही क्यों होती हैं, आगे इसीका समाधान करते हैं कि जिस कारणसे संपूर्ण कर्मीका विस्त्रसापचय शुक्त ही होता है, इसलिय वित्रहगातिमें विद्यमान संपूर्ण जीवेंकि शारीरकी शुक्छछेक्या होती है। तदनन्तर शारीरकी प्रहण करके जबतक पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है तबतक छह वर्णवाले परमाणुओंके पुंजोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, इसालिये उस दारीरकी कापीत लेदया कही जाती है। इसप्रकार अपयोप्त अवस्थामें दारीर-संबन्धी दी ही लेक्याएं होती हैं। भावकी अपेक्षा छहों लेक्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर नारकी, तिर्थंच, भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके अपर्याप्त-कालमें कृष्ण, नील और कापोत लेह्याएं होती हैं। तथा सौधर्मादि ऊपरके देवोंके अपर्याप्त कालमें पीत. पश्च और

१ X...सम्ब बिगाई सुनका । सन्वी मिस्सी बेही कबीदवण्णी हवे णियमा ॥ गी. जी. ४९८.

देवाणमपज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ भवंति । भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो असुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा तदुमएण जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

संपिंह मिच्छाइद्दीणं ओघालावे मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोइस जीव-समासा, छ पञ्जचीओ छ अपज्जचीओ पंच पञ्जचीओ पंच अपज्जचीओ चचारि पञ्जचीओ चचारि अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्द पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चचारि पाण चचारि पाण तिश्णि पाण, चचारि सण्णाओ, चचारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, आहार-दुगेण विणा तेरह जोग, तिश्णि वेद, चचारि कसाय, तिश्णि अण्णाण,

गुक्त लेक्यापं होती हैं पेसा जानना चाहिये। भव्यसिद्धिक होते हैं और अभन्यसिद्धिक भी होते हैं। सम्यिग्मध्यात्वके विना पांच सम्यक्तव होते हैं। संक्षी होते हैं, असंक्षी होते हैं और संक्षी, असंक्षी इन दोनों विकल्पोंसे राहित भी होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और युगपत् उन दोनों उपयोगोंसे युक्त भी होते हैं।

अब मिथ्यादाष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, चौद्दों जीवसमास, संबीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: असंबी और विकलन्नयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: संबीके दश प्राण, सात प्राण: असंबीके नौ प्राण, सात प्राण: चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, छह प्राण: न्नीन्द्रियके सात प्राण: प्रांच प्राण: द्रीन्द्रियके छह प्राण, चार प्राण: एकेन्द्रियके चार प्राण: तीन प्राण: चारों संवापं, चारों गतियां, पकेन्द्रियज्ञातिको आदि लेकर पांचों जातियां, पृथिचीकायको आदि लेकर छहों काय, आहारकदिक अर्थात् आहारककाययोग और आहारकमिअकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपार्ये, तीनों अवान, असंयम, चश्च और अचकु ये दो दर्शन,

नं. २ अपूर्याप्त अभिने सामान्य~भालापः

ŋ	जी.		d.	या.	सं.	ग.	₹.	का.	यी	١	वे.	碼.	耓.	संय.	₹.	₹.	म.	स ्	सोंबे.	आः	₹.
4	v	Ę	अप	છ	8	8	ч	8	1	\$	1	8	ě	8	8	द- २	12	4	3	2	2
मि.	अप.	ų	,,	્હ	H.				औ.	मि.	÷	Je.	मनः. विभं	सामा.		का.	स.	⊨	et.	आहा.	साकाः अनाः
सा-		8	,,	Ę	· ਲ				वे.	,,	अवग.	ক	विभं-	9		ગુ.	₹.	(E	असं -	अना.	अना-
अवि.				4	עז				आ.				विना	यथा-		मा ६		-	अनु		यु-ड.
प्र.				8					कार्म					असं.		1		1			
सयो.				3								ļ								1	
				,										į]	L	1		-	l	

असंजमो, दो दंसण, दव्य-मावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, स्विणणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंतिं।

तेसिं चेव पिच्छाइद्वीणं पजत्तोघे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीव-समाता, छ पज्जतीओ पंच पजतीओ चत्तारि पजतीओ, दत पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी

द्रव्य और भावकी अपेक्षा छहाँ लेड्याएं, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक, भिथ्यात्व, संक्षिक और असेक्षिक; आहारक और अनाहारकः साकार (क्रान) उपयोगी और अनाकार (दर्शन) उपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि जीयोंके पर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सान जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, संज्ञीके दश प्राण, असंज्ञीके नी प्राण, चतुरि-न्द्रियके आठ प्राण, जीन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, एकेन्द्रियके चार प्राण, चारों

नं. ३ भिध्यादृष्टि जीवोंके सामान्य-आलाप.

ij.	जी.	9	<u> </u>	प्रा-	सं -	ग,	₹.	का.	यो	वे.	ፋ.	ज्ञा	संग.	्द.	ले.	स -	[स∙	साझे	आ.	उ.
1	18	Ę	ч.	१०।७	8	૪	4	ह	१३	3	8	3	₹.	٦ _	Ę	1	1	ર	2	٦ .
H.		Ę	अ प .	९१७	}				आ.		1	अहा.	अस	चक्ष	द्र.	स.	मि-	सं.	आहा.	साका.
1		ц	q.	टीई		}			डि.)		अचधु.	Ę	अम.		असं	अना.	अना.
		4	अप	ાં					विना						भा			ı		
1		8	q.	६१४																
1	Ì	8	अप.	४।३		<u> </u>	1			·	<u> </u>	t	}	1	}	ļ	f	1	1 1	į

नं. ४ मिथ्याद्यष्टि जीवोंके पर्याप्त-आलाप.

गु. जी. प. प्रा. सं १ ७ ६ प. १० ४ भि. पर्यो ५ ,, ९ ४ ,, ८ ७	३ ४ m' १ २ अस. चक्षु. इ क अचक्षु.	है । सं सं सं सं अ उ ६ २ ,१ २ १ २ २ मे सि. सं आहा साका ६ अम असं अना.

पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहि छल्लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होति।

तेसिं चेव अपज्ञत्तांचे मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्ञत्तांओ पंच अपज्ञत्तांओ चत्तारि अपज्जत्तांओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छतं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

संक्षांप, चारों गातियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पाचों जातियां, पृथिवीकाय-आदि छहीं काय, आहारकद्विक और अपयोप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कवायं, तीनों अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भन्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिध्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपूर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—पक मिथ्यात्व गुणस्थान, अपूर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संबीके छहां अपूर्याप्तियां, असंबी और विकलक्ष योंके पांच अपूर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपूर्याप्तियां, संबीके सात प्राण, असंबीके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, एकेन्द्रियोंके तीन प्राण; चारों संबाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहां काय, औद्गिरकिमिश्र, वैकियकिमिश्र और कार्मण ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कथायें, विभंगाविध-बानके विना दो अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और गुक्ल लेख्या, भावकी अपेक्षा छहां लेखाएं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संविक, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ५ मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त-आलाप.

जणाहारिको, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होति।

सासणसम्माइद्वीणमोघे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज-त्रीओं छ अपज्ञत्तीओं, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, चत्तारि गदीओं, पंचिदिय-जादी, तसकाओं, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओं, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागाह्यजुत्ता अणागाह्यजुत्ता वि अत्थिं।

तेर्सि चेव सासणसम्माइद्वाणं पज्जताणमाघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, बत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गर्दाओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

सासावनसम्यग्दाष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—पक दूसरा गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां: छहों अपर्याप्तियां, ददा प्राण, सात प्राण, बारों संज्ञापं, बारों गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, जसकाय, आहारकांद्रिकके विना तेरह योग, तीनों बेद, बारों कथायं, तीनों अज्ञान, असंयम, बश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रध्य और भावकष छहों लेह्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासाइनसम्यग्दिष्ट जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संज्ञायं, वारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारका द्वेक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, वारों कथायें, तीनों अज्ञान, असंयम, वश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावकप छहों लेदयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी

नं. ६ सासादन सम्यग्हाप्टे जीवोंके सामान्य-आलाप.

₹ #1.	ર	प. ६ प. ६ अ.	90	सं.	ग- ४ १ पंचे	१ त्रसः	श ३ अ। द्विः विना	3	¥	₹	१	2	द. ६	2	१	१ स.	2	ुउ. २ साका. अना.	
----------	---	--------------------	----	-----	----------------------	------------	----------------------------	---	---	---	---	---	------	---	---	----------------	---	---------------------------	--

नं ८

वजुत्ता वि होंति अणागारुवजुत्ता वि ।

तेसि चेत्र अपजताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, एओ जीतसमासो, छ अपजतीओ, मत्त पाण, चतारि सण्णा, तिष्णि गदी णिरयगदीए विणा, पंचिदियजादी तसकाओ, तिष्णि जोग, तिष्णि वेद, चत्तोरि कसाय, विहंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भातेण छ लेस्सा; भनसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होति ।

और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दि जीवों के अपर्याप्त कालसंबन्धी ओवालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और द्वासीच्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संक्षांपं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारकिमश्रके विना अपर्याप्त-संबन्धी तीन योग, तीनों वेद, चारों कथायें, विभंगिश्वानके विना दो अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्कलेख्या, भावसे छहां लेदयाणं भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ७ सासादन सम्यग्दष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

ग	र्जा	प	भा.	स	ग,	្.	का.	या.	व.	事,	লা-	सय.	द.	8	₹.	स -	संक्रिः आ.	ु उ. ∣
			\$ 0														₹ , ₹	
सा.						पंचि	त्रम.	म. ४			अज्ञा	अस	चधु	भा. ६	स,	सासा	सं. आहा.	साका.
)	٩.							व. ४					अचक्षुः				1	अना.
								आ. १										1 1
1								d. ?										<u>' </u>

सासादन सम्यग्दिष्टयोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	ं जी.	d	भा.	सं.	ग	₹.	का	⊢योः	वे	क.	श्चा.	,सय-	द.	ਲੇ.ੁ	म-	सं.	संक्षि	आ.	ु उ.
1	9	६	Ŀ	У	₹ .	1	٤	ા ₹	₹	8	ર	8	ર	5.	8	ş	2	ર	ર
सा	स.अ.	अप.	अप.		न.	पच.	नस	ओं मि.		· .	कुम.	अस.	चक्षु.	ર	भ.	सासा-	सं.	आहा.	साका
1					विना	1		ā,,			कु भू.	,	अर्च	का.				अनाः	अना.
1								कार्भ.				۱ ۱	!	ग्रु∙					
	1	<u> </u>	l	-	<u> </u>							·		मा.६					

सम्मामिन्छाइद्दीणमोघालावे भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जचीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, अण्णाण-मिस्साणि तिण्णि णाणाणि, असंजमो, दो दंसण, दन्य-भाविहि छ लेस्साओ, भविमिद्धिया, सम्मामिन्छत्तं, सण्णिणं।, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

असंजदसम्माइहीणमंध-परूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, दस पाण सत्त पाण, चनारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिद्यजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णिवेद, चनारि कसाय, तिण्णिणाण, अमंजमो, तिण्णि दंसण, द्वा-भावेहिं छ लेम्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि

सम्यग्निश्यादिष्ट जीवंकि ओघालाप कहने पर—एक तीसरा गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तयां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कथायें, अक्षान-मिश्रित आदिके तीनों क्षान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहाँ लेश्यापं, अव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेष—मिश्रगुणस्थानवाले जीव पर्याप्तक ही होते हैं। इसलिय मिश्रगुणस्थानके उक्त सामान्यालाप ही पर्याप्तकके समझना चाहिये।

असंयतसम्यन्दि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दश प्राण, सात प्राण: नारों संझाएं, चारों गातियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, आहारकद्विकके विना तेरह योग, तीनों येद, चारों कपायें, तीन झान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भायक्रप छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशिमक ये तीन

नं. ९ सम्यग्मिथ्थादृष्टियोंके आलापः

गु.	जी	ष- श	।. स	, । ग्र	ŧ.	का.	[यो	. }	वं क.	झा.	संय	द.	हे.	म.	स•	सिंब.	आ.	ਤ.
१	8	६ ₹	0 6	¥	ξ	1	१०	٠ ا ١	₹ ४	₹	१	3	茗.	६ १	1	8	१	ર
सम्य,	सं.		- [ı	पंचे.	त्रस.	म.	8		ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा	६' स∙	सम्य.	स.	आहा.	साका.
	q.			i		-	a .	ر کھ ا	j	अज्ञा.		अच्छु.		1		1		अना.
1			1		1	į	ओ.	₹		मिश्र.						1	,	
1)	,	1	ĺ	i		वे.	٤	ì	}		}		ì			1	·

सम्मत्ताणि, सिण्णिणो, आहारिणो अगाहारिणो, मागारुत्रजुत्ता वा होति अणा-गारुत्रजुत्ता वा'े।

असंजदसम्माइद्वीणं पञ्जताणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद. चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त एक जीघसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकिहक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कथायें, तीन झान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावकप छहों लेखाएं, भव्यसिद्धिक, औपश्मिक आयिक और आयोपशमिक ये तीन सम्यक्तव, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १० असंयतसम्यग्हियोंके सामान्य आलाप

ग. जी. प प्रा. संग इं. का यो. वं. क झा सय. द. छे. भ स. मिझ. आ. उ. १ २ ६ प १० ४ ४ १ १ १३ ३ ४ ३ १ ३ द्र. ६ १ ३ १ १ २ अविस.प ६ अ.७ पचे चस. अपि के सा. ६ भ औं। स. आहा साका स. अ. विना. श्रु विना क्षा. अना अना अव. क्षायो.

नं. ११ असंयतसम्बन्दाष्ट्रयोंके पर्याप्त आलाप.

ागु. जी. प प्रासं,ग इ का यो. वे.क झा.	संय. द हे म. म. सिहि। आ.) उ.
2	१ इ द्र १ ३ १ २ २
	असं के द भा ६ म औ. सं. आहा. माका.
યું, ૪ ક્યું. આં. ૧ અવ	
आ. १ अव व. १	क्षायो.

तेसि चेव अपजनाणमाघपरूवणे भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासा, छ अपजनिओ, सत्त पाण, चतारि मण्णाओ, चतारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जांग. इत्थिवंदेण विणा दा वेद. चतारि कमाय, तिण्णि
णाण, असंजमा, तिण्णि दंसण, द्वेण काउ-मुक्तलेम्पाओ, भावेण छ लेम्माओ;
णिरयादा आगंत्ण मणुम्मेमुप्पण्ण-अमंजदमम्माइद्वीणमण्डलकाले किण्ड-णील-काउलेस्साओं लब्मंति। भविमाद्विया, तिण्णि सम्मत्ताणि, अणादिय-मिच्छाइद्वी वा मादियमिच्छाइदी वा चदुमु वि गदीमु उवसममम्मत्तं घत्ण द्विद्जीवा ण कालं करेति।
तं कथं णव्यदि ति वृत्ते आइग्यि-वयणादो वक्ष्याणदो य णव्यदि। चारित्तमोह उवसामगा
मदा देवेसु उववज्जति ते अस्मिद्ण अपज्जतकाले उवसममम्मत्तं लव्भिद्। वद्गमम्मत्तं
पुण देव-मणुस्मेमु अपजनकाले लव्भिद्, वेदगमम्मत्तंण मह गद-देव-मणुम्माणमण्णोण्णगमणागमण-विरोहाभावादो। कदकरणिजं पद्च वेदगमम्मत्तं तिरिक्य-णेर्ड्याणमपञ्जतकाले लब्भिद्। खड्यसम्मत्तं पि चदुमु वि गर्दामु पुच्वायु-वंधं पद्च अपजनकाले

उन्हीं असंयतसम्यग्हिए जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, मनोबल, वचननल और आनापानके बिना सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, ओदा-रिकिमश्र, वैकियकिमश्र और कार्मण ये तीन योग, खीवेदके बिना दो वेद, चारों कपार्थ, मित, श्रुत और अवधि ये तीन झान, असंयम, चश्रु, अचश्रु और अवधि ये तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेह्या, भावसे छहां लेह्याएं होती हैं। छहां लेह्याएं होनेका यह कारण है कि नरकगितसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले असंयत-सम्यग्दिए जीवोंके अपर्याप्त कालमें कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेह्याएं पायीं जातीं हैं। लेह्याओंके आगे भव्यत्मिद्धक, तीनों सम्यक्त्य होते हैं, क्योंकि, अनादि मिथ्यादिए अथवा सादि मिथ्यादिए जीव चारों ही गित्योंमें उपशाससम्यक्त्यको ग्रहण करके पाये जाते हैं। किन्तु मरणको प्राप्त नहीं होते हैं।

शंका-यह केसे जाना जाता है कि, उपशम-सम्यग्दिष्ट जीव मरण नहीं करते हैं ?

समाधान—आचार्यांके वचनसे और (ध्वा) व्याख्यानसे जाना जाता है कि उपरामसम्यग्दाष्ट जीव मरते नहीं हैं। किन्तु चारित्रमोहके उपराम करने वाले जीव मरते हैं और देवोंमें
उत्पन्न होते हैं, अतः उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमें उपरामसम्यक्त्य पाया जाता है। वेदकसम्यक्त्य तो देव और मनुष्योंके अपर्याप्तकालमें पाया ही जाता है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्यके
साथ मरणको प्राप्त हुए देव और मनुष्योंके परस्पर गमनागमनमें कोई विरोध नहीं पाया
जाता है। कृतकृत्यवेदककी अपेक्षा तो वेदकसम्यक्त्य तिर्यंच और नारकी जीवेंकि अपर्याप्त
कालमें भी पाया जाता है। क्षायिक सम्यक्त्य भी सम्यग्दर्शनके पहले बांधी गई आयुके बंधकी
अपेक्षासे चारों ही गतियोंके अपर्याप्तकालमें पाया जाता है, इसलिये असंयनसम्यग्दिए जीवके
अपर्याप्तकालमें तीनों ही सम्यक्त्य होते हैं।

लन्भदि तेण तिष्णि सम्मत्ताणि अपञ्जतकाले भवंति । मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

संजदामंजदाणमाधालांव मण्णमाणे आत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओं, दम पाण, चनारि मण्णाओं, दो गदीओं, पंचिदियजादी, तमकाओं, णव जोग, तिण्णिवेद, चनारि कमाय, तिण्णि णाण, मंजमामंजम, तिण्णि दंमण, दच्येण छ लेम्माओं, भावण तेउ-पम्म-सुकलेम्माओं; केई मरीर-णिच्यत्तणहमागद-परमाणु-यण्णं घेत्तृण मंजदामंजदादीण भावलेम्मं पर्वयंति । तण्ण घडदे, कुद्री १ दच्य-भावलेम्माणं मेदाभावादे। 'लिम्पतीति लेज्या ' इति वचनच्याघाताच्च । कम्म-लेय-हेढदो जोग-कमाया चेय भाव-लेग्मा ति गेण्डिद्द्यं । भविमादिया, तिण्णि सम्मनाणि,

सम्यत्रत्वके आंग संज्ञिक आहारकः अनाहारक, साकारोपयोगः और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत जीवोंके ओवालाप कहने पर—एक पांचवा गुणस्थान, एक मंबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याण्तियां, दशों प्राण, चारों मंबालं, तिर्थंच और मनुष्य ये दें। गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, बसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग ओर औदारिककाय ये ने। योग, तीनों वेद, चारों कपायें। आदिके तीन जान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा छहों लेदयाएं, भावकी अपेक्षा तेज, पद्म और शुक्केलस्याएं होती हैं।

कितने ही आचार्य, दारीर-रचनाके लिये आये हुए परमाणुआंके वर्णको लेकर संयता-संयतादि गुणस्थानवर्ते जीतिके भावलेक्याका वर्णन करते हैं। किन्तु यह उनका कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, चैमा माननपर द्रव्य और भावलेक्यामें फिर कोई भेद ही नहीं रह जाता है और 'जो लिम्पन करती है उसे लेक्या कहते हैं। इस आगम वचनका व्याचात भी होता है। इसलिये 'कमलेपका कारण होनेसे योग और कपायसे अनुरंजित प्रवृत्ति ही भावलेक्या है। ऐसा अर्थ ब्रहण करना चाहिये।

टेह्याओं के आगे अव्यक्ति हिक, तीनें। सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक साकागेपयोगी ओर

मं १२ असंयत्र सम्यग्हिष्ट्यांके अपूर्याप्त आरापः

सण्बिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा'।

पमत्तसंजदाणमोघालावे भण्ममाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छप्पज्ञत्तीओ, छ अपज्ञत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एककारह जोग, तिण्मि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि मंजम, तिण्मि दंमण, दच्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भयसिद्धिया, तिण्मि सम्प्रताणि, सण्मिणो, आहारिणो, सामाह्यज्ञता वा होंति अणा-गाह्यज्ञता वा

अनाकारोपयोगि होते हैं।

प्रमत्तसंयत जीवेंकि ओद्यालाय कहने पर—एक गुणस्थान, दे जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां दश प्राण. सात प्राण, चारों संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना और परिहारिवगुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं छेदयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क छेदया, भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

विशेषार्थ- यदापि टीकाकारने प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ गुणस्थानके सामान्याः

नं १३

संयनासंयतांके आराप.

η.	जी. प	प्रा	में ग	₹.	का.	્રિયો	बे व	s হ্লা	मग	द.	ैं	ਮ .	Ι Д.	मीञ्च	आ.	3	i
१	१ । ह सं.प	90	¥ २ .स.			म. ४					ब. ६ भा.३		રે !ંજો	, 11	१ आहा	्र साका	l
10°			ia	/ · ·		व ४		থুন		विना.			क्षा.	"		भना	l
					[[]	आ. १	İ	স্ব					क्षाया.				

नं. १४

प्रमत्तसंयत-आलाप

1	ग्	जी.	4	श्रा.	₹.	ग	ġ	का	यो.	वे.	私。	না	मग्र,	₹.	ले.	ਜ .	स.	मंहि.	आ.	। उ.
	₹.	्र स. व	•		K	₹ .	१ पचे.	१ त्रम	११ म. ४	₹					ङ.६ मा.३		্র আ	, स	2	२ साका,
I	71			प .		*1"	17.	-101	ब. ४			विना _व	₹.	विना. विना.	गुम.	414	क्षा.	ξ1.a	असि	अना,
			अप.	अप.					ओं. १ आहा. २				पीर.				क्षाया.		i 1	
Į																		ì		

अप्पमत्तसंजदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, असादावेदणीयस्स उदीरणाभावादो आहार-सण्णा अप्पमत्तसंजदस्स णित्थ । कारणभूद-कम्मोदय-संभवादो उवयारेण भय-मेहुण-परिग्गहसण्णा अत्थि । मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद,

लापोंके अतिरिक्त उनके पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्ररूपसे कथन किया है किर भी छंडे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्र कथन न करके केवल ओघालाप ही कहा गया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि धवलाकारकी दृष्टि विषठ-गितसंबन्धी गुणस्थानोंमें ही पृथक् रूपसे आलापोंके दिखानेकी रही है अन्य अपर्याप्त संबन्धी गुणस्थानोंमें नहीं। गोम्मटसार जीवकाण्डकी टीकामें भी अन्तमें आलापोंका कथन करते हुए टीकाकारने इसी सरणीको ग्रहण किया है। अत्यव मूलमें छंडे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका पृथक् रूपसे नहीं पाया जाना कोई आइचर्यकी बात नहीं है। फिर भी सर्व साधारण पाठकोंके परिज्ञानार्थ वे यहां लिखे जाते हैं।

प्रमत्तसंयतके पर्याप्तसंबन्धी ओघालापके कहनेपर—एक छठा गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दसों प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगित, पंचेन्द्रिय जाति-त्रसकाय, वेकियककाय ओर अपर्याप्तसंबन्धी चारों योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल-झानके विना चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, इत्यसे छहाँ लेक्याएं और भावसे पीत, पद्म और शुक्क, ये तीन लेक्याएं, भव्यासिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपशिमिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त उन्हों प्रमत्तसंयतोंके ओघालाप कहनेपर—एक छठा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, मन, वचनबल ओर इवासो-च्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, एक आहार-मिश्रकाययोग, एक पुरुष वेदः चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेक्या, भावसे पीत, पद्म और शुक्क लेक्या, भव्यसिद्धिक, आयिक और आयोपश्चामिक ये दो सम्यम्दर्शन, संज्ञी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके ओघा लाप कहनेपर—एक सातवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार, भय और मेथुन ये तीन संक्षाएं. होती हैं, क्योंकि, असातावेदनीय कर्मकी उदीरणाका अभाव हो जानेसे अप्रमत्तसंयतके आहारसंक्षा नहीं होती है। किन्तु भय आदि संक्षाओं के कारणभूत कर्मोंका उदय संभव है, इसलिये उपचारसे भय, मेथुन और परिश्रहसंक्षाएं हैं। संक्षाके आगे मनुष्यगित, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कथारों, केवलकानके

चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, निण्णि दंसण, द्व्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओं, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वा'े।

अपुन्यकरणाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, ज्झाणीणमपुन्यकरणाणं भवदु णाम विच्चलस्स अत्थितं भासापज्जत्ति-मण्णिद-पांग्गलखंध-जणिद-सित्त-सन्भावादो । ण पुण विच्जोगो कायजोगो वा इदि १ न, अन्तर्जन्पप्रयत्नस्य कायगतस्क्ष्मप्रयत्नस्य च तत्र सन्चात् । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, परिहारमुद्धिसंजमेण विणा दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ,

विना चार ज्ञान, सामायिक. छेदोपस्थापना और परिहारविद्युद्धि ये तीन संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यंस छहाँ लेक्याएं और भावसे तेज पद्म और जुक्कलेक्या, भव्यसिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपरामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ता जीवोंके ओवालाप कहनेपर—एक आठवां गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्राके विना शेष तीन संक्राएं-मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग, एक ओदारिक, क्राययोग ये नौ योग होते हैं।

शंका—ध्यानमें लीन अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ता जीवंकि वचनबलका सद्भाव भले ही गृहा आवे, क्योंकि, भाषापर्याप्तिनामक पोद्गलिक स्कन्धोंसे उत्पन्न हुई शक्तिका उनके सद्भाव पाया जाता है किन्तु उनके वचनयोग या काययोगका सद्भाव नहीं मानना चाहिए?

समाधान— नहीं, क्योंकि, ध्यान-अबस्थामें भी अन्तर्जरूपके लिये प्रयत्नरूप वचन-योग और कायगत-स्थ्म-प्रयत्नरूप काययोगका सत्त्व अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके पाया ही जाता है इसलिये वहां वचनयोग और काययोग भी संभव हैं।

योगोंके आंगे तीनों वेद, चारों कपायें केवल झानके विना शेष चार झान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन द्रव्यसे छहों लेस्याएं, भावसे

नं. १'र अप्रमत्तसंयतींके आलाप.

गु	जो.	ф.	भा.	सं.	ग्.	₹.	का.	यो.	व.	事.	লা.	सय.	হ	ਰ,	1T.	म_	सिंज	आ	3
9	ų	Ę	ξo	₹.	9	۶	ሂ	8	3	४	4	₹	₹	Ę	У	3	2	Ŗ	ર
яд.	सं प			आहा.	म.	q	वस.	म्, ४			4.	स्≀.	Œ,	寻。	ਮ,	आ.	म.	÷	साका.
				विना,				व. ४			विना.	7/1	विना	٠		ξ Π ,		<u>8</u>	अना.
1								आ. १				ર્વાદ.		भा		क्षाया			
1														भुस,					
															Ì				

भावेण सुक्कलेस्याः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

पढम-अणियद्दीणं भण्ममाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज त्तीओ, दस पाण, दो मण्णा, अपुन्वकरणस्य चरिम-समए भयस्य उदीरणोदयो णहो तेण भयसण्णा णित्थ । मणुभगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंगण, दन्वेण छ लेस्माओ, भावेण सुक्क-लेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वां ।

केवल शुक्कलेख्या, भव्यांसाद्धिक, आँपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्तवः संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ता जीवोंके ओवालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, मेथुन और परिग्रह ये दो संक्षाएं होती हैं। दो संक्षाणं होने का कारण यह है कि अपूर्वकरण गुणस्थानके अनितम समयमें भयकी उदीरणा तथा उद्य नष्ट हो गया है, इसलिये यहांपर भय-रिक्षा नहीं है। उसके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने। योग, तीनों वेद, चारों कषायें, केवलकानके विना चार क्षान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलद्शीनके विना तीन दर्शन, इव्यसे छहीं लेदयाएं, भावसे शुक्लदेखाः भव्यसिद्धिक, आपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १६

अपूर्वकरण-आलापः

ग	र्जा	4	яŢ.	ч.	11	7	和	यें।.	ā.	Ŧ	111	सय	e_{\star}^{τ}	d,	₫.	स	र्माज	आ.	उ.
1 4	৩	Ę						v,	٠	1	૪	ર	₹	Ŧ	. * _	٠ ﴿	1	ş	
E. E.	ਸ. ਧ.			आहा.	म	বা	4	स. ४ व ४			क. चित्र	माः	यन ।	मा-१ ामु	41	: <u>:</u>		आहा.	साका.
15	Ħ.			वन			11	વ ઢ સંદર			1यन।	9.	ю	1 7		· 5			अना.
													डि			• •	ı		

नं. १७

अनिवृत्तिकरण प्रथमभाग-आलाप.

り	जी	q	प्रा	मं. ग	₹.	का.	यं।	ব	<i>{</i> 2	न्ता	मय	₹.	丙	ब. म	साज्ञ	आ.	उ.
			80	€ ₹	7	4	0,	3	(8)	6	2	-	Ę	1 K	१	9	٦ -
र्आन	मप		í	म. म	पच.	त्रय	म ४			F	सा.	F T	σ_{\bullet}	म आ	, N.	आहा.	साका.
я.				परि			ત્ર ૪			विनाः	5.	विना	,	क्षा		1	आना.
भा.			1				अं।. १		j				41				
<u> </u>									I				1			ļ	

विदिय-द्वाण-द्विद-अणियद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दम पाण, परिग्रहसण्णा, अंतरकरणं काऊण पुणा अंतोमुहुत्तं गंतूण वेदोदओ णहा तेण मेहुणसण्णा णित्थ । मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण. दो संजम, तिण्णि दंसण, द्वेषण छ तेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तादिय-द्वाण-द्विद-आणियद्वीणं भण्णमाणं अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, पिरगहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, तिाण्णि कसाय, वेदेसु खीणेसु पुणा अंतोम्रहुतं गंतृण कोधोदयो णस्सदि तेण कोधकसाओ णित्थ । चत्तारि णाण, दो मंजम, तिण्णि

अनिवृत्तिकरण गुणम्थानके डितीय भागवर्ता जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक नौषां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशां प्राण, परिष्रहसंक्षा होती है। एक परिष्रह संक्षाके होनेका यह कारण है कि अन्तरकरण करनेके अनन्तर अन्तर्मुहर्त जाकर वेदका उदय नए हो जाता है, इसलिये डितीय भागवर्ता जीवके मेथुनसंक्षा नहीं रहती है। संक्षा आलापके आगे मनुष्यगति, पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त ना योग, अपगतवेद, चारों कथायें, केवलकानके विना चार कान, सामायिक, छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्यमे छहां लेदयाएं और भावसे शुक्रलेदया, भव्यसिद्धिक, औप-शामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्य, संज्ञी, आहारी, साकागेपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीयभागवर्ता जीवोंके ओवालाप कहनेपर--एक नीवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण. पिरग्रहसंज्ञा. मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, पूर्वोक्त नो योग, कोधकपायके विना तीन कषायें होती हैं। तीन कपायोंके होनेका यह कारण है कि तीनों वेदोंके क्षय हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहृते जाकर कोधकपायका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये इस भागमें कोधकपाय नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार क्षान, सामायिक और

नं. १८ अनिवृत्तिकरण-द्वितीयभाग-आलाप.

7	म. पचे तम म. ४	ा ४ ४ २ ३ ६ १	. म मिहा आ। उ. २ १ / २ . ओ. म. आहा. साका क्षा अना.
भा-	औ.?	माः	

दंसण, दव्येण छ लेस्साओ, मायेण सुक्कलेस्सा; भविमिद्धिया, दो सम्मर्च, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

चउ-हाण-दिद-अणियद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छप्पञ्जतीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, कोधोदए विणहे पुणो अंतोम्रहुत्तं गंतृण माणोदओ वि णस्सदि तेण माणकसाओ तत्थ णित्थि। चत्तारि णाण, दो मंजम, तिण्णि दंसण, दक्तेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवमिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा ।

छेदोपस्थापना थे दो संयम. केवलदर्शनके विना तीन दर्शन. द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं. भावसे गुक्तलेक्या, भव्यासिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृतिकः ण गुणस्थानके चतुर्थभागवर्तः जीवांके ओघालाप कहने पर—एक नैवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसभास, छहां पर्याप्तियां, दशां प्राण, एक परिग्रह संक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, पूर्वाक्त नै। योग, अपगतवेद, माया और लोभ ये दे। कपायें होती हैं। दो कपायों के होनेका यह कारण है कि कोधकषायके उदय नए होने पर पुनः एक अन्तर्मुहर्त आगे जाकर मानकपायका उदय भी नए हो जाता है इसलिये मानकपाय इस भागवर्ती जीवोंके नहीं है। आगे केवलबानके विना चार बान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, ह्य्यसे छहां लेदयाणं, भावसे शुक्रलेदया, भव्य-सिद्धिक, औपश्चामिक और आधिक ये दो सम्यक्त्य, संबिक्त, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १९	બ નિવ	बुक्तिक रण−तृतीयभाग− आ	लाप.
ग. जी-। प-	्रा⊣सं ग इ. का	यो वे.क. ज्ञानय	दः । छ। ग सः सिक्षः। आः । उ.
१ १ ६ अनि सं पः मृः भाः	प्राप्त कर	र कि कि सा. मा अ हि हि बिना छे. बा अ कि हि बिना छे. ओ. १ हि	३ ६ १ २ १ १ २ कंद. ड भ आ स. आहा साका विना १। क्षा अना मार्

नं, २०	आने श्री	तकरण चतुर्थभ	ाग−आळाप.			
ा गः जीः प ∣त्रा । स	पं.∣ग. इ का यो.	वे कि. ज्ञा	सय! द. हि.	भ ∤सः 'माञ्जे	आ. उ	·_
१ १ ६ १० (१ अनि संप. प चनु. सा	्री १ १ ९ - म. पचे. जमा म. १ व. ४ अ१	ं हिं लोभ. 'विना	र ३ ६ सा. के द. इ. . क्रे. विना १	१ २ १ म√ओं स. क्षा.		२ काः नाः

पंचम-द्वाण-हिद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्ञत्तीओ, दम पाण, परिग्गहमण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, लोभकमाओ, माणोदय विणद्वे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतृण माओदओ वि णम्मिद् तेण मायाकमाओ तत्थ णिथि। चत्तारि णाण, दो मंजम, तिण्णि दंसण, द्वेषण छ लेस्माओ, भावेण मुक्कलेम्सा; भविमिद्विया, दो सम्मत्तं, मिण्णिणो, आहारिणो, सागाहवज्ञत्ता होति अणागास्वज्ञता वा ।

सुहमसांपराइयाणमोधालावे भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एअं। जीवसमासां, छ पञ्जतीओ, दम पाण, सुहमपरिग्गहमण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, अवगदवेदी, सुहमले।भक्ष्माओ, चनारि णाण, सुहमसांपराइयसुद्धिमंजमी, तिण्णि दंमण, दच्वेण छ लेग्साओ, भावेण शुक्कलेस्माः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवाहि जीवोंके ओवालाए कहनेएर—एक नौवां गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, द्र्यों प्राण, परिश्रहसंबा, मनुष्यगति, पंचीन्द्रयज्ञाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतंबद, लोभकपाय हो। लोभकपाय होनका यह कारण है कि मानकपायके उद्यके नह हो जाने पर एकः एक अन्तर्मृहत् अभे जाकर माया-कपायका उद्य भी नष्ट हो जाता है, इसिलिए मायाकपाय उस भागमें नहीं है। जांग केवलबानके विना चार ज्ञान, सामाधिक और छेदोप खाएना ये दे। संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेदयाएं, भावसे शुक्रलेद्या, भव्यसिंह ह, जीपश्चिक और आधिक ये दे। सम्यक्त्य, संशिक्त, आहारक, साकारोपयोर्गा और अनाकारोपयोर्गा होते हैं।

स्थमसाम्पाय गुणस्थानवर्ता जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक दशवां गुणस्थान. एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तिनां, इशो प्राण, स्थम पित्रहसंक्षा, मनुष्यमति, प्रचेन्द्रियज्ञाति, वसकाय, चारो मनोयोग, चारो तका ोग और औदािक काययोग थे ने योग, अपगतवेद, गुरुम लेभकाय, केथलज्ञानक विना चार आत, स्थमसाम्परायाविद्यक्ति संयम, केवलदर्शनक विना तीन दर्शन, दृष्यसे छहों लेदयाण, शायसे गुक्रलेद्या, भव्यसिद्धिक,

नं. २१ अनिवृत्तिकरण-पंचमभाग-आलापः

η.	जी.	р	71	-1													मनि	47.	_3
१	१	Ę	10		7	۶	۶	13		70	ો 🗸					_	۶.	8	ર
अनि -	म. प			L,		T	74	11	ć	E	Ŧ						स.	आहा	⊹साका
पच						D		, न	8	জ	विना	3	विना	ξ		क्षा			अमा.
मा								आ	7					सा					
											l								

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रजुत्ता होति अणागारुत्रजुत्ता वा ी

उवसंतकसायाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; केण कारणेण सुक्कलेस्सा? कम्म-णोकम्म-लेब-णिमित्त-जोगो अत्थि ति। भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

औपदामिक और आधिक ये दो सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उपशान्तकपाय गुणस्थानवर्ता जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक ग्यारहवां गुणस्थान, एक मंद्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंद्रा होती है। मंद्राके उपशान्त होने का यह कारण है कि यहांपर मोहनीय कर्मका पूर्ण उपशाम रहता है, इसलिये उसके निमित्तसे होनेवाली संद्राएं भी उपशान्त ही रहती हैं, अतएय यहां उपशान्तसंद्रा कहीं। आंग मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और ओहारिककाययोग ये नें। योग, अपगतवेद, उपशान्तकपाय, केवलद्रानके विना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे शुद्ध-लेश्या होती है।

र्शका — जब कि इस गुणस्थानमें कपायोंका उदय नहीं पाया जाता है, तो किर यहां शुक्क लेदया किस कारणसे कही ?

ममाधान — यहां पर कर्म और नो कर्मके छेपके निमित्तभृत योगका सद्भाध पाया जाता है, इसलिये शुक्कलेस्या कही है।

रेट्यांके आंग भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दी सम्यक्ष, संक्रिक,

ने. २२

स्क्ष्मसाम्पराय-आळाप

ग.∣जी । प	i. ni.	村.	ग	\$	का	यो	-1	व	क.	झा	सय.	₹.	ਲੇ-	म.	स.	संबि	आ ।	_ਰ
न १ ह	90	Ł	! *	₹	2	9	-	G	٧	8	2	₹	६	2	2	8	2	ર
म्, स.प		<i>न</i> ्प	H	वाः	pr i	म	X		मृ.छो.	के.	स्थम.	के.द	3	म∙	अ।-	स.	आहा-	साका.
	1			5	ন					बिना	ı	विना.	l		क्षा.			अनाकाः
						आ.	₹ ;		[{		भा	ļ	ļ		}	<u> </u>
											1		गु		l			1
1 1	. _	}	_ {		1 1		1	_			1	ı	_	1		1	<u> </u>	

वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा व

खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासा, छ पजनीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादमुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ भावेण मुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, खइयसम्मर्च, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

सर्जागिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवनमामा, छ पञ्जनिधो,

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयागी होते हैं।

श्लीणकपाय गुणस्थानवर्ती जीवेंकि ओघालाप कहने पर—एक बारहवां गुणस्थान, एक संही-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्योप्तियां, दशों प्राण, श्लीणसंह्रा हे।ति हे। श्लीणसंह्रा होती हे। श्लीणसंह्रा होती हे। श्लीणसंह्रा होतेका यह कारण है कि कपायोंका यहां पर सर्वथा श्रय हो जाता है, इसिलये संक्षाओंका श्लीण हो जाता स्वाभाविक ही है। आग मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, त्रारों मनोयोग, खारों वचनयोग और औदान्किकाययोग ये नो योग, अपगतवेद, श्लीणकपाय, केवलह्रानके विना चार ह्रान, यथास्यातशुद्धिसंयम, केवलद्र्शानके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्ललेश्या, भन्यसिद्धिक, श्लायिक सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सयोगिकेयिलयोंके ओघालाप कहने पर—एक तेरहवां गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संब्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अर्पयाप्तयां होती है।

मं. २३

उपशान्तकपाय-भारताप.

ग	जी.	₫.	গ্না.	मे	ग	\$	郡1。	्याः	वे.	客	লা.	सथ	द	.ਲ.	भ	मं	संज्ञि	. জা.	ਤ.
34. ~	Ħ. q. ~	EV.	20	34° 0	१ म	१	१ त्रस	र म. ४ व. ४ औ.९	अपन	० ! अक	ें क. वि	৭ যগা	् _३ के द. विना	इ. ६ मा श		્ર આ ક્લા.		ं १ आहा.	२ साका. अना
								į							ı	[1	

तं. २४

श्रीणकषाय~आलापः

गु. ज	Ì. '	q	श्रा.	सं	ग्.	₹.	4 71.	या.	व	क	त्रा	सय	<u>द</u>	ć	5 .	भ	स	साज्ञ	आ	उ ।
			90	0	8	9	1	0,	0	•	8	9	્ર	द्र	Ę	9	*	₹.	8	ર
B 5	÷.			भी.	म्.	ď	त्रेस,	म. ४	듈.	₽.	क .	यथा	के द. विना	भा	স্	भ	क्षा	सं.	आ	साका-
1 15 E				!				व्. ४	69	<u> </u>	विना		विना							अना.
								ओं. १												i
)																		í

छ अपजनीओ, केवली कवाड-पद्र-लोगपृरण-गओ पजनो अपजनो वा १ ण ताव पजनो, 'ओरालियमिस्सकायजोगो अपजनाणं' इच्चेदेण सुनेण तस्स अपजनसिद्धीदो । सजोगि मोन् जण्णे ओरालियमिस्सकायजोगिणो अपज्ञना 'सम्मामिच्छाइहि-संजदा-संजद-संजदहाणे णियमा पजनां' नि सुन्त-णिहेसादो । ण, आहारमिस्सकायजोग-पमन्तमंजदाणं पि पजन्तयन-प्रसंगादो । ण च एवं, 'आहारमिस्सकायजोगो अपजनाणंं' नि सुनेण तस्स अपजनभाव-सिद्धीदो । अणवगासनादो एदेण सुनेण

शंका — कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवली पर्याप्त हैं या अपर्याप्त ?

समाधान--उन्हें पर्याप्त तो माना नहीं जा सकता, क्योंकि, 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रसे उनके अपर्याप्तपना सिद्ध है, इसलिये वे अपर्याप्तक ही हैं।

शंका — 'सम्याग्मध्यादृष्टि, संयतासंयत और संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इसप्रकार सूत्र-निर्देश होनेके कारण यही सिद्ध होता है कि सयोगीको छोड़कर अन्य औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक हैं। यहां शंकाकारका यह अभिप्राय है कि औदारिकमिश्रयोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं यह सामान्य विधि है और सम्याग्मध्यादिष्टि संयतासंयत और संयत जीव पर्याप्तक होते हैं यह विशेष विधि है और संयतोंमें सयोगियोंका अन्तर्भाव हो ही जाना है अतएव विशेषविधिना सामान्य-विधिवीध्यते दे इस नियमके अनुसार उक्त विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित हो जाती है जिससे कपाटादि समुद्धानगत केयलीको अपर्याप्त सिद्ध करना असंभव है ?

समाधान — ऐसा नहीं हैं। वयोंकि, यदि 'विशेष-विधिसं सामान्य-विधि बाधित होती हैं ' इस नियमके अनुसार 'औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं ' यह सामान्य-विधि 'सम्यग्मिध्यादृष्टि आदि पर्याप्तक होते हैं ' इससे बाधी जाती है तो आहारमिश्रकाययोगवाले प्रमत्तसंयतोंको भी पर्याप्तक ही मानना पड़ेगा, क्योंकि, वे भी संयत हैं। किंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, 'आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रसं वे अपर्याप्तक ही सिद्ध होते हैं।

शंका-- आहारमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है ' यह सूत्र अनवकाश है,

१ जी. सं म्. ७६. २ जी. स. मृ. ९०. ३ जी. सं. स्. ७८.

४ अन्तरंगादण्यपवादो वर्लायान् । परि शे. पृ. ३५८. येन नाप्राप्त यो विधिरार-यतं स तस्य वाधको भवति । येन नाप्राप्ते इत्यस्य यक्तर्तृकावज्यकप्राप्ताविक्यथां नज्द्वयस्य प्रकृतार्थदादर्वेनोधकत्वात् । एवं च विशेषशास्त्रोदेश्यविशेषधर्माविक्छिन्तृतिमामान्यधर्माविक्छिन्नोद्देश्यकशास्त्रस्य विशेषशास्त्रण वाधि । तदप्राप्तियोग्येऽचारि-तार्यक्षेतस्य वाधकत्वे वीजम् । परि शे. ३५९, ३६८.

'संजद्द्वाणे णियमा पजत्ता'' ति एदं मुनं बाहिजादि, 'ओगलियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं'' ति एदेण ण बाहिज्जदि सावगासत्तेण बलाभावादे। । ण, 'संजद्द्वाणे णियमा पज्जत्ता'' ति एदम्य वि सुत्तम्स मावगासत्तदंसणादो। मजोगिद्वाणं दे सु वि सुत्तेसु मावगासेसु जुगवं दुक्केसु 'संजद्द्वाणे णियमा पज्जत्ता''। त एदेण सुत्तेण ओरालियमिस्मकायजोगो अपज्जत्ताणं 'ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि परत्तादों। ण, परसदो इद्ववाचओं ति घेण्यमाणे पुक्वेण बाहिज्जदि ति अणेयंतियादो। । णियम-सदो

अर्थात् इस स्थकी प्रश्निक लिये कोई दूसरा स्थल नहीं है, अतः इस स्थस ' संयतेंक स्थानमें जीय नियमसे पर्याप्तक ही होते हैं ' यह स्थान बाधा जाता है। किंतु औदारिक-मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है ' इस स्थासे ' संयतोंके स्थान में जीव पर्याप्तक ही होते हैं ' यह स्थान बहां बाधा जाता, वयोंकि. ' औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' यह स्थान नहीं बाधा जाता, वयोंकि. ' औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' यह स्थान सावकाश होने के कारण, अर्थात्. इस स्थाकी प्रवृत्तिक लिये संयोगियोंका छोड़कर अन्य स्थल भी होने के कारण, निर्वल है अतः आहारक समुद्धातगत जीवोंके जिसम्बक्तर अपर्याप्तपना सिद्ध किया जा सकता है उसप्रकार समुद्धातगत केविल्योंके नहीं किया जा सकता है ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, 'संयतोंक स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होता है' यह मृत भी सावकारा देखा जाता है, अर्थान, स्योगीको छोड़कर अन्य स्थलमें भी इस सुत्रकी प्रवृत्ति देखी जाती है, अतः निर्वल है और इसलिय 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है' इस सुत्रकी प्रवृत्तिकों नहीं रोक सकता है।

शंका — पूर्वांक समाधानसं यद्यपि यह सिद्ध हो गया कि पूर्वोक्त दोनों मूत्र सायकाश होते हुए भी सयोगी गुजस्थानमें युगपत् प्राप्त हैं, फिर भी 'परो विधिर्बाधकों भवति' अर्थान, पर विधि बाधक होती हैं, इस नियमके अनुसार 'संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं' इस स्वकं द्वारा 'ओदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंक ही होता है' यह सुत्र बाधा जाता है, क्योंकि, यह सुत्र पर है?

समाधान नहीं, क्योंकि, 'परो विधिबीधको भर्वात ' इस नियममें पर शब्द इष्ट अर्थात् अभिषेत , अर्थका वाचक है, पर शब्दका ऐसा अर्थ टेनेपर जिसप्रकार ' संयतस्थानमें जीय नियमसे पर्याप्तक होते हैं ' इस सुत्रसे ' औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकों के होता

१ जी. स सृ. ९०. २ जी. स. सृ. ७८.

३ अपनादो यदन्यत्र चरितार्थस्नाहः अन्तरंगेण वाध्यते निरवकाशत्वरूपस्य वाधकन्ववीजस्याभावात । परि. शे. पृ. ३८६.

४ पूर्वात्परं बळवत विप्रतिषेधकास्तात (विप्रतिषेधे पर कार्यमिति स्त्रात) पूर्वस्य पर बाधकमिति यावत । परि. क्षे. पृ. २३७.

२ विप्रतिषेधम् त्रस्थपरश्चन्दस्येष्टवाचिन्वम । परि. शे. पृ. २४%.

सप्पओजणो णिष्पओजणो ? ण विदिय-पबलो, पुष्फयंत-वयण-विणिग्गयस्स णिष्फल्स-विरोह(दो । ण चेद्रस सुत्तस्स णिचर्त-पयासण-फलं, णियम-सद्द-विदिश्त-सुत्ताणमणिचत-प्पमंगादो । ण च एवं, 'ओरालियकायजोगो पज्जत्ताणं' ति सुत्ते णियमाभावेण अपज्जत्तेमु वि ओरालियकायजोगस्स अत्थित्त-प्पसंगादो । तदो णियम-सद्दो णावओ । अण्णहा अणत्थयत्त-प्पसंगादो । किमेदेण जाणाविज्जिद ? 'सम्मामिच्छाइडि-संजदासंजद-संजद-हाणे णियमा पज्जत्ता ' ति एदं मुत्तमणिचिमिदि तेण उत्तरसरीरमुद्दाविद-सम्मामिच्छाइडि-संजदासंजद संजदाल कवाड-पद्र-लोगपूरण-गद-सजोगीणं च सिद्धम-

है 'यह सूत्र बाधा जाता है. उसीप्रकार पूर्व अर्थात् ' औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकींके होता है 'इस सृत्रसं संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, यह सृत्र भी बाधा जाता है, अतः शंकाकारके प्वीक्त कथनमें अनेकान्त दोष आ जाता है।

रंका — जब कि कपाट-समुद्धातगतं कवली-अवस्थामें अभिन्नेत होनेके कारण 'औदारिक' मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' यह सूत्र पर है तो 'संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इस सूत्रमें आये हुए नियम शब्दकी क्या सार्थकता रह गई ? और ऐसी अवस्थामें यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि उक्त सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द सत्रयोजन है कि निष्ययोजन ?

समाधान — इन दोनों विकल्पोंमेंसे दूसरा विकल्प तो माना नहीं जा सकता है, क्योंकि, पुण्यदन्तके वचनसे निकले हुए तत्त्वमें निर्धकताका होना विरुद्ध है। और सूत्रकी नित्यताका प्रकाशन करना भी नियम शब्दका फल नहीं हो सकता है, क्योंकि, ऐसा माननेपर जिन सूत्रोंमें नियम शब्द नहीं पाया जाता है उन्हें अनित्यताका प्रसंग आ जायगा। परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर ' आंदारिककाययोग पर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रमें नियम शब्दका अभाव होनेसे अपर्याप्तकोंमें भी आंदारिककाययोगके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होगा, जो कि इष्ट नहीं है। अतः सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द बापक है नियामक नहीं। यहि ऐसा न माना जाय तो उसको अनर्थकपनेका प्रसंग आ जायगा।

शंका - इस नियम शब्दके हारा क्या शापित होता है?

समाधान — इससे यह क्षापित होता है कि 'सम्यग्मिध्याहिष्ट संयतासंयत और संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं' यह सूत्र अनित्य है। अपने विषयमें सर्वत्र समान प्रश्निका नाम नित्यता है और अपने विषयमें ही कहीं प्रश्नित हो और कहीं न हो इसका नाम अनित्यता है। इससे उत्तरश्रीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिध्याहिष्ट, और संयतासंयतोंके तथा कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवलियोंके अपर्याप्तपना

१ कताकतप्रसंगि नित्य तद्विपरातमनित्यम् । परि. शे. पू. २५०.

२ जी. सं. स्. ७६. - ३ जी. सं. स्. ९०.

४ प्रतिषु ' मि तेण ' इति पाटः ।

पञ्जसं ।

अद्वारद्व सरीरी अपज्जत्तो णाम । ण च सजांगिम्म सरीर-पट्टवर्णमित्थि, तदो ण तस्त अपज्जत्तिमिदि ण, छ-पज्जात्ति-सत्ति-विज्ञियम्म अपज्जत्त-ववएमादो । छिहि इंदि-एहि विणा चत्तारि पाणा दो वा । द्व्वेदियाणं णिप्पत्ति पड्डच के वि दस पाणे भणंति । तण्ण घडदे । इदो १ भाविंदियाभावादो । भाविंदियं णाम पंचण्हिमिदियाणं खओवसमो । ण सो खीणावरणे आत्थि । अभ द्व्विदियम्स जिद् गहणं कीरिद तो सण्भीणमपज्जत्त-काले सत्त पाणा पिंडिद्ण दो चेव पाणा भवंति, पंचण्हं द्व्वेदियाणमभावादो । तम्हा

सिद्ध हो जाता है।

विशेषार्थ— सम्मामिच्छाद्दाहे-संजदासंजद संजद-हाण णियमा पज्जता ' इस म्हको अनित्य बतलाकर उत्तरदारीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिध्यादृष्टि और संयतासंयतोंको भो जो अपर्याप्तक सिद्ध किया है, इससे ऐसा प्रतीत होना है कि इस कथनसे टीकाकारका यह अभिमाय होगा कि नीसरे गुणस्थानमें उत्तरचैक्षियक और उत्तर-औद्दारिक नथा पांचयें गुणस्थानमें उत्तर-औद्दारिकको उत्पन्न करनेवाले जीव जबतक उस उत्तर-शादिकी पूर्णना नहीं कर लेते हैं तबतक अपर्याप्तक कहे गये हैं। जिसप्रकार तरहवें गुणस्थानमें पर्याप्त नामकर्मका उदय रहते हुए और दारीरकी पूर्णता होने हुए भी योगकी अपूर्णनासे जीव अपर्याप्तक कहा जाता है, उसीप्रकार यहांपर भी पर्याप्त नामकर्मका उदय रहते हुए योगकी पूर्णता रहते हुए और मूल दारीरकी भी पूर्णता रहते हुए केवल उत्तर दारीरकी अपूर्णनासे अपर्याप्तक कहा गया है।

शंका — जिसका आरंभ किया हुआ शरीर अर्ध अर्थान अपूर्ण है उसे अपयीप्त कहते हैं। परंतु सयोगी-अवस्थामें शरीरका आरंभ तो होता नहीं, अतः सयोगीके अपयीप्तपना नहीं बन सकता है?

समाधान — नहीं, क्योंकि, कपाटादि समुद्धात-अवस्थामें सयोगी छह पर्याप्तिरूप शक्तिसे रहित होते हैं, अतएव उन्हें अपर्याप्त कहा है।

सयोगी जिनके पांच भावेन्द्रियां और भावमन नहीं रहता है, अतः इन छहके विना चार प्राण पाये जाते हैं। तथा समुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें वचनवल और द्वासीच्छ्वासका भभाव हो जानेसे. अथवा तेरहवें गुणम्थानके अन्तमें आयु और काय ये दो ही प्राण पाये जाते हैं। परंतु कितने ही आचार्य द्वयेन्द्रियोंकी पूर्णताकी अपेक्षा दश प्राण कहते हैं: परंतु उनका पेसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, स्योगी जिनके भावेन्द्रियां नहीं पाई जाती हैं। पांचों इन्द्रियावरण कमींके क्षयोपशमको भावेन्द्रिय कहते हैं। परंतु जिनका आवरणकर्म समूल नष्ट हो गया है उनके वह क्षयोपशम नहीं होता है। और यदि प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका ही प्रहण किया जावे तो संही जीवोंके अपर्याप्त कालमें सात प्राणोंक स्थानपर कुल दो ही प्राण कहे जायंगे. क्योंकि, उनके द्वयेद्रियोंका अभाव होता है। अतः यह सिद्ध हुआ कि सयोगी जिनके चार

१ प्रतिषु ' सरीरादवण ' इति पाठः । २ प्रतिषु ' दःवेदियाणि सविते ' इति पाठः ।

सजोगिकेवित्म चत्ति पाणा दो पाणा वा । स्वीणमण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग. सच्चमणजोगो असच्चमोसमणजोगो सच्चविजोगो असच्च-मोसविजोगो ओरालियकायजोगो कवाडगदम्स ओरालियिमस्सकायजोगो पदर-लोग-पूरणेमु कम्मइयकायजोगो. एवं सजोगिकेवितस्स सत्त जोगा मवंति । अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाकसादमुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वण छ लेम्साओ, भावेण मुक्कलेस्सा; भविसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागोरिहं जुगवदुवजुत्ता होति ।

अज्ञोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ पजा-त्रीओ, पुव्विल्ल-पज्जत्तीओ तहा चेव द्विदाओ ति छ पज्जत्तीओ भणिदाओ । ण पुण पज्जत्ती-जणिद-कज्जमन्थि । आउअ-पाणो एकको चेव । कण कारणेण ? ण ताव णाणा-

अथवा दो ही प्राण होते हैं। प्राण आलापके आगे क्षीण संग्रा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, घमकाय, सान योग होते हैं। वे मान योग कंनम हैं? आगे इसीका स्पष्टीकरण करने हैं— मन्यमनीयोग, अनुभय-मनीयोग, मन्यवचनयोग, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, कपाट. समुद्धानगन केवलीके औदारिकमिश्रकाययोग और प्रतर तथा लोकपूरण समुद्धातगन केवलीके कार्मणकाययोग इस प्रकार सयोगिकेवलीके सान योग होते हैं। योग आलापके आगे अपगतिच्द, अकपाय, केवलाक, प्रधारपतिच्छिक सायिक सम्पक्त, केवल्दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेह्यापं, और भावले जुक्कलेह्या. भव्यमिद्धिक, क्षायिक सम्पक्त, संशी और असंशी विकलासे रहिन, आहारी, अनाहारी: साकार तथा अनाकार इन दोनें। उपयोगोंसे गुगपन उपयुक्त होते हैं।

अयोगिकेवली गुणस्थानवर्ता जीवेंकि ओघालाप कहनेपर—एक चौद्द्यां गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियों होती हैं। छहाँ पर्याप्तियोंके होतेका यह कारण है कि पूर्वसे आई हुई पर्याप्तियों तथेव स्थित रहती हैं, इसलिये यहांपर छहाँ पर्याप्तियां कही गई हैं। किन्तु यहांपर पर्याप्तिजनित कोई कार्य नहीं होता है. अतः आयुनामक एक ही प्राण होता है।

शंका--एक आयुपाणके होनेका क्या कारण है?

म्म्।ध्रान्-अानावरणकर्मके अयोपदामस्वरूप पांच द्रान्द्र्य प्राण ते। अयोगकेवळीके

सं, २५

सयोगिकेवर्लाके आलाप.

गु	जी.	4	श्रा.	स.	ग	₡.	का.	र्या.	बे.	玉.	នា.	मग्र.	₹.	å,	н.	म,	सांब.	31.	3.
1	ર	Ę	113	0	<	₹	8	৩	9	0	१	Ł	2	5,€	7	ŧ	0	2	ર
10	म प म अ.	ч.		b	а.	पंचे	नस	म. ॰		غما	本.	यशा	载。表。	मा,∗	й.	आ.	अन.	आहा.	साका.
μĈ	म अ.	Ę		Ē				व. २	अर्व	22				গ,			1	अना.	२ साकाः अनाः
		अव		30				ओ, २										1	यु. उ.
1								का. र									i		
																	1	1	

वरण-खओवसम-लक्खण-पंचिदियपाणा तत्थ संति, खीणावरणे खओवसमाभावादो। आणा-वाण-भासा-मणपाणा वि णत्थि, पज्जित्त-जिणद-पाण-सिण्णद-सित्त-अभावादो। ण सरीर-बलपाणो वि अत्थि, सरीरोदय-जिणद-कम्म-णोकम्मागमाभावादो। तदो एक्को चेव पाणो। उत्रयारमस्सिऊण एक्को वा छ वा सत्त वा पाणा भवंति। एस पाणो पुण

हैं नहीं, क्योंकि, झानावरणादि कर्मोंके क्षय हो जानेपर क्षयोपशमका अभाव पाया जाता है। इसीप्रकार आनापान, भाषा, और मनःप्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि, पर्याप्तिजानित प्राण-संझावाली शक्तिका उनके अभाव है। उसीप्रकार उनके कायबल नामका भी प्राण नहीं है. क्योंकि, उनके शरीर नामकर्मके उदय-जानित कर्म और नोकर्मोंक आगमनका अभाव है। इस-लिये अयोगकेवलीके एक आयुप्राण ही होता है ऐसा समझना चाहिये। किन्तु उपचारका आश्रय लेकर उनके एक प्राण, छह प्राण अथवा सात प्राण भी होते हैं।

विशेषार्थ- वास्तवमें अयोगी जिनके एक आयु प्राण ही होता है फिर भी उपचारसे उनके यहां पर एक या छह या सात प्राण बनलाये हैं। 'जहां मुख्यका तो अभाव हो किन्त उसके कथन करनेका प्रयोजन या निमित्त हो वहां पर उपचारकी प्रवृत्ति होती है ' उपचारकी इस ब्याख्याके अनुसार यहां चे।दहवें गुणस्थानमें क्षयोपशमहृत मुख्य इत्त्रियोंका तो अभाव है। फिर भी अयोगी जिनके पंचिन्द्रयजाति नामकर्मका उदय पाया जाता है और वह जीवविषाकी है, इस निमित्तसे उन्हें पंत्रेन्द्रिय कहना बन जाता है। इसिटिये उनके पांच इन्द्रिय प्राणें(का कथन करना भी सप्रयोजन है। इसप्रकार पांच इन्ट्रियोंमें आयुको मिला देने पर छह प्राण हो जाते हैं। यहां पर इन्ट्रियोंसे अभिप्राय उस शक्तिसे हैं जिससे अयोगी जिनमें पंचेन्ट्रिय-पनेका व्यवहार होता है। परंतु उस शक्तिके सम्पादनका या पांच इन्ट्रियोंका आधार शरीर है. अतः इस निमित्तसं अयोगी जिनके कायबलका कथन करना भी सप्रयोजन है। इसप्रकार पर्योक्त कह प्राणों में कायबलके और मिला देने पर सात प्राण हो जाते हैं। यद्यपि उनके पहलेकी छह पर्याप्तियां उसीप्रकारसे स्थित हैं. अतः वे पर्याप्तक कहे जाते हैं। तथा पर्याप्तक अवस्थामें मनःप्राण भी होता है, इसलिये उनके मनःप्राणका भी कथन करना चाहिये था। परंत् उसके कथन नहीं करनेका यह कारण प्रतीत होता है कि उनमें संब्धियवहार लुप्त हो गया है। ओप-चारिक संबीव्यवहार भी उनमें नहीं माना गया है, अतः अयोगियोंके मनः प्राण नहीं कहा। इसीप्रकार वचनबल और इवासोछवासके अभावका भी कारण समझ लेना चाहिये। ऊपर सयोगी जिनके जो पांच इंद्रियां और एक मन इसप्रकार छह प्राणींका निषध करके केवल चार ही प्राण बतलाये हैं वह मुख्य कथन है। अतः जिस उपचारकी अपेक्षा यहां छह अथवा सात प्राण कहे हैं वही उपचार वहां भी लागू होता है। आयु प्राण तो अयोगियोंके मुख्य प्राण है फिर भी उसे भी उपचारमें हे लिया है, इसलिये इसे कथनका विवक्षाभेद ही समझना चाहिये। यहां उपचारका प्रयोजन ऐसा प्रतित होता है कि विवक्षित पर्यायमें रखना जो आयका काम है

अप्पपाणो । खीणसण्या, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादिवहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्ता; लेव-कारण-जोग-कसायाभावादो । भवसिद्धिया, खइयसम्माइद्विणो, णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो, अणाहारिणो, सागार-अणागरिहिं जुगवदुवजुत्ता वा होंति ।

सिद्धाणं ति भण्णमाणे अत्थि एयं अदीद-गुणहाणं, अदीद-जीवसमासो, अदीद-प अत्तीओ, अदीद-पाणा, खीणसण्णा, मिद्धगदी, अणिदिया, अकाया, अजोगिणो, अवगदवेदा, खीणकसाया, केवलणाणिणो, णव संजदा णेव अमंजदा णेव संजदासंजदा, केवलदंमण, दव्य-भाविहें अलेम्मिया, णेव भविद्धिया, खइयसम्माइहिणो, णेव सिण्णणो

वह यहां भी पाया जाता है, इसलिये तो वह मुख्य प्राण है। फिर भी जीवनका अवस्थान अरूप है। और अवस्थानके कारणभूत नये कमौंका आना, योगप्रवृत्ति आदि भी नष्ट हो गये हैं, अतः आयु भी इस अपेक्षासे औपचारिक प्राण कहा जाता है। इसप्रकार अयोगियोंके उपचारसे एक या छह या सान प्राण कहे गये हैं।

प्राण आलापके आगे-भ्रं।णसंक्षा. मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, अयोग, अपगत-वेद, अकषाय. केवलकान, यथाच्यात।विहारणुद्धिसंयम, केवलदर्शन. द्रव्यसे छहाँ लेह्याएं, भावसे लेह्यारहितस्थान होता है। लेह्याके नहीं होनेका यह कारण है कि कर्म-लेपके कारण-भूत योग और कषाय, इन दोनोंका ही उनके अभाव है। लेह्या आलापके आगे-भृष्यसिद्धिक, भायिकसम्यग्दिए, संक्षी और असंक्षी विकल्पसे रहित, अनाहारक, साकारोपयोग तथा भना. कारोपयोग इन दोनों ही उपयोगोंसे युगपत उपयुक्त होते हैं।

सिद्धपरमेप्रीके ओघालाप कहनेपर—एक अतीत-गुणम्थान, अतीत-जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत-प्राण, क्षीण,सङ्गा, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, अयोगी, अवेदी, क्षीणकवाय, केवलक्षानी, संयत, असंयत और संयतासंयत विकल्पोंसे विमुक्तः केवलद्दर्शनी, दृथ्य और भावसे अलेद्य, भव्यसिद्धिक-विकल्पातीत, क्षायिकसम्यग्दिष्ट, संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों

नं, २६

अयोगिकेवलीके आलाप.

ग	. ज	ति प-	प्रा.,	सं.	η.	₹.	का.	यो.	वे.	奪.	झा.	संय.	द.	हे.	स.	₽.	साझे	आ.	उ.
1 8		१ ेह	۶	ŧ	ŗ	,	*	1	9	•	. ۲	१	₹ .	Ę	₹	Ŗ	2	ŗ	ર
ير ا		· '	्तुं.		म.	पचे.	त्र स .	अयो-	1	अवः.	有,	यथा.	के. द.	व.	भ	क्षा.	अनु,	अना,	साका.
HE	5		ন			Ì			ক					मा.	-				अनाः यः इ
	1_						ļ							अछ.					3.

णेव अमिष्णिणो, अणाहारिणो, मागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति ।

एवं मुद्रोघाटावा समत्ता ।

आदंसेण गिंदयाणुत्रादेण शिरयगदीए शिरह्याणं भण्णमाणे अन्धि चत्तारि गुण-द्वाणाणि, दो जीवसमामा, छ पज्जतिओं छ अपज्जतीओं, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओं, शिरयगदी, पंचिदियजादी, तनकाओं, ओगलिय-ओगलियिमिम्म-आहार-आहार-मिम्मेहिं विणा एगारह जोग, णवुंमयवेदों, शिरह्या द्व्य-भोविहं णवुंसयवेदों चेत्र भवंति ति । चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजमीं, तिश्मि दंश्ण, द्व्येण कालाकालाभाम-काउ-मुक्कलस्माओं, द्व्येलम्मा कालाकालाभामा मुद्दकण्डेनि जं वृत्तं होदि । एसा शिरह्याणं

विकरपों में मुक्त अनाहारक, साकारोपयोग और अन(कारोपयोगमं युगवन् उपयुक्त होते हैं। रमप्रकार मुख ओघालाप समान इए।

आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवाद्दे नरकगतिमें नारिकयों के आलाप कहनेपरआदिके चार गुणस्थान, सक्की पर्याप्त संब्री अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ
अपर्याप्तियां: पर्याप्तकालकी अपेक्षा दस प्राण और अपर्याप्तकालकी अपेक्षा सात प्राण, चार्गा
संक्षाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, अंदारिककाययोग, अंदारिककाययोग, अंदारिककाययोग, अहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग, इन चारों योगोंके विना ग्याग्ह योग, नपुंसकवेद होता
है। एक नंपुसकवेदके होनेका यह कारण है कि नारकी जीव द्रव्य और भाव इन दोनों ही
वेदोंकी अपेक्षा नपुंसकवेदी होते हैं। वेद आलापके आगे चारों कपाये, तीनों अक्कान और
तीन कान इसप्रकार छह कान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यम पर्याप्तत्वकी अपेक्षा
कालाकालभास लेदया, और अपर्याप्तत्वकी अपेक्षा कापोत और शुक्कलेदया होती है। पर्याप्तअवस्थामें जो कालाकालाभास लेदया कही है उसके कहनेका यह तात्पर्य है कि पर्याप्त अवस्थामें कालाकालाभास अर्थात अतिकृष्ण लेक्ष्या होती है। नारिकयोंकी पर्याप्त-अवस्थामें यह

अतिप ' करणीच ' इति पाठ ।

नं २७ सिडोंके आलाप.

ग. जी. प. प्रांस गई. का यो वे.क.ज्ञासंय. द हे. स. स सिंह आ उ. प्र.गु अ. अ.प हिंह में अति. अका अयो है है के अन. के.द. अहे. अन. क्षा अन. जी. अना साका. जी. है है पजनकाले सरीरलेस्सा भवदि । विग्गहगदीए पुण णेरह्यादि-सन्त्र-जीवाणं दन्त्रलेस्सा सुक्का चेव भवदि, कम्म-विम्ससावचयस्स धवलवणां मान्ण अण्ण-वण्णाभावादा । सरीर-गहिद-पढम-समय-प्वहुढि जाव अपजन-काल-चरिम-समओ नि ताव मरीरस्स काउलेस्सा चेव, मंबलिद-स्रयल-वण्णादा । भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मनं, मण्णिणा, आहारिणा अणाहारिणा, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा ।

तेसि चेव पज्रत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, एगा जीवसमासो, छ पज्रत्तीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंसयवेदी, चत्तारि कसाय, छण्णाण , अमंजमी, तिष्णि दंसण, दंवेण काला-कालाभासलेम्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्माओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ

दारीरलेदया होती है। किन्तु विष्टदगतिमें नारकी आदि सभी जीवेंकी द्रव्यलेदया गुक्र ही होती है, क्योंकि, कमें के विस्वसीपवाका ध्वस्त्वर्ण छोड़कर अन्यवर्ण नहीं होता है, तथा दारीरप्रहण करनेके प्रथम समयसे लगाकर अपयोग्तकालके चरम समयतक दारीरकी कापोतगेदया ही होती है, क्योंकि, उस समय दारीर संवलित सकल वर्णवाला होता है। भावकी अपेक्षा तो हुःणा, नील और कापोतलेदया होती है। लेदया आलापके आग भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, छहाँ सम्यक्त्य, संजिक आहारक अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारिकयोंके पर्याप्तकालसंबन्धी ओघालाप कहने पर — आदिके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, नरकगित, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, ने योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अक्षान, और आदिके तीन क्षान स्सत्रकार छह क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या और भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेक्ष्यापं, भव्यामिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहां सम्यक्त्य, संक्रिक,

नं. २८

नारकसामान्य आलाप.

																	આ.	
8	ર	Ę	20	¥	>	۶ ۶	, c	,	У	Ę	K	₹.	₹ ₹	4	Ę	۶	ર	२ -
}	सं.प	q .	৩		न.प												आहा.	साका.
	सं.अ.	Ę								ज्ञा . ३		विना.	का	अ			अना	अना,
1		3					वे. २						श्र					
1							कार्म. १	₹					मा. ३					
1													अश्.					

सम्मत्तं, सण्णिणां, आहारिणां, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एअ। जीवसमामो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दे। जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, विभेगणाणेण विणा पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, कदकरणिज्जं पद्च वेदगमम्मतं खड्यसम्मत्तं मिच्छतं च। मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांः।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारिकयोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—िमध्यादृष्टि और असंयत. सम्यन्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारां संक्षापं, नरकगति, पंचेत्त्रियज्ञाति, वसकाय, वैकियकिमध्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपायं, विभंगक्षानके विना कुमित और कुश्रुति ये दो अक्षान तथा मित, श्रुत और अवधि ये तीन क्षान, इसप्रकार पांच क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रश्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावस कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं, भव्य-िद्धिक, अभव्यासिद्धक, मिध्यात्व क्षायोपशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं। इनमें वेदकसम्यवत्व तो इतत्यक्तवेदककी अपेक्षा होता है और उसमें क्षायिक और मिध्यात्वके मिला देने पर नारिकयोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन सम्यक्त्व होते हैं। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

१ तथमायौ पृथिव्यो पर्या'तापर्या'तकानो क्षायिक क्षायोपश्चामके चास्ति । स. सि १, ७.

तं. २९ नारकसामान्य पर्याप्त आलाप.

ग्र.जी प प्रा. स ग. इ. का. यो वे. क. आता. संय द. छ अ स स संक्षि. आ. _ उ. ४ १ ६ १०४ १ १ १ १ ६ १ ३ द्र.१ २ ६ १ १ २ मि सं. प न क अज्ञा ३ असा के द ऋ भ. स. आहा. साका. सा. पं. के स. ४ ज्ञा.३ मिना मा. ३ अ. अना. सं. वे.१ अग् अ

गु. जी. प प्रा.स. ग. इंका यो वे. क. ज्ञा. सय. द. छं. म स. सिझ आ. उ. २ १ ६ ७ ४ १ १ २ १ ४ ५ १ ३ द्व.२ २ ३ १ २ २ मि सं.अ.अप न. के वै.मि न कुम. असं.के. द. का गुम. मि. स. आहा. साका. अवि. हिंकार्म कुशु, विना मा.३ अ. क्षा. अना. अना. ज्ञा.३ अग्र क्षायो संपित णेरइय-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण कालाकालामास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

तेसिं चेव पज्जताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंमण, दन्वेण कालाकाला-

अब नारकी मिध्यादिष्ठ जीवों के आलाप कहने पर—एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, संज्ञीपर्यास और संज्ञी-अपर्यास ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याक्षियों और छहाँ अपर्याक्षियां, दशौँ
प्राण और सात प्राण. चारों संज्ञाणं, नरकगित, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, खारों मनोयोग,
चारों वचनयांग, विकियिककाययोग. वैकियिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह्र
योग, नपुंसकवंद, चारों कपायें, नीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे
पर्यात-अवस्थाकी अपक्षा कालाकालामासलेश्या और अपवीत्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और
ग्रह्ण लेश्याणं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यास्थ
संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकी मिध्यादि जीवोंके पर्याप्तकालसम्बन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्या-दिए गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, बारों संबाएं, नरक-गति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और क्रिसेन्किययोग ये नी योग, नपुंसकंवद, चारों कपायें, तीनों अक्षान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभासकृष्ण-

नं, ३१

नारकसामान्य-मिध्यादृष्टि आलाप.

							यो. वि.						य.	सर्ग्न.	आः	₹.
			ķο	818		<	22 8	٧	₹ >	ર	星 €	ર		2	ર	ર
मि	स.प	q	q	न.	- प्र	H.	म. ८ न. व. ४		≟ असं∙	च.	Ŧ	म.	मि/या.	स∙	आहा.	साका.
1	म अ.	६्	O		Б	liv.	व. ४		100	Ж.	का.	अ		1	अना.	अना.
1		अ.	अ				विद्र		1		স্	1		1		
1				,			कार्म. १				भा ३				1	
				,		1					अशु.					- 1
			- 1	1		- 1	'		1 1	1		l		/		

भासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, स्रिणिणो, आहारिणो,सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिसं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, सन्त पाण, चनारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चनारि कसाय, दोण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्वेवण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजना होति अणागारुवजना वा

हेस्या, भावसे कृष्णः नील और कापोत लेस्याः, भव्यसिद्धिकः अभव्यसिद्धिक मिश्यात्य, संक्रिकः, आहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोयोगी होने हैं।

उन्हीं नारकी मिथ्यादि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबादं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वैक्षियिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, खारों कथायें, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाद्दारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ३२

नारकसामान्य-मिथ्यादीष्ट पर्याप्त आलाप.

ग्र. जी	प भागसं,	ग. ∤ इ.	,काः, योः	वे क	গ্ল	सय. द.		म स	सीज्ञ	आ.	उ. ॄ
(' १	६ १० ४	2 2	8 5	, १ ४	₹	१ २	द्र १	२ ि?	2	ধ	ર
मि स.अ.	.	न. पर्चे.	ंत्रस¦मः ४ व. ४	न,	अञा	अस.⊨चथु	₹.	भ ह	सं	आहा.	साका
			् व. ४	1		अच	भा∙३	अ. 🚡	1		अनाः
	'		ं व १	- 1		1	अगु.	1	'		1
	1 1	i	!	i	I	!	1 1	1			

नं. ३३

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

13	Į.	जी	٩.	яι,	स., ग.	₹.	का.	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय	₹.	हे.	म.	स.	_। संज्ञि	_આ.	ੁ ਹ_
	3	१ सं.	Ę	v	8 2	१	Ý	્રે જે	2	8	2	2	3	<i>₹.</i> २	٦.	*	2	ર	ર
"	- 1	લ. અ.	<u> </u>	अव	० र निः	पच.	त्रसः	व. ।सः कार्मः	जा। जा।		कुम. कुभ	ગલ.	चक्षुः अचक्षुः,	, क्त⊷ शु.	ુ અ.	म्या	et-	आहा. अना.	साका. अनाः
					,		ı	!	1	!		,		भा ३		4.5			
į			į		li	1	1	l	١					अग्र.।	, ,		ł	1	ı

सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, जिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णच जोग, णवंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वण कालाकालाभासलेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्ञत्ता वा ।

सम्मामिन्छ।इद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञ-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंमयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तिहिं अण्णाणेहि मिस्माणि, असंजम, दो दंसण, दृष्वेण कालाकालाभायलेस्या. भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ; भवसिद्धिया,

नारकी सामादनसम्यग्दि जीवोंके आलाप कहनेपर — एक सामादन गुणस्थाम, एक मंज्ञी-पर्याप्त जीवसमाम, छहों पर्याप्तियों, दशों प्राण, चारों मंज्ञाणं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रमकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकिथिककाययोग ये नो योग, नपुंमकवेद, चारों कपायें, नीनों अज्ञान, असंयम, चानु और अचानु ये दो दर्शन, द्रव्यमे कालाकालाभास लेद्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोन लेद्याणं भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नारकी सम्यग्मिध्यादि जीवोंके अत्याप कहने पर—एक सम्यग्मिध्यात्व गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशीं प्राण, चारीं संबाण, नरकगित, पंचे. विद्यास्तात, त्रसकाय चारों मनीयोग, चारीं वचनयाग और वैकियिककाययोग ये नी योग, नपुं- सकवेद, चारीं कपायें, तीनीं अवानींसे मिश्रित आदिके तीन बान, असंयम, च अ और अचश्च ये दें। दशीन, हत्यसं कालकालाआस लह्या, भावसे कुण्ण, नील और काणेत लह्याएं, भव्यनिविक

नं, ३४

नारकसामान्य-मासादन आलाप.

ग्रं । जी	î.	ব. সা		मं. गः	₹.	TI.	यो.	ब.	Ŧ.	লা	मंग.	द्र"∎	₹.	軒	स.	मान	आ.	उ.	
₹ ,	?	Ę	, .	× ,	>	Ą	9	7	ď	₹	y	ર્	夏 (?	ર	×	1 2	2	-
सास.	प			न	पच	त्रम.	Ħ. %	-		সঙ্গা-	अम.	ᡩ.	Ţ	भ.	वावा	मं.	आहा.	साका.	
1							व. ¥	h				त्रच.	मा ३					अन्।.	
1							वं. १						अगु.				į. Į	1	
<u> </u>																	1		

सम्मामिच्छत्तं, सिणाणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्ज-त्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदिय-जादी, तमकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभाम-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, मण्णिणा, आहारिणा अणाहारिणा, सागार-वजुत्ता हाति अणागारुवजुत्ताःवां।

तेसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एअं। जीवसमासा, छ

मम्यग्मिश्यात्व. संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नारकी असंयतसम्यग्दाष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दाष्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सान प्राण, चारों संझाणं, नरकगित, पचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग, विक्रियिककाययोग, वेक्रियिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवद, चारों कपायें, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास इल्लालेख्या तथा कापोत और शुक्क लेख्याणं, भावसे इल्ला, नील और कापोत लेख्याणं, भव्यासिदिक, औपश्रमिक, आयिक और आयोप-श्रमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकरोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

नं, ३'५ नारकसामान्य-सम्यग्मिध्याद्यप्रि आरु।पः

। गुः	जी-	पः[श्राः स	्ग । इ.व	हा या⊾¦ब्रे	क.। ज्ञा. सग.	ਵ. ਲੈ. ਵ	म.∤म. ∤मॉझ	भा ।	- ड
,	1	€ 90 ¥	> 2	र ९ ।	8 2 2	2 7. 2	2 7 2	9	2
	स.प	li	न ।	मा अ		₹. h 4	ग¦सस्यः'स	आहा-	माकाः
#		i j	6	कि वि. ८ कि	मिथ्र.	च. मा २	1		अनाकाः
				व १	अज्ञा.	अञ			
1			·				İ		
_							<u> </u>		

नं, ३६ नारकसामान्य-असंयत सम्यग्द्रिके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	٩.	मा.	म	ग.	5 .	क ा.	्यो.	वे.	h	हा:-	स्रय	∢.	₹.	भ	स.	संज्ञि	आ,	उ. ∣
9	2							6 3			₹	٩	٦ ٦	द्र. ३	٩.	<i>হ</i> ্	9	ર	ર
1	ਲ	۹.	৩	I	न	q	त्रस.	म. ४			मिति.					आ.	स.	आहा	साका.
अवि.	Ħ			 				व. ४	JE.		श्रुत		ंविनाः	का. गु.		शा.		अना	अनाः
1	स प	अ.		l				वं, र			अव.			मा ३		क्षायो			, 1
	.pt						l 	कामे.						अ श					<u> </u>

नं. ३७

पज्जन्तिओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ; णव जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ट्-णील-काउलेस्माओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव अवज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एश्रेर जीवसमासो, छ अवज्जनीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, बे जोग, णवंमयवेदा, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अभंजम, तिण्णि दंमण, दब्वेण काउ-मुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेम्सा; भविमिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण

उन्हीं नारकी असंयतसम्यग्दिए जीवांके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अधिगतसम्यग्दिए गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, वारों संक्षाएं, नरकगित, पंचित्दियजाति, त्रसकाय, वारों मनोयोग, वारों बचनयोग और वैक्षि-ियककाययोग ये नौ योग, नपुंत्रकवेद, चारों कवायं, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेदया, भावसं कृष्ण, नील और कापोत लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, औपश्रमिक, धायिक और क्षायोपश्रमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, नरकगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, विकिथिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नर्यु- सकवेद, चारों कपायें, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्र लेक्या, भावमे जवन्य कापोतलेक्या, भन्यसिद्धिक उपदामसम्यक्त्यके विना दो सम्यक्त्य

नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दछि पर्योप्त आलाप.

ग. जी.	प्रमुखाः	सं. ग,	इ का	यो.	वे.	布 . 朝.	संय	द. हे.	म [स- स	ा≨्र आ.	₹.
¶								₹ 5. ====================================			१ १ सं. आहाः	ર
अवि.सप.	į	न, प	च्या न्य		IE.	मात. श्रह.		कद. ऋ⊪ विनामा∗		आ. क्षा.	सः ,आहाः	अना
				वे १	Į	अत्र.	1	সগ্		भायो-		
			,		i				. 1		i	

विणा दो सम्मर्त्त, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वां ।

पढमादि-मत्तर्ण्हं पुढवीणं लेम्माओ जाणावेई एमा गाहा-

काऊ काऊ काऊ णीला णीला य णील-किण्हा य । किण्हा य परमकिण्हा लेस्सा पढमादिपुटवीणें ॥ २२२ ॥

पढमाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि. दें। जीव-ममामा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जत्तीओं, दम पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओं, णिरयगदी, पंचिदियजादी, नमकाओं, एगारह जोग, णवृंमयवेद, चतारि कमाय,

संबिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

प्रथमादि सातों पृथिवियांकी लेइयाओंको यह निम्न गाथा बनलाती है--

कापोत. कापोत. कापोत और नीलः नीलः नील और कृष्ण, कृष्ण तथा परमकृष्ण लेक्या प्रथमादि पृथिवियोंमें क्रमदाः जानना चाहिये ॥ २२२ ॥

विशेषार्थ — प्रथम पृथिवीमें जघन्य कापोनलेक्या होती है। दूसरी पृथिवीमें मध्यम कापोनलेक्या होती है। तीसरी पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोनलेक्या और जघन्य नीललेक्या होती है। सौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेक्या होती है। सौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेक्या होती है। छठी पृथिवीमें मध्यम कृष्णलेक्या होती है और सानवीं प्रथिवीमें परमकृष्णलेक्या होती है।

प्रथम-पृथिवी गत नारकोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दा जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौँ प्राण, सात प्राणः चारौँ संज्ञापं, नरकगित, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारौँ मनीयोग चारौँ वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियककाययोग, वैकियक्त स्वाप्तियां,

१ गां. जी. ५२९. प्रतिपु 'काउ काउ तह काओ णीलं णीला य णील किण्हा य ' इति पाठः । नै. ३८ नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दि अपयोप्त आलाप.

यु जी प प्रा सं गं ६ का यो वे ११६७४११२ २ २ १ १ स.अ. हे हे ने कार्म.		ज.२१२ १ का. भ∤क्षा∙ सं	
---	--	---------------------------	--

छण्णाण, अमंजम, तिण्णि दंगण, द्व्वेण कालाकालाभाम-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्या, भविमिद्धिया अभविसिद्धिया, छ मम्मत्त, मण्णिणा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेव पज्जन्ताणं भण्णमाणे अत्थि चनारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासा, छ पज्जनीओ, दम पाण, चनारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, णवुंसयवेद, चन्तारि कमाय, छण्णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, दन्वेण कालाकाला-भामलेस्मा, भावेण जहाण्णिया काउलेस्मा, भवमिद्धिया अभवमिद्धिया, छ सम्मनं.

योग, नपुंसकवेद, चारों कपायं, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुद्ध लेद्यापं, भावसे जवन्य कापोतलेक्ष्याः भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, नरकगाति. पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वसनयोग और वैक्षियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रश्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे ज्ञान्य कापोतलेश्याः भण्य-

नं. ३९

प्रथमपृथिवी-नारकसामान्य आलापः

η.	ुर्जा∙ ∣	q ,	न्ना-	संभुग	[- ₹.	,का.	यो.	्रवे∙	椞.	ह्या-	सय.	₹.	ੋਲ.	भ.	स	संक्रि	आ.	ु उ.
6	१			8 3	1 2	2	१।	8	8	Ę	2	₹	द्र.३	ર	Ę	5	२	ર
ांग-	सं.प.	६ अ.	ان	-	<u>च</u>	ا ن	म. ४	وقتعا كأ	1	त्रान.३	अम•	क.द.	75.	*		स.	आहा.	साका-
सा.	स .अ			- (1.6	11	a. ≀		ŀ	अन्ना	Į	विना-	का.	-		,	अमा.	अना-
सम्य.	i		1			: !	a. २			३		1	ু য়.	ल				
अवि.			1 1				का	9					भा र	i				
					1	<u> </u>							का.		l		}	

सिष्णिणा, आहारिणा, सामारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा ी

तेसि चेव अपजन्ताणं भण्णमाणे अस्थि दो गुणहाणाणि, एओ जीवसमासी, छ अपजन्तीओ, मन्त पाण, चन्तारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चन्तारि कमाय, पंच णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण काउ- सुक्कलेस्साओ, भावेण जहाण्णिया काउलेम्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मन्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजन्ता होति अणागारुवजन्ता वा"।

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहाँ सम्ययस्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—मिध्यादृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, नरकगित, पंचेन्द्रियजाित, त्रसकाय, विकियिकािमश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेदः चारों कपायें, कुमति. कुश्रुत और आदिके तीन बान ये पांच बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ट्राइल्टेस्याएं, भायसे जधन्य कापोतलेस्या, भव्य-सिद्धिकः मिध्यात्व, क्षाये(पदािमक और क्षायिक ये तीन सम्यवत्व, संविक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४० प्रथमपृथियी-नारक पर्याप्त आलाप.

गु. जी	प	SI.	स	31	\$	का	यो.	व.	事	គា.	सय	द.	છે.	47.	ਜ਼	सिंब.	311	उ.
¥ १ मि इ सा. मे स.	LLV	१ 0	6	₹.	9	8	ै ९ म∙४ व∙४ वे°१	\$	1	S		द. त्रिना 🔑	8	२	ફ	1	१ आहाः	२ साकाः अनाः

नं. ४१ प्रथमपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

ग्.	जी -	q	न्ना, स	Ė	ग.	₹.	का.	_यो	व	क	.লা.	संय	द.	. છે	स-	. स.	माही.	आ.	उ.
्र सि.	१ सं.अ.	Ę.	,	ا ک	•	१ पचे.	१ त्रसः	्र वे.धि.	9	8	५ कम	9		द्र. २ का.		्र भि	१ स.	२ आहा	२ साका.
अबि .		ক						काम.	च		कुभुः झा. ३	-101-	विना ं			ंक्षा. क्षायी.			आना.
		Ì												का.		, ,			

संपिंद पढम-पुढिन-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयेवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउ-लेम्मा, भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसि चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चन्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चन्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण

अब प्रथम-पृथिवी-गत मिध्याद्दाष्टि नारकोंके आलाप कहने पर-पक मिध्याद्दिष्टि गुण-स्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संक्षाएं, नरकगित, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों यचनयोग, विक्षियिककाययोग, विक्षियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास लेदया तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा काणोत और श्रुक्क-लेदयाएं, भावसे जघन्य कापोत लेदयाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संक्षिक, आहारकः, अनाहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिध्यादृष्टि नारकोंके प्रयक्तिकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबी-प्रयक्ति जीवसमास, छहां प्रयक्तियां, दशों प्राण, चारों संबार्ष, नरकगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कवाय, तीनों अक्रान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन,

गु		ज	Ί.	q.	मा	! स∙	ग.	इ	का.	यो.	ģ[क.	श्चा.	संय.	द.	ਰੇ.	ਜ.	स.	साह्ने.	ं आ.	उ∙
٩		3	ξ	Ę	90	R	?	2	9	१ १	8	x	₹.	3	₹ _	द्र ३		8	8	ર	ર
मि	-	4	ч.	d.	v		न .	, ho-	þ.	म. ४	<u></u> ⊢•2	1	अज्ञाः	अस -	च∙	5.	स-	मि.	सं.	आहा. अना.	साका.
1		4	ॳ	Ę		1		Ь	Ti.	व.४	jr.	1			अच.	काः	अभ.			अना.	अना.
				`4						वे. २						সূ.				1	
1						1	1		1	का. १		1				भा 🤚	1		1		
1							ŀ									का-			İ		
_	_					,	1	1						1		l _		,		1	

कालाकालाभासंत्रम्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्साः, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जतीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दृष्ट्रेण काउ- मुक्कलेम्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेम्सा; भविमिद्धिया अभविसिद्धिया, मिच्छतं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा ।

द्रक्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या, भावसे जवन्य कार्पातलेख्याः भव्यसिद्धिक अभस्य-सिद्धिक मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादिए नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादिए गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारीं संक्षाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, विकिथिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये हो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, चश्रु और अबश्चु ये दो दर्शन, द्रथ्यसे कापोत और गुक्कलेश्याएं, भावसे जवन्य कापोतलेश्याः भव्य-सिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्रिक, आहारक, अनाहरकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

१ प्रतिषु ' अभवसिद्धिया ' इति पाठी नारित-

ส์. น3

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्याद्दीष्ट पर्योप्त आलाप.

य १	जी- १	प. ६	प्रा १०	8	2	8	۶	९	. 5	¥	ज्ञा. ३	सय १	<u>द.</u> २	द्र १	₹:	₹	सक्रि.	۶ -	उ
串.	संप,				न.	पंचे.	त्रस-	म - '	४,न		अझा.	अस.	, च.	否.	्भ,	मि-	स.	आहा.	साका.
								a. '	١,	1	[अच.	मा- १			i	•	अना.
1								वे.	ŧ۱	1				का.]				
1				- 1							ļ	į			}	ì	}		1

नं. ४४

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादिष्ट अपयोप्त आलापः

١	गु	र्जा	q	ंग्रा.	सं	ग	ŧ.	का.	यो.	वे	क	লা	सय	द	ल	भ.स.	संजि	্ৰ	₹
- 1	9 मे	*	Ę	৩	¥	8	٩	१ त्रस	्२ वे. भि	4	ጸ	्र कुम.	१ अस	२ च	द्र. २ का. शु•	ર ₹	१ सं.	२ आहा.	2
-			, .	1_					_						भा १ का-				

सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंभयवेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्येण कालाकाला-भासलेस्मा, भावेण जहण्णिया काउलेस्ताः भवसिद्धिया, मासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-रिणो, सागास्त्रज्ञत्ता होंति अणागास्त्रज्ञता वा ं।

सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं भिम्माणि, असंजम, दो दंमण, दन्त्रेण कालाकालाभामलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेम्या; भवसिद्विया,

प्रथम-पृथिवी-गत सासादनसम्यग्दि नारकोंक आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकमित, पंचिन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्षियिककाययोग ये नो योग, नपुंसकवेद चारों कपाय, तीनों अझान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रम्यसे कालाकालाभास कृष्णलेक्या, भावसे जघन्य कापोतलेक्याः भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यक्त्य, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रथम-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादाप्टे नारकांके आलाप कहने पर—एक सम्याग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संबी-पर्योप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संबाणं. नरकगित, पंचीन्द्रयज्ञाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अब्रान-मिश्रित आदिके तीन ब्रान, असंयम, दो दर्शन, द्रश्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या. भावसे जधन्य कापोनलेश्या, भव्यन्तिद्विक, सम्यग्मिथ्यात्व,

नं ४% प्रथमपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दप्रि आलाप.

्री थ∙ जा∙्प ्याः संगः इः का याः वः कः ज्ञाः	मय. ट छ भ स, साहा आ . ड.
य• जी•्प• प्रा. संग. इं. का यो. वे. क. ज्ञा. ११६ ९०४० ९ १९ १४३ साम.प न. पवे जस. स.४ के अज्ञा. य.४ फ	१ २ <.9 १ ^१ १ १
नि. पच. त्रम. म. ४ 🚉 अज्ञा	्भम, च. कृ. म. ह स.ाआहा साफा. जन का
व १	त्रच-सार्च क्र असार का-

सम्मामिच्छत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे ।

असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाग सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, णिर्यगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वण कालाकालाभाम-काउ-मुक्कलेम्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां

संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रथम-पृथियी-गत असंयतसम्यन्दि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यन्दिष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहीं अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संक्षाणं, नरकगित, पंचित्रियज्ञाति, त्रस्काय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, वैक्षियककाययोग, वैक्षियकिमध्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कथाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृब्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कार्यास कार्यात और श्रावाप्तिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ४६ प्रथमपृथिवी-नारक सम्यामाध्यादृष्टि आसाप.

गु.	जी.	ψ.	श्रा.	सं.	ग	₹.	का.	यो	١	वे.	क	্লা-	सय.	द	लं	भ.	.∣ म.	साज्ञि.	आ.	उ	ı
१	१ सं.प.	- > (8,0	ሄ	१ न.	पच.	१ वस.	् स	¥	8	४	३ ज्ञानः	१ अम	1	द्र. १ कृ.	्र भ	१ सस्य.	१ मे.	9 31181.	२ माकाः	
संस्य	सं.प.							a. a.	-	म		अज्ञा. मिथ			भा. १ का.	•			(अनाः	

नं. ४७ प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दिष सामान्य आलाप.

, ŋ,	जी.	d	भा	स.	ग	ŧ.	का.	यां.	વે.	क.	হ্যা.	सय.	₹.	ਲੇ.	स.	स.	साज्ञ.	3.7.	उ.
2	ર	ξ Ч.	90	У	*		2	११	٩	x	₹	8	₹	5.3	2	3	ę	2	3
(0	स.प,	६अ.	v		न.	વેવે.	त्रसः	म. ४	-		मांत.	अस.	के.द.	死.	Ħ.,	आ	स.	आहा.	र साकाः अनाः
ক	स.अ.		į					व. ४	i.		श्रुत.		विना	का.		क्षा.		अना.	अना,
1			I I					व. २			अव.			ग्.		क्षायो		i	- 1
1								का. १						मा र					
_			<u> </u>											का.				1 1	

तेसं चेन पजनाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीनसमासो, छ पजनीओ, दम पाण, चनारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जाग, णवुंसयवेद, चनारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, द्व्वेण काला-कालाभासलेस्मा, भावेण जहाण्णिया काउलेस्साः भवसिद्धिया, तिण्णि मम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वार्।

तेसि चेत्र अपज्जनाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एश्रो जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जीग, णवृंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, द्व्तेण काउ-मुक्कलेम्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भविमिद्धिया, उवसमसम्मतेण विणा दो

उन्हीं प्रथम-पृथिची-गत असंयतसम्यग्हिए नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्हिए गुणम्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, नरकगति, पंचद्रियजाति, त्रसकायः चारों मनोयोगः चारों बचनयोग और विकिथिककाययोग ये नो योगः, नपुंसकवेदः, चारों कवायः, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्यसे कालाकालामास कृष्णलेश्याः भायसे जधन्य कापोतलेश्याः भव्यसिदिक, आपामिक, क्षायिक और क्षायोपशिमक ये तीन सम्यक्त्य, संविकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिए गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, खारों संझाएं, नरकगित, पंचेन्द्रिय जाति, असकाय, विकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कथाय, आहिके तीन झान, असंयम, आहिके तीन दर्शन, द्रव्यस कापोन और शुक्ललेद्याएं, भावसे जवन्य कापोतलेद्या, भव्यसिद्धिक, उपरामसम्यत्वके विना श्रायिक और श्रायोपरामिक ये दो सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक,

नं, ४८ प्रथमणृथिवी-नारक असंयतसम्यग्हाष्टे पर्याप्त आलाप.

1 17	र्जा.	q.	प्रा	₹,	1],	₹.	私.	या.	वे.	죡.	श्रा.	संय.	₹.	8. ¥	. स.	संक्षि.	भा.	₹.
अ क्ष	र सं. पं.	Ę	80	8	? न∙	व्यं भ	त्रस	९ म ४ व.४ व.१	न.		३ मति श्रुतः अवः	अस.	् ३ के. द. विनाः	ले. म इ. १ क. म मा १ का.	. भू . ओ. क्षा. क्षायो.	१ स.	१ आहा.	२ साका. अना

सम्मचाणि, सिन्गिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मा गारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

विदियाए पुढ्वीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, दे। जीव-समासा, छ पज्जनीओं छ अपज्जनीओं, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, णिरय-गदी, पंचिदियजादी, तसकाओं, एगारह जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, दच्वेण कालाकालाभाम-काउ-सुक्कलेस्माओं, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भन्नसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्गिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागारुवज्ञता होंति अणागारुवज्ञता वा

माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

डितीय-पृथिषी-गत नारकोंके आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान. संझी-पर्याप्त भीर संझी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास. छहें। पर्याप्तियां, छहें। अपर्याप्तियां: दशें। प्राण, सात प्राण: बारों संझाएं. नरकगति, पंचेन्द्रियजाति. त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वेकियिककाययोग, विक्रियां अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेख्या स्थापिकका अभव्यसिद्धिकः क्षायिक सम्यक्त्वेक विना पांच सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहरकः साकागेणयोगी अंतर अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४९. प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्बद्धि अपर्याप्त आलाप

गु.	जी.	q.	яњ	Ħ.	₹,	ŧ	€ 1.	यां	ब.	4 ,	杌.	सय	द्.	₹.	ਸ	॒स.	मांज्ञ.	आ	ซ
৭ স ৰি	१ सं.अ.	६ अ प	(S	*	१ न	प्तं 🥕	अस . ₹	्र वेशम काम	• न	6	३ मृतिः	ृ १ अमं ।	् _३ कंद	র. ২ কা স	, भ.	^२ श्रा	, स्	्र भारा	२ ⁻ माका. अना

नं. ५० हितीयपृथिवी-नारक सामान्य भालाप.

] गु.	र्जा.	٩.	ग्रा.	₫.	ग.	₹.	का.	यो.	वं.	枣.	Ħ١,	सय.	Œ	ਲੇ.	ਮ.	₩.	संहि.	आ	ਰ.
¥	ą	Ę	ţ a	¥	2	7	2	? ?	7	x	Ę		3	ज. ३	ર	4	7	ર	२
ĺ₩.	सं.प	q .	J		न.	Ŧ	व.	म. ४	न.		अज्ञा. ३	असं.	के.द.	F.	भ.	એI.	뀩.	आहा	साका.
ੀ ਜਾ.	सं.अ,	Ę						ब. ¥			शान. ३		विना	布门	H	क्षायो.		अना	अना.
सम्य.		अ.						के. २						SĮ,		मि.			
अ.								को। १						सा र		मासा			
1														वः।		सम्य.			

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अन्थि चत्तारि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि मण्गाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण काला-कालाभासलेम्सा, भावेण मज्जिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच मम्मन्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्जता होंति अणागारुवज्जता वार्षे।

तेंसि चेव अपन्जनाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो. छ अपन्जनीओ, मत्त पाण. चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जाग, णवृंमयवेद, चत्तारि कसाय, दे। अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दृष्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मिन्द्रिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छनं, मण्णिणो,

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-भादिके बार गुणस्थान. एक संझी-पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण. बारों संबापं, नरकनित. पंचीन्द्रयजाति. त्रसकाय. बारों मनोयोग, बारों वचनयोग और विकिथिककाययोग ये नौ योग. नपुंसकवेद, बारों कथाय. तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या, भावसे मध्यम कापोनलेख्या. भ्रष्यसिद्धिक, अभ्वयसिद्धिक: भ्रायिकसम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व. संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं द्वितीय पृथिवी गत नारकों के अपयोष्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर — एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संब्री अपयोष्त जीवसमास, छहाँ अपयोष्तियां, सात प्राण, बारों संब्राएं, नरकगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वैिक्तियकिमश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये हो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अव्वान, असंयम, चश्रु और अच्छु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोन और शुक्कत्रेष्ट्याएं, भावसे मध्यम कापोतलेख्या, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संब्रिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और

नं.	4,5			f	द्रतीय	गर्पुा	थव	ी–नार	क प	र्याप्तः	भालाप	r.				
ग. मि. ना. म.	٠.	. सं. स. १४: १ न	प्यं.	कः । र भ कः । स कि	ii.	. त भ : चें	क. ≰	ज्ञा. ६ ज्ञा. ३ अज्ञा.३	सय- १ अस	द. के द. विना.	ल. र → र → भा - १ का -	ਮ. ੨ ਮ. ਮ.	स. भ. साता. सम्य. औप. श्रायो.	सर्ब १ म.	आ. १ आरा	उ. २ साका. अना.

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

मिच्छाइष्ट्रीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दे। जीवसमासा, छ पडजत्तीओ छ अपडजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दे। दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेम्माओ, भावेण मिन्झिमा काउलेस्सा, भव-मिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागानवजुत्ता होति अणागानवजुत्ता वा

अनाकारीपयोगी होते हैं।

वितीय-पृथिवी-गत मिथ्याद्दणि नारकांके आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्दणि गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौँ प्राण, सात प्राणः चारों संझाणं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, नारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, नारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या तथा कापोत और गुक्क लेखाणं, भावसे मध्यम कापोतलेख्या, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाद्दारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ५२ डितीयपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

नं. ५३ द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि सामान्य आलाप.

्रार्जा, पन्त्राः∤स	ग. इ. का. या.	वं. क	ज्ञा. सय.	द है.	भ	स.	सांज्ञ	आ.	उ. ∣
1 2 8 80 8	र १ १ ११	1 8	₹ 1	२ द्र-	६ २	₹.	9	ર	ર
म 😸 पे, ७	न पात्रसः मः ४	مينا	अजा. असं	चथु. कृ.	भ.	मि.	स.	आहा.	साका.
tab €	व. ४	JE.	İ	अच. का. व	ુ. અ .			अना.	अना.
ь अ.	किं र	1		भा-					
, #E	काश	İ	1	का.	F	,]

तेसिं चेत्र पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, हर पजनीओ, दस पाण, चत्तिरि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंपयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काला-कालाभामलेम्सा, भावेण मज्झिमा काउलेम्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागान्त्रजुत्ता होंति अणागान्त्रजुत्ता वां।

तेमिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सन्त पाण, चनारि मण्णा, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णयुंमयवेद, चनारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेम्माः भविमिद्विया अभविसिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो,

उन्हीं दिनीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, हशौँ प्राण, चारों संक्षाणं, नरकगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और विकिथिककाययोग ये नें। योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, नीनों अक्षान, असंयम, चसु और अचसु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेक्ष्या, भावसे मध्यम कापोत-लेक्ष्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, भिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्ही डितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादिष्ट नारकोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान. एक सक्षी-अपर्याप्त जीवसमास. छही अपर्याप्तियां, सात प्राण. चारों संक्षाएं. नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, विकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे योग. नपुंसकंबद, चारों कपाय, दो अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दे दर्शन, द्रव्यमे कापोत और गुक्रुलेश्याएं, भावस मध्यम कापोतलेश्या, भव्य-

नं. ५३ डितीयपृथिवी−नारक मिथ्याद्यप्रि पर्याप्त आलाप.

ग जो पामासास इका यो व.क. ज्ञासय. इ. ठे. भ सा सिंह आ । उ ११६१०४१ ८ ८ ९ १४३ १ २ ई.१२१ १ १ २ मि.सप न पंचे सा म ४ के अज्ञा असा च के सा मि. सं. आहा. साका. व.४ मि. अच सा १४. व.४ का. आहारिणो अणाहारिणो, सामास्त्रजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा ।

सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजम, दो दंसण, दच्वेण कालाकालाभासलेस्म, भावेण मिज्जिम-काउलेस्मा; भविमिद्धिया, सामणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागास्वज्ञता होति अणागारुवज्जता वां।

सिद्धिक. अभव्यसिद्धिक. मिथ्यात्व. संक्षिक. आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

डितीय-पृथिवी गत सासादनसम्यग्दिष्ट नारकींके आलाप कहने पर-एक सासादन गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचे-निद्रयज्ञाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये तो योग, तपुं-सकवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चार्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकाशास कृष्णलेख्या, भावसे मध्यम कापोतलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अन(कारोपयोगी होते हैं।

नं. ५५ डितीयपृथियी-नारक मिध्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

्राग्रे√जी. पः्प्राः∤स गः	इ. का. । यो. हे	ाेक. ॄ ज्ञा⊷िगंय िद.	ुं छ। स्नम	मिनि आ उ.
१ १ ६ ७ ४ १	8 8 2 2	8 2 9 2	g. ₹ ₹ 1 ½	१ र २
मि. सं. 🚉 📑 न	पचे. त्रमः वे. मि	ू कृम. 'अ <i>मं</i> . चेक्ष	ा का∗ म मि	स ,आहा गाका.
अ कि	कार्म क		નું, ગુ અ∙,	'अनाः अना
	1		भा १	
		1	का	

नं. ५६ हितीयपृथिवी -नारक सालाइनसम्यग्दष्टि आलाप.

ग. जी.	q	त्रा.	म	ग	इं	का	यें।•	₹.		ज्ञा	सय	₹	हे.	ਮ.	म	र्माज्ञ	आ	उ. ∣
१ १ सा. ह			6	*	9	2	-8	₹	1	3	8	ર	द्र.१	Ł	8	9	र आहाः	२ साकाः अनाः

सम्मामिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञ-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम, दो दंमण, दव्येण कालाकालाभासलेस्ना, भावेण मन्झिमा काउलेस्साः भवसिद्धिया, सम्मामिन्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागास्यज्ञत्ता होति अणागास्यज्ञत्ता वा ।

असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, णगुंसयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, द्व्वेण कालाकालाभामलेस्ता, भावेण मज्ज्ञिमा काउलेम्मा; भविभिद्धिया, खद्यसम्मत्तेण विणा दो

ित्रीय-पृथिवीत्मत सम्यामिश्याद्य नारकोंके आलाप कहने पर—एक सम्यामिश्यात्य मुणस्थात. एक संजी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां. दशों प्राण, चारों संजाएं, नरकमति, पंचिन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाय-योग ये ने योग, नएंसकवंद, चारों कपाय, तीनो अज्ञानमिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्रु और अचक्रु ये दें। दर्शन, द्रव्यक्षे कालाकालाभास कृष्णलेह्या, भावसे मध्यम कापात-लेख्या, भव्यसिद्धिक, सम्याग्मिश्यात्व, संजिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

डिनीय-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दाष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहे। पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सजाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, जलकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकि-यिककाययोग ये ने योग, नपुंसकवेद, चारो कपाय, आदिके तीन आन, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालामास कृष्णलेक्ष्या, भावसे मध्यम कापेतलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक,

मं. ५७ डिनीय गृथिवी~नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलापः

ग जो। प शा. मा ग इका यो वे क जा सय द. छ भ. म मीजी आ उ. १९६१०४११९९४४४६१२४४११२ इ.स.प न हुई से ४ जीन अम. च म् समस्य मे आहा माका हिंदी अज्ञा का. सिथ सम्मत्तं, सण्णिणा, आहारिणा, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्ी।

एवं तिदय-पुढिव-आदि जाव मन्तम-पुढिव नि चदुण्हं गुणहाणाणमालावो वन्तव्यो। णविर विमेसो तिदयाण् णवण्हं इंदयाणं मज्जे उविरम अहुमु इद्एसु उक्किम्सिया काउलेम्मा भविद् । हेद्धिमण् णवमं इंदण् कींसीच जीवाणभुक्किम्सिया काउलेम्मा किर्मिच जहिण्णिया णीललेम्मा । कृदो ? जहण्णुक्कम्म-णील-काउलेम्माणं मन-मागरोवम-काल-णिहेमादो । तेण तिदय-पुढवीण् उक्किम्स्या काउलेम्मा जहण्णिया णीललेम्मा च वन्तव्या। चउन्थीण् पुढवीण् मिज्जिमा णीललेम्सा। पंचर्माण् पुढवीण् चउण्हमुविरम-इंद्याणं उक्किम्स्या णीललेम्सा चेव भविद । पंचण् उक्किम्सा णीललेम्सा जहण्णाः किण्हेन्सा च भविद । कृदो ? जहण्णुकक्रम्य-किण्ह-णीललेम्साणं यन्तारम-सागरेवम-काल णिहेसाढाँ।

क्षायिकसम्यक्त्वके विना अंग्रहामिक और आयोगर्शामिक ये दे। सम्यक्त्व सांज्ञक आहारक. साकारोगयोगी और अनाकारोगयोगी होते हैं।

इसीप्रकार तृतीय-पृथिवींसे लेकर कातवी पृथिवी तक नार्शकयोंसे चारो गुणस्थानोंके आल.प कहना चाहिये। इतनी विशेषता है कि तृतीय पृथिवींके नी इन्द्रक बिलींसेसे ऊपरके आठ इन्द्रक बिलींसे उन्ह्रण कापोतलेख्या होती है और नीचेके नीवे इन्द्रक बिलींसे कितने ही नारकी जीवोंके उन्ह्रण कापोतलेख्या होती है, तथा कितने ही नारकींक जधन्य नीललेख्या होती है, स्योंकि, जधन्य नीललेख्या और उन्ह्रण कापोतलेख्याकी सात सागरीपम स्थितिका आगममें निर्देश है। अतण्य तीसरी पृथिवींके नीवें इन्द्रक बिलमें ही उन्ह्रण कापोत और जधन्य नीललेख्या बन सकती है। इस्प्रकार तृतीय पृथिवींसे उन्ह्रण कापोतलेख्या और जधन्य नीललेख्या कहना चाहिए। चोथी पृथिवींसे मध्यम नीललेख्या है। पांचवीं पृथिवींके पांच इन्द्रक बिलोंमें उन्ह्रण कापोतलेख्या और जधन्य नीललेख्या कहना चाहिए। चोथी पृथिवींसे उन्ह्रण नीललेख्या ही है। भीर पांचवीं इन्द्रक बिलमें उन्ह्रण नीललेख्या तथा जबन्य क्राणलेख्या है क्योंकि, जधन्य क्राणलेख्या और उन्ह्रण नीललेख्याका आगममें सबह सागरणमाण कालका निर्देश किया

नं. ५८ इतीय र्राथयि-नारक असंयतसम्बर्गाष्ट्र आलाप.

1	ग.	जी	q	41	म	ग	£	(4)	या	7	奪	_রা	स्य	\$	E		47	म	मान्ने	आ	₹.
1	1	,	Ę																		. ર {
13	गव	स प-		ı		न	पर्च.	7म	म ′	ter.										नाहा	माका :
1								,	व ँ			9		विन	भा	y		क्षाया			अना
1									a 1			अव.		1	利						,
١,														1				l			' I

एदाओ दो लेम्माओ पंचम-पुढ्यी-णेरइयाणं भवंति। छट्टीए पुढवीए णेरइयाणं मज्झिम-किण्डलेस्मा भवदि । सत्तमीए पुढवीए णेरइयाणं उक्किस्मिया किण्डलेस्मा भवदि ।

तिरिक्खाएँ तिरिक्खाणं भण्णमाणं तिरिक्खा पंचिविधा भवंति, तिरिक्खा पंचिदियतिरिक्खा पंचिदियतिरिक्खपज्ञना पंचिदियतिरिक्खजाणिणी पंचिदियतिरिक्खअपज्ञना
चेदि। तत्थ तिरिक्खाणं भण्णमाणं अत्थि पंच गुगद्वागाणि, चेहम जीवममामा, छ
पज्ञनीओं छ अपज्ञनीओं पंच पज्जनीओं पंच अपज्ञनीओं चन्तिर पज्जनीओं चन्तिर
अग्रजनीओं, दम पाण मन्न पाण णव पाण मन्न पाण अद्व पाण छ पाण मन्न पाण पंच
पाण छ पाण चन्तिर पाण चन्तिर पाण तिण्णि पाण, चन्तिर मण्णाओं, तिरिक्खगदी,
एईदियज्ञादि-आदी पंच जादीओं. पुढिकायादी छक्ताय, एगाग्व जोग, निण्णि वेद,
चनिर कमाय, छ णाण, दे। मंजम, तिण्णि दंमण, दच्य-भावेहिं छ लेम्मा, भविमिद्धिया
अभविमिद्धिया, छ सम्मनाणि, मण्णिणों। अमण्णिणों, आहारिणों। अणाहारिणों, मागारु-

गया है। अत्रष्य पांचर्या पृथियोके पांचर्य इन्द्रक बिलमें ही उत्हरण नीललेक्या और जयन्य कृष्णलेक्या यन सकती है। इसप्रकार ये दें। हैं। टेक्याएं पांचर्या पृथियोके नारकी जीवोंके होती हैं। छठी पृथियोंके नारकोंके मध्यम कृष्णलेक्या होती है। सातर्या पृथियोके नारकोंके उत्कृष कृष्णलेक्या होती है।

इसप्रकार नरकगतिके आलाप समाप्त हुए।

अव तिर्यंचर्गिक आलापोंको कहते हैं। तिर्यंच पांच प्रकारके होते हैं, १ तिर्यंच, ४ पचेन्द्रिय तिर्यंच, ३ पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच, ४ पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यंच, और १ पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच, १ इतमें सामान्य तिर्यंचीके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, चौदहीं जीवसमास. संक्षीके छहीं पर्याप्तियां. छहीं अपर्याप्तियां: असंक्षी और विकल्प्योंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: एकोन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सक्षी पंचेन्द्रिय तिर्यंचीके दशीं प्राण, सात प्राणः असंक्षी पंचेन्द्रिय तिर्यंचीके नी प्राण, सात प्राणः चतुरिन्द्रिय जीवोंके अह प्राण. छह प्राणः भीन्द्रिय जीवोंके सात प्राणः, पांच प्राणः हीन्द्रिय जीवोंके छह प्राणः चार प्राणः और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राणः, तीन प्राणः कमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों संक्षाणं, तिर्यंचगित पकेन्द्रियजाति आदि पांची जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, चारों मनोयोग, चारों घचनयोग, औदारिककाययोगः अदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों येद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान और आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेदयाणं, भन्यसिद्धिक. अभ्वयसिद्धिक छहीं सम्यक्त्य, संविक, असंक्रिक, असंक्रिक, अतिहरक, अनाह्यक, साकारोपयोगी

नं. ६०

वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, मन जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ, दम पाण णव पाण अहु पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्षवगई, एईदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढिविकायादी छक्काया, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, छण्णाण, दो मंजम,

और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य निर्यंचींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--आदिके पांच गुण-स्थान. पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय निर्यंचींके छहीं पर्याप्तियां, असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय निर्यंचींके पांच पर्याप्तियां. एकेन्द्रिय पर्याप्त निर्यंचींके चार पर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, असंझी पंचेन्द्रियोंके नी प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, बीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, बीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण होने हैं। चारों संझाएं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियादि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहीं काय. चारों मनोयोग, चारों चचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योग, तीनों वेद, चारों कपाय. तीनों अञ्चान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेक्याएं, भव्य-

नं. ५९ सामान्य तिर्यचोंके आलाप.

गु. जी	١.	4	ग्रा	ग.	ग	₹.	का	यो. त्रं	45	য়'	म्य	ढ.	c.	। स.	स् म	ાનિ	11	· 4
	¥ 8	q	>0,0	6	7	4	Ę	11 1	ď	Ģ	ર્	~	₹. q	4	۹,.	ર .		- <
मि-	ξ	अ	٥, ७		1ि-			म. ४		না ২	असं	ቁ ઢ.	माः	q	į,	٦.	गाना	साका
91.	'-	्ष	۷,۶					4. 6		1.4	द्ध	विनाः		H	71	म	[4]	अना ।
स.	1.	। अ	ڻ, ' <u>،</u>					ત્રી ર										- 1
я.	¥	८ प	ξ, κ					कार्भ. १						1		1		- 1
देश,	- 1	েঞা	٧,३					1		, 1				i				1
								1		<u> </u>				1	ı	_ [

सामान्य तिर्थचेंकि पर्याप्त आलाप.

η.	्रजी-	Ţ٠,	AF	सं.'ग. इ	. का	यो ने	क ज्ञा-	¹मय ⊑ द ∙	हें. भ.	. म सहि	ा आ	3.
4	٠	Ę	180	8 8	५ ६	९ ३	४ ६	12 3	尾 長 2	₹ २	+ 1	1 2
मि-	पर्या.	13	8	ति		म. ४	ज्ञान.	{अस∙केद	्मा 🧸 🚖	स.	आहा.	माकाः ।
सा.		R	ا ح ا		1.	व ४	अज्ञा.	६ [¦] देश¦ विन	rļ 📁	200		अना.
सम्य			ঙ		'	आः १			, , 35			i 1
अवि			ξ	11		1					1	
दंश.			8				1			1	1	

तिण्णि दंमण, दव्य-भावेहि छ लेस्सा, भवमिद्धिया अभविषिद्धया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणा, अपिणणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

तेमि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, सत्त जीवसमामा, छ अपज्जत्तिओ पंच अपज्जत्तिओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, मत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तिरि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ष्यगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छ काया. वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणण विणा पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ड-णील काउलेम्माओ। कि कारणं? जेण तेउ-पम्मलेस्सिया वि देवा तिरिक्से-मुप्पज्ञमाणा णियमेण णहु लेस्सा भवंति ति। भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, मिच्छतं सामणसम्मतं खइयसम्मतं कदकर्णाजं पद्च वेदगसम्मतं एवं चत्तारि सम्मतं,

सिडिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यक्त्व, संक्षिकः असंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्थनोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याद्दीष्ट सामादनसम्यग्दिष्ट और अविरत्तसम्यग्दिष्ट ये तीन गुणम्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातों जीवन्समाम, संबी पंन्नेन्द्रिय अपर्याप्तोंके छहों अपर्याप्तियां, असंबी पंनेन्द्रियों और विकलवयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संबी पंनेन्द्रियोंके सात प्राण, असंबी पंनेन्द्रियोंके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, डीन्द्रियोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवेंकि तीन प्राण होते हैं। चारों संबापं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियजाति आदि पांची जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, औदारिकिमिश्रकाययोग और कामणकाययोग ये दे। योग, तीनों वेद, चारों कपाय, विभंगाविधवानके विना पांच बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्व्यमे कापीत और राष्ट्रहरेयाएं, भावमे कृष्ण नील और कापीत हैदयाएं, हाती हैं।

शंका — सामान्य तिर्थनोंके अपर्याप्तकालमें तीनों अशुभ लेखाएं ही क्यों होती हैं?

समाधान — क्योंकि, तेजोलेक्या और पद्मलेक्यावाले भी देव यदि तिर्यचॉमें उत्पन्न होते हैं तो नियमसे उनकी शुभलेक्याएं नष्ट हो जाती हैं, इमलिये निर्यचॉकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन अशुभ लेक्याएं ही होती हैं।

. रुरया आलापके आगे भव्यक्षिद्धिक अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व. सायिकसम्यक्त्व और कृतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व इस प्रकार चार सम्यक्त्व, संक्षिक, सिणाणो असिणाणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा ।

मंपित तिरिक्ख-मिच्छाइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चाहम जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया. एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ

असंबिकः आहारक, अनाहारक, साकारीपयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

अब तिर्यंच मिध्यादृष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहते पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, बौद्दां जीवसमास, संक्षी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: असंक्षी पंचेन्द्रियों और विकलक्षयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: संक्षी पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंक्षी पंचेन्द्रियोंके नी प्राण और सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके अह प्राण और छह प्राण, जीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, इिन्द्र्योंके छह प्राण और चार प्राण, एकेन्द्रियोंके चार प्राण और तीन प्राण क्षार प्राप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों संक्षाणं, तिर्यंचगिति, एकेन्द्रिय जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय अहि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों क्याय, तीनों अक्षान, असंयम, चश्च और अवश्व ये दो दर्शन, द्रव्य और भावस

नं. ६१ सामान्य तियंत्रोंके अपर्याप्त आलाप.

। गु.	जी.	먁.	भा ,	सं	4.15	इं.) व	ा	यो	व	क । ज्ञ	मग	₹.	ल	स.	4.	मिश्चि	3{}	₹.
3	ં	६३₹,	9	6	₹ [4	Ę	3	3	8,	۹ ۱	į ₹	द्र. र	4	6	1 4	્ર	٠
मि	अप.	7. 29	0	ji	त	1	ı	ओ मि		ं वृ	म अस	के द	का	1=	ાંધ		आहा.	
सा		6 ,,	Ę	i	- {			कार्म,			¥.	1	ज.	1	सा.	अग	अना.	आनः
अबि .	1		14		- }		į		1 1	म	ने	Ì	H1.3	}	सा		1	
1	ļ		Y		- 1					શ્રુ	₹.	1	अंश		क्षाये।,	1		
1	!]	३		- 1					1 4	Ŧ		ļ	1		1	1	}

नं. ६२ सामान्य तिर्यंच मिध्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

J 7,	र्जा	۹.	भा.	4	η,	\$	का	यो	व	क	झा.	सय	द	ले.		भ.	η,	माज्ञ.	आ.	₹,
9	18	६प.					Ę	8 2	₹								-		ર	٦
î म		६अ	6,0		ति			म, ≠			ালা	अस-	ਖ .	मा						
1		५प.	८,६				ļ	વ. ૪				}	अच	' I		अभ		거 꾸.	्अना.	अनाः
ļ		५अ	৩,					ું.ર				1		1						
1		४५	ξ,∕		-		}	新 1, 5		1		1			1					
1		¥¥.	8,2							1		1		l I						1
					i	<u> </u>				1		1								·

लस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया. मिच्छत्तं, स्राण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिमं चेव पड़जनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पड़जनीओं पंच पज़नीओं चनारि पज़नीओं. दम पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छप्पाण चनारि पाण, चनारि मण्णाओं. निरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओं, पुढिविकायादी छकाय, णव जोग. निष्णि वेद, चनारि कमाय, तिष्णि अण्णाण, अमंजमों. दो दंमण, दच्य-मोर्वाहं छ लेम्माओं, भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, मण्णिणों अमिण्णिणों, आहारियों. सागाह्य जुना होनि अणागाह्य जुना वां।

र्तास चेत्र अपज्जनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं. सत्त जीवसमासा, छ

छहो लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, अनाहारक; साकारापयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी साता जीवसमास, संबींके छहाँ पर्याप्तियां, असंबीं और विकलवर्योंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंक चार पर्याप्तियां। संबींके दशों प्राण, असंबींके ने प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, व्यन्तियं जीवोंके सात प्राण, इन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण चारें। संबाण, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, चारे मनायोग, चारें वचनयोग औदारिककाय-योग थे ने योग, तिनों चेद्, चारों कपाय, तिनों अञ्चान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्वय और भावस छहों लेदयाणं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंबिकः आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्थेच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणम्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातें। जीवसमास, संबीके छहीं अपर्याप्तयां,

नं. ६३ सामान्य तिर्यंच मिध्याद्यप्टि जीवींक पर्याप्त आलाप.

																ाः ।	3.
2	פי	Ę			Ę	D.	₹	8				<i>દ</i> . દ્					₹
ाम	पन्।	٠.	d,	নি		म - 🕠			अज्ञा.	अस	च था.	भा. ६	₩,	मि.	स.	आहा.	साका.
1	E	6	_ <			व ४				1	अच		Ж		अस	i	असा.
	ı		৩			ओ. १	1			1						1	1
1			٤														! 1
١.			8	 	 					·							1

अपज्जत्तीओ पंच अपजनीओ चनारि अपज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढिविकायादी छक्काय, वे जोग, तिण्णि वेद, चनारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंगण, दव्वेण काउ-मुक्कलेस्मा, भावण किण्ह-णील-काउलस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा ।

तिरिक्य-सामणमम्माइद्वीणं भण्णमाणं अन्थि एयं गुणद्वाण, दे जीवसमामा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जत्तीओ, दम पाण मन पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिक्यगदी, पंचिदियजादी, तमकाओं, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

असंही और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संहीके सात माण, असंहींके सात माण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके छह माण, बीन्द्रिय जीवोंके पांच माण, हीन्द्रिय जीवोंके चार माण ऑर एकेन्द्रिय जीवोंक तीन माणः चारों संझाएं, तिर्यचर्गात, एकेन्द्रियज्ञानि आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों बेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अन्नान, असंयम, चश्रु और अखश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ठाकु होदयाएं, भावसे हरण, नील, और कापोत होद्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संजिक, असंजिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

सामान्य तियंच सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोंके श्रीघालाप कहने पर—एक सासादनगुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्योद्य ये दो जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, छहों
अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण, चारों संकाणं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
चारों मनायोग, चारों वचनयोग, श्रीदारिककाययोग, आँदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्याग्ह योगः तीनों बेद, चारों कपाय, तीनों शक्कान, असंयम, चक्षु और

नं. ६४ सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवांके अपूर्याप्त आलापः

ग्.	जी.	q	শা	सं	ग	\$	कां	यो	व	45	ना	सय	द	ਲ	भ	स	स्राज	आ	_ उ]
9	و	६अप	J	В	8	,4	Ę	ર	٥	6	<	9	ર્	द्व २	ર્	*	२	4	ે ર
मि.	अप.	۲,,	v		ति.			ओं मि			कुम.	अम	च	का.	भ	ĺН.	स.	ाआहा	साका.
		δ,,	Ę					कार्म.			TM			गु.					अना.
1			ч	4										भा ३				·	Í
			ď		1									अशु.				ĺ	
	1		₹		t .														/

असंजम, दो दंमण, दब्ब-भावेहि छ लेस्माओ. भवसिद्धिया, सामणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेव पजनाणं भणमाणं अन्धि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दम पाण, चनारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, तिण्णि वेद, चनारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छै लेम्मा, भवसिद्धिया, मामणमम्मनं, मण्णिणां, आहारिणां, सागारुवजुत्ता होंति अणा-गारुवजुत्ता वा ।

अन्तश्च ये दो दर्शन, द्रव्य अंग भावसे छहीं लेर्याणं, भ्रव्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सिक्कि, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्थंच सामादनसम्यन्दिष्टे जीवोंक पर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—एक सामादन गुणम्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सबाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योगः तीनों चंद, चारों कपाय, तीनों अवान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, इच्य और भावस छहों लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यक्ष्य संबिक, आहारक, माकारोपयोगी और अनुकारोगियोगी होने हैं।

नं. ६५ सामान्य तिर्यंच सासाद्नसम्बर्धाष्ट्र जीवोके सामान्य आराप.

ग्.	जी.	ष	भा	स	ŋ	F e	和.	या	ते.	$F_{\bf a}$	-11.	सग.	₹.	ď.	4.	ग.	मक्रि.	্ৰাচ	3.
,	3	ξq.	90	6	٠,	,	7	2.2	₹	6	ಫ	7	સ	7	,	,	*	ર	٦.
41	म प	ξઅ.	5		नि	વેચે.	14	H. 6			મના	अग	चक्ष.	भा ६	н.	(मामा.	₹.	भारा.	साकाः
	म अ							व. ४					44.					अची,	अनाः
1								आ २											
L								का, १											

नं ६६ सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्हीष्ट जीवींके पर्याप्त आलाप.

1 1	जी.	q	मा.	सं, ग	₹.	का.	यो.	वे	邨.	श्रा.	मग्.	₹.	di.	A.	म.	सीहा.	आ.	ਹ.	ĺ
١,	,	Ę	20	K 2	7	7	~	3	8	3	1 2	2	3 E	2	> '	>	9	3	ı
मा.	म.प.		i	नि.	पच.	नम	म. ८			এঝা	अस.	वधु.	भाः	भ	-	सं.	आरी	साका.	l
1					1		व ८				1	अर्ग			正	1		अनाः	l
i				l	1		ओं. १						,		14	1			ı
				1									1	j	1				ı

तेमिं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अन्यि एयं गुणहाणं, एअ। जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, मन पाण, चनारि सण्णाओ, निरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, वे जाग, तिण्णि वेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंमण, द्व्वेण काउ-सुक्क- केम्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलम्मा, भवमिद्धिया, मामणमम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाह्वजना होति अणागाह्वजना वा ।

तिरिक्य-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्रतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ. विश्वियादी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, विश्वि वेद, चत्तारि कथाय, विश्वि णाण वीदि अण्णाणेहि भिम्माणि, अमंजम, दो दंसण, द्वा-भावेदि छ लेम्या, भविसिद्विया, सम्मामिच्छत्तं, सिश्विणो,

उन्हीं सामान्य तिर्यच सासादनसम्यग्दिष्ट जीवींके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थानि, एक सक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, तिर्यचगति, पंचित्दियजाति, त्रसकाय, ओदार्गिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग थे दें। योग, तीनीं चेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दें। अञ्चान, असंयम, चक्षु और अचश्रु ये दें। द्र्योन, द्रव्यने कापोन और शुक्र लेट्या, भावसे रूपण, नील और कापोत लेट्याणं भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य तिर्यंच सम्यागिश्यादिष्ट जीवोंके आलाप कहने पर — एक सम्यागिश्यादिष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास्य, छहीं पर्याप्तियों, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंच-गित, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारों मनीयोंग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दें। दर्शन, दृब्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सम्यागिश्यास्य.

नं, ६७ सामान्य निर्यंच सासादनसम्यग्द्रि जीवींके अपर्याप्त आलाप

गु. जी. प. प्रांक्त गु. इंका यो वं.क आ. सय दे छे भ स. मिश्च आ उ. १ १ १ ७ ४ १ १ २ २ ४ २ १ २ इ.२ १ १ १ २ २ मा सं.अ.अप ति क्षेत्रीं क्षेत्र अस्त चक्ष को य सामा स. आहा. सत्का, हिंही कार्म कश्च, अस. सा ३ अना. अना अज.

आहारिकां, मागाध्यजुत्ता हांति अनागाध्यजुत्ता वा ।

तिस्विम्ब-अमंजदमम्मादृद्वीणं भण्णमाणे अन्यि एयं गुणहाणं, दें। जीवसमासा, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ, दम पाण मन्त पाण, चनारि मण्णा, तिरिक्ष्वगदी, पंचिद्यजादी, नश्काओ, एगारह जोग, तिरिक्ष वेद, चत्तारि क्याय, तिर्णिण णाण, असंजम, तिर्णिण दंसण, द्व्व-भावेहिं छ लेरमाओ, भविभिद्वया, तिर्णिण सम्मनं, सिर्णिणां, आदारिणों अणादारिणों, सामास्वजुना होति अणामास्वजुना वा ।

मजिक. आहारक, साफारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य निर्धेच अस्थनसम्यव्हिए जी मेंते. सामान्य आलाप कहने पर - एक अधिरत-सम्बर्धात गुणस्थान, संज्ञी प्रभान और संज्ञी-अपयोग्न ये दें। जीवसमास, छहों प्रयोग्नियों और छहों अपर्याग्नियों, हशो प्राण, सान प्राण, चारों संज्ञाएं, निर्थचगानि, पंचेन्द्रियज्ञानि, अस्काय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यान्ह योग नीनों चंद, चारों कपाय, आदिक नीन ज्ञान, असंयम, आदिक नीन दर्शन, छन्द और भावस्य छहों लेख्याएं, भव्यासिडिक, औष्णामिक, श्लायिक और कार्यापद्यमिक ये नीन सम्यक्त्य संजिक, आहारक, अनाहारकः साकारेपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं ६८ सामान्य निर्यंत्र सम्याग्निश्या हि जीवेंकि आलाप.

١	17	41	ц	177	म	41	3	11	3[]		{	Ŧ	III.	स्य	c <u>r</u>	ر7,	41.	4	माझे.	તા.	3. ૨ માર્કા અના	ı
-	,	٠	s	1.	6	,		>	0		₹	ď	રૂ	/	40		1	y	1	, -	ર	l
١	17	म प				ান	प्रा	नग	Ħ	ፈ :			ज्ञान	44	र्ष	HI	#1	म् ग्	मं.	भाहाः	माका.	ļ
-	1,			1					ব	6		t	3	١	4。				1		ોના	l
ı					ı				∃आ	•		1	अ जा. सिय	l					1			l
-							1					1	। मिय						- {			ı

मं ४०. सामान्य निर्यंच असंयनसम्यग्द्रि जीवींके सामान्य आलाप.

1 17	र्जा	q	ŢŢ	म	η	ਝੁੰ	मा	या		वै.	Ŧ	ञा.	मग्	. इ.	नेत	म	म्	मोज्ञ.	आ	3
,	8	7	91	1	,	ં વ	۶	/ >		5	ĸ	3	7	ತ		. ,	ಶ	Ł	~~ ર	٦
(10	म प	7	,		नि	पच	74.	म	ć			मति	अस	र द	भा	· 4.	आ.	म.	आग.	र साका. अना.
िह		;						त्र ४	5			श्रुन		त्रिना					अन्।	अना.
1		4						ना	ર			अंब					शायो.			1
1_				_				矿.	٩											

तिमं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, द्व्व-भावेहिं छ लेस्माओ, भवामिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाँ।

तेसि चेव अपजाताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ अंपंजातीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, वे जोग, पुरिमवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेम्मा, भावेण जहण्णिया काउलेम्सा, भविमाद्विया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्हीं सामान्य तिर्यंच असंयतसम्बन्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक अविरत्तसम्बन्दिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारौँ संक्षाएं, निर्यचगाति, पंचीन्द्रियजाति, जसकाय, चारौँ मनोयोग, चारौँ बच्चनयोग और औदारिककाययोग ये नो योग, तीनों वेद, चारौँ कपाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेह्याएँ, भव्यसिद्धिक, औपशिमिक, सायिक और सायोगशिमक ये तीन सम्यवस्यः संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

उन्हीं सामान्य निर्यंच असंयतसम्यग्टा है जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कई न पर—एक अविरतसम्यग्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियों. सात प्राण, चारों संज्ञाएं, निर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन द्र्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेखा, भावसे ज्ञान्य कापोतलेद्याः भव्य-सिद्धिक, उपदामसम्यक्तवके विना क्षायिक और क्षायोगदामिक ये दें। सम्यक्तव होते हैं।

मं. ७० सामान्य निर्यंच असंयतसम्यग्दिष्ट जीवांक पर्याप्त आलाप.

सम्मत्तं । मणुस्मा पुन्तवद्ध-तिरिक्खयुगा पच्छा सम्मत्तं घेतृण दंसणमोहणीयं खित्रय खह्यसम्माइद्वी होदृण असंखेज्ज-वस्मायुगेसु तिरिक्खेसु उप्पज्जेति ण अण्णत्थ, तेण भोगभूमि-तिरिक्खेसुप्पज्जमाणं पेविखऊण असंजदसम्माइद्वि'-अपज्जत्तकाले खह्यसम्मत्तं लब्भिद् । तन्थ उपपज्जमाण-कद्कर्गणज्जं पदुच चेद्गमम्मत्तं लब्भिद् । एवं तिरिक्ख-असंजदसम्माइद्विस्प अपज्जत्तकाले दो सम्मत्ताणि हवंति । सिण्णणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागाहवज्जता होति अणागाहवज्जता वा '।

तिग्क्यि-संजद्रासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पडजत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तागि कमाय, तिण्णि णाण, संजमामंजमो, तिण्णि दंमण, दच्वेण

पूर्वाक्त दें। सम्यक्तवांके होनेका यह कारण है कि जिन मनुष्यांने सम्यक्ति होनेके पहले निर्यंच आयुको बांध लिया है वे पीछे सम्यक्त्वका ग्रहण कर और दर्शनमोहनीयको क्षपण करके आयिकसम्यग्दिए होकर असंख्यात वर्षकी आयुवाले भोगभूमिके तिर्यंचोंमें ही उत्पन्न होने हैं, अन्यत्र नहीं। इस कारण भोगभूमिके तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंकी अपेक्षासे असंयतसम्यग्दि अपर्यानकालमें आयिकसम्यक्त्य पाया जाना है। और उन्हीं भोगभूमिके निर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके इनकृत्यवेदककी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व भी पाया जाना है। इसप्रकार निर्यंच असंयनसम्यग्दिए जीवोंके अपर्याप्तकालमें दे। सम्यक्त्व होते हैं। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

सामान्य निर्यंच संयतामंयन जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, ऐक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्रापं, तिर्यंचगित, पंचोन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और ओदारिककाययोग ये नी योगः नीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ब्रान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, इञ्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे पीन, पश्च और शुक्क लेश्याएं: भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्यके

१ प्रतिगु 'नद्विपहाडि ' इति पाठः ।

नं. ७१ सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप.

η.	जी.	q	मा	सं'ग्. इ∣का.	यो. व	4	झा. ∣सय.	द.	∣ ਲੈ. ਸ. ਥ.	साज्ञ.	आ.	3
2				र र १ १ ति. कुंत्रस	ેર ૧	6	३ १ गति असं	3	ह.२ ≯ २.	र सं	२ आहा.	२ सा का -
3	स. अ.	अव	अव	id. (कि.)	कार्म.		श्रुतः	विना विना	श. क्षाय	1-	अना.	अना,
							अव.		मा १	i.	1	
<u> </u>				J				1	ंका. ∖		1	

छ लेम्माओ, भावेण नेउ-पम्म-सुक्कलेम्माओ, भविमिद्धिया, खड्यसम्मनेण विणा दो सम्मनं । केण कारणेण ? तिरिक्ख-भंजदासंजदा दंगणमोहणीयं कम्मं ण खबेति, तत्थ जिणाणमभावादो । मणुम्मा पुष्वं बद्ध-तिरिक्खायुगा खड्यसम्माइहिणो कम्मभूमीसु ण उपज्जीत किंतु भागभूमीसु । भागभूमीसुप्पणा वि ण संजमार्थजमं पिडवज्जीत, तेण तिरिक्ख-मंजदासंजदहाणे खट्यसम्मनं णित्थ । सिण्णणो, आहारिणो, मागाकवजुना होंति अणागाकवजुना वा ।

पंचिदिय-तिरिक्त्वाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्त्वगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह

विना दें। सम्ययस्य होते हैं। श्राधिकसम्यवस्यके नहीं होनेका कारण यह दें कि संयतासंयत तिर्यंच दर्शनमोहनीय कर्मका अपण नहीं करते हैं, क्योंकि, वहांपर जिन अशीन केवली या श्रातंकवलीका अभाव है। और पृत्रीमें तिर्यंच आयुको बांधकर पाँछे आयिकसम्यग्दिष्ट होनेवाले मनुष्य कर्मभूभियोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं. किन्तु भौगभूभियोंमें ही उत्पन्न होते हैं। परंतु भौग-भूभियोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच संयमासंयमका प्राप्त नहीं होते हैं, इसलिये तिर्यंचोके संयता-संयत गुणम्थानमें क्षाधिकसम्यक्त्व नहीं होता है। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचिन्द्रिय तिर्यचेंकि सामान्य आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान. संज्ञी-पर्याप्त. संज्ञी-अपर्याप्त. असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त. असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास. संज्ञी पंचिन्द्रियोंके छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचिन्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचिन्द्रियोंके दशों प्राण, सात प्राण: असंज्ञी पंचिन्द्रियोंके नौ प्राण, सात प्राण: चारीं संज्ञाण, तिर्यचर्गात. पंचिन्द्रियज्ञाति, बसकाय: चारीं मनोयोग, चारीं वचनयोग. औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग: तीनों वेद.

नं. ७२ सामान्य तिर्यंच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

	मय द ंठ स. स. साई	
	१ २ हि ६ / ५ १ . दश. कंद. भी रे) म. जोप. स.	

नं. ७४

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दां संजम, तिण्णि दंसण, दन्त्र-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवियद्विया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

़ेतेमिं चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पञ्जनीओ, दम पाण णव पाण, चनारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदय-जादी, तमकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चनारि कमाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि

चारों कचाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दे संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यिसिद्धिकः छहों सम्यक्त्य, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुण-नथान. संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, संज्ञीके दशों प्राण और असंज्ञीके नैं। प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगित, पंचेन्द्रिय-जाति. त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों यचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों बंद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम

नं. ७३ पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवांके सामान्य आलाप.

1 37	जी-	Ч.	भा	सं.	₹	₹.	का.	यां.	व.	क,	্লা.	मय.	ढ	र		स.	펵.	संशि.	आ.	उ.
4	6	६ प्.	90	¥	,	2	9	9 9	3	6	Ę	2	ৰ	7	ξ	<	Ģ	ર	4	ર
मि.	मं प	६ अ	9		ति.	q	व.	H. 6	•		ज्ञान ३	अस.	क.ढ.	सा	Ģ	₩.		म.	आहा	साका.
स्।	स.अ.	५ प.	0					व ४			अज्ञा व	देश.	विना			쇠		अमं.	अना	अना.
सम्य.	अ.प.	५ अ.	19					ओ.२												
अबि	গ,স							和. *	:]
दश																				

पंचेन्द्रिय निर्यंच जीवोंके पर्याप्त आलापः

l ^ग •_	जी-	प-	∃प्रा∤	सं. ग.	\$.	का.	या.	वि.	奪。	ह्या-	मय.	₹.		स.	स	'सिंह्	ाआ	ੁਤ.
4	ચ	Ę	10	8 8	۱٩	٩	9	3	6	Ę	٦.	3	हिंदी	13	Ę	ર	1	ર
ांम ∙	ч. q.	Lą.	0	ाते.	١٩.	7	म. ४			त्रान.	३ अम•	क द	.भा ६	Ħ		स.	आहा.	साका.
मा.	अमं.						व. ४	!		এলা ,	३¦देश	विना	Ī	[†] ∓		अस.		अना.
सम्य-	q. i		(, 1	औ. १							क				
अवि			i 1							1			1					
देश.		_				İ			1		'				1			

दंसण, दव्य भावेहिं छ लस्ता, भविमद्विया अभविमद्विया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपजनीओ पंच अपजनीओ, सत्त पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिकेवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-मुक्कलेम्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं उवसमसम्मनं णित्थ, मिच्छतं सासणसम्मनं खह्यसम्मनं कद्करणिजं पद्च वेदगसम्मनमिदि चत्तारि सम्मनं । सिण्णणो असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागाह्यजुत्ता होति अणागाह्यजुत्ता वा ।

ये दो संयमः, आदिके तीन दर्शन, इच्य और भावस्त छहों लेखाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिकः छहों सम्यक्त्व, संज्ञिकः असंज्ञिकः आहारकः, साकारोपयेगां। और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय निर्यंचींके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादृष्टि, सासाद्तसम्यग्दृष्टि और अविरत्तसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थानः संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियांः सान प्राण, सान प्राणः चारों संज्ञाणं, तिर्यंचगितः पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकायः, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेदः, चारों कपायः, कुमति, कुश्रुत और आदिक तीन ज्ञान समप्रकार पांच ज्ञान, असंयमः आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे कापीत और शुक्त लेद्याणं, भावसे रूप्ण, नील और कापीत लेद्याणं, भव्यासाद्धिक, अभव्यासाद्धिक होते हैं। इनके सम्यग्मध्यात्य और उपनामसम्यक्त्य नहीं होता है, किन्तु मिश्यात्य, सासादनसम्यक्त्य, आधिकसम्यक्त्य और राज्ञाससम्यक्त्य वहीं होता है। संज्ञिकः असंज्ञिकः आहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ७५ पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्रग्र, जीः ंषर (प्रा∪सं या, इर'कार	या व. क ज्ञा	स्य 'दःलः_सः⊤स	. सांझ⊹आ_ ् उ.
३ ३ ६अ. ७ ४ १ १ १		१ २।६.२ २।४	(
मि.स.अप. 😘 , 😈 ति प. त्रस.	ओ मि. । कुम.	अस के द का 🙀 🏗	े स. आहा. साका.
सा. असं , ,	कार्म, कृश्रु-		- अस अना, अना,
34	मति-	ं भार् क्ष	• '
	् । 'श्रुत.	। । अञ् । क्षार	įτ!
	्राव.		

पंचिदियतिरिक्य-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीव-समासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण पत्र पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्यगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि चेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्व-भाविद्वि छ लस्मा, भवमिद्विया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेनि चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एवं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तिओ, दम पाण णव पाण. चत्तारि मण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण,

पंचित्त्रिय निर्धच (मध्यादिष्ट जीवेंकि सामान्य आळाप कहते पर—एक मिध्यादिष्ट गुणन्थान. संद्री-पर्याप्त संजी-अपर्याप्त, असंजी-पर्याप्त और असंजी-अपर्याप्त ये चार जीव- समास्त, संजीके छहा पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां। असंजीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां। संजीके दशों प्राण, सात प्राण, आसंजीके दशों प्राण, सात प्राण, आसंजीक नो प्राण, सात प्राण: चारों संजाएं, निर्धचगित, पर्चित्त्रियज्ञाति, असकाय, जारों मनोयोग, चारों पचनयोग, औद्यारिककाययोग, औदारिक- मिश्रकाययोग और कार्मणकायदेश ये स्थारिक योग, तीनों तेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चार्चु और अचार्च ये हे। दर्शन, हान्य और सावसे छहां छेश्याएं, भन्यसिद्धिक, अस्वयस्तिद्धिकः (मध्यात्व, संदिक्त, असंविकः आहारक, अनाद्वारक, साकारेष्योगी और अनाकारोपयोगी होने हें।

उन्हीं पंचिन्दिय निर्थस मि यादिष्ट जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, संजी-पर्याप्त और असंजी-पर्याप्त ये दें। जीवसमास, संजीके छहीं पर्याप्तियां, असंजीके परंच पर्याप्तियां संजीके दशी आण, असंजीके नी प्राणः चारी संजाएं, निर्यसगित, पंचिन्दियज्ञानि, त्रसकाय, चारी मनायोग, चारी वचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योगः नीनी वेद, चारी कपाय, नीनी अज्ञान, असंयम, चक्ष और अचक्ष ये दी

नं. ५६ पंचेन्द्रिय तिर्थेच मिथ्याद्दांध जीवोंके सामान्य आलाप.

ग.				स. ग्⊨इ का											
19	٧.	÷q.	10	8 1 2 1 1 2	2.9	ર્	R	3 1 9	ર	4	٠ ٠	*	Đ,	ર્	ૈં ર
ोस	सं, प	६अ	9	स्त्र स्त्र	म. इ			अझा ।अस	चंध	गा	τ4Ι+	મિ.	म.	नाहाः	साका
1	,, अ	2 d	6	1 12	ર્વુ. ૪			1	317.	ļ	3		अम.	अना.	अना.
	अग प	• 4	હ	1	आ∙र			1		ı					- 1
	,, স				स्त. १						Į				
			1	i i i			,	1							1
1_				_							<u> </u>				1

असंज्ञम, दो दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेम्साओ, भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा े।

तेमं चेव अपजताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, दो जोवनमामा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, मन पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिक्ष्यगदी, पंचिद्रियजादी, तमकाओ, व जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंमण, द्वेण काउ-मुक्कलेस्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्माओ, भवमिद्धिया अभवभिद्धिया, मिच्छनं, सिण्णिणा अमिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुना होति अणागारुवजुना वां।

द्दीन, द्रव्य और भावसे छहीं लेड्याएं, भन्यनिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यास्य, सङ्गिक, असंबिक, आहारक, साकारोपयोगि और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचिन्द्रिय निर्धंच मिध्यादृष्टि जीवें। अपर्याप्तराल संबन्धी आलाप कहने पर— एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, संज्ञीक छहीं अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां। संज्ञीके सात प्राण और असंज्ञीके सात प्राण और असंज्ञीके सात प्राणः चारों संज्ञाएं. तिर्यंचगित, पंचिन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये वो योग, तीनों वेद. चारों कषाय, दें। अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दें। दर्शन, द्रव्यस कापोत और गुक्क लेद्याएं, भावसे इण्ण, नील और कापोत लेद्याएं। भव्यस्मिद्धिक, अभ्वयसिद्धिक: मिध्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ७७ पंचेन्द्रिय तिर्थेच मिध्यादृष्टि जीवींके पर्याप्त आलाप.

। गु	जी.	٩.	भा	₽,	₫,	इं	का.	यो.	वे.	ą,,	बा	मय	स.	₹.	4	म.	माञ्च	. आ	ु उ. ∣
																			ર
			Ψ,		ন.	पंच.	त्रस	H 8			अङ्गा	अस.	चयु	भा ६	भ	मि	स	आहा.	माका,
1	असं.							व, ४					अच		₹.		अस.		अना.
1	ч.							ઑ. શ											
1																			

नं. ७८ पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाए.

13	y .	जी.	٩.	য়া,	स । ग्र	₹. व	ा.∣्यो	वे.	奪。	श .	िसय	₹.	્છે.	भ	म	्साज्ञ-	आ.	ਰ.
1	2	ર	Ę	v	४∣१		2	₹ ;	Ŗ	ર	١ ٠	ે ર	द्र. २	3	þ	ે ર	2	२
្រ	A.	सं. उ	अ.	w	∄ते∙	, in .	औ.मि.	,		कुम.	अप	चक्षु.	का.	म.	मि	म्.	आहा	साका.
1	- 1	असं .		1	1 ,	D 16	ं कार्म-			कुश्र		अचक्षु,	. शु.	अ.		अमं.	अना.	अना.
1	ł		अ.	Ì	, ,	1	i L		i	-	ļ		भा ३					
-	1				1	-	1		-				अग.			1	1	

पंचिदियतिरिक्ख-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अयंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवमिद्धिया, सासणसम्मनं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

तेमिं चेव पज्जन्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जन्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णा, तिरिक्म्यगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दृष्य-भावेहिं

पंचेत्द्रिय निर्धेच सासाइनसम्यग्दिए जीवोंके सामान्य आलाप कहते पर—एक सासा-दन गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राणः चारों संक्षाणं, तिर्थंचगाति, पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेक्स्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय निर्यंच सासादनसम्यग्द्दाष्टि जीवींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, निर्यंचगिन, पंचेन्द्रियजानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नें। योगः तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अक्रान, असंयम, चश्च

नं. ७९ पचेन्द्रिय तिर्यंच साक्षाद्नसम्यग्दष्टि जीवोंक सामान्य आलाप.

ग	जी.	q.	श्रा.	सं.	ग	ļ š .	葪.	यो	-	वे	事	鞆 -	सय.	द	हे.	म.	स. ।	संहि.	आ.	₹.
	2		-		•			5.5		-	8	₹	9	२	इ. ६	₹.	*	٩	ર	ર
सा.	ਲ	٩.	૭		ति	प	त्रस	म.	8	ì		अशा.	असं	चक्षु.	भा ६	म.	सा.	₹.	आहा.	साका.
	lt.	Ę		1		1		व.		-				अच.					अना.	अना.
	p.	अ.			1			ओ												
<u></u>	1 112							का	1	_		<u> </u>								

छ लेम्साओ, भविमद्विया, मामणमम्मत्तं. मण्णिणो, आहारिणो मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तंसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओं. तिरिक्चगदी. पंचिदियजादी, तमकाओं, दो जांग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दें। अण्णाण, असंजम, दो दंगण, द्वेण काउ-सुकक्के लेस्माओं, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओं; भवीमद्विया, सामणसम्मत्तं, सिण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सामारुवजुना होति अणागारुवजुना वा

और अन्त्रश्च ये दो दर्शनः द्रव्य और भावने छहां लेख्याएं, भव्यांनिङ्कि, सामादनसम्यक्त्यः, मंक्रिक, आहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थंच सासाइनसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासाइन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवस्वमास, छहाँ अपर्याप्तियां सान प्राण, चारों संक्षापं, निर्थंचगिन, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये देरे योग, नीनों वेद, चारों कपाय, कुमिन और कुश्रुन ये देर अक्षान, असंयम, द्रव्यसे कापोन और शुक्क लेक्स्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोन लेक्स्यापः भव्यत्यिक्तक, सासादनसम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगि और अनाकारोपयोगि होते हैं।

नं. ८० पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दष्टि जीवींके पर्याप्त आलाप.

ग.जी प प्राः मंग इंका योः वे कि झा सय ड ्छं स. मर्गात ता ु उ १ १ ६ १० ८ १ ९ ९ ९ ९ ९ २ १ १ १ २ सा हु ति हो है में ४ अज्ञा तमं चे खु सा देश है में अता. हे ओं १ अच्छ है अच्छ

तं. ८१ पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्द्रि जीवोंके अपर्याप्त आलापः

गुजी पत्रा.स गईका यो वे क हा सय द. छे भ.स साँचे आ उ. ११६७४११२३४२१२३४२१२२२ साम अ अ ति के का भी कि अहा साका क्रम अस चक्ष का ससासा मे आहा साका जिल्लाम कार्म अस चक्ष का ससासा मे आहा साका भा ३ अश् पंचिदियतिरिक्ख-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमा, दे। दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेम्साओ, भविपिद्विया, सम्मामिच्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे।

पंचिदियतिरिक्ख-अमंजदसम्माइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीव-ममामा, छ पज्जतीओ छ अपजनीओ. दम पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, एगारह जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावहिं छ लेम्साओ, भवमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पंत्रेन्द्रिय तिर्यंत्र सम्याग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्याग्मिथ्यादृष्टि गुणम्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां. दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंत्र-गित, पंत्रेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औद्यारिककाययोग ये नो योगः तीनों वेदः चारों कपायः तीनों अञ्चानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्याग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचिन्द्रिय निर्यंच असंयतसम्बन्धि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्बन्धि गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राणः चारों संबाएं, निर्यंचगिन, पंचिन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः नीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके नीन दर्शन, दृज्य और भावने छहाँ लेश्याएं, भव्यामिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक

नं. ८२ पंचेन्द्रिय निर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

																		्र आ.	, 3.
٩	×	ć	70	8	٩	१	9	8	۲,	Х	₹	9	; २	इ ६	9	, ,	₹	,	્ર
म∓ग	संप.		-		ति-	पचे.	त्रम	म. ४			ज्ञान.	अस.	चध्	भा. ६	भ	मम्य.	म.	आहा.	साका.
İ			1					ब. ४			₹		अच.	ī		,			अनाः
1							i :	आ. १			अज्ञा.	i				i			
1							ŀ				मिश्र.					į J			

सण्णिणा, आहारिणा अणाहारिणा, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेंमि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णिं वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्व-भावेदिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व. संक्षिक. आहारक. अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थंच असंयतसम्यग्दि जीवों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, तिर्थंचगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ८३ पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्	र्जाः	प. प्र	ा∣ सं.	ग.	Ķ.	का.	यो-	वे.	क.	श्चा.	संय	द.	हे.	म [स.	माञ्च	आ.	उ
8	×	ξ 9c			₹		99		¥	₹	१	3	द्र. ६	*	₹·	1	3	٦ ٦
(let	सप.	प ७	•	ति.	पंच	त्रसः	म• ४	1		मति	अस.	के.द.	भा. ६	म.	आंप.	स.	आहा.	साका.
ক	सप.	Ę					ৰ. ४			श्रुत.		विना		1	क्षा		अना.	अना,
		अ.	ł				ओं २			अव.					क्षायोः			
ļ			-			l	का-१											

नं. ८४ पंचेन्द्रिय तिर्यंत्र असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग.	र्जा.	٩.	भा	म्,	ग.	₹.	का,	या.	₫.	邨.	ज्ञा	संय.	द.	ਲੇ.	ਸ .	स.	संक्रि.	লা.	उ.
		ξ	१ o	Х	۶	₹	\$	9	₹	X	₹			द्र. ६			₹	?	٦
अति.	सं.				ति	चाः	٠	म. ४ व. ४			मति.	अस	के. द.	मा.ध	ਮ.	ओ.	स.	आहा.	साका.
ক	ч.					-ci	E E				श्रुत.		विना-			क्षा.			अना -
1								ओ. १			अव.					क्षाया.			
1	ł	- 1						1											- 1

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, सत्त पाणा, चत्तारि मण्णा, तिरिक्ष्वगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, तिण्गि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, द्वेण काउसुक्केलस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेम्मा; भविमिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहरिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

पंचिदियतिरिक्य-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-ममासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, नत्तारि मण्णाओ, तिरिक्यमदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंमण, दच्वेण छ लेम्या. भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्याओ; भवियद्विया, खइ्यसम्मत्तेण

उन्हीं पंचेन्द्रिय तियंच असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणम्थान, एक मंज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, तियंचगाति, पंचिद्रियजाति, जसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग आर कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे कापोत और शुक्क लेश्याणं, भावसे जधन्य कापोतलेदयाः भव्य-सिद्धिक, औपश्मिकसम्यक्त्वके विना दे। सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पचेन्द्रिय निर्यंत्र संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सबाएं, तिर्यंचगित, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनेवांग, चारों वचनशोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिक तीन बान, संयमासंयम, आदिक तीन दर्शन, द्रय्यसे छहों छेश्याएं, भावमें नेज, एक और शुक्कदेश्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्तवे विना दो सम्यक्तव,

नं. ८५ पंचेन्द्रिय निर्यंच असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ਹ.												म, स-ामिश		_ 3,
1 '			O	6	y s	9		9	6 ₹	1 3	- 1	2 2	້ວ	२
<u>, iz</u>	य अ	 		ιâ	Г. _ю .	∤ म	ो। भि	g	मांत	असं. के द	ħΪ"	म-क्षायाः स	आह्य	माका.
ক		ঠ			ъ-	į.	कार्म		설립					अना,
Ĺ						1			अव		मा १	1		į
<u></u>									1		का.	<u> </u>		

विणा दो सम्मनं, सिण्णणो, आहारिणा, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार् ।

पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइड्डि-प्पहुडि जाव मंजदामंजदा त्ति पंचिंदियतिरिक्ख-भंगो । णविरि विसेमो पुरिम-णवुंमयवेदा दो चेव भवंति, इत्थिवेदो णरिथ । अथवा तिण्णि वेदा भवंति ।

पंचिदियतिरिक्खजाणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, चत्तारि जीव-ममासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पजनीओ पंच अपञ्जत्तीओ, दम पाण मत्त पाण णव पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवद, चत्तारि कमाय, छ णाण, दो संजम, तिर्णण दंमण. द्व्य-भाविंदि

संब्रिक, आहारक, साकारीपयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

पंचिन्द्रिय तिर्थंच पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर —मिध्यादिष्ट गुणस्थानसे लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक पंचेन्द्रिय तिर्थंच सामान्यके आलापोंके समान ही आलाप समझना चाहिये। विशेष बात यह है कि इनके वेद स्थानपर पुरुष और नषुंसक ये दें। ही वेद हैं।ते हैं, स्त्रीवेद नहीं होता है। अथवा तीनों ही वेद होते हैं।

विशेषार्थ — पंचिन्द्रिय तिर्थंच पर्याप्तकांके दे। ही चंद चतळानेका यह आभित्राय है कि योनिमती जीवोंका पर्याप्तक भेदमे अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, योनिमितयोंका स्वर्गत्र भेद गिनाया है। अथवा पर्याप्त और योनिमती तिर्थंच इन देनों भेदोको गाँण करके पर्याप्त दाव्दक द्वारा सभी पर्याप्तकोंका ब्रहण किया जावे तो पंचिन्द्रिय तिर्थंच पर्याप्तकोंके आळापमें तीनों वेदोंका भी सद्भाव सिद्ध हो जाता है।

पंचेन्द्रिय-तियंच योनिमितयोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संक्षीं पर्याप्त, संक्षीं-अपर्याप्त, असंक्षी-पर्याप्त, असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमासः संज्ञीके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां, असंक्षीके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां: संज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण, असंक्षीके नी प्राण, मात प्राणः चारों संक्षाएं, तिर्यचगित. पंचेन्द्रियजाति, तस्तकाय. चारों मनोयोग. चारों चचनयोग. औदारिककाययोग, आदारिकिमिश्रकाययोय और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः स्त्रीचेद्द. चारो कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन क्षान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये देश संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. ८६ पंचेन्द्रिय तिर्यंच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु. जी. प. प्रा सं.	गः। इ कः. यो.	वं⊺क. झा	सय दः	ਰ	म. म _ माज्ञ	आ. उ.
१ १ ६ १० ४	1995					१ २
दश. 🚅	ति. • ६ म े । । ज ल व.	👣 मॉन				आहा साका.
H.	। । जे कि बु	४ ' श्रुन	. त्रिना.	गुभ.	क्षाया	अनाः
,	ां ऑ.	१ अत्र.			1	
		I			1	f

छ लेम्साओ, भविमाद्धिया अभविमाद्धिया, खड्यसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणीओ, अमण्णिणीओ, आहारिणी, अणाहारिणी, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांे।

तामि चेव पज्जनजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पज्जनीओ, दम पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंमण, दव्य भाविहि छ लेस्साओ, भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं,

छहों लेखाएं भव्यसिष्ठिक, अभव्यसिष्ठिकः आयिक सम्भत्यके विना पांच सम्यक्तव, संक्षिनी, असंजिनीः आहारकः आनाहारकः साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचीन्द्रय तियंच योनिमितयोंक पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—आदिके पांच गुणस्थान संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दे। जीवसमास, संज्ञीक छहाँ पर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां: संज्ञीक द्यों प्राण, असंज्ञीके नो प्राण: चारों संज्ञाण, तिर्यवगाति, पंचीव्हियज ति, जसकाय, चारों मनोयाग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योग: क्यीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अनव्यसिद्धिकः अधिकसम्मत्यके विना पांच सम्यक्त, संज्ञिनी, असंज्ञिनी।

नं. ८३ पंचेन्द्रिय तिर्थच योनिमतीक सामान्य आलाप.

l ^{aj}	जा.	Ч	भा म	ग	इं. का	यो. । वे.	ণ	ল্য	मग	G.	ਲ.	4.	म्.	माई।	311	ਤ.
						200										
ĺЯ.	स प	£ -1	9	ſа	he	म ८ हो. व. ४		ना ३	नग	. s.	मा.६	भ	भा	स.	आहा.	साका.
41	म अ	- q	9		7 4	व. ४		63	E1.	विनाः		4	વિ	र्यमं	अना-	अना.
	ाग प					ir ə						1				
쇄	⊣ग अ.					कार्म. १			l							
दग.							I	ł]
				1		1	1	1 .						i		1

नं. ८८ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमर्ताके पर्योप्त आलाप.

ग. ५	जी. प प्रा २ - द प्रा	म ग इं. ८ १ १	. को. यो. १ ९	त्र. फ १ ४	_्ह्या - इ	['] गय _२	₹. ર	हे. र ६	स २	ग. ५	माज्ञ २.	जा. १	₹ 3.
मि	म.प प. ९	भि प	न म. ४	स्री	अज्ञा.	अम	केद	-∏•	₩.	्रशा.	स.	आहा.	माका
ना	अस प. 🥶 🗀		य ८		3	द्रअ	त्रिना		4	विना	अग		अनाः 📗
ч.	प.		आ ।	1	ञ्चान.								
₹					₹								
ढ.						1							1

सण्णिणीओ अस्णिणीओ, आहारिणी, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

पंचिदियतिरिक्खअपज्जनजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणहाणाणि, दो जीव-ममासा, छ अपज्जनीओ, पंच अपज्जनीओ, मत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ. दो जोग, इत्थियद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंमणा, द्वेषण काउ-मुक्कलेग्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलम्मा; भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, मिच्छनं मामणसम्मनिमिदि दो सम्मनं, मण्णिणी अम-णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, मागाकवज्जना होति अणागाकवज्जना वा ।

पंचिद्यितिग्कियजोशिणी-मिन्छ।इहीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाण, चनागि

आहारक, साकारोपयोगिनी और अनाक रोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचिन्द्रिय तिर्थंच योगिमांत्रयांके अपर्याप्तकालसंवार्या आलाप कही पर—सिध्या-हृष्टि और सामादनसम्यग्दांष्ट ये दें। गुणस्थ न, संती-पर्याप्त और असंबी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास. संबीके छहीं अपर्याप्तियां. असंबीके पांच अपर्याप्तियां, संबी और असंबीके सात सात प्राण, चारों संबाण तिर्थंचगाति, पंचिन्द्रियज्ञाति, तमकाय, औदारिकमिश्रकाय-योग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, स्वीवेट, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञात, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यस्य कार्पात और शुक्कलेक्याण भावसे कृष्ण, नील और कार्पात लेक्याणः भव्यापिक्तिक, अभव्यासिक्तिक मिश्य त्य और सामादन-सम्यक्त्य ये दें। सम्यक्त्य, संजिती, असंजिती आहारिणी अनाहारिणी साकारोपयोगिती और अनाकारोपयोगिती होती हैं।

पंचेन्द्रिय निर्यच मिथ्यार्गष्ट योनिमनियोंक अलाप करने पर—एक भिथ्यादांष्ट्र गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीव-

नं. ८९ पंचेन्द्रिय तिर्यंच यानिमतीके अपर्याप्त आलाप

गु] जी	ď	ঝা	सं ग	इं	事厂	यो	ঝ	ł	ıΪ	गग्	3	त्र	न	म	माज	। आ	3
र	3	६अ	9	8 8	9	1	<	1	/	~	4	,	: 5	>	-	२	4	٦ ٦
मि.	सं.अ.	4 ,,	9	নি	-	नस	भा भि	24		FĦ	14	11 설립	का	स	14.	ग	आहा	 २ सामा
सा.	असं ,,			1	b		काम.			मश्च		নৰ	žI.	1	41.	अस	अना.	अना
													भा र]
1													अगु.					1
	1																	- 1

जीवसमामा, छ पज्जनीओ छ अपज्जनीओ, पंच पज्जनीओ पंच अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दव्व-भावेहिं छ लेस्माओ, भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवज्जना होंति अणागारुवजुत्ता वां।

पञ्जनपंचिदियतिरिक्यजोणिणी-भिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवममामा, छ पञ्जनीओ पंच पञ्जनीओ, दम पाण णत्र पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्यगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णत्र जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजम, दो दंसण, दन्व-भोवेहिं छ लेम्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

ममास, संक्रिनीके छहं। पर्याप्तियां, छहं। अपर्याप्तियां: असंक्रिनीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: संक्रिनीके दशों प्राण, सान प्राणः असंक्रिनीके ने प्राण, सान प्राणः चारों संक्रिपे, तिर्यंचगित, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-कायययोग, औदारिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये स्थारह योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय तीनों अक्रान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं छेद्यापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिनी, असंक्रिनीः आहारिणी, अनाहारिणीः साकारो-पयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हों पंचे िन्द्रय तिर्थन मिथ्यादि यो निमितियों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणम्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संझी के छहां पर्याप्तियां, और असंझी के पांच पर्याप्तियां संझी के द्द्रों प्राण, और असंझी के ना प्राण, चारों संझाण, तिर्थनगित, पंचे िन्द्रयज्ञाति, त्रसकाय, चारों मने योग, चारों यचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योगः स्त्री वेद, चारों कथाय, तीनों अझान, असंयम, चान्नु और भच्छु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों ठेदथाएं, भन्यसिद्धिक, भभव्यसिद्धिक,

नं. ५० पंचेन्द्रिय तिर्थंच योनिमर्ता मिथ्यादाष्ट्रेके सामान्य आलाप.

Į Jį	जी.	प	श्रा	स ग	÷. 3	का. यां.	वे.	巫,	ञ्चा.	सय.	₹,	हं.	स.	स. स	ोशे.	397.	उ.
1 8	8	ξq.	20	3 8	*	१ ११	>	Х	Ę	8	ર	₹. €	વ	\$	3	2	२
मि.	म. प	६अ.	છ	नि	पंग. त्र	रस म.४	स्या		अशा.	असं.	चश्च-	भा ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	स. अ.					् व. ४											अना,
1	अयं प	't H.	৩			ં કોં ત્ર											
	अस.अ.					का. १											

मिच्छत्तं, सिण्णिणीओं असिण्णिणीओं, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ी

तानिमयज्ञनीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जनतीओं पंच अपज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ष्मगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभव-िमद्धिया, भिच्छत्तं, सण्णिणी अमण्णिणी, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

मिथ्यात्य, संक्षिनी, असंक्षिनीः आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती है।

उन्हीं पंचेन्द्रिय निर्थंच मिथ्यादिष्ट योनिमातियोंक अपर्याप्नकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञिनीके छहों अपर्याप्तियों, असंज्ञिनीके पांच अपर्याप्तियों: संज्ञिनी अपर्याप्तिके सात प्राण, असंज्ञिनी अपर्याप्तिके सान प्राण: चारों संज्ञाणं, निर्थंचर्गात, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमिति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कछेश्यापं, भावसे रूपण, नील और कारोत लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अभ्यासिद्धिक: मिथ्यास्य, संज्ञिनी, असंज्ञिनी: आहारिणी, अनाहारिणी: साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती है।

मैं ९१ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमनी मिथ्यादृष्ट्रिके पूर्याप्त आसाप.

1	<u>जी</u> .	٩.	श्रा±स,	ाग	₹.	का.	यो.	वे !	क.्झा	सग.	द्.	·5.	41,	ग गींब	31.	₹. (
ι.			१० ४			?	8	9	8 3	7	ર	इ ६	3	۶ ـــ	,	٦ -
ाम	्स.प.	1.0	(5)	ात.	पर्च.	त्रस	म. ४	챙	্খনা.	ं अग.	चस्	मा-६	41.	ांभ रा	भाहा ह	माका 📗
1	अस.प.		'		1		व ४	, 1	}				1	अस.	1	अनाः
	1)			आ.१		1	1		,			1	
1_		1	1 1			1		ŀ		1		j	1			- 1

नं. ९२ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादृष्टिक अपूर्याप्त आलाप

पचिदियतिरिक्खजाणिणी-सामणमम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ, छ अपज्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दन्त्र-भावेहिं छ लेस्माओ, भवसिद्धिया, सामणमम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होति अणागारुवजुत्ताओं वा

तासिं चेव पञ्जनीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्चगदी, पंचिद्यजादी, तसकाओ, णव

पंचेंन्द्रिय निर्यंच सासादन अस्यग्दिष्ट योनिमनियों के सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राण: चारों संज्ञाणं तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्याग्द योगः स्त्रीवंद, चारों कपाय, तिनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावस छहों हैश्याणं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणीः अनाहारिणीः स्वागोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दिष्ट योनिमितयोंक पर्योप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणम्थान. एक संबी-पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सब्बाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं ९३ पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती सामादन सम्यरदृष्टिके सामान्य आलाप.

ł	ग्र.	जी	प.	प्रा	म्	ग	₹.	का	यं।	व.	क.	द्या.	सथ.	द	तेत्र	भ	म,	सांज्ञ.	आ	₹. [
																				٦
E	IT	4 4	q	৬		ति.	प्य.	त्रम.	म. ४	या		अज्ञा	अस.	चिसु	सा ः	म.	वाया	स.	आहा.	साका.
1		भ ा							व. ४					अंच						अना.
ļ			भ						કો ર											
I_									का. १											[

नं ९३ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमनी सासादन सम्यग्दृष्टिके पर्याप्त आलाप.

्रग∫र्जाप.	प्राःसं-∣ग∖इ-	का. यो.	वं क।	ज्ञाः सय द	. ह भ.	म. साज्ञे.	आ. उ. ∣
/ १ ६	20 8 2 2	۶ - ۲	9 8	३ १ ३	१ द. ६ १	१ १	, र
या स.प.	ं ति. पचे∗	त्रस म.४	स्राम् 🧦	अज्ञा. अस 🔻	मा.६ म.	सासा. सं.	आहाः साकाः
1 ;	. 1	त्र ४	i f	H	•		्र अनाः 📗
1	1 1	. आं. १		}			
		1		1			

जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमा, दो दंमण, दच्व-भावेहिं छ लेम्माओ, भवसिद्धिया, मासणमम्मत्तं, मण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

तामिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अप-अत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दृव्वेण काउ-सुक्क-लेम्साओ, भावेण किण्ण-णील-काउलेस्साओ, भवामिद्धियाओ, मासणसम्मत्तं, मण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, मागारुवज्जताओ होति अणागारुवज्जताओ वा ।

पंचिदियतिरिक्खजोणिणी-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदिय-

और औदारिककाययोग ये ने योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय. तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावस छहों लह्याएं. भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य. संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासाइनसम्यग्दाष्टि योनिमतियोंके अपयोप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासाइन गुणम्थाान. एक संझी-अपयोप्त जीवसमास. छहों अपयोप्तियां. सात प्राण, चारों संझापं. तिर्यंचगति, पंचिन्द्रयजाति, लसकाय, आदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग. स्त्रीचेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यमे कापोत और गुक्रु लेदया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेदयाणं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संक्षिनी, आहारिणी, अनाहारिणीः साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती है।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि योनिमितियोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं,

नं. ९५ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सासादनसम्यग्द्रष्टिके अपर्याप्त आलापः

∤ ग्	जी.	٩.	at.	स	ग	\$	का	यो.	वे	奄.	ज्ञा	सय-	ζ.	ले.	म.	स.	संज्ञि	आ	₹.
٩	*	Ę	ড	ሄ	8	8	*	્ર	*	४	ર	१	3	द्र. २	Ł	2	₹	ર	٦ -
₩1.	स.अ	अ.			ति.	and the	E.	अं।.मि. कार्मः	मी,		∓्रम	अस.	चथु-	का	भ	मामा,	स	आहा.	साका.
1						Ė	175	कार्म.			कुश		अर्च.	হ্				अना.	अनाकाः
			- 1								_			भा ३					
1														अग्र.	1				

जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णा-णेहिं मिस्माणि, असंजमी, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मा-मिन्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ मागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वां ।

पंचिदिय-तिरिक्ख-जांणिणी-अमंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सिण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजानि, त्रमकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योग, स्त्रींचंद, चारों कपाय, नीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होनी हैं।

पंचेन्द्रिय-तिर्थंच असंयतसम्यग्दृष्टि योनिमितियं के आलाए कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रज्य और भावसे छहाँ लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वक विना दो सम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

नं. ९६ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

ग.	र्जा.	q	সা	सं.	ग.	₹.	⊢का	' योः	व	क√ झा.	सय	्द.	15.	भ.	। स-्	माझ.	आ.	₹
٩	۶	Ę								8 3						2	2	ર
सभ्य-	सप.				íα.	पच.	नस	म. ४	₽ÎI.	शा न .	अम.	चध्र.	्मा ६	स∙	सम्य.	-₩-	आहा.	साकाः
j								व. ४		, ३		अच.			'			अना.
			1					ઓં. ૧		अन्।	i		1	1				
1			1				1		- 1	मिथ					1			

नं. ९७ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती असंयतसम्यग्दृष्टियांके आलाप.

गु जी प पा सं					आ. उ.
१ १ ६ १० ४					શ ર
<u>स.</u> प. ति	. पंच चस म ४ सा	मति. असः वि	द मार्व स	अाप- स-	आहा. साका.
ন্ত	व. ४)	ना,	क्षायोः	अना,
	आ.१	अव.			
	!		1		· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·

पंचिदिय-निरिक्ख-जोणिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, निरिक्कारदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, निष्णि णाण, संजमायंजमो, निष्णि दंसण, दच्वेण छ लेम्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ. भवसिद्धियाओ, खहय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सिष्णिणीओ, आहरिणीओं, सागारुवज्ञताओं वा होंनि अणागारुवज्जताओं वा ी

पंचिदिय-तिश्वित्व-लिद्ध-अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, वे जीव-समासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ. नन पाण मन्त पाण, चनारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, वे जोग, णवंग्यवेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजमो, दो दंमण, द्वेषण काउ-सुक्कलम्साओ, भावण किण्ह-णील-काउ-

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच संयतासंयत योनिमतियोंके आलाप कहने पर - एक देशविस्त गुण श्यान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशां प्राण, चारें संक्षाएं, तिर्यचर्गात, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारें मनोयं,ग, चारें वचनयोग और औदारिककाययोग ये नां योगः स्त्रिवेद, चारें कपाय, आदिके तीन क्षान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां लेश्याएं, भावसे तेज, एक और श्रुक्त लेश्याएं भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दें। सम्यक्त्व, संक्षिनी, आहािश्णी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी हाती हैं।

पंचिन्द्रिय-तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—एक मिध्यादि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, असंज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिधकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्रु लेद्याएं, भावसे कृष्ण, नील, और कापोत लेद्याएं: भव्य-

नं. ९८ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती संयतासंयतींक आलाप.

l	ग.	जी.	ч.	प्रा	퀴.	η,	इ	का.	या.	वे. क.	₹ा	मंय	द्.	ल,	स.	स	संज्ञि.	এা.	ड. ।
Ì	१	₹	ξ	₹ 0	6	,	>	<	8	9	3		्३	द्र. ६	१	۲	₹.	8	٦
	हें इंड	स. प	1			H	ф.	<u>-</u>	म. ४ व. ४	ન્ત્રી.	मान श्रतः	દ્ર√	काद. विनाः	भा र शम•	н.	आप. क्षाया.	स.	आहा.	साका. अनाः
	l	'							ओं. १		अब.								

लेस्पाओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

एव निस्किवगदी समत्ता ।

मणुमा चउविवहा हवंति मणुम्मा मणुम-पज्जत्ता मणुमिणीओ मणुस-अपज्जत्ता चेदि । तत्थ मणुम्पाणं भण्णमाणं अत्थि चेदिम गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ. दम पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणमण्णा वि अत्थि, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, तेग्ह जोग अजागो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, नत्तारि कमाय अकताओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त मंजम, चत्तारि दंमण, दच्य-भावेदि छ लेम्पाओं अलेम्मा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ मम्मत्तं, मण्णिणो णेव मण्णिणो णेव अमण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो,

स्तिष्ठिक, अभव्यसिष्ठिक मिथ्यत्या साजक, असीक्रक, आहारका अनाहा**रकः साकारोपयोगी** ओर अनाकारोपयोगी होते हैं।

इस प्रकार । नर्यचगतिक आसाप समाप्त हुए ।

मनुष्य चार प्रकारके होते हे—मनुष्य, मनुष्य-पर्याप्त, मनुष्यनी और लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य। उनसें। सनुष्यसामारके जालाप कहते पर—चोदहों गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीउनसाम, छहे। पर्याप्तियां छहें। अपर्याप्तयां, दशों प्राण सात प्राण, चारें। संज्ञां, और आणसंज्ञारण सी स्थान होता है। मनुष्यमति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, विकिथिककाययोग और वैकिथिकिथिकिथिकिथिकिथिकि विना तेरह योग, तथा अयोग-स्थान भी होता है। निर्मे वेद तथा अपगतोद स्थान भी होता है। चारों कपाय तथा अकपाय-स्थान भी होता है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दशीन, द्रव्य आर भावमे छहीं लेड्याणं तथा अलेड्या-स्थान भी होता है। स्थासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्य, संज्ञिक, तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारक, अनाहारकः साकारो-

नं. ६० पंचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यपर्याप्तक जोवेकि आलाप.

ग जी. प प्रा. स ग. इ. वा					
रिर ६७४११	र / ४ आसि	ा र र द	ड - ४ a ar. a rif	र २ २	, mer
मि.स १ अ. ७ ।त गुण्ट म	जार्म हिं	म् अ	લા. નુ 🚶	असः अना	्रअनाः
₹.			म ३ अञ	'	

[2, 2.

सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ता वा मागार-अणागारेहि जुगवद्वज्ता वा ा

तेमि चेव पडजताणं भण्णमाणं अत्थि चोहम गुणद्वाणाणि, एओ जीवममासो, छ पद्धत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ मीणमण्णा वि अत्थि, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, नेरह जोग ओरालिय-आहार-मिम्म-कम्मइएहि विणा दम वा अजोगो वि अन्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अन्यि, चत्तारि कमाय, अकमाओ वि अरिथ, अद्र णाण, मत्त मंजम, चत्तारि दंमण, दव्य-मार्वीहं छ लेम्माओ अलेस्मा वि अत्थि, भवमिद्धिया अभविभिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो जेव सिण्णिणो जेव असिण्णिणो

पयोगी, अनाकारंगपयोगी और साकार अनाकार इन दोनों उपयोगींस युगपत उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं सामान्य मनुष्योके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहीं गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमासः छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारी संज्ञाण, तथा श्रीणसंज्ञार प भी स्थान होता है: मनुष्यगति, पंचेत्रियजाति, बसकाय, बैहित्यिककाययोग बैकियिकमिश्र-काययोगके विना तेरह योगः अथवा पूर्वांक दो और औदारिकमिशकाययांग आहारकमिथ्र-काययोग और कार्मणकाययोग इन पांच योगेंकि चिना दशयोग तथा अयोग-स्यान भी है। तीनें वेद तथा अपगत-वेद-स्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपाय-स्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेड्याणे, तथा अलेक्या-स्थान भी है। भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संज्ञिक और अमंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित

नं. १००

सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप.

ग जी. प. प्रा स. ग. इ का. यो वे. क बा सय ट. ल. स. स. साई आ. । उ. **१८२ ६१**०४१ १ १ १३ ३४:८ ७ ४ ५६२ ६ सपप ७ क्रु.स. पच. त्रस. ये. हि. सअ ६ हि. विकास मा-६ म अले. अ. अना. अया. यु. उ. अ.

वि अतिथ, आहारिणो अणाहारिणो, अजागि-भयवंतस्य सरीर-णिमित्तमागच्छमाण-परमाणूणमभावं पेक्खिऊण पज्जत्ताणमणाहारित्तं लब्भदि । सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा''।

भी स्थान है: आहारक, और अनाहारक भी होते हैं। मनुष्योंके पर्याप्त अवस्थाम अनाहारक होनेका कारण यह है कि अयोगिकेवली भगवानके दारीरके निमित्तभूत आनेवाले परमाणुओंका अभाव देखकर पर्याप्तक मनुष्योंके भी अनाहारकपना वन जाता है। साकारोपयोगी अनाकारो-पर्यागी तथा साकार अनाकार इन दोनें। उपयोगोंसे युगपत उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ—ऊपर योग आलापका कथन करते हुए वैकियिकहिक, आहारकिमिश्र, औदारिकिमिश्र और कार्मणकाययोगके विना दश अथवा केवल वैकियिकहिकके विना तेरह योग वतलाये हैं। दश योग तो मनुष्योंकी पर्योप्त-अवस्थामें होते ही हैं, परंतु अपर्याप्त-अवस्थामें होनेवाले औदारिकिमिश्र आहारकिमिश्र और कार्मणकाययोगको मनुष्योंकी पर्योप्त अवस्थामें यतानेका यह कारण है कि यद्यपि तेरहवें गुणस्थानमें समुद्धातके समय योगेंकी अपूर्णता रहती है फिर भी उस समय पर्योप्त-नामकर्मका उदय विद्यमान रहता है और शरीरकी पूर्णता भी रहती है, इसिलये पर्योप्त-नामकर्मके उदय और शरीरकी पूर्णताकी अपेक्षा कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्धातगत केवली भी पर्योप्त हैं और इस्प्रकार पर्योप्त अवस्थामें औदा-पिक्रमिश्र तथा कार्मणकाययोग वन जाते हैं। इसीयकार छठवें गुणस्थानमें आहारिमश्रकाययोगके समय भी पर्योप्त-नामकर्मका उदय रहता है, इसिलये ऐसा निर्वृत्तिसे अपर्याप्त होता हुआ भी जीव पर्योप्त-नामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्योप्त ही है: अतः आहारिमश्रकाययोग भी पर्योप्त-आवस्थामें बन जाता है। इसप्रकार उपर्युक्त तीनों योग विवक्षा भेदसे पर्याप्त-अवस्थामें भी वन जाते हैं इसलिये मनुष्योंकी पर्याप्त-अवस्थामें तेरह योग भी गिनाये हैं।

नं. १०१ सामान्य मनुष्योंके पर्याप्त आलाप.

η.,	र्नाः	प	ЯŢ.	₹1	ar.	₹.	का	र्याः	ब्रे.	事	朝	संय-	đ,	छे. मै∙	म. संक्षि.	आ.	' ड. ∣
28	१	ξ	१ 0					१३				v	8			3	٦.
1	b.			þ.	η.	्याः	÷	ष २ त्रिनाः	÷	-				मा ६ म		•	
	Ė			1		ש	100	वं २ त्रिनाः १० म-४	3	अब्				अऌ∙ अ	अनु∙	अना.	
				90				્ય - •									यु. उ.
<u></u>								आ.१आ.१									

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, एओ जीवसमासी, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ अदीदमण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तमकाओ, आहारमिस्मेण सह तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, पंच णाण केवलणाणेण छ णाण, असंजम मामाइय-छेदोवहावण-जहाक्खादेहि चत्तारि मंजम, चत्तारि दंमण, दव्वेण काउ-मुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्माओ; भवसिद्धिया अभविभिद्धिया, सम्मामिच्छत्त-उवसममम्मत्तेण विणा चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो अणुभशे वा, आहारिणो अणाहारिणो, मागास्वज्ञता हेति अणागास्वज्ञता वा तदुभया वा'ं।

उन्हीं सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप करने पर—मिध्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमन्तसंयत और स्योगिकेवली ये पांच गुणस्थान. एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, जात प्राण, चारी संक्षाएं तथा अतीतसंक्षा स्थान भी हैं। मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहार्गमश्रकाययोगके साथ औदारिक-मिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग इसप्रकार तीन योग, तीनी वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कथाय तथा अकवाय स्थान भी है, कुमित, कु गृत तथा आदिक तीन ज्ञान थे पांच कात और कवलकान इसप्रकार छड कान, असंयम, सामाधिक, छद्देशप्यापता और यथाप्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, इत्यमे काषात और इनुक्र लेदयाएं, भावन छहीं लेदयाएं। भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: सम्यग्निध्यात्य और उपदामसम्यक्त्यके विना चार सम्यग्निक, अना-क्षार अर्थान संक्षिक और असंक्षिक इन दोनी विकल्पीसे रहित स्थान, आहारक, अना-क्षारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनी उपयोगीसे युगपन उपयुक्त होते हैं।

H. 102

सामान्य मनुर्ध्योके अपर्याप्त शालाप.

{ N.	जी.	9	গা ,	र्स	η.	₹.,	का.	यो	व.	事.	झा	स् \mathbf{q}^{-1}	5	છે.	स ।	П.	मान्ने	आ.	उ. ।
4		६अ.	9	8	8	7	*	ું રૂ	₹	8	Ę	8 1	8	द्र. २	٦ ٔ	R	9	२	र
ांमे.	स.अ.	1		þ.	म	ч.	त्रस.	आ मि	· 🔓	 	त्रिसं	अस.		का-	म ।	मि	म.	आहा.	साका. अना.
साः	1	1		नु	İ		Ì	्या मि.	12	1	मनः.	सामा.		্য,	अ.	सा.	अनु	अना.	अन्।.
अ	i		'	200	ì		İ	्कामं.		1	विना-	छेदो ।		भा-६		क्षा.		,	यु उ.
স.			,							١,		यथा.			. 1	क्षाया.			
स.												1					1		

मणुम-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जतीओ छ अपञ्जतीओ, दम पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेव पन्जत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पन्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमा, दो दंसण, दन्त्र-भावेहिं छ लम्माओ, भवमिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीवेंकि आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहा पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां, दशां प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह्य योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहां छेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, संज्ञिक, आहारक, अना-हारकः साकारोगयोगी और अनाकारोगयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, मनुष्यगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग य नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अबान, असंयम, च अ और अचक्ष ये दो दर्शन, द्रव्य और आवसे छहीं लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संबिक,

नं. १०३ मामान्य मनुष्य मिथ्याद्दियोंक सामान्य आलाप.

17	. લાં.	ч.	मा.,	म्.	ग् _। ह	. কা.	या.	वे	क	হ্লা.	सय	ا _{از} . ت	₹,	म.	म.	संह्रि-	आ.	उ. ∣
्र भि							" १ १ म. ४											
	स.अ		•		4 4	14	न. ४			्रास्ता.	খল	યજુ. ¹ ¥થં.	मा ५	я. я.				अनाः
	संप	अ			1		ओ २ का.१	1						1				

होंति अणागारुवजुत्ता वा'ं।

तेसिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुककिल्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादि सामान्य ममुप्योंक अपर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आंदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कथाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रश्यसं कापोत और ग्रुक्त लेक्यापं, भावसं कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं: भव्य-सिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

नं. १०४ सामान्य मनुष्य मिध्यादृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

1	ŋ.	∫जी∙ः	q .	प्रा	सं∙	ग.	₹.	का	यो.	वे. क.	श्रा.	सय.	द.	ਲ.	म.	म :	स बि	. आ.	ਤ.
1	?	1	Ę	30	8	8	3	9	8	3 8		۶		द्र-६	3	ξ	2	2	ેર
١	मि -	स.प.	l I			म.	ď.	त्र.	म. ४		अज्ञा.	अस•	चिश्र	भा ६	अ	मि.	स.	आहा.	साकाः
1									व. ४			1	अच.		म.			1	अना.
١									ओ. १	'		Į.		1					i
ı		1			ł							1		I	ļ			t	
																[_ ,		[

नं. १०५ सामान्य मनुष्य मिध्यादृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

ı	ग्.	जी.	η,,	ЯI	सं,	ग्"	इ. व	īI.	्यो.	वे.	죡.	য়া.	संय.	₹.	ਲੇ.	भ.	स.	सिन्न	आ.	₹.
ł	₹	₹.	६अ						્ર		У	ે ર	ধ্	ર	द्र. २	3	*	Ę	ર	ર
ł	मि.	सं.अ.				म.	प व		ओःमि			कुम.	अस.	चशु.	का.	Ħ.	भि.	स.	आहा	साका.
ł									कार्म.			कुश्रु.		अच.	गु.	अ.			अना.	अना.
1															मा. ३					
١				1	1					1					अशु.					
1		i				_		_		- 1					l					- 1

मणुस्स-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदिय-जादी, तमकाओ, एगारह जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्य-भावेहिं छ लेस्ताओ, भवसिद्धिया, सामणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेमि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्साओ, भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति

सासादनसम्यग्हिए सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमान, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राणः नारों संक्षापं, मनुष्याति, पंत्रेद्रियजाति, त्रसकायः नारों मनोयोग, नारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, नारों कपाय. तीनों अक्षान, असंयम, नश्च और अनश्च ये दो दर्शन, दृष्य और भावसे छहीं लेदयाणं, भव्यानिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यन्दि सामान्य मनुष्योंक पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारों संबाएं, मनुष्यगित, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नें। योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अव्वान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेद्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संविक, आहारक,

नं. १०६ मापान्य मनुष्य सासादनसम्यग्द्रष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु. १	र्जा.	प. ६प.	भाः । १०	स ग ड ४,१ 1	का. १	ये! ११	व उ	奪. ×	शा. ३	मंय. १	द. २	इ. ६	म . १	स. १	सन्ति. १	આ. ર	ड .
			હ	4.	기 개	म. ४ व. ४ ऑ.२	`	ł	अज्ञा	अस	चेक्षु. अचे.	भा ६	भ.	सासाः ,	सं.		साका. अना•
			1			का.१											

अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपजत्ताणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एअं। जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, यत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तपकाओ, दे। जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, द्व्यण काउ-सुक्कलेम्साओ, भावण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया साम्रणसम्भत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वज्ता होति अणागास्वज्ता वा ।

मणुम्स-सम्मामिच्छाइद्दर्शणं भण्णमाणं अन्थि एयं गुणद्वाणं, एअ। जीवसमासो, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामादनसम्बर्ग्याण्य सामान्य मनुष्यांके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाणं, मनुष्यगति, पंत्रेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग ओर कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों येद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अबान, असंयम, न्यक्षु और अन्नश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शृद्ध लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्यामिश्यादृष्टि सामान्य मनुष्यांके आलाप कहने पर-एक सम्याग्मिश्यादृष्टि गुण-

तं १०७ मामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दष्टियांके पर्याप्त आलाप.

ग्.	जी.	d	त्रा.	मं.	व	₹.	का.	या.	त्र	क	शा.	सय द	रंग	ਜ.	स.	माझ.	3/1.	उ.
												१ २				ų	8	2
सा-	स.प.				म	पचे.	त्रस.	U . 8		·	अন্না,	अम. च	मा. ६	म.	मामा,	यं.	आहा.	साका-
1					ı		i,	व. ४		1 :		अ.				1		अनाः
1					Į		. i	आ. १		'				I		{		- 1
1	t	I	1	,						l i		1				i	1	- 1

नं. १०८ सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दिष्टयोंके अपर्याप्त आलाप.

1	Į :	जी.	q	या	सं ग	इं	का	यो	व	क	म	स्य	द	ले	भ	म	माज	3(1	उ ।
19	ı _	१	₹अ.	৩	8 8	9	2	્ર	₹	1.	સ્	9	ঽ	롯. २	5	१	\$	२	२
स	। सं	.अ.			म	٠ الد	त्रस	ओ.मि कार्मः			PH.	अस	चक्षु	का	41	मा.	स.	ं आहा ं	साकाः
1					ţ	6		कार्म.			મુશ્રુ.		अर्थ	ग्.				अना.	अना.
(भा ३					- 1
					-									अगु.					- 1
- }	1				1													!	

पज्जन्तिओ, दम पाण, चनारि मण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग. निण्णि वेद, चनारि कमाय, निण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणिहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंमण, दव्य-भाविहि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिन्छनं, सण्णिणा, आहारिणो, सागारुवजुना वा होनि अणागारुवजुना वा

"मणुत-अमंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमामा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, दस पाण मत्त पाण, चनारि मण्णाओ, मणुमगदी, पंचि-दियजादी, तमकाओ, एगारह जीग, तिण्णि वेद, चनारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम,

म्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां. दशौँ प्राण, चारीं संज्ञाण, मनुष्यगति, पंचित्तियज्ञाति, प्रसकाय, चारीं मनीयोग, चारीं वचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योगः तीनीं चेद्र, चारीं कपाय, तीनीं अज्ञानींसे मिश्रिन आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दें। दशीन, इच्य और भावसे छहीं लेह्याणं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारीपयोगी और अन(कारोपयोगी होने हैं।

असंयतसम्यग्हिए सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्हिए गुणस्थान, संजी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सान प्राणः चारों संजील, मनुष्यगति, पंचेत्वियाति, जनकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदाग्किकाययोग, औदाग्किकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्याग्ह योगः तीनें। वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन द्शीन,

नं १०९ सामान्य मनुष्य सम्याग्मिथ्याद्ययांके आस्तापः

可.	र्जा	प.,श	स	भ	3.	का	यो।	वं.	奪.	. या	मय.	. द	ले	Ħ	ग,	माज्ञ.	आ.	ब. ।
,	9	ह । १०	6	У	9	ę	4	₹	8	ঽ	*	ર્	₫. €	7	· 5	*	,	ે ર
127	म प			н.	$q \neq$	44.	ff R			शान.	अस	नध्य	411 3	47.	वग्रम	स	आहा	साका.
1							व ४			₹		শ্ব						अना.
1							आ, १			अज्ञा								1
										मिय								

नं. ११० सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दिष्यांके सामान्य आलाप.

									या.											
1:	₹	ર્	६प.	20	6	*	*	2্	११	₹	४	₹	8	5	٠. ६	3	₹	8	ર	ર
		म.प	€31.	19		म	पचे.	नग	म. ४ व. ४			मीत.	अग.	के द-	भा द	47.	ओंप.	स-	आहा.	साका
13	5	प. अ.							व. ४			શ્રત.		निना.			क्षा.		अना.	अना.
									ओस			अव					श्वायो.			
L									का, १											

तिण्णि दंसण, दृष्य-भावेहि छ लेम्माओ, भविमाद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चतारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंगण, दव्य-भाविहि छ हेस्माओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणां, आहारिणां, मागारुवज्ञता होंति अणागारुवज्ञता वा"।

तेसि चेव अवज्जनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एअं। जीवसमासो, छ अवज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, मणुसगर्दा, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद । देव-णेरइअ मणुस्म-अमंजदसम्माइहिणो जदि मणुस्मेसु उपान्जंति तो

द्रब्य और भावने छहीं लेश्याएं, भव्यत्मिङ्कि, अंत्यश्मिक, क्षायिक अंत् आयोपश्मिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्रिक, आहारक, अनाहारकः माकारापयोगी और अनत्कारीपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयत्तमध्य हि सामान्य मनुष्यों के पर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्य ग्टिए गुणम्थान. एक संबी-पर्याप्त जीवसमास. छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबापं, मनुष्यगिन, पंत्रीन्द्रयज्ञानि, त्रमकाय. चारों मनोयोग. चारों बचनयोग और औदारिककाययांग ये ना योगः तीनों येद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दशीन, द्रव्य और भावमे छहों लेश्याणं, भव्यामिक्रिक. औपश्रामिक, आयिक और आयोप-श्रामिक ये तीन सम्यक्त्य, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्हि सामान्य मनुष्यों के अपर्याप्तकाल मंबन्यी आलाप कहने पर— एक अधिगतसम्यग्हि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात माण, चारों संबाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, एक पुरुषवेद होता है। केवल एक पुरुषवेद होने का यह कारण है कि देव, नारकी और मनुष्य असंयतसम्यग्हिए जीव मरकर यदि मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, ते।

नं १११ सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दिष्योंके पर्याप्त आलापः

	प प्रा⊤से, ग.	ईं. का	यो वे	क	ह्या	मय द.	के. भ	स सीज्ञ	आ.	3.
	€ 808 8	१ १	९ ३	8	₹	y 3	5 E 9	3 8	5	2
<u>सं</u> स.प. क्र	म	पचे. त्रस	म∙ ठ व ४	1	भातः। भन	ं अस, क.द. ं विना.		आ- मं क्षा.	1 1	साका अनाः
1			ओं र		अव.			क्षाया		111
_	<u> </u>						1	11		ł

णियमा पुरिसवेदेसु चेव उप्पर्जित ण अण्णवेदेसु, तेण पुरिमवेदो चेव भिणदो । चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्मा, भावण छ लेस्माओ । तं जहा — णेर्ड्या असंजदमम्माइडिणो पढम-पुढवि-आदि जाव छट्टी-पुढवि-पज्जवमाणामु पुढविसु द्विदा कालं काऊण मणुम्बेसु चेव अप्पष्पणे पुढवि-पाओग्गलेम्माहि मह उप्पर्जेति चि किण्ड-गील-काउलेस्मा लब्मंति । देवा वि अमंजदसम्माइडिणो कालं काऊण मणुस्बेसु उप्पर्जिमाणा तेउ-पम्म-सुक्कलेम्माहि सह मणुम्बेसु उववर्जित, तेण मणुम्म-अमंजदमम्माइडिणमपज्जत्तकाले छ लेस्साओ हवंति । भविमादिया, उवसमयम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणेत, आहारिणेत अणाहारिणोत, मानारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा" ।

मणुम्य-संजदा संजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामो, छ

नियासे पुरुषवेदी मनुष्यों में ही उत्पन्न होते हैं, अन्यवेदवाले मनुष्यों में नहीं: इससे एक पुरुष् वेद ही कहा है। वेद आलाप के आगे चारों कपाय, आदिक तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्यमें कापोत और शुक्क लंदयाएं, भावसे छहां लेदयाएं होती हैं। अधिरतसम्यग्दि अपर्याप्त मनुष्यों के छहां लेदयाएं होने का कारण यह है कि प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी-पर्यंत पृथिवियों में रहनेवाल असंयतसम्यग्दि नारकी मरण करके मनुष्यों में अपनी अपनी पृथिविके योग्य लेदयाओं के साथही उत्पन्न होते हैं. इसिल्यि तो उनके रुष्ण, नील और कापोतलेदयाएं पाई जाती हैं। उसीप्रकार असंयतसम्यग्दि देव भी मरण करके मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, इसिल्य असंयतसम्यग्दि हैं। उसीप्रकार असंयतसम्यग्दि देव भी मरण करके मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, इसिल्य मनुष्य असंयतसम्यग्दि योके अपर्याप्तकालमें छहां लेदयाएं बन जाती हैं। सम्यवत्य आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपर्यामकसम्यक्तके विना दे। सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक, साकारोक्योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर-एक वैदाविरत गुणस्थान, एक

मं. ११२ सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दवियोके अपर्याप्त आसापः

η.	जी.	q	प्रा	सं । ग.	₹.	का.	योः	वे	क	啊.	संय.	₫.	ਰ.	₽.	स.	,साह्र-	आ.	₹.
2	१ स.अ.	६ अ.	৬	४ र	2	ैर त्रसः	्र औं मिन् कार्म.	9 g.	8	३ मतिः	१ अर्म.	३ के. द	ज़ २ का.	? भः	२ ¦क्षा∙	्र सं-	२ आहा	२ साकाः
क्र					d		कार्म.			श्रुत. अव.		विना	गु. मा∙६		भाया	.	अना,	अना,
١												l				I	, 1	

पन्जत्तिओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमा, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण छ हेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्साओ; भविसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वार्ष

संपिह पमत्तसंजद-प्पहुडि जान अजोगिकेनिल त्ति तान म्लोघालाने। अणृणे। अण-धिओ वत्तन्त्रे। मणुम्प-पज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइद्वि-प्पहुडि जान अजोगिकेनिल त्ति तान मणुम्सोघभंगो। अथवा इत्थिनेदेण निणा दे। नेदा वत्तन्त्रा एत्तियमेनो चेन निमसो।

संद्धी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संद्धाण, मनुष्यगति, पंचिन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदार्किकाययोग ये ना योग, तीनों वेद, चारों कवाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याण, भावसे पीत, पद्म और शुक्कां ह्याणं, भव्यसिद्धिक, औपश्चिक, आयिक और श्वायोपशिमक ये तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अब प्रमत्तसंयन गुणस्थानसे लेकर अयोगिकंवली गुणस्थान तक न्यूनना और अधिकतासे रहित मूल ओघालाप कहना चाहिये, अथीन गुणस्थानोंकी अपेक्षा जो आलाप छठे गुणस्थानसे लेकर चौदहवें गुणस्थान तक कह आये हैं वे ही यहां मनुष्योंके छठे गुणस्थानसे चौदहवें गुणस्थान तकके समझना चाहिये, क्योंकि छठेमे आगेके सभी गुणस्थान मनुष्योंके ही होते हैं, इसलिये सामान्य कथनमें और इस कथनमें कोई विशेषता नहीं है।

मनुष्य-पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिश्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक मनुष्य-सामान्यके आलापोंके समान आलाप जानना चाहिये। अथवा वेद आलाप कहते समय स्त्रीवेदके विना दे। वेद ही कहना चाहिये, क्योंकि सामान्य मनुष्योंने पर्याप्त मनुष्योंने इतनी ही विशेषता है।

विशेषार्थ— जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंकी विवक्षा न करके पर्यात शब्दके हारा सामान्यसे सभी पर्याप्त मनुष्योंका बहुण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंमें तीनों वेदः

नं. ११३ सामान्य मनुष्य संयतासंयतोंके आलाप.

2	् <u>जी∙</u> १ सं-प	्षः प्रा.संः गः ६ १०४ । १ सः	? 9	३ ४ मां	३ १ ति दश त.	₹	ह. ६ सा.३	र म•	ર આ	₹.	्र आहाः	٦
					† 							

मणुमिणीणं भण्णमाणे अन्थि चेह्म गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छप्पज्जतीओं छ अपज्जतीओं, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं स्वीणसण्णा वि अन्थि, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओं, एगारह जोग अजोगों वि अन्थि, एत्थ आहार-आहारमिम्सकायजोगा णात्थि। कि कारणं ? जेसि भावो इत्थिवेदो दव्वं पुण पुरिसवेदो, ते वि जीवा संजमं पिडवर्जीत । दिन्वित्थिवेदा मंजमं ण पिडवर्जीत, सचेलतादो । भावित्थिवेदाणं द्व्वेण पुंवदाणं पि संजदाणं णाहारिष्द्री समुप्पजदि दव्व-भाविहि पुरिसवेदाणमेव समुप्पजदि तेणिन्थिवेद पि णिरुद्धे आहारदुगं णित्थि, तेण एगारह जागा भिणया। इत्थिवेदो अवगदवेदो वि अन्थि, एत्थ भाववेदेण पयदं ण द्वववेदेण। कि कारणं ?

वालोंका प्रहण हो जाना है, अनः इस अपेक्षांसे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप सामान्य मनुष्योंके समान वनलाय गये हैं। परंनु जब मनुष्योंके अवान्तर मेहें।मेंसे पर्याप्त मनुष्योंका प्रहण किया जाना है तब पर्याप्त मनुष्योंसे पुरुप और नपुंसक वेदी मनुष्योंका ही ब्रहण होता है, क्योंकि स्त्रीवेदी मनुष्योंका स्वनंत्र भेद गिनाया है। मनुष्यके अवान्तर भेदोंमें पर्याप्त शब्द पुरुप और नपुंसकवेदी मनुष्योंमें ही सद है, इसलिये इस अपेक्षांसे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप कहते समय स्त्रीवेदको छोड़कर आलाप कहे हैं।

मनुष्यनी (योनिमनी) स्त्रियोंके आलाप कहने पर—चौदहीं गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंबी-पर्याप्त ये दे जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां दहीं प्राण, सात प्राणः चारों संक्षाएं तथा क्षीणसंक्षारूप भी स्थान है। मनुष्यगति, पंचिन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिककिमश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तथा अयोगरूप भी स्थान है। इन मनुष्यनियोंके आहारककाययोग और आहारकिमश्रकाययोग ये दे योग नहीं होते हैं।

रांका — मनुष्य-िम्नयोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान— यद्यपि जिनके भावकी अपेक्षा स्त्रीवेद और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुपवेद होता है वे (भावस्त्री) जीव भी संयमको प्राप्त होते हैं। किन्तु द्रव्यकी अपेक्षा स्त्रीवेदवाले जीव संयमको नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि, वे सचेल अर्थात वस्त्रसिहत होते हैं। फिर भी भावकी अपेक्षा स्त्रीवेदी और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुपवेदी संयमधारी जीवोंके आहारऋदि उत्पन्न नहीं होती है, किन्तु द्रव्य और भाव इन देनों ही वेदोंकी अपेक्षासे पुरुपवेदवाले जीवोंक ही आहारऋदि उत्पन्न होती है। इसलिए स्त्रीवेदवाले मनुष्योंके आहारकिकके विना ग्यारह योग कहे गए हैं। योग आलापके आगे स्त्रीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है। यहां भाववेदसे प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं। इसका कारण यह है कि यदि यहां द्रव्यवेदसे

'अवगद्वदो वि अन्थि' त्ति वयणादो । चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अन्धि, मणपजव-णाणेण विणा सत्त णाण, परिहार-संजमण विणा छ संजम, चत्तारि दंसण, दच्व-भाविह छ लेस्साओ अलेस्सा वि अन्धि, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धिया, छ मम्मत्तं, सिण्णिणीओ णव मिण्णिणी णेव असिण्णिणी वि अन्धि, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सामार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा"।

तासि चेच पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चाहस गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छप्पजतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, खीणसण्णा वि अत्थि, मणुमगदी, पीचिदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग णव वा अजोगो वि अत्थि, इत्थिवेद अवगदेवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकमाओ वि अत्थि, सत्त णाण, छ संजम, चत्तारि दंसण,

प्रयोजन होता तो अपगतवेद्कप स्थान नहीं बन सकता था, क्योंकि, द्रव्यवेद चौद्दवें गुण-स्थानके अन्ततक होता है। परन्तु 'अपगतवेद भी होता है' इस प्रकारका वचन-निर्देश नैं। युणस्थानके अवेदभागसे किया गया है, जिससे प्रतीन होता है कि यहां भाववेदसे ही प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं। वेद आलापके आगे चारों कपाय, तथा अकषाय-स्थान भी होता है। मनःपर्ययक्षानके विना सात क्षान, परिहार्रावेशुद्धिसंयमके विना छह संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्यापं. तथा अलेश्याम्य भी स्थान होता है। भञ्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संक्षिनी तथा संक्षिनी और असंक्षिनी इन देनों विकर्णोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणीः साकारोपयोगिनी, अनाकारोपयोगिनीः तथा साकार और अनाकार उपयोगसे युगपन उपयुक्त भी होतीं है।

उन्हीं मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणम्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं. तथा श्लीणसंझा-स्थान भी है। मनुष्यगित, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वेकियिककाययोग, वेकियिकिमिश्रकाययोग, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोग इन चार योगोंके विना ग्यारह योग, अथवा, उपर्युक्त चार और श्रीदारिकिमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग इन छह योगोंके विना ने। योग तथा अयोग स्थान भी होता है। स्त्रीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है। चारों कपाय, तथा अकषाय स्थान भी होता है। मनःपर्ययञ्चानके विना मान जान, पिरहारविश्रदिसंयमके

नं. ११४ मनुष्यनी स्त्रियोंके सामान्य आलाप.

ſ	ŋ.	र्जा.	q	ग्रा	₹.	47.	इ	का.	यो.	व	क.	श्रा.	सय.	₫.	ਲ.	स.	म.	माज्ञ.	आ	उ.
ı	१४	ર	Ę	१०	ሄ	₹	9	1	99	ξ	४	હ	Ę	X	₹.६	ર	Ę	₹	3	ે ર
١	İ	स.प.	q	ভ	b.	म.	. पा	ė,	म ४	र्म्या	Ŀ	मनः.	परिहाः विनाः		मा.६	भ.		₹.	आहा.	साका.
1		मं अ.	Ş		1	. '	Ъ	14	व, ४	F.	16	विना.	विना.		अल	Э,		अनु.	अना.	अना,
١			Я.		30	1			ગાં. ર	봤	641									यु. उ.
1						1			का. १											1

द्व्य-भोर्वाहं छ लेस्मा अलेस्मा वि अन्थि, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, मिणणीओ णेव मिणणी णेव अस्णिणी, आहारिणी, अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ं।

तामि चेव अपज्ञमाणं भण्णमाणे अन्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जमीओ, सत्त पाण, चनारि मण्णाओ खीणसण्णा वि अन्थि, मणुसगदी, पंचिं-दियजादी, तमकाओ, दो जोग, इन्थिवदो अवगदवेदो वि अन्थि, चनारि कसाय अक-साओ वा, दो अण्णाण केवलणाणेण तिण्णि णाण, असंजमा जहाक्यादेण दोण्णि संजम,

विना छह संयम. चारों दर्शन, द्रव्य और भाषसे छहों लेश्याएं तथा अलेश्या स्थान भी होता है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्य, संज्ञिनी, तथा संज्ञिनी और असंज्ञिनी विकरणमें रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणीः साकारोपयोगिनी, अनाकारोपयो-पयोगिनी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगिनी युगयत उपयुक्त भी होती है।

विशेषार्थ — पर्याप्त सामान्य मनुष्योंके तेरह अथवा दश योगोंके होनेका स्पष्टीकरण ऊपर कर आये हैं, उसीप्रकार पर्याप्त मनुष्यत्तियोंके ग्यारह अथवा ने योगोंके संबन्धमें भी जीने लेना चाहिये। यहां इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदियोंके आहारक ऋदि नहीं होती है, अत्तप्व इनके आहार और आहार्यास्त्र ये दो योग नहीं पाये जाते हैं। इसप्रकार स्त्रीवेदियोंके पर्याप्त अवस्थामें ग्यारह अथवा ने योग ही होते हैं।

उन्हीं मनुष्यनियों के अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासाद्दनसम्बन्दिष्ट और सर्यागकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्र.ण. चारों संज्ञाणं तथा श्रीणसंज्ञा स्थान भी है। मनुष्यगति, पंजेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्रकाययांग और कार्मणकाययांग ये दो योग, स्त्रीवेद, तथा अपगत-वेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपाय स्थान भी है। कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान तथा सयोगकेवली गुणस्थानकी अपेक्षा केवल ज्ञान, उसमकार तीन ज्ञान, असं. यम और यथाल्यातिवहारगुढि ये दो संयम, चश्रु, अच्छ और केवल ये तीन दर्शन,

नं. ११५ मन्यनी स्त्रियोंक पर्याप्त आलापः

ग	. রা	प.	मा	म	11	₫,	₹1.	यो-	व.	事	्ञा ।सय-	₹.	₹.	4.	म.	यांज्ञ.	ं आ.	उ. ∣
9	6 8										پ _ا و						२	3
	ंस.प.			F	Ħ	Ŧ	Ŧ	प्रवास	વી	=	मन , पांग.		4]] _a s	₩.		म.	आहा.	साका.
				414.1				ነ # /	÷	<u>-</u> -	विनाः विना		36%	Ŋ		अन.	ं अना.	अना.
1	i	۱ ۽		()				1 /	2	עוו								यू. उ.
	1	í						- आ, 🞗								1		
L	- 							प्रयो.			1					1		<u> </u>

केवलदंसणेण निष्णि दंसण, द्वेष काउ-सुक्कलेम्सा, भावण किण्ह-णील-काउलेस्सा सुक्कलेम्साण् चत्तारि वाः भवसिद्धियाओं अभवसिद्धियाओं, मिच्छत्तं, सासणसम्मत्तं खड्यसम्मत्तेण तिष्णि सम्मत्तं, सिष्णिणीओं अणुभयाओं वा, आहारिणीओं अणाहारिणीओं, सागाह्वजुत्ता होति अणागाह्वजुत्ता वा तदुभएण वां।

"मणुमिणी-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ, दम पाण सत्त पाण, चनारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण,

द्रव्यसे कापोत ऑर शुक्कलेस्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेस्या, अथवा शुक्कलेस्याके साथ उक्त तीनों लेस्याएं मिलकर चार लेस्याएं होती है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और आधिकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्वः संक्षिनी और अनुभ्भय अर्थात् संक्षिनी अस्मिनी विकल्प-रहित स्थान भी होता है। आहारिणी, अनाहारिणी। साकारोपयोगिनी अनाकारोपयोगिनी तथा उभय उपयोगोसे उपयुक्त होती है।

मिश्यादृष्टि मनुष्यिनियोके सामान्य आलाप कहने पर—एक भिश्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, और संज्ञा-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छठों पर्याप्तयां, छहों अपर्याप्तियां दृशों प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञाणं, मनुष्यम्ति, एचिन्द्रियज्ञाति, अनकाय, चारों मना-योग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकिभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यार्ह योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो

नं. ११६ मनुष्यनियोंके अपर्योप्त आलापः

गु	जा.	Ч	प्रा.	म	41	ţ,	का	योग	ন	奪.	वा	मय.	द्र₊	ē,.	भ,	स.	स्राध	आ	उ
1 2	्र स . अ	٤	, tr	~	9	3	9	5		अक्पाः ०	3	२ अम. यथा	३ चेक्षु. अचे.	द २	२ भ अ	3	8	२ आहाः पनाः	२ माका अनाका मु. उ.

नं. १९७ मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप

η.	3	ή.	q	яı.	स.	IJ.	₹	का	या.	ब.	奪.	न्ना.	संय.	द.	₹.	म	म्	र्माज.	आ.	₹.
9		ર	₹4.	10	Х	*	٤	3	8 8	5	4	R		ર	द्ध. ६	₹	₹	۶	ર	२ साका, अना
									भग - ८							·				

असंजमो, दो दंसण, दन्य-भावेहि छ लेस्साओ, मवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सिण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारु वजुत्ताओ वा ।

मिन्छाइहि-पज्जत-मणुनिणीणं भण्णमाणे अन्यि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पडजतीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, मगुमगदी, पचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कमाय, निण्णि अण्णाण, अमंजमा, दो दंमण, दच्च-भावेहि छ लेस्माओ, भविमिद्धियाओ अभविमिद्धियाओ, भिच्छत्तं, गण्गिणी, आहारिणीओ, सामारु-वज्जनाओ होनि अणागारुवज्जनाओ वा

मिन्छाइड्डि अपजन-मणुसिनीलं भण्णमाणे अन्यि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-ममामा, छ अपजनीओ, यत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो जोग, इन्थिवेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, अयंजमी, दो दंगण, दृष्वेण

दर्शन, इष्य और भावने छहें। हेश्याण, भव्यांनिद्धिक, अभव्यनिद्धिकः मिथ्यक्ष्य, मंद्रिनी, आहारिणी, अन हारिणीः साकारोपयोगिनी तथा अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

मिथ्याद्दाष्टि मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्टे गुणस्थान, एक संबी पर्याप्त जीवसतास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संबाण, मनुष्यगति, पंचीन्द्रयजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग तथा औदारिककाय-योग ये नी योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, भीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु ओर अचक्षु थे दें। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेदयाणं, भव्यक्षिडिक, अस्व्यसिडिकः मिथ्यास्य, संविती, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनुकारोपयोगिनी होती है।

मिथ्यादिष्टि अपर्याप्त मनुष्यितियोंके आस्ताप कहने पर--एक मिथ्यादिष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञां, मनुष्यगित, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, ओदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अञ्चान, असंयम, चश्रु और अचनु ये दो द्र्यान,

नं. ११८ मिध्यादृष्टि मनुष्यतियोके पर्याप्त आलापः

ग	. र्ज	,	4	nt.	a f	ग	Ş	机	यो.	वे.	45	ह्या.	मय	a	ĕ	H	, म	र्याब.	आ.	3.
۶	y	. (Ę																	
भि	ь	;				म्	, Ity		A. 3	₽j,		⊿हा।	प्रम	7) (]	सा ६	Й.	मि	η.	आदा.	२ माकाः अनाः
	þ	-					<u>-</u>	N.	स् ४					√ব		H				अनाः
1									31 F											

काउ-सुक्कलेम्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्माओः भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सामारुवजुत्ताओ होति अणामारु-वजुत्ताओ वा ।

मणुमिणी-सामणसम्माइङ्घीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, दे। जीवसमाया, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण. चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ. एमारह जीम, इन्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिष्णि अण्णाण, असंजम, दे। दंसण, दव्य भाविहि छ लग्माओ, भविमिद्धिया, सामणसम्मतं, मण्णिणीओ, आहारिणी अणाहारिणी, सामारुवजुत्ता होनि अणागाह्यज्ञता वा ।

हृद्यंस कापोत और शुक्क लेक्याणं, भावमं कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अशुभ-लेक्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः भिश्यान्य, संजिनी, आहारिणी, अताहारिणी, साकारेपयोगिनी और अनाकारेपयोगिनी होती है।

सासादनसम्यष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहन पर—एक सामादन गुण-स्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास छही पर्याप्तियां. छही अपर्या-प्तियां: दशों प्राण. सात प्राणः चारों संबाण, मनुष्यगित, पंचीन्द्रयज्ञाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग. औदारिककाययोग. औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः स्वीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, अस्यम, चन्नु और अचन्नु ये दें दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं होद्याणं, भव्यासित्तिक, सामादनसम्यक्त्य, संविनी, आहा-रिणी, अनाहारिणीः साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

नं. ११९ मिण्यादप्रि मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आरुए.

17.	ु जी•	9	प्रा	सं	ग	5 .	457	था	व.	Ł	MI	यय	દ	1 2.	7.7	ग.	गर्बि	त्रा	ਰ.ੂੂ
1 8	2	₹ 31.	9	6	2	۶.	8	3	12	४	२	>	٠	3 -	ર	, ,	19	, R.	2
मि.	स, अ.	1			म	9,	तम.	ं ओ सि	111.		TH.	গ্ৰ	714	Ŧſ	4	મિ	∫ स्.	1-11-1	सावा
Ι.				I	! !			कार्म.			F 44		서리.	:1	1.		1	अना	अना
1)]	1	1					.सा ३	f			1	
1	1	1		ĺ			į		1 1				1	'এল.	ł		ļ	ł	
1	ļ	1		}		ì			1		l			1	-		İ	,	}

नं. १२० सासादनसम्यग्दाप्ट मनुष्यतियोंके सामान्य आलाप.

ग	जी	q.	π	П.	I].	₹.	41.	या	ৰ.	4	লা	मंग	ፈ.	₹.	\$4	ग	याति	ুশা∣ ভ
								1/										
सा	म प	σ.	ড		₹,	प्चे.	त्रस.	$H = \zeta$	4.		31.TT.	{#{ _*	पश	भा ६	स	मामः		्तरा स्याकाः
	स अ							व. ८					14					िअसा.। अ ना .
		अ.						ઓ-ર										1
L								का.१										

पज्जत-मणुमिणी-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतिओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, इन्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, द्व्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सामणसम्मत्तं, मण्णिणी, आहारिणी, सामारु-वज्जताओ होंति अणागारुवज्जताओ वा ।

अपज्ञत्त-मणुसिणी-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणं अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासं, छ अपज्ञत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेम्सा, भावेण किण्ड-णील-काउलेम्साओ, भवासिद्विया, सामणसम्मत्तं,

पर्याप्त सामादनमम्यग्दाष्टि मनुष्यनियंकि आठाप कहने पर—एक सामादन गुण-म्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों सक्काएं, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियज्ञाति, तसकाय, चारों मनोथोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योग, क्वीवेद, चारों कपाय, तीनों अक्कान, असंयम, चन्नु और अचन्नु ये दो दर्शन, इत्य और भावसे छहाँ हेदयाएं भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यक्त्य संक्षिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अपर्याप्त सामादतसम्यग्दाष्ट मनुष्यानयोके आलाप कहने पर—एक सामादन गुण-म्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहें। अपर्याप्तियों, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, मनुष्यगाति, पंत्रीन्द्रयज्ञाति, वसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दं योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचञ्च ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापात और शुक्क लेदयाणं, भावस कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अश्र लेदयाणं: अध्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणीः साकारोप-

नं. १२१ मामादनसम्यग्दाप्टि मनुष्यनियोके पर्यापन आलाप.

9 * 5 * 0 8 * * * 8 * 8 * 8 7 7 8	आ, उ.
सा. मं.प म हुन म. डेना अज्ञा अस. चथु, मा ६ म हुन य. ड) १ आहा. साका. अना.

सण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुव नुत्ता होति अणागारुव नुत्ता वा" ।

मणुमिणी-सम्मामिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जाग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहि मिम्माणि, अर्धजमी, दे। दंगण, दच्य-भावेहि छ लेम्माओ, भवमिद्धियाओ, सम्मामिन्छत्तं, मण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवज्ञताओं होंति अणागारुवज्ञताओं वां ।

मणुमिणी-अमंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणं अन्थि एयं गुणद्वाणं, एऔ जीवसमाना,

ये(गिनी और अनाकारोपयो।गिनी होति हैं।

सम्यामिध्यादि मनुष्यनियों के आलाप कहने पर - एक सम्यामिध्यादि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाणं, मनुष्यगति, पंचीन्द्रियज्ञानि, वसकाय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययं गये नी योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अक्षानोंस मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, दृष्य और भावसे छहाँ लेश्याणं, भव्यसिद्धिक सम्यग्मिथ्यात्व, सिक्षिनी, आदारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

असंयतसम्यग्द्यप्रि मनुष्यतियोंके आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्द्रिष्टि गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारों संज्ञाणं, मनु-

∤गु.'जी. प प्रा	.]सं≐ग	इं.ोका. यो.	वे.∤क.	्ह्याः स्यय	द. हे.	संस-्यक्ष	आ उ.
११६७	8 8	8 2 2	2 8	२ १	₹ 3. 4		२ ५
सा.सं. अ. अ.	Ħ	भे के जी पी	#H	मुम. अम	चक्ष काः	म महा-म-	भारा गाका.
	1	क्षेत्र काम		কু খ	अचनु, स्		अनाः अना
		1 .			' सार	1	
	1	i i		,	সগ		

नं.१२३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियाँके आलाप.

									क जा							आ	3.
1	१								8 3							. 9	ર
सम्य.	स.प.		Ц.	पचे.	त्रस	म	6	₽ĵ	ञान.	अस	चक्षु.	मा. ६	भ	नम्य	. म	ं आह	मासाः
1					Ì	व			₹		अच-					'	अना-
ł.		ł				ओ	. 9		,अज्ञा		1	ĺ	1			1	
									मिश्र ।				1	<u> </u>	1		1

छ पड़जत्तिओं, दम पाण, चत्तारि सण्णाओं, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओं, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंज्ञमा, तिण्णि दंसण, दन्व-भाविह छ लेम्साओं, भवसिद्धियाओं, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओं, आहारिणीओं, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ताओं वां ।

ं मणुसिणी-संजदायंजदाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासी, छ पज्जत्तीओ, दत पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, यंजमासंजमो, तिण्णि दंमण, द्व्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्सा, भवमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ,

प्यमित, पंचिद्वियज्ञाति, जसकाय, चारों मने,योग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नें। योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन द्रशन, द्रश्य और भावने छहों लेक्याण, भव्यसिद्धिक, औपश्चामिक, क्षायिक और क्षायोपश्चिक ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

संयतासंयत मनुष्यित्यों आठाप कहते पर—एक देशिवरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्यात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्त लेक्याएं, भव्यसिदिक, औपश्चिक, क्षायिक और आयोपशिमक

नं. १२४

असंयतसम्यग्द्धि मनुष्यनियांके आलाप.

1	ı j	ái.	φ,	प्रा	मं.	। ग्र	₹.	का.	यो-	ं वे. क.	হ্না•	संय-	द	ਲੇ.	भ∙।	स.	मज़ि.	आ.	उ.
١,	•		, ,	190						1 8	3	१	- 3	₹. €	*	٦ *>-	*	(8	ર
1.5	. स	Ρ.	1			म.	पच.	त्रम	H.)	४या	म ति	अम -	क.द	भा. ६	41	आफ.	स्र-	,आहाः	माका.
व्यक्ति	5		i						有。 `	8	श्त-	Ì	विना,	,	(क्षा.			अन्।,
	i		!			i			ें औ.	9	अव.				l,	क्षायी-			
					ĺ				1	i					Ì				ŀ

नं. १२५

संयतासंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

1	गु.	जी.	ч.	त्रा	ч.	₹[_	₹.	का,	या.	वे.	क.	ज्ञा.	सय-	द	á.	ਮ	स.	संक्षि.	ઑ.	उ.
			ξ	१ 0	ć	\$	2	?	9	٩	4	₹	্ধ	્ર	द्भ. ६	₹	3	•	2	ર
١	ja .	स - प•				म	<u>-</u>	٠	म. ४	संग.		मात.	दश	के.द.	्मा∙३	મ.	आप.	₹.	आहा.	साका.
1	10	ч.					5	E.	व. ८			मात. श्रुतः		भिना	श्म.		क्षा.			अना
1									ओ, १			अत्र.					क्षाया.			
1																				- 1

सागारुवजुनाओं होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-पमत्तमंजदाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इन्थिवेद-णवंसयवेदाणमुद् आहारदुगं मणपज्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमी च णन्थि। इन्थिवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, द्व्वंण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

मणुसिणी-अष्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासा, छ पञ्जतीओ, दस पाण, आहारसण्णाए विणा विण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी,

ये तीन सम्यक्त्व, संबिनी, आहारिणी, साकारीपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

प्रमत्तसंयत मनुष्यिनयोंक आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक सन्नी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तयां, दशाँ प्राण, चारा संक्षाणं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योग होते हैं। ना योगोंक होनेका कारण यह है कि स्त्रीवद और नपुंसकवदके उदय होने पर आहारक-काययोग, आहारकि मिश्रकाययोग, मनःपर्ययक्षान और परिहारिक छुद्धियम नहीं होते हैं योग आलापके आगे स्त्रीवद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेद्रोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, इत्यसे छहां लेद्याणं, भावसे तेज, एव और शुक्क ये तीन शुभ लेद्याणं, भव्यसिद्धिक, औपश्रामिक, क्षायिक और क्षायापश्रामिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्षिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी है। होती हैं।

अप्रमत्तसंयत मनुष्यित्योंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तिविष्त गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार-संक्षाके विना शेष तीन संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिक्र-

नं. १२६ प्रमत्तसंयत मनुष्यिनयोंके आलापः

] गु.	जी.	प. भगा.]	मं, ग. इ	. का	यो.	वे. क.	ज्ञा. 📗 सय	. द.	ਲ. ਜ.	म. सा	ल आ.	ुउ. │
1	₹ ;	ξ ≯ο¹	8 5	9 9	9	1 3 6	₹ ₹	. ३	इ.६ ११	₹ १	1 8	ર
11	स.प.		्रम पं	. त्र	म∙ ४	1 1	मांत- सामा		NI NI		आहा -	
74		1 .	,)		व् ४ ऑ. १		श्रुत. िदा	_ात्रनाः	1 1		,	अना.
		Li		1 1	आः प		अव.			क्षाया	,	

तमकाओ, णव जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि णाण, दो संजम, तिष्णि दंसण, द्वेगण छ लस्माओ, भावेण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, सिष्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा"।

मणुसिणी-अपुच्यकरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण मुक्कलेस्साः भवमिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणी,

काययोग ये ना योगः स्त्रीवेद्, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां छेदयाएं, भायसे तेज, एम और गुक्क ये तीन गुभ छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, आपरामिक, साथिक और आयोपरामिक ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयागिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थानन एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशां प्राण, आहारसंद्राके विना शोप तीन संब्राएं, मनुष्यगिन, पंचिन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारों मनोयोग, खारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योग, स्त्रीवेद, चारों कथाय, आदिके तीन ब्रान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां लेश्याएं, भावसे गुक्क-लेश्या, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वकं विना औपश्यिक और शायिक ये दो सम्यक्त्व,

नं. १२७

अव्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

ो गुर्जा. पः श्र	. स∙ •	1 Ş.	का.	्यो₁्∣ वे.	क	ह्या.	सय.	्र द.	ਲ.	भ.	ч.	संबि आ	ਰ•
۶ ا ۶ ا				९ । १ स. ४ ह्या.		्र सर्वे	Дип.		₹. È		₹ 311	9 2	2
अप्र स.प.	अहा. + विनाः	1 4,	141.	व, ४		अत.	नामा केदी.	क. द. त्रिना	मा र शस∙	ч.	जा. क्षा	स. आहा	अनाः
				ओं १		अव.					क्षायां.		
1		İ		-									1

नं. १२८

अपूर्वकरण गुणस्थानवार्तनी मनुष्यनियोंक आलाप.

1	Ţ.	जी.	ч.	त्रा.	Ħ.	ग.	\$.	का <u>.</u>	्यं	i.	ঝ.	事。	না.	सय.	ኛ	लं.	भ.	स₌	'सिन्	आ.	ે ૩.
				-									-			ታ. ξ				-	٦ -
3	7.	स.प			आहा	Ħ.,	ч.	Τ.	Ħ	6	र्धा							ओ.	मं.	आहा.	साका.
ł					विना				व्.	٧			श्रुत.	छेद्री	वि न ा	ग्.		क्षा.			अना.
									ओ	ξ			अव.						ì		
ĺ					ſ														i		
L					i															j	l

आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-पढम-अणियद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहार-भयसण्णाहि विणा दो सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जाग, इतिथवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुककलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणी-विदिय-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासा, छ पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावण

संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अतिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्तिनी मनुष्यितयोंके आलाप कहने पर एक अतिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमासः छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार और भयसंक्षाके विना शेष दें। संक्षापं, मनुष्यगित, पंचिन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारीं मनी-योग, चारीं वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योगः क्षीवेद, चारीं कवाय, आदिके तीन कान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दें। संयम, आदिके तीन दर्शनः द्रव्यसे छहीं लेश्यापं, भावसे शुक्क लंदयाः भव्यसिद्धिक, औपशमिक और आयिक ये दें। सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके हितीय भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर-एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, परिश्रहसंब्रा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योगः अपगतवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ब्रान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाएं, भावसे गुक्कलंदयाः

नं. १२९ अनिवृत्तिकरण प्रथमभागवर्तिनी मनुष्यनियाँके आलाप.

η,	र्जा.	q	्रा-	स.	₹.	₹.	का.	या.	₫.	क.	ज्ञा.	सय	₹.	' ਲ.	भ_	₹.	'साई	आ.	7.
₹	8	Ę									₹						8	9	٦ -
	स.प.			(H.	म.	पंचे,	त्रसः	म्, ४	यां।		मीत.	सामा.	के.द.	भा-र				आहा.	साका
प्र-				श्रीर-	1		ł	व. ४			श्रुत.	छदा.	विना.	्रगु-		क्षा.	l t	ļ	अना.
भा.				1			1	ओ. १	1		अव.						}		
	1)		-					I				I	}					

सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, दे। सम्मनं, साण्णणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

मणुसिणी-तिद्य-अणियङ्गीणं मण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पडनत्तीओ, दस पाण, परिग्गहमण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, कोधकमाय विणा तिण्णि कमाय, तिण्णि णाण, दो मंजम, तिण्णि दंमण, द्वेण छ लेम्माओ, भावेण मुक्कलेस्सा; भविमिद्धिया, दो मम्मनं, सण्णिणी, आहारिणी, मागारुवज्ञता होति अगागारुवज्ञता वां ।

भव्यिमिद्धिक, औपरामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीय भागविती मनुष्यिनयोंक आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, परिव्रहसंखा, मनुष्यगित, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, खारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नो योग, अपगतवेद, कोधकषायके विना शेष तीन कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छहे।पस्थापना ये दें। संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसं छहें। लेश्यापं, भावने शुक्कलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपश्चिक और आधिक ये दें। सम्यक्ष्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होनी हैं।

नं. १३० अनिवृत्तिकरणके द्वितीयभागवर्तिनी मनुष्यतियाँके आस्ताप.

11	র্ज।	व गा.	सं,ा ग	ļ .	का	गी.	बे∤ क	. झा	संग.	₹.	3.	4 7.	म	सिन्न	आ.	ਰ.
1/	ା ବ ୍	E 801	F 1 8	१	y	8	6/8	3	3	₹	5 &	/	ર		2	2
4[.	म. प.	1	पे स	्पनी.	ं उस	ग. ४		र्मान.	मामाः	कद.	भा. 🤊	4	41.	सं	भाहा	सायत.
î;		, ;				व ४	18	왝네.	छेदी.	विनाः	य.		धा.	1		अनाः
Hi,	i	1 1	i		,	आं. १	!	अव.			i	1		l		!
1_		1 1		-			1	i			1	i	_	1		

नं. १३१ अनिवृत्तिकरणंक तृतीयभागवार्तनी मनुष्यनियांके आन्द्राप.

ग	जी.	q	या म	ग	₹.	का	यो.	व.	वह	朝.	सय	₹.	हे.	म.	<u>म,</u>	सक्रि.	आ.	₹,	ĺ
7	,	Ę											इ. ६			*	>	ર	
প	4		,प,	्म.	· 'SI	#	म. ४	F	वर्गिय.	मांत	मामा-	4. द.	मा. 🕈	भ.	आ-	स.	आहा.	साका. अना.	l
7.	प		- 1	ı	Ď-	lk.	व. ४	জন্ম	विना.	अत.	ठदा.	विना-	স,		धा.			अना.	l
मा			1				ओं. १			अव.	!								l
ł			3	1							1								
1						ŀ				ļ									l
1_			1			1		Ì			İ			!		<u> </u>	i 		

मणुसिणी-चउत्थ-अणियद्दीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्रतीओ, दस पाण, परिग्गहमण्णा, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, तिण्णि णाण, अग्गि-दह्र-बीए अंकुरे। च्व इतिथ णवुंसय-वेदोदय-द्सिय-जीव वेदोदए फिट्टे वि ण मणपज्जवणाणमुप्पज्रदि। दो मंजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्माओ, भावेण मुक्कलेम्सा; भवसिद्धिया, दो मम्मनं, मण्णिणी, आहारिणी, मागाक्वजुना होंति अणागाक्वजुना वा'।

मणुमिणी-पंचम-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एअ। जीवममामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहमण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

अतिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थ भागवर्तिनी मनुष्यतियों के आलाप कहने पर—एक अतिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, परि- प्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञानि, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों यचनयोग, और औदारिककाययोग ये नो योगः अपगतवेद, माया और लोभ ये दें। कपाय, आदिके तीन झान होते हैं। (यहांपर खीवेदके नए हो जाने पर भी मनःपर्ययञ्चानके नहीं होनेका कारण यह है कि जैसे अग्निसे दग्ध हुए बीजमें अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता है, उसीप्रकार खी और नपुंसकवेदके उद्यसे द्वित जीवमें, वेदोदयके नए हो जाने पर भी, मनःपर्ययञ्चान उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये यहां पर भी तीन ज्ञान ही कहे गथे हैं। ज्ञान आलापके आगे सामा- यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे गुहुलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दें। सम्यक्त्व, संक्षिती, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्तिनी मनुष्यिनियोंके अलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी पर्योप्त जीवसमास, छहीं पर्योप्तियां, दशौँ प्राण् एक परिव्रहमंद्रा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रनकाय, चार्गे मनोयोग, चार्गे वचनयोग

नं १३२ अनिवृत्तिकरणके चतुर्थभागवार्तनी मनुष्यीनयाँके आलाप.

गु.जी. प. प्रा सं ग इं. का. यो वं. क जा. सथ. द ले म स. सिंज आ उ. ११६१०(११९ १९०(१) ३२३ त. ६१२१ १२ अ. स. प. म. पने तस. म ४ माया प्रति सामा हेद मा. १ म. यो स आता साका. प. प. व. ४ हिं लोग, श्रत. उदी विना जः क्षा अना. मा. ऑ.१ अवः

जोग, अवगद्वदो, लोभकसाओ, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, द्व्वेण छ लेस्पाओ, भावेण सुनकलेस्पा; भवसिद्धिया, दो सम्मनं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

ं मणुमिणी-सुहुममांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दम पाण, सुहुमपरिग्गहमण्णा, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिण्णि णाण, सुहुममांपराइयसुद्धिमंजमो, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण छ लेस्याओ, भावेण सुक्कलेस्याः भविमिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिककाययोग ये नौ योगः अपगतयेद. लोभकपाय, आदिके तीन क्वान, सामा-यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, इन्यसे छहों लेक्साएं, भावसे गुक्रलेक्साः भन्यसिद्धिक, आपरामिक और क्षायिक ये दें। सम्यक्त्य, संक्विनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयांगिनी होती हैं।

मृक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आठाप कहने पर—एक मृक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छडीं पर्याप्तियां, द्शौं प्राण, मृक्ष्म परिष्ठित्रयां, मनुष्यमति, पंचेन्द्रियज्ञाति, जलकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग, और ओदानिककाययोग ये नौ योगः अपगतवेद, मृक्ष्म ठोभकपाय, आदिके तीन झान, मृक्ष्म-साम्परायशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यम छहीं ठेश्याएं, भावमे शुक्कठेश्याः भष्य-

नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमनागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गि. जी. प प्रा सं.	ग.ं इं का. यो.	वे।क. ज्ञा.	_सय	ਫ. ਲੈ.	म. म.	मं हि. आ.	उ.
१ १ ६ १०, १ अ. स. पॉर प. प.	र १ १ % स. कं कं म. ४ जो १	ं ि ३ हो मितिः क्रुत	्र सामाः वे छदाः, वि	् ३ ८.६ कंद. भा.१ व विना, ज	૧ ્ર મ. ઝોવ ક્ષા.	१ व सं आहा.	्र माकाः अनाः

नं १३४ सूक्ष्मसांवराय गुणस्थानवार्तिनी मनुष्यनियोंके आस्रापः

ग जी प प्रा सं । ग । इं	का यो	वं क ज्ञा-	सय दि.	ह	भ. स. माही.	आ. । उ
2 2 E 20 2 2 2 7 円、円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円・円	१ ९ - म. ४	० (१) ३ मध्ये. मतिः	१ ३ स्थ्म-के.द	द्र. ६ भा. १	१ ३ १ भ औप. में	१ २ आहाः साकाः अनाः
	ार वृश्ह आःश	ह्न लाम. श्रुत. अवः	साः ।।वना	, J,	क्षा	्रामाः

मण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंनि अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीम् उवमंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एञा जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतमण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, उवसंतकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्चादिवहारसृद्धिमंजमो, तिण्णि दंसण, द्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्मा; भविमिद्धियाओ, दो मम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, मागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वार्षे।

मणुसिणीसु र्खाणकमायाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवममासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, खीणकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्यादिवहारमुद्धिभंजमी, तिण्णि दंगण,

सिद्धिक, औपरामिक और आयिक ये दें। सम्यक्त्य, संक्षिती, आहारिणी, साकारोपयो-गिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उपशान्तकपाय गुणम्थानयिनंता मनुष्यिनयोंके आलाप कहने पर—णक उपशान्त-कपाय गुणम्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवममाम, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्त-मंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-रिककाययोग थे नौ योग, अपगत्येद, उपशान्तकपाय, आदिके तीन ज्ञान, यथारूयात-विहारगुडिमंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे छहाँ लेश्याएं. भायने गुकुलेश्याः भव्यक्षिद्धक, आपश्रीक और आयिक ये दो सम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, स्वाकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

श्रीणकपाय गुणस्थानवीर्तनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक श्रीणकपाय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, श्रीणसंक्षा, मनुष्यगति, पंकेन्दियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नी योग, अपगतंबद, श्रीणकपाय, आदिके तीन क्षान, यथाख्यानविद्यारणहिसंयम, आदिके

मे. १३५ उपदान्तकपाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियाँके आलाप.

ग	जी.	प या सं	श. ई.	का	यी।	म	क	शा	सय	ζ	ले	भ	स	माज	311	3
٩	*	६ १० 🕥														٦ -
9	स. प	3.	म. हु	त्रस	म ४	प्रा.	3. -	मान	यथा	कद	भाग	म े	आप	ग	आहा	साका.
\ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \		स			वे. ४ शंर≯	35	4,	अत्. अव		1911	ગુ.		क्षा			अना
					41 1			319								l
															ı İ	

दन्वेण छ लेस्माओ, भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धियाओ, खद्दयसम्मत्तं, सिण्णणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वां ।

'मणुसिणी-सजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमामा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, चत्तारि पाण दो वा, खीणसण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, मत्त जोग, अवगदवेदो, अक्रमाओ, केवलणाणं, जहाकखादिवहारसुद्धि संजमो, केवलदंगण, दच्येण छ लेम्साओ, भावेण सुक्कलेम्सा; भविमिद्धियाओ, खइयसम्मनं,

तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां लेखाएं, भावसे गुक्कलेखाः भव्यसिद्धिक, शायिकसम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

सयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: (वचनवल, कायवल, आयु और दवासीच्छ्यास ये चार प्राण, तथा समुद्धानक्षा अपर्याप्त अवस्थामं, वचनवल और दवासीच्छ्यासका अभाव हो जानेसे, अथवा तरहवें गुणस्थानके अन्तमं आयु और कायवल ये दो प्राण होते हैं। क्षीणसंबा, मनुष्यगित, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये सात योग, अपगतवेदस्थान, अकपायस्थान, केवलबान, यथाच्यातिबहारगुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसं छहाँ लेदयाएं, भावसे गुक्तलेदयाः भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्य, संबिनी और असंबिनी इन दोनों

नं. १३६ क्षीणकपाय गुणस्थानवर्तीनी मनुष्यनियोंके आलाप

η.	जी.	q	Al	म	ग.	\$	का.	यो.	त्र	क	झा.	सय.	द.	ल.	म√स	। गन्नि	आ.	3.
1	१	Ę	90	0	2	2	?	u,	0	6	4	9	3	द्र.६	2 1 3		1	3
4	स.प.			Ħ,	म.	च	रमः	म. ८	+	شا	मति	यथा.	के.द	मा.१	भ. श	ाः सं	आहा.	साका. अना,
'রু				गुंग		٦.		वै. ४	अव	5	थुत.		विना	সু.	']		1	अना,
1				00		ĺ	į	आ, १		35	अव.			1	1			- 1
1						,	[i		'	l 1		1	

नं. १३७ सयोगिकेवली गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियांके आलाप.

्रग "	जी.				η.	इ क	। योः	वे	邨.	হ্লা.	मंय.	₹.	ੱਲ.	भ	₩.	साज्ञ.	आ,	उ. ।
9	3	ξq.	18)	0	?	1 3	৩	0	0	2	1	2	₹. ₹	18	2	(3)	ર	िर
मया	प अ	६अ.	\Q/	hr.	म.	F 1	म. २	Ė	مر ا	q.,	यथा-	क. द	भा १	ਮ-	क्षा.	अनु.	आहा.	गाका.
F	प अ 			=	1	<u> </u>	ં વૃર	अंत	4		Ì		ज.				अना.	अना.
1				26		1	ક્યાં∙ર		100		Į			[यु. उ.
				i		1	का. १						ì	i				'
	i		1	- {	- 1													
Ļ	<u> </u>		1	_	1			ì	1						į į	!		

णेव मिणणाओं णेव असिणणाओं, आहारिणीओं अणाहारिणीओं, सागार-अणागोरिह जुगवदुवजुत्ताओं वा होंति।

मणुमिणी-अजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहुाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, एओ पाणो, खीणसण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकमाओ, केवलणाण, जहाक्खादिवहारसुद्धिसंजमा, केवलदंसण, दब्वेण ल लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खह्यसम्मत्तं, णेव सण्णिणीओ णेव असण्णिणीओ, अणाहारिणीओ, सागार-अणागोरेहि जुगबदुवज्जताओ वा होति न

लद्भि-अपञ्जत्त-मणुस्माणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामा, ह अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, व

विकरपोंसे विमुक्त, आहारिणीः अनाहारिणीः साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगींसे युगपन् उपयुक्त होती हैं।

अयोगिजन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंकं आलाप कहने पर—एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, एक आयु प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगित, पंचित्वयंज्ञाति, त्रसकाय, अयोगस्थान, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलकान, यथाण्यातविद्वारगुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे अलेक्यास्थानः भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्ययत्व, संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों विकल्पोंसे मुक्त, अनाहारिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन् उपयुक्त होती हैं।

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संक्री-भपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद,

नं. १३८ अयोगिकेवर्ला गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलापः

। ग	ৰ্জা.	q.	भा.	सं.	, ग	₹	का	यो•	वे	क.	श्ला	सय.	₹.	र्क.	भ.	स.	संज्ञि	आ	<u>उ.</u> २
अय्।. ~	१ पर्या.	Ę r.	शि हो।	र्आणम. •	१ म.	पचे. 🏞	त्रस. ^	अयोग.	अपना. ॰	अस्याः ०	्र फ.	१ यथा.	् १ केद.	इ. इ.	१ स	१ क्षा.	उभ - विना	अना,	२ साकाः अनाकाः यु. उ.

जोग, णत्रुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

एवं मणुसगदी समता।

" देशगद्धि देशाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देशगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण,

चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अञ्चान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसं कापीत और शुक्क लेश्याएं, भावसे रुष्ण, नील और कापीत ये तीन लेश्याएं। भष्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार मनुष्यांके आलाप समाप्त हुए।

द्वर्गातमें सामान्य देवोंके सामान्य आलाए कहने एर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सान प्राणः चारों संज्ञाणं, देवगानि, पंचिन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, विकिथिककाययांग, विकिथिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः, नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,

नं. १३९

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यके आलापः

। मु	जां.	प.	ना,	सं .	ग	3.	का.	यो व	. क	ह्या.	सय	द.	ਲ.	ुंभ⊷	स.	माज्ञ	आ.	ુ.
2		६अ.						2	18	વ		3	द्र. २	२	2	9	١, ٦	२
मि. र	स, अ,	, ,	į		म	і ч.	त्रम.	ओ मि न		कुम.	अस.	चक्षुः	47.	ਸ.	मि -	सं.	आंहा.	साका,
								कार्म.	İ	T.N			1	अ.			अना.	
									1	ر د			भा ३		ł			
								i i	l	İ		1	अग्.				1	
١.							ì		i	ļ]		

नं. १४०

देवोंके सामान्य आलापः

ग्.	जी.	ч.	ηι.	स.	η,	\$	का	या	वे.	奪.	না .	मग्	₹.		भ∙	स. र	मित्र.	आ.	उ.
8	₹	हप	٧ ,	8	*	8	₹	_ { { } { }	ર	6	દ્	₹.	3	द्र. ६	₹ ₹	ξ	₹	ર	ર
मि.	संप स. अ	६अ	v		à.		÷	म. ४	स्री		अज्ञा 🔾	असं.	. के.द.	मा	६) भ.		सं.	आहा	साका,
सा.	स. अ					-d	ir	व. ४	g.		झान ३		विनाः	b	अ.			अना.	अना.
स∙								त्र. २									1		
্য.								का-१											المسيا

असंजमो, निष्णि दंगण, दन्त्र-भाविह छ लेस्साओ, भर्वासद्विया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिष्णिणा, आहारिणो अणाहारिणा, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चेत्र पञ्जनाणं भण्णमाणे अन्य चत्तारि गुणहाणाणि, एओ जीत्रममासो, छ पञ्जनीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, देत्रगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णत्र जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, अमजमो, तिण्णि दंसण, द्वेत्रण छ लेस्साओ एत्थ मिस्सो भणिद — देत्राणं पञ्जनकाले दव्यदो छ लेस्साओ ह्वंति ति एदं ण घडदे, तिसं पञ्जनकाले भावदो छ लेस्साभावादो । मा भवंतु देवाणं भावदो छ लेस्साओ दव्यदो पुण छ लेस्सा भवंति चेत्र, द्व्य-भावाणमगत्ताभावादो । इदि एदमित वयणं ण घडदे, जम्हा जा भावलेम्सा तल्लेम्सा चेत्र अंतिलिय-वेउव्यय-आहारमरीरणोकम्मपरमाणवो आगच्छंति । तं कथं णव्यदि ति भणिदे सोधम्मादिदेवाणं भावलेम्साणुक्त्य-द्व्यलेम्साप्रक्वणादो णव्यदि । ण च देवाणं पञ्जनकाले तेउ-पम्म-मुक्कलेम्साओ मोन्नणण्ललेम्साओ अन्थि, तम्हा देवाणं पञ्जनकाले द्व्यदो तेउ-पम्म-मुक्कलेस्साहि होद्व्यमिदि । एत्थ उवउज्जंतीओ गाहाओ—

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावने छहीं छेश्याणे. (यहां तीन अग्रुभ छेश्याणे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा जानना चाहिये।) भव्यस्मिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारक साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशीं प्राण, चारों संक्षापं, देवगति, पंचे-न्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और विकिथिककाययोग ये ना योगः स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन बान ये छह जान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्याएं होती हैं।

्रांका — यहांपर शिष्य कहता है कि देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यस छहों लेश्याएं होती हैं यह वचन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उनके पर्याप्तकालमें भावसे छहों लेश्याओंका अभाव है। यदि कहा जाय कि देवोंके भावसे छहों लेश्याणं मत होवें, किन्तु द्रव्यस छहों लेश्याणं होती ही हैं, क्योंकि द्रव्य और भावमें एकताका अभाव अर्थात भेद है। सो ऐसा कथत भी नहीं बनता है, क्योंकि, जो भावलेश्या होती है, उसी लेश्यावाले ही ओदारिक, वेकियिक और आहारकश्रीरसंबन्धी नोकर्म परमाणु आते हैं। यदि यह कहा जाय कि उक्त बात कैसे जानी जाती है, तो उसका उत्तर यह है कि साधर्म आदि कल्पवासी देवोंके भावलेश्याके अनुरूप ही द्रव्य लेश्याका प्रस्पण किये जानेस उक्त बात जानी जाती है। तथा देवोंके पर्याप्तकालमें तेज, पद्म और गुक्त इन तीन लेश्याओंको छोड़कर अन्य लेश्याएं होती नहीं है, सिलिये देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यकी अपेक्षा भी तेज, पद्म और शुक्त लेश्याण होता चाहिये। इस प्रकरणमें निम्न गाथाण उपयुक्त हैं—

किण्हा समरसमण्णा णीत्रा पुण णीत्रगुत्रियसकासा । काओ कओदवण्णा तेऊ तवणिञ्जतण्णा य ॥ २२३ ॥ पम्मा पउमसवण्णा सुनका पुण कासकुसुमसंकासा । किण्हादि-द्वारेस्सा-वण्णविसेसो मुणेयक्यों ॥ २२४ ॥

भावलेम्मा-लिगं थोरुचएण एमा गाहा जाणावेई —

णिम्मृत्यवंधसाहृबसाहं बृचित्तु वाउ-पहिदाहं । अञ्चलस्टेस्साणं भिंदह एहाड वयणार्ह ॥ २२**५ ॥**

कृष्णलेख्या भोरंके समान अत्यन्त कांट वर्णकी होती है, नीललेख्या नीलकी गोलीके समान नीलवर्णकी होती है, कापोनलेख्या कपोनवर्णवाली होती है, नेजोलंख्या सोनके समान वर्णवाली होती है, पद्मलेख्या पद्मके समान वर्णवाली होती है और शुक्कलेख्या कांसके फुलके समान देवेतवर्णकी होती है। इसप्रकार कृष्णादि दृष्यलेख्याओंके वर्णविशेष जानना चाहिए॥ २२३,२२४॥

भावलेड्याओं के स्वस्पका थोडेमें संब्रह्म पसं यह गाथा ज्ञान करा देती है— जड़-मुलले बुक्षको काटो, स्कन्धंस काटो, ज्ञास्वाओंसे काटो, उपशास्त्राओंसे काटो फलोंको तेड़कर खाओं और वायुसे पतित फलोंको खाओ, इसवकारके ये वचन अध्यन्तर अर्थात भावलेड्याओंके भेदको प्रकट करते हैं॥२२५॥

विशेषार्थ — गोम्मदमार जीवकां उमें उस अर्थ उस प्रकारन स्पष्ट किया गया है कि फलेंम लदे हुए बृक्षको देखकर कुर्णलेह्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षको जड़-मूलमें उम्बाइकर फलेंको म्बाना चाहिये। नीललेह्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षको मकत्य अर्थात् मूलेंस ऊपरके भाग को कादकर फलेंको म्बाना चाहिये। कापोतलेक्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षकी शामाओंको कादकर फलेंको म्बाना चाहिये। कोजेलेस्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षकी उपशामाओंको कादकर फलेंको म्बाना चाहिये। पद्मलेस्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षको उपशामाओंको कादकर फलेंको म्बाना चाहिये। पद्मलेस्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षके फलेंको तोइकर म्बाना चाहिये। शुक्रलेक्यावाला विचार करता है कि इस बृक्षके पालेंको कोहकर म्बाना चाहिये। उस प्रकारक भावोंसे छहें लेस्याओंको तारतस्यको जान लेना चाहिये।

[.] ૧ પ્રાંતા પુષ્ય 'દતિ ∗શ્રાને 'શાં, મે 'શ્રાયોઃ 'પોસ્કાયખ ' કો વાર ⊥ં માં પનો 'પોસ્કાયખ ' કતિ વારુ :

२ पसमं. १, १८३, १८४. (हि. हस्तिस्थित)

र णिग्मुळख्शमापुनगार हित्त निणित्त परिहार | या. १ घट और जी है । यथ इत कमां है गी. भी. ५०८.

तं के ते के ते के पम्मा पम्मा य पम्म-धुक्का य ।
सुक्का य परममुक्का लेस्ससमासी मुणेयन्त्री ।। २२६ ||
तिण्हं दीण्हं दीण्हं छण्हं दीण्हं च तेरसण्ह च ।
एता य चोदसण्हं लेम्साभेदी मुणेयन्त्री ॥ २२७ ||

एत्थ परिहारो उच्चदे—ण ताव एदाओ गाहाओ तो पक्यं माहेति, उभय-पक्य-माधारणादो । ण तो उत्त-जुत्ती वि घडदे, ण ताव अपजत्तकालभावलस्समणुहरह दच्य-लेस्सा, उत्तमभोगभूमि-मणुस्माणमपजत्तकाले असुह-ति-लेस्माणं गउरवण्णाभावापत्तीदो । ण पजत्तकाले भावलेस्सं पि णियमेण अणुहरह पज्जत्त-दच्यलेम्सा, छव्विह-भावलेम्सासु परियद्वंत-तिरिक्ख-मणुसपज्जत्ताणं दच्यलेस्साए अणियमण्यमंगादो । ध्यतलवण्ण-यलायाए

तीनके तेजोलेस्याका जघन्य अंदा, दोके तेजोलेस्याका मध्यम अंदा, दोके तेजोलेस्याका उत्हाए एवं पद्मलेस्याका जघन्य अंदा, छडके पद्मलेस्याका मध्यम अंदा, दो के पद्मलेस्याका उत्हाए एवं शुक्क लेस्याका जघन्य अंदा, तेग्हके शुक्कलेस्याका मध्यम अंदा तथा चौदहके परमशुक्कलेस्या होती है। इस प्रकार तीनों शुभ लेस्याओंका भेद जानना चाहिये॥ २२६, २२०॥

विशेषार्थ — भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन तीन जातिके देवोंके जघन्य तेजीलेक्या होती है। सौधर्म और ऐशान इन दो स्वर्गवाले देवोंके मध्यम नेजीलेक्या होती है। सानत्कुमार और माहेन्द्र इन दो स्वर्गवाले देवोंके उत्कृष्ट तेजीलेक्या और जघन्य पद्मलेक्या होती है। ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, काषिष्ठ, शुक्र और महाशुक्र इन छह स्वर्गवालोंके मध्यम पद्मलेक्या होती है। शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पद्मलेक्या और जघन्य शुक्रलेक्या होती है। आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नो अवेयक इन नेरह विमानवालोंके मध्यम शुक्रलेक्या होती है। इसके ऊपर नो अनुदिश और पांच अनुत्तर इन चौद्दह विमानवालोंके उत्कृष्ट या परमशुक्रलेक्या होती है।

समाधान—शंकाकारकी पूर्वोक्त शंकाका अब पिरहार कहते हैं—उपर कही गई ये गाथाएं तो तुम्हारे एक्षको नहीं साधन करती हैं, क्योंकि, वे गाथाएं उभय पक्षमें साधारण अर्थान् समान हैं। और न नुम्हारी कही गई युक्ति भी घटित होती है। जिसका स्पर्शकरण इस प्रकार है—द्रव्यलेश्या अपर्याप्तकालमें होनेवाली भावलेश्याका तो अनुकरण करती नहीं है. अन्यथा अपर्याप्तकालमें अशुभ तीनों लेश्यावाले उत्तम भोगभृमियां मनुष्योंक गौर वर्णका अभाव प्राप्त हो जायगा। इसीप्रकार पर्याप्तकालमें भी पर्याप्त-जीवसंबन्धी द्रव्यलेश्या भावलेश्याका नियमसे अनुकरण नहीं करती है: क्योंकि, वेसा मानने पर छह प्रकारकी भावलेश्याओंमें निरन्तर परिवर्तन करनेवाले पर्याप्त तिर्थंच और मनुष्योंके द्रव्यलेश्याके अनियम-

१ गो. जी. ५३५. परं तत्र चतुर्थचरणस् अयम्-' अवणतियाः पुण्णगे अमुद्दा'। प्रतिषु प्रथमपंत्रों 'नेउ तेउ तह ते**ऊ पर्म्य पर्मा य**े इति पाठः

२ गी. जी. ५२४. परं तत्र चतुर्धचरणस्वयम्-' हेस्सा भवणादिदेवाणं ' ।

भावदो सुक्कलेस्मप्पमंगादो । आहारसरीराणं धवलवणाणं विग्गहगदि-द्विय-सव्वजीवाणं धवलवणाणं भावदो सुक्कलेस्मावत्तीदो चेव । किं च, द्व्वलेस्सा णाम वण्णणामकम्मो-द्यादो भवदि, ण भावलेस्सादो । ण च दोण्डमेगत्तं णाम, वण्णणामं-मोहणीयाणं अघादि-घादीणं पोग्गल-जीविवागीणं एगत्त-विरोहादो । विम्ससोवचयवण्णो भावलेम्सादो भवदि, ओरालिय-वेउव्विय-आहारमरीराणं वण्णा वण्णणामकम्मादो भवंति, अदो ण एम दोमो । इदि ण, 'चंडो ण मुयदि वेरं 'इच्चादि-बाहिरकज्जुप्पायणे द्विदिवंधे पदसवंधे च भावलेस्मा-वावार-दंसणादो । अदो द्व्वलेस्माए ण कारणं भावलेम्मा त्ति निद्धं । तदो वण्णणामकम्मोदयदो भवणवानिय-वाणवेतर-जोइसियाणं द्व्वदो छ लेम्साओ भवंति, उवरिमदेवाणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्माओ भवंति । पंच-वण्ण-रम-कागम्म कमण-ववएसो व्य एगवण्ण-ववहार विरोहाभावादो । भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्मा, भवनिद्विया

पनेका प्रसंग प्राप्त हो जायगा। और यादे ट्रब्यलेह्याके अनुरूप ही भाषलेह्या मानी जाय. तो धवल-वर्णवाले बगुलेके भी भावसे बाह्नलेक्याका प्रसंग प्राप्त होगा। तथा धवलवर्णवाले आहारक शरीरोंक और धवलवर्णवाले विब्रह्गतिमें विद्यमान सभी जीवोंके भावकी अपेक्षाने शक्लेड्याकी अ।पत्ति प्राप्त होगी। दूसरी बात यह भी है कि दृश्यलेश्या वर्णनामा नामकर्मके उदयसे होती हैं। भावलेड्यासे नहीं। इसलिये होनों लेड्याओंको एक कह नहीं सकते: क्योंकि, अञ्चातिया और पुटलविपाकी वर्णनामा नामकर्म, तथा बातिया और जीवविपाकी (चारित्र) मोहनीय कर्म इन दोनोंकी एकनामें विगेध है। यदि कटा जाय कि कर्मोंके विस्वलीपचयका वर्ण तो भावलेड्यासे होता है, और औदारिक, वैकियिक, आहारकदारीरोंके वर्ण वर्णनामा नामकर्मके उदयमें होते हैं, इसलिए हमारे कथनमें यह उक्त दोप नहीं आता है, मो भी कहना ठीक नहीं है. क्योंकि, 'कृष्णलेश्यावाला जीव चंडकर्मा होता है, वेर नहीं छोड़ता है' इत्यादि रूपसे बाहरी कार्योंके उत्पन्न करनेमें, नथा स्थितिबन्ध और प्रदेशबन्धमें ही भावलेह्याका व्यापार देखा जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध होती है कि भावलेश्या द्रव्यलेश्याके होनेमें कारण नहीं है। इसप्रकार उक्त विवेचनसे यह फलितार्थ निकला कि वर्णनामा नामकर्मके उदयसे भवनवासी, बानव्यस्तर और ज्योतियी देवोंके द्रव्यकी अपेक्षा छहां लेक्याएं होती हैं, नथा भवनात्रिकसे ऊपरके देवोंके तेज, पदा और शुक्क लेड्याएं होती हैं। जैसे पांची वर्ण और पांची रसवाले काकके अथवा पांचें। वर्णवाल रसंसि यक्त किक कृष्ण व्यपदेश देखा जाता है, उसी प्रकार प्रत्येक दारीरमें द्रव्यसे छहों छेदयाओं के होने पर भी एक वर्णवाली छेदयाके व्यवहार करनेमें कोई विरोध नहीं आना है।

[🥦] प्रतिषु ' बण्णणाम ' इति पाठी नास्ति ।

अभवसिद्धिया, छ मम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा'े।

तेसं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एअं। जीवसमासो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिद्यजादी, तत्रकाओ, दे। जाग, दे। वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजमा, तिण्णि दंसण, द्वेण काउ मुक्कलेम्सा, भावण छ लेस्साओ, भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, सम्मा-मिच्छनेण विणा पंच सम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

द्रव्यलेख्या आलापके भाग भावसे तज, एवं और शुद्धलेख्याएं: भव्यसिद्धिक, अस्वय-सिद्धिक: छहाँ सम्यवस्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं देवोंके अपर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि और अविरत्तसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास्म, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचीन्द्रियजाति, त्रसकाय, विकियिकामिध और कामिण ये दें। योग, स्त्री और पुरुष ये दें। वेद, चारों कपाय, विभेगज्ञानक विना पांच ज्ञान, असंयम, आहिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याणं, भायस छहां लेश्याणं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्निध्यात्यके विना पांच सम्यक्त्य, संदिक, आहारक, अनाद्वारकः साकारं।पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

नं. १४१

देवींके पर्याप्त आलाप.

ग. जी	प	וְע	मं	ą	Ş	7.1	યા	वे.	牦	ना.	मग	- E & A.	म	र्माज	311	ਤ. ∤
6 7	ξ	10	1	7	٩	ŧ	۹.,	ą	3	ξ	7	1 下南。	G	٩	?	२
गि. д				Œ.	ज	÷	म. ८	₹ÍI		ায়[.३	3[8]	ित्वा भारतीयाः विना भारतीयाः		Ħ	आहा	साका.
मि. ५ मा. मे म.					Ď	7	व ४	Ţ.		ञान.३		विचा भग्ना,/ अ				ગના.
ч.							વ '									1
31																- 1

નં. દ્વર

देवोंके अपर्याप्त आलाप.

	। जी•	q	भा	म	1	\$	有]。	यो•	व.	事	_शा.	सय.	₹.	ਰੇ	₹.	η .	माझ.	आ.	₹.
3	9	Ę	ల	8	¥	7	8	્ ર	ર	ጸ	P ₂₀	់ ។	₹	इ. २	2	(4)	*	٦ -	२
धि .	स अ		-		à	ч.	7.	व मि.	र्मा		कृम,	अम.	केंट.	का.	म.	मि.	ग.	आता.	साका. असा.
भा		लं	क					कार्म	q.		व,श्र		विनाः	J.	স	सामा		अना.	अनाः
ਮੋ.	ļ										मात्त.			्ग <u>्र</u> भा. दृ	i	ओ.			
											21귀.			1 400		क्षा.			
1_	<u> </u>										अब.					क्षाया.			

देव-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्माओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा'ं।

तेसिं चेव पज्जन्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एअं। जीवसमासंा, छ पजन्तीओ, दस पाण, चन्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चन्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, द्व्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्साओ; भविसिद्धिया अभविसिद्धिया, मिन्छनं, सण्णिणा,

मिथ्यादृष्टि देवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक भिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संकी-पर्याप्त और संकी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहां पर्याप्तयां, छहां अपर्याप्तयां: दशां प्राण, सात प्राणः चारों संकाणं, देवगति, पंचेत्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वेक्रियिककाययोग, वेक्रियिककाययोग, वेक्रियिककाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारृष्ट योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दें। दर्शन, इत्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंक पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशां प्राण, चारों संक्षापं, देवगति, पंचीन्द्रयजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्षियिककाययोग ये नी योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेदयाएं, भावसे तेज, एक और शुक्क लेदयाएं: भव्यसिद्धिक,

नं. १४३

मिथ्याद्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गुंजी पाप्रासाग इ का यो वे का ज्ञा संया दा है सा रागांज आ ा 3. १ २ ६१०४११११२४३९९२६६२१२ मिसापप ७ दे पचे त्रसाम ४ थां अज्ञा, अस्त, चधुः मान्य मिन सं. आहा । माका मा ६ व.४ प्राच अन् अना अना अना अ. वे २ का १ त्राहारिणो, सागारुवनुत्ता होति अणागारुवनुत्ता वां ।

तिसं चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहुाणं, एअं। जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, द्वगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंगण, दव्वेण काउ-सुक्किल्या, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

देव मामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ

अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाण, देवगाति, पंत्रेन्द्रियजाति, असकाय, वेकियिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकयंदके विना दो वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्याएं, भावसे छहां लेक्याएं। भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्हापृ देवांके सामान्य आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान,

नं. १	33
-------	----

मिथ्याद्यष्टि देवोके पर्याप्त आलापः

ग.	जा	व श्राः म	ग.	[।] इ.।का.।	या.	a.	कः	ह्या	सय.	द.	ਲ	स.	<i>Π</i> .	मांब.	आ.	3.
٩	1															
Į́н.	गं.प.		₹.	्राष्ट्र ।	म. ४	्याः		अज्ञा.	अम -	चंधु.	मा. ३	भ	ाम	म.	आहा.	्साकाः अनाः
				1	व ४ व.१	पु.				अच .	ગુમ.) 				जनाः

नं. १४५

मिथ्यग्दिष्ट देवांके अपर्याप्त आलाप.

्रम्∤ जी. प प्रा,∣स	ग. इ.}का.∣ यो.	ते क. ज्ञाः सयः द.	हे म म मांज्ञ आ उ.
بأماء وأمأا	تحاولو م		द्ध २ २ १ १ २ २
मि.सं. अ अ.	द के में कार्स	कृषः अच्छः	का भ मि म आहा साका, ह्यु अस अना अना
			मा ६

पज्जन्तीओं छ अपजन्तीओं, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, देवगदीं, पंचिदिय-जादीं, तमकाओं, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमों, दें। दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओं, भवसिद्धियां, सासणसम्मनं, साण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागारुवज्ज्ता होंति अणागारुवज्ज्ता वा^{स्त}।

"तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दां वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दां दंसण, दृष्वेण छ लेस्सा, भावेण

संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां। दशें प्राण, सान प्राणः चारों संक्षाएं देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, विक्रियिककाययोग, वैक्षियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्टाष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देव-गाति, पंचेन्द्रियज्ञानि, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये ना योग, नपुंसकवदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और

नं.	१४६	सासादनसम्यग्टप्टि देवोंके	सामान्य	आलाप.
-40	404	र्शारमञ्जरक मन्द्रा स्थापन	711 x 11 x 14	- 16 694 49

[गु.	जी	ď	71	स स इ	का	यो	व	事.	ह्या.	मय.	द.	ਲ.	भ	₹.	मिन्न,	आ.	ु उ. ∣
9				61219					₹			द्र. ६		१	9	2	ર
 	स.प.	६अ	U	द- ।	· F	म. ४	या.		अज्ञा	असं -	चक्षु,	मा.६	म.	Ė	सं.	आहा.	साका. अनाः
संभा	뀩 최.			1 1.5-	1	ब. ४	q.				अच	l: I	[41,6		अना.	अनाः
1						बे. २							'			ĺ	í
1						का.१	i										1
1				i	1		1						i !				
				}	l		,			ļ		l					

नं १४७ सासादनसम्यग्दाप्ट देवोंके पर्याप्त आलाप.

13	i. 3	fi.	q.	भा.	स	ग	₹.	का	यो.	ब.	क.	श्ला.	सय.	₹.	ਲੋ.	भ	स.	संक्रि	. । आ.	ब∙
1 ?		>	Ę																	ર
स्र	[4	۲.				द.	पंचे •	त्रम.	म ४	स्री		अज्ञा.	अस्.	चक्षु.	भा. ः	भ.	मासा.	. सं.	आहा.	सका.
	q								व. ४	पु.				अच.	गुम.				}	अना.
1									व. १											
						1												1	1_	

तेउ-पम्म-सुकलेस्साओः भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, देा जोग, दें। वेद, चत्तारि कमाय, दें। अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दव्वेण काउ-सुक्क-छेम्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, मासणसम्मन्तं, सण्णिणो, आहारिणो, अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ं।

देव-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओं, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, निण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिम्माणि, असंजमा, दो

अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यमे छहां लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और गुक्ललेश्याएं: भव्यक्तिद्धक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दिष्ट देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासा-द्रन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय. विज्ञियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय. कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यने कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्तव, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

सम्याग्मिश्यादाष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सम्याग्मिश्याद्धि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तयां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, देवगति, पंचीन्द्रयजाति, वसकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग ओर विकिथिककाययोग ये नी योगः नपुंसकवेदके विना दो वद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंस मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यस छहों लेश्याएं, भावसे तेज,

नं. १४८ सामादनसम्यग्हीष्ट देवांके अपर्यापन आलापः

1 2	जी.	ď	ЯI,	स	ग	इं	का	यो.	वे.	क	ज्ञा	संय.	द.	छे.	भ	स.	सांश्ले.	आ	ਰ.
١,	,	ε	v	X		,	,	3	ર	8	3	8	- 3	द्र. २	9	9	8	ર્	२
सा	. सं. अ	٠			₹.	٠		वे भिः	र्सा.		कुम.	अस.	चक्षु.	का.	भ	सा.	₹.	आहा.	साकाः अनाकाः
		क				9	*	कार्मः	J.		कुश्र.		अच.	শ্ব				अना.	अनाकाः
1											_			मा- ६					
ł																			

दंसण, दव्येण छ लेम्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्माओ, भविमिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

देव-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जतीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवामिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणे, आहारिणो अणाहारिणे।, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

पद्म और शुक्ल लेड्याएं: भन्यांनाडिक, सम्याग्मिश्यात्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दिष्ट देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवममास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, द्वारों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाणं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिककाययोग, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे छहाँ लेदयाणं, भावमे तेज. पप्र और गुक्ल लेदयाणं, भव्यमिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपरामिक ये तीन सम्यक्त्यः सांज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारकः साकारोग्पयोगी और अनाहारके

નં. ૧૪૬

सम्यग्निथ्याद्दष्टि देवोंके आलाप.

ग.	जी.	4 3	. मं	2].	₹.	का	यां-	वे.	₹ ,	बा	सय	₹.	. あ.	4	।म्.	मोज्ञि.	आ.	3.
٩	9	9 9	o 8	٩	×	9	8	ર	6	4	9	્ર	इ ६	5	. 9	1 8	y	ર
मम्य.	मप.	4		Ç,	पचे.	नम	मि⊬्ट	₽ŶÎ		अज्ञा.	अम.	प स	भाः ३	Ħ	मिभ्य	म्,	आहा.	ामाका.
1							त्र. ४	4.		3		अर्च•	ग्रस.		•			अना.
1							व १			ज्ञान.	ļ		1			,		
		i				'				मिथ				l	1	1		

र्न. १५०

असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

I	जी.	۹.	भा	सं.	ग.	₹.	का.	यो	. ê	া- ব	ह. हा∙	संय.	द.	જે.	स∙	Д.	मझि.	् <u>आ.</u> २	ું હે.
१	. 2	Ę	90	Х	2	8	?	2	र∫३	8	₹	₹.	₹	इ. ६	•	.₹	8	ર	ર
æ	स.प	ч.	0		दे	पचे.	न्नम .	'म∙	४म	1	माते.	अम.	क द	मा ३	म ।	आप.	म•	आहा.	२ माका. अना.
ক		्र अ							૪૫ુ ર		-		ावना.	, अभु-		क्षाः अयो		भना	अना.
	[5 1						अ. का.	-1	t	अव.				Ì	ગાવા			

तेमिं चेव पञ्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एअं। जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंगण, द्ववेग छ लेस्माओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्जता वा ।

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामा, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमा, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्साओ; भविसिद्धिया, तिण्णि सम्मतं, मण्णिणा,

उन्हीं असंयतसम्यग्दि देवेंकि पर्याप्तकाल गंवन्थी आलाप कहने पर—एक आंवरत-सम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमान, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाणं, देवगति, पंचिन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययांग ये तो योगः नपुंसकवेदके विना दे चेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेदयाणं: भव्यसिद्धिक, औप-शामिक, शायिक और शायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्यः संविक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसभ्यग्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी अलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्टिए गुणस्थान, एक संकी-अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, देवगति, पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम. आदिक तीन दर्शन. द्रध्यसे कापोत और शुक्ल लेह्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेह्याएं: भव्यसिद्धिक, औप-द्रामिक, शायिक और क्षायोपरामिक ये तीन सम्यक्तवः संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः

नं. १५१	असंयतसम्यग्दिष्	देवोंके	पर्याप्त	आलाप.
---------	-----------------	---------	----------	-------

ागु,∣जी-	ч.	प्रा.∤	सं.∤ग	₹.	काः	यो.	वे. क.	शा-	सय.	₹.	ਲ.	म.	म.	सिश्चि	317.	₹.
2 2		\$ 0	8 8	9	9	3	3 8	3	*	વ	द्र६	,	1 3	9] १	٦
. स.प. क	ч.]	दे.	q.	न्न.	1	(:	मान-	अस.	के. द.	भा∙३	म-	आप.	म,	आहा.	साका.
ल			-			व. ४	q. '	श्रुत.		विनाः	गुम-		क्षा.		1	अनाः
						बै. १		अव.	l ł	ì		1	क्षायो		1	
}			i				1			}						1
			_						l	l		-	l 	<u>.</u>		

आहारिणा अणाहारिणा, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

भवणवासिय-वाणवंतर-जोइमियाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पञ्जतीओ छ अपञ्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंमण, दव्वेण छ लेम्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ जहण्णा तेउलेम्सा; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

साकारापयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके सार गुणस्थान. संक्षी पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राण: चारों संक्षाणं, देवर्गात, पंचेन्द्रियजाति, तमकाय, चारों मनोयोग, चारों वजनयोग, वेकियिककाययोग, वेकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाणं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा रूपण, निल और कापोत लेदया, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा तेजोलेदयाः भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः आयिकसम्यक्तवके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आदारक, अनाहारक; साकारोगयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १५२ असंयतसम्यग्हाष्टि देवोंके अपर्याप्त भाराप.

म जी	. ч.	त्रा	सं.	ग,	₹,	和。	्यो.	वे.	事.	লা,	सय.	覆	₹.	भ.	_ 4.	संक्षि	आ.	₹.
१ १ अवि•स	Ę	O	6	۶	,	У		٩	8	3	र अग	३ क₊ष विना	<i>3</i> . ₹	स.	₹	y	ર	ર

नं. १५३ भवनत्रिक देवांके सामान्य आलाप.

्री₁_जी पत्रासंग इं. का	. यो. वे.क. ज्ञा. ३	तय, ह. हे_ स. स. सक्की आ उ.
8 2 6 20 8 2 2 2	११ २ ४ ६	१ ३ इ.६ २ ५ १, २ २
मि स.प प., ७ दे पंचे. त्रस	म.४ मी. ज्ञा.३ अ	मं. केद. भाष्ट म.क्षायिः सं. आहा गाका
मास.अ. ६	व.४ प्. अज्ञा.३	
म. अ.	वे. र	तजा-१
अ. <u>)</u>	का. १	

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, अर्क्षजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण जहाण्णिया तेउलेम्सा, भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, मन पाण, चनारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दे। जोग, दो वेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमा, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेम्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, दो मम्मनं,

उन्हीं भवनित्रक देवोंके पर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, द्शों प्राण, चारों संक्षाणं, देवगति, पंत्रेत्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयांग, और वैकिथिककाययोग ये नो योग, नपुंसकवेदके विना दे वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान और आदिके तीन क्षान ये छह द्वान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यस छहों लेख्याणं, भावसे जबन्य तेजोलेख्याः भ्रष्यसिद्धिक, अभव्यमिद्धिकः आयिकसम्यवस्यके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं भवनित्रक देवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादिष्ट, और सासादनसम्बर्ग्डि थे दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चरगें संज्ञाणं, देवगाति, पंचिन्द्रियज्ञाति, जसकाय, विकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग थे दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यमें कापोत और गुक्क लेदयाणं, भावसे कुण, नील और कापोत लेदया. भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व और सासा-

नं. १५४ भवनत्रिक देवोंके पर्याप्त आलापः

ŋ.	जी -	q	प्रा	सं	्ग.	₹.	का.	योः	व	Ŧ	्रहा.	सय	द.	ले.	¥.	. स∙	मंशि.	आ.	उ.
1	•	•	-				1 8	9	2	ć	Ę	१	₹	द्र.६	•		9	9	२
मि	म.प.	Ч,			₹.	dp.	त्रसः	म⊪ ४	स्रो		ज्ञान ₹							आहा	साकाः
मा						ь		व. ४			अज्ञा.३		विनाः	ते∙		विना-			अना.
ч.								वे. १											
अ		_															ı		

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागास्त्रजुत्ता होंति अणागास्त्रजुत्ता वांंा।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइमियदेविमच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एपं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दे। वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण छ लेम्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वार्षा।

दन ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयामी और अनाकारो पयोगी होते हैं।

मिथ्यादृष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवांके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सक्री-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राण: चारो संक्षाणं, देवगित, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयाग, चारों वचनयोग, विक्रियिककाययोग, विक्रियकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग: नपुंसकवदके विना दें। वेद, चारो कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्चु और अचश्च ये दे। दर्शन, द्रव्यसे छहां लेखां , भावसे अपर्याप्तकालकी अपक्षा कृष्ण, नील और कापोतलेख्या, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा कृष्ण, नील और कापोतलेख्या, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारेपयोगी होने हैं।

नं. १५५

भवनित्रक देवांके अपर्याप्त आलाप.

। गु.∣जी	प. प्रा	स-् ग	3 1	का यो	व	146	্ৰা.	सय	₹.	ल	4₹,,1	म.	माही.	31.	-उ _ा
क्ति स	ξ , ψ	४ । १	?	र्≀े्२ ः ∃वे.सि	ર માં	6	ू कुम्	्र अ स .	र चंध	द्र.२ का.		્ર મિ	्र सं.	्र आहाः	र साकाः
मा. अ.	अंग	1	पर्व	े वे.मि कार्म.	Ţ.		कुथ.		अच.	Ωĺ	अ	मा		`	अनाः
		j , ,	ļ						1	मा. ३ अग्र.					

नं. १५६

भवनित्रक मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

्राजीः प्र	प्रा¦स.] ग. ∣ इ	. aj.,	योः , वे	क	ज्ञा ।	सय.	₹.	♂.	भ	म-	सोज्ञ	आ.	₹3.
१ २ ६ १	20'8/ 2 1	્ર	26 5	8	₹ /	>	Ç	1 .	ર્	'n		ર	, ء ٓ ا
मि.स.प. प	७ दि. प	ो. त्रस	म. ४ मा.	-	अज्ञा	अस.	বধ্যু,	सान्द	भ	भि-	स	आहा	माका.
स.अ. ६		I	व ४ पु.		1		अच	अगु ३	Э.		1	अना.	अना.
अ.		1	ब. २		Í			नेज.१	ì			i	. {
		r	कार्म. १ 📒						. 1				1

तेर्सि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्मा, भावेण जहाण्णिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा'ं।

'तिसं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

उन्हीं भवनित्रक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाणं देवगित, पंचीन्द्रयजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक काययाग य नो योगः नपुंसकवेदके विना दे वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम. चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहां लेदयाणं, भावसे जघन्य तेजालद्याः भव्यासिद्धिक. अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं भवनित्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्योप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकामिश्रकाययोग और कार्मण-

नं. १५७ भवनित्रक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

[गु	जी.	q	मा	₹.	गः। इ	郁!。	यो	वे। क.	द्या.	सय.	द.		₩.	म.	गार्ज.	आ.	_૩.
٤	, १	Ę	80	४	ેર ∤ ૧	٩	9	२ ४	₹	۶	ર	द्र.६	۲	7	₹	9	- २ गाकाः
ींम	ंस∙	ч.			₹	Ď.	स. ४	र्धा	अলা.	अम •	৸ধ্য	मा.१	ਜ,	ÍН.	ч.	आहा.	माकाः
	٩.				15-	14	ब. ४	q.			अच -	तेज.	अ.				माका. अना,
1					' I		वे. १	!									Ì
1					 			'									!

नं. १५८ भवनित्रक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

1 2	र्. र्ज	1.	q.	प्रा	편.	η,	ŝ,	का,	या.	व.	क.	ह्या.	सय.	द.	ले.	भ.	स.	माज्ञ.	সা,	उ. ∣
1.			c	16	,	0		2	2	2	,	2	9	2	द 🛷	ą			2	ર
Į.	. સ અ	[.	अप.			G.	교	त्रस.	कार्म.	y .		कु श्र	ora	अच.	₹,	अ.	1-11	V1.	अना.	साका. अना
1															मा.३					
- 1															अशु.					

जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दे। दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेम्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागामवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

भवणवासिय-वाणवंतर-जोड्नियदेव-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुण-द्वाणं, दो जीवसमाया, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, मोवण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्मा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्ते. सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वां।

काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, इव्यसे कापोन और शुक्रु लेक्याएं, भानमें कृष्ण, नील और कापोन लेक्याएं: भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संक्षिक, अहारक, अनाहारक: नाकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

सासादनसम्यस्ति भवनवामी, वानव्यन्तर और त्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संजी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संजाएं, देवगति, पंचे- च्ट्रियजाति, असकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग, वेकियिककाययोग, वैकियिकिमिश्र-काययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चारों अचार, अचार, यादे ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा अपर्याप्तकालकी अपेक्षा ज्ञान्य तेजोलेश्याः भन्यांसाङ्क, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १५९ भवनित्रक सासादनसम्यग्दृष्टि देवींके सामान्य आलाप.

																			ं उ.
1,	.٦	Ę	\$ 0	٧	Ŗ	8	2	٧/	ર	ć	ŧ	×.	ર	r. 7	ź	ર ે	8	ર	२ साका. अना.
1 ==	स.प	Ч	9		4	प	14	म ४	٠.,		भग्ना	अस	चक्षु.	सा ४	₫.	मासा,	स.	आहा.	साका.
F	स.अ					, I	ĺ	ব. ৫	4				अन.	13, ३				अना.	ं अनाः 🏻
		স.					1	त्र, २	Ι,					11. 2					
1_							'	码。2	ŀ				<u> </u>						1

तेसि चेव पडजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पडजनीओ, दस पाण, चनारि मण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दे। वेद, चनारि बसाय, तिण्णि अण्णाण, अयंजमी, दे। दंगण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण जहण्णिया तेडलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मन्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जना होति अणासारुवजुना वार्ष।

तेमिं नेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तानि सण्णा, देवगदी, पीचंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तानि कसाय, दो अण्णाण, असंतम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेम्सा, भावेण किण्ट-णील-काउलेम्सा; स्वतिद्विया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-

उन्हीं सामादनसम्बन्धि भवनित्रक देवेंकि पर्याणकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणक्षान, एक संजी-एयोध्न जीनसमाम, छहीं पर्याप्तियां, दशीं प्राण, चारों संक्षाएं, देवगति, पंचित्रियजाति, जसकाय, चारों भने।योग, चारों वचनयोग और वैकि-यिककाययोग ये नो योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दे। दर्शन, द्रव्यस छहीं छेश्याएं, भावस जघन्य तेजोछस्याः भव्य-सिद्धिक, सासादनसम्यक्षक लिक्क, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं सामाहः सक्तार्य भवनिति देवोक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादत गुणस्थात, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाणं, देवर्गात, पंचीन्द्रयज्ञाति, वसकाय, विकिषिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अञ्चान, असंयम, चश्रु और अच्छु वे दो दर्शन, द्रव्यस कापोत और शुक्कलेद्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेद्याणं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारकः

नं. १६० भवनात्रिक सासादनसम्यग्द्ध देवोंके पर्याप्त आलाप.

-	गु.। जी	_ 4	Ш	स ग	ह	का.	यो	व	क	ना	सय	द	ल	भ	म	माज्ञ	आ	ਰ.
İ	9 3	Ę	7.0	3 8														ર _
ļ	_ सि∙प	q.		<u>.</u>	٠ ' F	त्रस.	म ४	+[]		अज्ञा	अस	चक्ष	मा १	भ	सासा.	स	आहा.	साका.
1	स.प			•	Ė		न्. x	Ţ				भग.	तेज -					अना.
- 1	l			1			व १											ł
- 1																	1	
Ţ															,		<u>t '</u>	

हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोड्भियदेव-सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दम पाण, चनारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चनारि कमस्य, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्माणि, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्मा, भावण जहण्णिया तेउ. लेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छनं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा'ं।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि अवनवासी, वात्य्यन्तर और उयोतिष्क देवेंकि आदाप कहने पर— एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संजी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पथाप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैकियिककाययोग ये नो योगः नपुंसकवेदके विना देः वेद, चारों कपाय, नीनों अज्ञानोंसं मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, च मु और अच्छ, ये दो दर्शन, इत्यसं छहों लेदयाएं, भावसे जघन्य तेजोलेद्याः भव्यामिद्धिक, सम्यग्मिश्यात्य, संजिक, जाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १६१ भवनांत्रक भामादनसम्यग्टांष्ट देवींक अपर्याप्त आलाप.

ग्रंजी. प.प्र⊦स ग	इ का. यो.	वे क. ए ५	1 2 6	स म स	। अं। उ.
18 8 8 9 8 18	د ۱۶ ع	< 8 2 1 1	, ,	9 /	٠ ١ ٠
सा सं अ ह	्र _क ितः वे.भी	हरक हमा क्ल	ेचन हा	41 41 4	१ । र । जि.प. गावन अन्। अन्।
कि	भाक ले च	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	ंग्रस्त⊾ ∓		બના પ્રના
		1	1 ~	,	
		1	1 4 "	1	

मं. १६२ भवनित्रक सम्योग्मध्यादृष्टि देवीके अलाप.

्रागु- जी पः	प्रा⊾सं ∤ग इ.	का या व कि ज	संय दः	10 4	म. माज	भा । उ.
१ १ ६	1/2 0 1 / 1	१९ २ ४ ३		\$ 4 1	1 1	१२
हुन्स, प इन	दे प.	त्रम. म.४ सा. शान	34 기점	मा अम	मध्यः मः	ं सथा, साका,
ii.		व ४ पु ₹	# q °	ंत्रज्ञा ।	i I	📗 🤚 अना. 📗
		ंव. १ अज्ञा.	,	f		
	1 1 1	मिश्र		1 1	1	. 1
			i	ii	J	<u> </u>

भवणवामिय-वाणवतर-जोड्मियदेव-अमंजदममाइडीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जनीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो बंद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजमो, तिण्णि दंसण, द्व्येण छ लस्मा, भावेण जहण्णिया तेउलेरमा; भर्वामिद्धया, खड्य-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्ञता होति अणागारु-वज्जता वा ।

एसी इत्थि-पुरिसवेदाणमीयालावी समत्ती । एवं चैव पुरिसवेदस्य वत्तव्वं । णवि जत्थ दो वेदा ठिवदा तत्थ पुरिसवेदो एकको चेव ठवेद्ध्यो । एवं चेव डिब्धिवेदणिसंभणं काऊण वत्तव्वं । णविर जत्थ दो वेदा ठिवदा तत्थ इत्यिवेदो चेव ठवेद्यो ।

असंयतसम्यन्दाप्ट भवनवासी, वानव्यन्तर और नारे कि देशींके आलाए कहाने पर-एक आविरतसम्यन्दाप्ट गुणस्थान, एक संशी-पर्यात जी गामाल, हती पर्याप्तियां दशी प्राण, चारों संकाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकार, चारों मनीयोत, चारो पचनयोग और वैकियिककाययोग ये नी योगः नपुंसकवेदके विना देशीद, चारो तथाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, हवापे छही हिद्याणे, भावमे जप्यय तेजीहित्याः मध्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्तवके विना देश सम्यवस्य, संशिक, आहारक, स्थाकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार भवनित्रक स्त्रीवेदी और पुरुषवेदियोंक संभु क स्त्रास्य आलाप समाप्त हुए । इसीप्रकार भवनित्रक देवोंमें पुरुषवेदके आलाप कहना चाहिये। विदेशपत केवल यह है कि उपर जहां भवनित्रक देवोंके सामान्य आलापमें दें। वेद स्थापित किये गये हैं, यह एक पुरुषवेद ही स्थापित करना चाहिये। इसीप्रकार भवनित्रक देवोंमें कीवेदका आल्रब करके आलाप कहना चाहिये। विदेशप बात यह है कि पहले जहां सामान्य आलापमें दें। वेद स्थापित किये गये हैं, वहां एक ख्रावेद ही स्थापित करना चाहिये।

विशेषार्थ—ऊपर जो भवनित्रक देते.के आलाए कह आये हैं, वे सामान्यालाप हैं। उनमें पुरुषवेद और स्त्रविदका भेद नहीं किया गया है। परंतु उन्हों आलापोंमें दो वेदके

नं. १६३ भवनात्रिक असंयतसम्यग्टार्थ द्वाके आलाप.

सोधम्मीसाणदेवाणं भण्णमाणे अत्य चतारि गुण्डाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दम पाण मन पाण, चतारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, छण्णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, द्वेण काउ-मुक्क-मिज्जिमतेउलेस्या, भावेग मिज्जिमा तेउलेम्यां; भविमिद्धिया अभव-मिद्धिया, छ मम्मनं, मिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-चजुत्ता वां।

तेसिं चेव पञ्जनाणं भण्णमाणे अन्यि चनारि गुणहाणाणि. एत्रो जीवसमामो, छ पञ्जनीत्रो, दस पाण, चनारि सण्णात्रो, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकात्रो, णव जीग,

स्यानमें केयल पुरुषवेद या केयल स्त्रीवेद इसप्रकार एक वेदके स्थापित कर देने पर वे अल्लाप पुरुषवेदी और र्जावेदी भवनित्रकींके हो जाते हैं। भवनित्रको सामान्य आलापोंसे विदोप आलापोंसे उससे अधिक और कोई विदोपता नहीं है।

संधिम ऐशान देवें के लामान्य आछाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दे जीवसमान, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राणः चारें संज्ञाणं, देवगति, पंचीन्द्रयज्ञाति, चत्रकाय, चारें मनोयोग, चारें वचनयोग, विकियिककाययोग, विकियिककिमश्रकाययोग और कर्मणकाययोग थे ग्यारह योगः नपुंसकि वेदके विना दे येद चारें कपाय, तीनें अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापेत. शुक्क और मध्यम तेजोलेश्या, भावसे मध्यम तेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहाँ सम्यक्त्य, संविक, आहारक, अनाहारक; साकारेपयोगं। और अनाकारोपयोगं। होते हैं।

उन्हों संधिम पेदाान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धा आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-म्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पन्ने-न्द्रियजाति, तमकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नी

१ प्रतिषु १ दत्वेण काउन्एकच्या मान्त्रमा तेउळस्या मावण । इति पाउः ।

नै. १६४ - सोधर्म ऐज्ञान देवींके सामान्य आछाप

गृ.	र्जा-	η,	গ্না.	q.	$\mathfrak{T}_{k}^{k,n}$	8	私	याः	ā.	4,	चा.	मग	₹.	₹.	सॅ	Ą	मबि.	आ	₹.
8	₹	ध्य	20	Х	7	9	ŧ	8 8	ર	6	Ģ	ŧ	J	3. 4	3	Ę	y	ર	્રા
मि	सं. प. स. अ.	६अ	19		द	, her	bt	म. ४	र्मा		वान ३	अम.	के.ड	1. T.	4.		स.	आहा	माका,
मा.	स. अ.					Ъ.	कि	व. ४	Ţ		अज्ञा ३		विना-	ग्र. ने.	Я.			अना	अना.
म.								य₊ २						11 3					
अ.								和.,						तज्ञ.			1		- 1

दो वेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि मिन्झिमा तेउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांे।

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्किल्सा, भावेण मिज्झिमा तेउलेस्ता; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं। उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेदिम्हि मद-संजदे पड्च सोधम्मादि-उवरिम-देवाणमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्बि । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारु-

योग, नपुंसकवेदके विना दो वद, चारों कपाय, तीनों अक्कान और आदिके तीन क्कान ये छह क्कान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे और भावसे मध्यम तेजोलेदया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यवत्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सीधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादि सासादनसम्यग्दाष्टि और अविरतसम्यग्दाष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वेकि-यिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कवाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेक्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्निथ्यात्वकं विना पांच सम्यक्त्य होते हैं। यहां पर औपशामिकसम्यक्त्य होतेका कारण यह है कि औपशामिकसम्यक्त्वकं साथ उपशाम श्रेणीमें मरे हुए संयतोंकी अपेक्षा सौधर्म आदि उपरके देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशामिकसम्यक्त्व पाया जाता है।

नं. १६५ सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	ч.	त्रा.	सं	ग	₹.	का.	यो.	वे.	क	啊1.	संय	σ	हे. ,	ਮ.	स	सझि.	आ.	₹.
४ १																	?	٦ -
मि. क्र सा. क्र स				<u>a</u> (·IP	HŽ.	म. ४	糊.		शान.३ अहा.३	अस.	本. €.	मा-१	म -		स	आहा	साकाः
सा. ⊭ः					D -	li.	व. ४	g .		अज्ञा. ३		विनाः	तज.	अ				अना.
स.							व. १							- 1			i	
अ.														{			ı	ł

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

सोधम्मीसाणदेव-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चतारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मिज्झमतेउलेस्सां, भावेण मिज्झमा तेउलेस्साः, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

सम्यक्त्व आलापके आगे संब्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

मिथ्यादापृ सोधर्म ऐशान देवोंक सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिए गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों यचनयोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिककाययोग केर कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्क और मध्यम तेजोलेस्या, भावसे मध्यम तेजोलेस्याः भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारोप्योगी होते हैं।

नं. १६६ सोधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

		प.	प्रा	₹.	ग	₹.	Ф Т.	यो-	ন	奪	्रह्मा.	सय.	द.	ਲੇ.	भ.	म.	सःत्ति.	आ.	ड ।
ર							*	2	ર	8	4	1	₹	द्र. २	₹	4	7	2	٦ (
मि.	स.अ	÷			दे.	ч.	ন.	व मि.	र्स्व।		कृम,	अस.	के.द.	का	. ਮੌ.	ओप.	स.	आहा.	साका अनाः
सा.	 	ক						कार्म	q.		कुथ.		विना	হা_	अ	श्राः		अना.	अनाः
Э,	} I		}								र्मात.			भा. १		क्षायो.		1	
											थत.			तेज		मिध्या,			
	ļ										अव.	1				सासा.			

१ प्रतिष् ' दव्येण काउ-सुक्कंठस्मा ' इति पाठः ।

नं. १६७ मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

∤गृंजी प∗शा	सं. ग. इं.	का. यो. वं.	. ज्ञाः संय, द.	, हे, म _{िस}	संक्रि.! आ उ.
र २ ६ १० मि.स.प प. ७ सं.अ ६ अ.	दें. पचे.	१ ११ २ १ त्रस. म ४ स्त्री. व.४ पु. व.२ का.१	अझा. अस. चक्षु अच	द्र ३ २ १ . का. म. मि जृते अ. मा.१ तेज.	१ २ २ सं. आहा. साका. अना. अना.

तेमि चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजतीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भोवेहि मिड्झमा तेउलेस्मा, भवसिदिया अभवमिद्धिया, मिन्छत्तं, मिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंनि अणागारुवजुत्ता वां

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवयमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि मण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजमा, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण मज्ज्ञिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सौधर्म एकान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचिन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और विक्रियिक-काययोग ये नो योगः नपुंसकवदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेस्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि संधिम ऐशान देवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक नंकी-अपर्याप्त जीवनमास, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, चसकाय, विकियिकांमधकाययोग ओर कार्मणकाययोग ये दें। योग, नपुंसक वेदके विना दें। वेद, चारों कपाय, कुमति और कुधृत ये दें। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अच हु ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापीत और शुक्त लेक्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारो-

नं. १६८ मिथ्यादृष्टि सौधर्म ऐज्ञान देवोंके पर्याप्त आठाप.

ग.	जी	ष , श्रा.	स ग्र	इ. का	योः । वे.।	क ता	म्य.	द. । हे.	ेम _ा स.सि	ं आ.	ं उ. ∣
٩	1.	६ १०	4 - 8	۶ ۶	९ २	613	۶	२ इ.	4, २ १ १	, 9	3
∣íम.	मं.प.	ч.	C_{L}	াল হৈ	म. ४ आ.	34.11	अग.	चथु, भा '	भागामि. सः जि	ंशाहा.	साकाः
	1		+	न च	ब्. ४ पु.	1		अच ^{्रा} नेज.	्रेज. :		् अना -
1		1 1	1		वं. १	1	1	1	'	ſ	i I

अणाहारिणा, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा'ा

संधिम्मीसाण-सातणमम्माइद्वीणं भणामाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्जनीओ, दम पाण सन्त पाण, चनारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चनारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मिज्झमतेउलेस्सा, भावेण मिज्झमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मन्तं, मिण्णिणा, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

पयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

सामादनसम्यग्दाप्ट सौधर्म ऐशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संकी-पर्याप्त और संकी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण. सात प्राणः चारों संक्षाणे. देवगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग. वैकियिककाययोग, वेकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग. नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्क और मध्यम नेजोलेश्या, भावसे मध्यम नेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, सामादनमम्यक्त्य, मंक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हें।

नं. १६९ मिथ्यादप्ट संधिम एशान देवेंकि अपर्याप्त आलाप.

ग.	जा.	q.	त्रा	स.	η,	₹.	का,	या.	٩.	奪.	श	सय.	₹.	ਲੇ.	भ	स.	सं।ई.	লা,	ड.
१ मि.	१ सं.	-६ अ	৬	8	۶	8	>	ર	۶Į	6	*	٤	ર	द्र २	સ્	2	*	ર	२ साका. अना

नं. १७० सासादनसम्यग्दाप्ट सोधर्म ऐशान देवोंके सामान्य आलाप.

ŋ.	जी.	Ψ.	प्रा	स ¦ ग	इ 1	का	यो.	ब. व	5. श ा.	। संय-	₹.	ਲੇ.	म.	₩.	सिन्	आ.	₹.
٩	ર્	ξq,	201	8 8	9	₹	91	ર્⊓	४ ३	9	રૈ	द्र. ३	1	8	9	2	ર
E.	स.प. संअ	६अ.	ن	ξ.	רוי. קויי	l pp	ਸ. ४ ਕ ×	मीः	সন্থা	असं-	चं क्षु.	का-	म-	÷	सं.	आहा-	साका.
Æ	सं अ			,	.p	114	व. ४	g		I	अपं	"	1	H		अना.	अना.
				1	I	1	वे २		1	ļ.		त∙		-			ļ
1				i			का. १	1				भा. १					- 1
1			- 1									तंज.					ı
1_			•	i		l		}			I		ı			i	l l

तेसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भविमिद्धिया, सासणसम्मनं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा'।

ं तेसि चेत्र अपजनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीत्रसमासो, छ अपजनीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देत्रगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम. दो दंमण, दव्येण काउ-सुक्कलेस्सा,

उन्हीं सासादनसम्यग्दिष्ट सीधमी एतान देवीं के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संबाएं, देवगति, पंचीन्द्रयजाति, जसकाय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग थे नी योगः नपुंसकवेदके विना दें। वेद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दें। दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजीलेद्या, भ्रव्यसिक्तिक, सासादनसम्ययत्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दाप्टे साँधर्म ऐशान देवोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याण जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबार्ष, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैकियिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवदके विना दो वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो

नं १७१ सामादनसम्बग्टाप्ट सीधर्म ऐशान देवींके पर्याप्त आलाप.

17	[. 3	ी-	ч.	श्रा	स	ग	₹.	का.	यो.	व.	奪.	ना.	मय.	द	ले.	भ	⊢ स.	गाज्ञ.	आ.	ड।
,		٤	ξ.	90	6	>	9	ξ	8	૨	R	3	9	ર	页. 9		*	ę.	۶	ર
स	•	۲.	ч.	!		द.	पचे.	त्रम.	स.४	+11		अज्ञाः.	अम.	चक्षु.	तज.	भ.	मासा	स.	आहा	साका.
1	q	Γ.							व.४	g .				अच.	मा 🖁	,				अना.
1			:						व. १						तज.					i
1																				

नं. १७२ मामादनसम्यग्दीष्ट संधिर्भ ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलापः

1	म्.	जी.	q.	সা,	मं	व्	₹	কা	यो.	व	弔	श्चा	सय.	द.	ਰੇ.	भ.	स.	सांज्ञ	आ.	₹.
1	9	,	Æ	19	×	,	5	9	3	- 2	×	5	9	2	ਟ. o	9	9	9	2	
P	FF_ (पं.अ	逆	1		₹.	jb	H	व.सि	स्रा.		रुम.	अस	चक्षु.	का.	भ	सा	म.	आहा.	साकाः अनाकाः
1			क				Þ	lke.	कामें-	₫.		कुश्रः		अच	श्.				अना.	अनाका.
١															मा १					
٦	1														तेज.				l .	<u>[</u>

भावेण मिन्समा तेउलेस्साः भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सिण्णिणा, आहारिणा अणाहारिणाे, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्जता वा ।

सोधम्मीमाण-सम्मामिच्छाइड्डीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-ममासो, छ पज्ञत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंमण, दन्त्र-भावेहि मिन्झमा तेउलेम्मा, भविमिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, मिण्णणो, आहारिणो, सागाम्बज्जत्ता होति अणागाम्बज्जता वा ।

सोधरमीता ग-असंजद्ममाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओं छ अपजतीओं, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओं, एगारह जोग, दो बेद, चतारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम,

अज्ञान, असंयम. चञ्ज और अचञ्ज ये दे। दर्शन, द्रव्यसे कार्पात और शृक्क लेखाएं, भावसे मध्यम तेजीलेख्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साका-रोपयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

सम्यग्मिथ्यातिष्ट संधिर्म एशान देवेंकि आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादिष्ट गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तयां, दशौँ प्राण, चारों संबाएं, देवगति, पंचेन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और चैकियिककाययोग ये नौ येगः नएंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन बान, असंयम, चक्षु और अचानु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेश्या, भन्यसिद्धिक, सम्यग्निश्यात्व, संक्षिक, आदिष्टक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्द्दाप्ट साधम ऐशान देवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्द्दि गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त थे दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राणः चारों संबाएं, देवर्गात, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, विकिथिककाययोग, विकिथिकिमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग थे ग्यारह योगः नषुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ब्रान,

नं. १७३ सम्यामध्यादिष्ट मौधर्म ऐशान देवांके आलापः

ग. जी प श्रा सं. ग. इ का	्योः वे	क . ज्ञा. सय. द.	े मान्सिक	ा आ. ्य.
१ १ ६ १०४ 9 १ 9				
सम्य संपाय दे पर्वे जस	म-४ ही.	अला अस. चेथु	ति. सः सम्यः सः	ं आहाः साकाः
	ब. ४ पु.	३ अच-	भा-१	अना.
	वि१	शान .	तज्ञ.	
1	1	मिश्र.।	1 1 1	

तिष्णि दंसण, दन्त्रेण काउ-सुक्क-मिड्समतेउलेस्सा, भावेण मिडिसमा तेउलेस्सा; भव-सिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, याण्णिणा, आहारिणो अणाहारिणो, यागारुवज्जता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव पजनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजमो, तिण्णि दंमण, दव्य-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मनं, मण्णिणो, आहारिणा, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षी

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे कार्पात. शुक्क और मध्यम तेजीलेस्या. भावसे मध्यम तेजीलेस्याः भव्यसिद्धिक, औपशीमक, आयिक और आयोपशीमक ये तीन सम्यवस्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्दि संश्विम पेशान देवेंकि पर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संजी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियज्ञानि, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये ना योगः नपुंसकवेदके विना दे। वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावमे मध्यम नेजोलेह्या, भव्यस्थिष्ठिक, औपश्चिक, आयिक और क्षायोपश्चिक ये तीन सम्यवन्त्रः संज्ञिक, आहारक, माकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १७४ असंयतसम्यग्टिष्ट में।धर्म ऐशान देवेंकि सामान्य आरु।प.

ग्			ं सं.¹ गः <u>इ.</u> ∣ काः			मंय⊹ द	€.	म् । म	माञ्ज. आ.	उ
1	ર	६ १०	811812			१ ३	5. ₹	१ ३	१ २	২
100	स.प स.अ.	٩. v	है. पंच यम	म•४२।।	म?ति 🕜	ाम कद	F1	म जिल	स. आहा	माका
क	स.अ.	६।		व. ४ प	श्रुत.	ंत्रिना	.ઘ ને.	ाक्षा.	नना	अन्।.
1		अ ,		વે.૨	अव.	1	सार १	क्षाया		İ
		1		का- १			तेज-	1		[

नं. १७५ असंयतसम्यग्दिष्ट सोधर्म एशान देवांके पर्याप्त आलाप.

गु. १	1		सं-,गः∤इ ४ ′ १		1	i			सय. १		1	भ. १	स ३	स्रीहा आ. १ १ १	₹.
अवि.	सं.प	q.	डे	. স	म∙ ८ व∙ ४ ∤बे. १		Į	मतिः श्रुतः अत्रः	अम	कं. द त्रिना	1		ं जाप. क्षा. क्षायो	स ्र ीआहा	साकाः अ ना
							1 1								

तेसिं चेत्र अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ सुक्कल्मा, भावेण मिन्झमा तेउलेस्साः भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मन्तं । देवासंजदसम्माइहीणं कथमपजनकाले उवसमसम्मन्तं लव्भिद ? वृचदे—वेदगसम्मन्तमुत्रसामिय उवसमसेढिमाहिय पुणो ओदरिय पमनापमन्तमंजद-असंजद-मंजदासंजद-उवममसम्माइहि-हाणेहि मिन्झम-तेउलेस्मं परिणिमय कालं काऊण सोधम्मीसाण-देवेसुप्पण्णाणं अपजनकाले उवसमसम्मन्तं लव्भिद। अध ते चेव उकस्स-तेउलेस्सं वा जहण्ण-पम्मलेस्सं वा परिणिमय जिद्द कालं करेति तो उवसमसम्मन्तेण सह मणक्कमार-माहिद उप्पजनि। अध ते चेव उवसमसम्माइहिणो मिन्झम-पम्मलेस्सं परिणिमिय कालं करेति तो बह्म-बह्मोत्तर-लांतव-काविद्व-सुक्क-महासुक्केसु उप्पजनि। अध उक्कम्स-पम्मलेस्सं वा जहण्ण-सुक्कलेस्सं वा परिणिमिय जिद्द ते कालं करेति तो उवसमसम्मन्तेण सह सदार-सहम्मारदेवेसु उप्पजनि।

उन्हीं असंयतसम्यन्दि संधिम ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाए कहने पर—एक अविरतसम्यन्दि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषयेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेश्याः भन्यसादिक, आपश्रमिक, आयिक और आयोगश्रमिक ये तीन सम्यक्त्य होते हैं।

द्यंका - असंयतसम्यग्द्रष्टि देवेंकि अपर्याप्तकालमें औपर्शामिकसम्यक्त्व केसे पाया जाता है ?

सम्धित — बेद्दकसभ्यक्त्वको उपरामा करके और उपरामश्रेणी पर चढ़कर फिर यहांसे उतर कर प्रमन्तसंयत, अप्रमन्तसंयत, असंयत और संयतासंयत उपरामसम्यग्दिष्ट गुणस्थानोंसे मध्यम तेजोलेश्याको परिणत होकर और मरण करके सौधर्म पेशान करूव वासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें ओपश्मिकसम्यक्त्व पाया जाता है। तथा, उपर्युक्त गुणस्थानवर्ती ही जीव उत्कृष्ट तेजोलेश्याको अथवा जघन्य पद्मलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशामिकसम्यक्त्वके साथ सनत्कुमार और महेन्द्र करूपमें उत्पन्न होते हैं। तथा, वे ही उपशमसम्यग्दि जीव मध्यम पद्मलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ट, शुक्त और महाशुक्त कर्पोमें उत्पन्न होते हैं। तथा, व ही उपशमसम्यग्दि जीव उत्कृष्ट पद्मलेश्याको अथवा जघन्य गुक्तलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो व्रह्म कर्पोमें उत्पन्न होते हैं। तथा, व ही उपशमसम्यग्दि जीव उत्कृष्ट पद्मलेश्याको अथवा जघन्य गुक्तलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशमिकसम्यक्तके साथ शतार,

अध उनसमसेिंदं चिंदिय पुणोदिण्णा चेत्र मिन्सम-सुक्किलेस्साए परिणदा संता जिद्द कालं करेंति तो उनसममम्मत्तेण सह आणद्-पाणद्-आरणच्चुद्-णवगेत्र ज्ञितिमाणवासिय-देवेसुप्पजंति। पुणा ते चेत्र उक्कस्स-सुक्किलेस्सं परिणमिय जिद्द कालं करेंति तो उनसम-सम्मत्तेण सह णवाणुदिम-पंचाणुत्तरिवमाणदेवेमुप्पजंति। तेण सोधम्मादि-उनिस्स स्वा-देवासंजदसम्माइद्वीणमपज्ञत्तकालं उनसमसम्मत्तं लब्मिद् ति। सण्मिणो, आहारिणां अणाहारिणां, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुता वा।

एवमिन्थिपुरिसवेदाणमोघाळावे। समत्तो ।

एवं चेय पुरिसवेद-देवाणमालावो वत्तच्यो । णवि जन्थ दं। वेदा बुना तन्य पुरिसवेदो एक्को चेय वत्तच्यो । एवं सोधम्मीसाणदेवीणं पि वत्तच्यं । णवि जन्थ

सहस्रार कल्पवासी देवों में उत्पन्न होते हैं। तथा, उपरामश्रेणी पर चड़ करके और पुनः उतर करके मध्यम गुद्ध छैरयासे परिणत होते हुए यदि मरण करते हैं तो उपरामसम्यक्त्वके साथ आनत, आणत, आरण, अच्युत और नो धेवेयकविमानवासी देवों में उत्पन्न होते हैं। तथा, पूर्वोक्त उपरामसम्यक्त्वके साथ नो अनुदिश और पांच अनुक्तर विमानवासी देवों में उत्पन्न होते हैं। कर्ति उपरामसम्यक्त्वके साथ नो अनुदिश और पांच अनुक्तर विमानवासी देवों में उत्पन्न होते हैं। इसकारण सौधर्म स्वर्गत लेकर उत्पन्न सभी असंयन मन्यक्ति देवों के अपर्योप्तकालमें औपरामिकसम्यक्त्व पाया जाता है।

सम्यक्त्व आलापके आगे—संक्षी, आहारक, अताहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार स्त्रिविद और पुरुषवेदका भेद न करके सीधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंके सामान्य आलाप समाप्त हुए।

सींधर्म पेशान करणके देवोंके सामान्य आलापोंके समान ही पुरुपवेदी देवोंके आलाप कहना चाहिये। विशेषता यह है कि सामान्य आलाप कहने समय जहां पर पहले स्निवेद और पुरुषवेद ये दी वेद कहे गये हैं, वहां पर केवल एक पुरुपवेद ही कहना चाहिये। इसीम्रकार सींधर्म पेशान न्वर्गकी देवियोंके आलाप कहना चाहिये। विशेषता यह है कि

नं. १७० असंयतसम्यग्दि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. जी. प.प्रा. सी. ग.' इं.का. यो. वे.क. हा. संय. द हे. म. स. सींझ आ. उ. १ १ ६ ७ ४ १ १ १ २ १ ४ ३ इ.२ १ ३ १ २ २ अबि.स अ. हे वे. प त. वे.मि. पु. मति. अस. के.द का म. ऑप. सं. आहा साका. ह कार्म. ध्रुत. वना शु. क्षा. अना. अना. अव. मा. १ क्षाया. तेज. पुरिसवेदो बुत्तो तत्थ इत्थिवेदो चेव वत्तव्यो । असंजदसम्माइद्विस्स इत्थिवेदिम्ह उप्पत्ती णित्थि त्ति तस्स पज्जतालावो एक्को चेव वत्तव्यो । पज्जतालावे उच्चमाणे वि खइयसम्मत्तं णित्थि त्ति वत्तव्यं, देवेमु दंसणमोहणीयम्स खवणाभावादो । एत्तिओ चेव विसेसो ।

सणक्कुमार-माहिंददेवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-मुक्क-उक्कस्मते उं-जहण्णपम्मलेस्साओ, भावेण उक्करसते उजहण्णपम्मलेस्साओ, भविमाद्धिया अभवामिद्धिया, छ सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वां।

पुरुषवेदी देवेंकि आलापोंमें जहां पुरुपवेद कहा गया है यहां केवल स्त्रीवेद ही कहना चाहिए। यहां इतना और समझना चाहिये कि असंयतसम्यग्दिए जीवेदिकों स्त्रीवेदमें उत्पत्ति नहीं होती है, इसिलये स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दिएका एक पर्याप्त-आलाप ही कहना चाहिए। और पर्याप्त-आलाप कहते समय भी क्षायिक सम्यक्त नहीं होता है, अर्थात् स्त्रीवेदी पर्याप्तोंके (देवियोंके) दो ही सम्यक्त होते हैं. ऐसा कहना चाहिए: क्योंकि, देवोंमें दर्शनमोहनीय कर्मके अपणका अभाव है। सौधर्म और ऐशानके पुरुपवेदी और स्त्रीवेदी आलापोंमें उनके सामान्य आलापोंसे इतनी ही विशेषता है।

सनत्कुमार और मांहन्द्र स्वगाँके देवांके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशाँ प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञाणं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वेकियिककाययोग, वैकियिककाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः पुरुषवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और गुक्क लेक्याएं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट पीत और ज्ञवन्य पद्मलेक्या, भावसे उत्कृष्ट तेजोलेक्या और जवन्य पद्मलेक्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ प्रतिषु १ उनकस्सतेष्ठ १ श्रीत पाठो नास्ति नं. १७७ सानत्कमार माहेन्द्र देवींक सामान्य आलाप.

गु.	र्जा.	Ч.	प्रा-	सं	η.	₹.	का.	यो.	वे. क १ ४	₹ 11-	सय	., द.	ਰ	भ.	स.	माझे	आ .	उ.
8	ર	Ę	१०	X	Ł	₹	ξ	\$ 5	? }8	Ę	₹	3	द ४का	. २	Ę	₹ .	3	3
मि.	स.प.	q.	ড		दे.	d d	त्रस.	म. ४	q.	हा. ३	असं.	के. द.	श्र ते.प.	स.		सं.	आहा.	साका
सा.	स. अ.	Ę				<u>D</u>		व. ४		अझा- १		विना.	मा.२	अ.		1	अना.	अना.
स . अ .		अ,						व. २					त उ.					
अ.		}					•	का. १					प. ज.					

तेसिं चेव पज्रत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि उक्कस्स-तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांरी

तेसिं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिस वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्तस्मतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ; भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच

उन्हीं सानत्कुमार मोहन्द्र देवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकिथिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कथाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेजोलेश्या और जघन्य पद्मलेश्याः भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सानःकुमार माहेन्द्र देवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्या-हाहि, सासाइनसम्यन्हाछि और अविरतसम्यन्हाछि ये तीन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय. वेकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुपवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान तथा आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे उन्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेक्याएं: भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: सम्यग्मिध्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अना-

नं. १७८ सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्त आलाप

∫ ਹੁ. जी-	प प्रा	्सं ∣ग,	. ₹.	का.	यो-	ब.	聅.	श्रा-	सय.				सांश.	आ.	उ. (
२ १	६ १०	8 8	₹.	٤	8	7	У		१		द्र,२त.स.		2	9	२
मि सं.प	۲.	₹.	क	bi:	म. ४ व. ४	Ţ.		श्रान-३			ष. ज.		सं.	आहा.	साकाः
सा			- -	jir.				अझा. ३	1	विना	मा∙ २	37.			अना.
स.			-		वै. १			}		}	ते. उ.				1
अ .		}			_				1		प. ज		l		

सम्मत्तं, सण्मिणो, आहारिको अणाहारिको, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा"ो

संपित मिच्छाइद्विष्पदृष्ठि जाव असंजदसम्माइद्वि ति ताव चदुण्हं गुणहाणाणं सोधम्म-भंगो । णवरि उवरि सञ्वत्थ इत्थिवेदो णित्थि, पुरिसवेदो चेव वत्तन्त्रो । ओघा-लावे भण्णमाणे दन्त्रेण काउ-सुक्क-उक्कस्मतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तन्त्राओ । भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तन्त्राओ । वत्तन्त्राओ । पज्जत्तकाले दन्त्र-भावेदि उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ । तेसिं चेव अपजत्तकाले दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ ति चेव विसेसो ।

बम्ह-बम्हुत्तर-लांतव-कापिट्ट-सुक्क-महासुक्ककप्पदेवाणं सणक्कुमार-भंगो। णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दच्वेण काउ-सुक्क-मिक्सिपम्मलेस्साओ, भाविहि मिक्सिमा पम्म-लेस्सा । पज्जत्तकाले दच्व-भाविहि मिक्सिमा पम्मलेस्सा । अपज्जत्तकाले दच्वेण

हारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक चारों गुणस्थानोंके आलाप सौधर्म देवोंके आलापोंक समान जानना चाहिए। विशेषता केवल इतनी है कि ऊपर सभी कल्पोमें रजीवेद नहीं है, अतः एक पुरुपवेद ही कहना चाहिए। उसमें भी ओघालाप कहने समय द्रव्यसे कापोत, गुक्क, उत्कृष्ट तेज और जधन्य पद्म लेदयाएं कहना चाहिए। भावसे उत्कृष्ट तेज और जधन्य पद्म लेदयाएं कहना चाहिए। पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेज और जधन्य पद्म लेदयाएं होती हैं। उन्होंके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेदयाएं और भावसे उत्कृष्ट तेज और जधन्य पद्म लेदयाएं होती हैं। इतनी विशेषता है।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ और गुक्र-महागुक्त कल्पवासी देवोंके आलाप सानत्कु-कुमार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापात, गुक्क और मध्यम पद्म लेक्स्या होती है, तथा भावसे केवल मध्यम पद्मलेक्स्या होती है। उन्हीं देवोंके पूर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम पद्मलेक्स्या होती है।

नं १७९ सानत्कुमार	: माहेन्द्र देवीं	५ अपर्याप्त	आलाप.
-------------------	-------------------	-------------	-------

	प.∤प्रा.,स.				वे.∤क	ज्ञा.	सय.	₹.	ਲ.	भ.	स.	साज्ञे.	आ.	उ.
. ३ । १	६७७४	1 8	٤ ١	ર	9 8		2	3	द्र. २	२	५ ऑप.	2	ર	ર
मि.स. सा.अ.	-	द. ∣	न्यः असः	वै.मि.	g.	कुथ्.	असं.	के. द	का.गु	म∙	क्षा.	सं.	आहा-	साका-
	ক	1	∰ <u>द</u>	कार्म.		मति		विना.	मा. २	अ.	क्षायो.		अना.	अना.
э.	,		-			श्रुत.	j		ते.	}	मि.	- 1		
	1 1				(अव.			प. ज.		सासा.			

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मिन्झमा पम्मलेस्सा। एत्तियमेत्ता चेव विसेसा। सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं वम्हलाग-भंगा। णवि सामण्णेण भण्णमाणे द्वेवण काउ-सुक्क-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ। पज्जत्त-काले द्व्य-भाविह उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्माओ। अपज्जत्तकाले द्वेवण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्मपम्म-जहण्णसुक्कलेस्माओ। आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमाघ-सुप्पवृद्ध-जसाधर-सुवृद्ध-सुविसाल-सुमण-सुउमणस-पीदिकरिमिदि एदेसिं चदु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगा। णवि सामण्णेण भण्णमाणे द्वेवण काउ-सुक्क-मिन्झमसुक्कलेस्साओ, भावेण मिन्झमा सुक्कलेस्सा। पज्जत्तकाले द्व्य-भाविह मिन्झमा सुक्कलेस्सा। अपज्जत्तकाले द्वेषण काउ-सुक्कलेस्सा।

ं<mark>अञ्चि-अञ्चिमा</mark>लिणी-वहर-वहरायण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च -विजय--

उन्होंके अपर्याप्तकालमें द्रव्यमें कापोत और शुक्क लेश्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेश्या होती है। इतनीमात्र ही विशेषता है।

दातार और सहस्नार कल्पवासी देवींक आलाप ब्रह्मलेकके आलापींक समान समझना चाहिए। विदोषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यंस कापीत, गुरू, उत्हृष्ट पद्म और जघन्य शुरू लेश्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्हृष्ट पद्म और जघन्य शुरू लेश्याएं होती हैं। उन्हीं देवींके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्हृष्ट पद्म और जघन्य शुरू लेश्याएं होती हैं। उन्हींके अपयीप्तकालमें द्रव्य से कापीत और शुरू लेश्याएं होती हैं। तथा भावसे उत्हृष्ट पद्म और जघन्य शुरू लेश्याएं होती हैं। तथा भावसे उत्हृष्ट पद्म और जघन्य शुरू लेश्याएं होती हैं।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा मुद्र्शन, अमोघ, सुप्रवुद्ध, यशोधर, सुवुद्ध, सुविशाल, सुमनस्, सोमनस् और प्रीतिकर इन चार और नो इस प्रकार तेरह कल्पों के आलाप शतार-सह-स्नार देवों के आलापों के समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—इन्यसे कापोत, शुक्क और मध्यम शुक्क लेश्याएं होती हैं, तथा भावते मध्यम शुक्क लेश्या होती है। उन्हीं देवों के पर्याप्तकालमें इन्य और भावसे मध्यम शुक्क लेश्या होती है। उन्हीं के अपर्याप्तकालमें इन्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं तथा भावसे मध्यम शुक्क लेश्या होती है।

अर्चि, अर्चिमालिनी, बज, वैरोचन, सोम्य. सोम्यरूप, अंक, स्फाटिक. आदित्य, इन

१ " सुभद्र ' इति पाठः । तः सा वा. पृ. १६७.

२ असी य अधिमािळाणि बदेरे बद्रायणा अणिहसगा । सीमा य सीमस्व अके फलिके य आहरी ॥ वि सा. ४५६. तपानुदिश्विमानािन येप्त्रेक एवाऽऽदिस्री नाम विमानपरतारः । तत्र दिश् विदिश्च चन्यारि च वारि श्रीणिविमानािन । प्राच्यां दिशि अचिविमानी अपाच्यामिचेमाली, प्रतीच्या वेरीचने, उदीच्यां प्रमास, मन्य आदि-रयास्यं । विदिश्च पुष्पप्रकार्णकािन चत्वारि । पूर्वदक्षिणस्यामिचेप्रम । दक्षिणापरस्यां अचिमेन्य । अपरात्तरस्यां अचिरावर्त । उत्तरपूर्वस्यामिचिविशिष्ट । ति रात् वा पृ १६७. ज्वेतास्वरम्थेप अनुदिश्विमानानामुक्के नास्ति ।

वइजयंत-जयंत-अवराइद-सन्बद्धसिद्धि ति एदेसिं णव-पंच-अणुदिसाणुत्तराणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्ससुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसि चेव पञ्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिमवेद, चत्तरि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दघ्व-भावेहि उकक-

ने अनुदिश विमानेंकि तथा विजय. वेजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्धसिद्धि इन पांच अनुत्तर विमानेंकि आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संकी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशाँ माण, सात प्राणः चारी संकाणं, देवगाति, पंचिन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, विकियिककाययोग, वेकियिककाययोग, वेकियिककाययोग, वेकियिककाययोग, वेकियिककाययोग, वेकियिककाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन जान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और गुकल लेक्याणं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट गुक्कलेक्या, भावमे उत्कृष्ट गुक्कलेक्या, भवमे उत्कृष्ट गुक्कलेक्या, भवमे उत्कृष्ट गुक्कलेक्या, भव्यासिद्धिक, अंपदामिक, आयिक और आयोपशमिक ये तीन सम्यक्त्यः संक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकागपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

उन्हीं ने। अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्बन्धि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संकाणं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैकिश्विककाययोग वे ना योगः पुरुपवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दशीन, दृष्य और भावस उत्कृष्ट शुक्कलेश्या. भव्यसिद्धिक, औपशामिक-

नं. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवेंकि सामान्य आलाप.

गृ	र्जा.	٩.	मा. स	रं.ं ग	। ई.	का.	या.	वे	事	ना	सय.	द.	हे.	भ	ਜ .	संबि	आ.	₹.
1 3							११				1		ਰ. ੩			*	3	२
1	स.प. मंअ	ч.	9	द.	षचे.	त्रम	म. ४	g.		मति	अस.	कं.द.	का, श	भ	अं।प.	सं.	आहा.	साका.
क्र	में अ	Ę		ţ			य ४	ĺ	j	शृत.		विना	স্, , ,		श्चा.		अना.	अना.
		왱.]		वं∙ २		}	अब.			41. 2		क्षायं।,			
1_		<u> </u>			}		कामे.१		1				भू, उ.		1	1		<u> </u>

स्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, उत्रममसम्मत्तेण तिणा दो सम्मत्तं। केण कारणेण उत्रसमसम्मत्तं णित्थ ? तुचदे— तत्थ द्विदा देता ण ताव उत्रममसम्मत्तं पिडविज्जंति, तत्थ मिच्छाइद्वीणमभावादो। भवदु णाम मिच्छाइद्वीणमभावो, उत्रममसम्मत्तं पि तत्थ द्विदा देवा पिडविज्जंति; को तत्थ विरोधो ? इदि ण, 'अणंतरं पच्छदो य मिच्छत्तं' इदि अणेण पाहुडसुत्तेण सह विरोहादो। ण तत्थ द्विद-वेदगसम्माइद्विणो उत्रसमसम्मत्तं पिडविज्ञंति, मणुसगदि-विदिरित्तण्णगदीसु वेदगसम्माइद्विजीवाणं दंसणमोहृत्रसमणहेदुपिर-णामाभावादो। ण य वदगसम्माइद्वितं पिड मणुस्सेहितो विसेसाभावादो मणुस्साणं च

सम्यक्शवके विना दे। सम्यक्त्य होते हैं।

शंका— नी अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंक पर्याप्तकालमें औपश्रिक सम्यक्ष किस कारणसे नहीं होना है ?

समाधान — नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंमें विद्यमान देव तो औपशामिक सम्यक्तको प्राप्त होते नहीं है, क्योंकि, वहां पर मिथ्यादि जीवेंका अभाव है।

शंका — भले ही वहां मिथ्यादि जीवेंका अभाव रहा आवे, किन्तु यदि वहां रहने-वाले देव औपरामिक सम्यक्त्वको प्राप्त करें, ते इसमें क्या विरोध है?

समाधान — ऐसा कहना भी युक्ति-युक्त नहीं है, क्योंकि, अपिशमिक सम्यक्ति अनन्तर ही औपशमिकसम्यक्ति पुनः ग्रहण करना स्वीकार करने पर 'अनि मिध्यादृष्टि जीवके प्रथमोपशम सम्यक्ति प्राप्तिके अनन्तर-पश्चान अवस्थामें ही मिध्यात्वका उद्य नियमसे होता है। किन्तु जिसके द्वितीय, तृतीयादि वार उपशमसम्यक्ति प्राप्ति हुई है, उसके औपशमिक सम्यक्त्वके अनन्तर-पश्चान् अवस्थामें मिध्यात्वका उद्य भाज्य है, अर्थान् कदाचित् मिध्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्व या उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है, कदाचित् सम्यिग्ध्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है इत्यादि '। इस कपायप्राश्चतके गाथासूत्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है। यदि कहा जाय कि अनुदिश और अनुक्तर विमानोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्ष्य हि देव औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं, सो भी बात नहीं है। क्योंकि, मनुष्यगतिके सिवाय अन्य तीन गतियोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्ष्य प्रित्त कारणभूत परिणामोंका अभाव है। यदि कहा जाय कि वेदकसम्यक्ष्य उपशमित कारणभूत परिणामोंका अभाव है। यदि कहा जाय कि वेदकसम्यक्ष्य उपशमित अनुदिशादि विमानवासी देवेंकि कोई विशेषता नहीं है, अत्रप्त जो दर्शनमोहनीयके उपशमित योग्य परिणाम मनुष्योंके पाथे जाते हैं वे

१ सम्मत्तपदमलमस्साणंतरं पच्छदं। य भिच्छतं। लंभरस अपटमस्स दु मजियव्यो पच्छदो होदि ॥ (कसाय-पाहुड) सम्मत्तस्स जो पदमलंभो अणादियभिच्छार्राट्टियसभो तस्साणंतर पच्छदे। अणतरपिछमात्र थापु मिच्छत्तमेव होह । तत्थ जात्र पटमिट्टिचरिमसमभो चि तात्र भिच्छतोदयं मोत्तण पयारंतराममभादो । लगस्म अपटमस्य दु जो ख टु अपटमो सम्मत्तपिड्छमं। तस्म पच्छदो भिच्छतोदयं। मजियव्यो होह । जयभ अ. पू ९६१.

दंसणमोहुवसमणजोगपरिणामेहि तत्थ णियमेण होद्व्वं, मणुस्स-संजम-उवसमसेढिसमा-रुहणजोगत्तणेहि भेददंसणादो । उवसमसेढिम्हि कालं काऊणुवसमसम्मत्तेण सह देवे-सुप्पण्णजीवा ण उवसमसम्मत्तेण सह छ पज्जत्तीओ समाणेति, तत्थतणुवसमसम्मत्त-कालादेश छ-पज्जत्तीणं समाणकालस्त बहुत्तुवलंभादो । तम्हा पज्जत्तकाले ण एदेसु देवेसु उवसमसम्मत्तमिथ ति मिद्धं । सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें नियमसे होना चाहिए। सो भी कहना युक्ति-संगत नहीं है, क्योंकि, संयमको धारण करनेकी तथा उपशमश्रेणीके समारोहण आदिकी योग्यता मनुष्योंके ही होनेके कारण अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें और मनुष्योंमें भेद देखा जाता है। तथा उपशमश्रेणीमें मरण करके औपश्चामक सम्यक्त्यके साथ देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव आपश्चामक सम्यक्त्यके साथ छह पर्याप्तियोंको समाप्त नहीं कर पाते हैं, क्योंकि, अपर्याप्त अवस्थामें होनेवाले औपश्चिक सम्यक्त्यके कालसे छहीं पर्याप्तियोंके समाप्त होनेका काल आधिक पाया जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध हुई कि अनुदिश और अनुतर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालमें औपश्चिक सम्यक्त्य नहीं होता है।

विशेषार्थ - उपरामसम्यग्दप्र जीव औपरामिक सम्यक्त्वसे पुनः औपरामिक सम्य-क्तवको प्राप्त नहीं होता है किंतू यदि उसके मिथ्यात्वका उदय हो जावे तो मिथ्यादृष्टि हो जाता है, यदि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय हो जावे ते सम्यग्मिथ्याद्य हो जाता है. यदि सम्यक्षकृतिका उदय हो जावे तो वेदकसम्यग्दाप्ट हो जाता है और यदि अनन्तानुबन्धीमेंसे किसी एक प्रकृतिका उद्य हो जाये तो सासादनसम्यग्दाप्ट हो जाता है'। इस नियमके अनुसार नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्द्रष्टि जीव फिरसे उप-शमसम्यक्तको तो ब्रहण कर नहीं सकता है और मिध्यात्व गुणस्थान उसके होता नहीं है. क्योंकि, अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थानको छोड्कर उसके दूसरे कोई गुणस्थान नहीं पाये जाते हैं, इसलिए मिध्यात्वसे भी पनः वह उपशमसम्ययत्वकी ग्रहण नहीं कर सकता है। बेदक-सम्बक्त्व से कदाचित उसके उपशमसम्बक्त्व माना जाय सो ऐसा मानना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वसे उपशमश्रेणीके सन्मुख मनुष्योंके ही उपशम (डितीयोपशम) सम्यक्त होता है अन्य गतियोंमें नहीं। तथा पूर्व पूर्यायसे आया हुआ उपरामसम्यक्त अपर्याप्त अवस्थामें ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि, उपशमसम्यक्तक कालसे छह पर्याप्तियोंके पूरा करनेका काल अधिक होता है। इसप्रकार इतने कथनसे यह निष्कर्प निकला कि नी अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दाष्ट्र जीव नियमसे वेदकसम्यग्द्रिष्ट ही हो जाता है और जो वेदकसम्यग्द्रिष्ट उत्पन्न होता है वह भी अन्त तक

र प्रतिष्र ' छ-पश्चचीओं ' इति पाठः।

२ उक्समसम्मत्तद्धा काविल्मेचो दु समयमेचो चि । अवसिट्टे आमाणी अणअण्णदरूदयदो होटि ॥ अतोमुहुचमद्धं मञ्जोबसमेण होदि उवमतो । नेण पर उदओ खडु तिण्णेकदरम्स कम्मस्म॥

ल. श. ७००, १०३.

अणागारुवजुत्ता वा ।

तिमं चेव अवज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अवज्जत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण काउमुक्कलेस्सा, भावण उक्तस्मिया मुक्कलेम्सा, भविमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणा, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागाहवजुत्ता वार्षे । एवं देवगदी

सिद्धगदीए सिद्ध-भंगी ।

एवं गईमानाया समना ।

वेदकसम्यग्द्रापृ ही ग्हना है।

सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अनुदिश और अनुत्तर विमानवानी देवेकि अपयीप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत्तसम्प्रस्टि गुणम्थान, एक संबी-अपयीप्त जीवसमास, छहाँ अपयीप्तियां, सात प्राण, चारों संबाणं, देवगीत, पंचित्द्यजाति, वसकाय, विकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, पुरुपवेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमें कापात और शुक्र छेश्याणं, भावसे उत्कृष्ट शुक्क छेश्याः भन्यसिद्धिक, औपश्रामिक, सायिक और क्षायोपश्रामिक ये तीन सम्यस्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं। इसप्रकार देवगिनके आछाप समाप्त कुए।

सिद्ध गतिक आलाप सिद्धांके ओघालापके समान जानना चाहिये।

इसप्रकार गनिमार्गणा समाप्त हुई ।

नं. १८१ 📉 नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवेंकि पर्याप्त आठाप.

] ग्	जी	q	91	म	ग	\$	का	यो	व	_ 本	वा.	मय	₹.	ે ક. ધ	₽.	η_*	सं झ	आ	J.
अवि. ६	्र मं. प.	ં ફ વ.	> 0	Х	≥ Air	वसं.	त्रसः ०	् म. ४ व. ४ वे १	4		मति श्रुत.	अम.	केड. विना	ड. १ म. ५ भा. १ २१, उ.	म.	ैर क्षाः दायाः	१ म	्, जाहा.	२ साकाः अनाः

नं. १८२ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवामी देवेंकि अपर्याप्त आलाप.

ग्.	जी	q.	त्रा	मं,	ग	₹.	का,	यो.	₹.	क	ज्ञा.	मंग.	द	हे.	11	स-	साह्य	आ.	उ ,
2	۶	ξ	ن	У	१	१	Ł	, a	P	R	~ ₹	3	ર્	द्र, २	٦,	3	۲.	٦ -	3
ja.	सं अ	344.			दे.	q.	₹-	वे सि. कार्ष	Ţ.		मति. शत	अस.	केद विकास	ड़. २ का. ज.	म.	आप. श्रा	स.	आहा. अना.	माका
"								dof all v			अव. अव.		1491+	ग. भा. ^१		नाया.		ाना.	अना.
	1		1											Ŋ. 3					
1	1	_	i _									1						,	- 1

इंदियाणुबादेण अणुबादो मुलोघो । णबरि अत्थि अदीदगुणहाणाणि, अदीद-जीवतमाता, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, सिद्धगदी वि अत्थि, अणिदिया वि अत्थि, अकाया वि अत्थि, णेव संजदा णेव अमंजदा णेव संदज्ञामंजदा वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया अत्थि । एदे आलावा ण वत्तव्वा. सिद्धाणमेइंदियादि-जादिगाम-कम्मस्यदयाभावादो ।

सामण्णेइंडियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्राणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चनारि अपज्जनीओ, चनारि पाण निण्णि पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्य-गदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचवनवदंतण, दच्चेण छ लेस्सा, पुढवि-वणप्पर्ह अस्सिद्ण सरीरस्म छ लेस्माओ हवंति । भावेण किण्ह-णील-काउलस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अस्विष्णणा, आहारिणा अणाहारिणा, सामारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे आलाप मल ओघालापके समान जानना चाहिए। विशेष वात यह है कि अर्तातगुणस्थान, अतीतजीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अनीतप्राण, सिद्धगति, अतिन्द्रिय, अकाय, संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान, भव्यसिद्धिक और अभन्यतिद्धिक रहित स्थान इतने आलाए नहीं कहना चाहिए: क्योंकि, सिद्धजीयोंके एकेन्द्रियादि जाति नामकर्मका उदय नहीं पाया जाता है।

सामान्य एकेन्द्रिय जीवेंकि आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बाद्र-पर्याप्त. बादर-अपर्याप्त. मृक्ष्म-पर्याप्त और सृक्ष्म-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, मनः-पर्याप्ति और भाषापर्याप्तिके विना चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियांः पर्याप्तकालमें— म्पर्शने (न्द्रयः) कायबल, आयु और स्वासीच्छवास ये चार प्राण, अपर्याप्तकालमें स्वासी-च्छ्वासके विना तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्थचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचीं स्थावर कायः अदारिककाययोग, औदाग्किभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमानि और कुश्रुत थे दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छही लेस्याएं होती हैं, क्योंकि, पृथिवी और वनस्पतिकायिक जीवेंकि शरीरकी अपेक्षा शरीरकी छहाँ लेश्याणं पायी जानी हैं। भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं: भन्यांमाद्धिकः अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंब्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

सामान्य एकेन्द्रियों के सामान्य आराप. नं, १८३

युर्जी पन्नास.गः इका यो वे.क. झा सय. द. छे. स म संहि. आ. । उ. भि.बा.प.प ३ ति. है बस. ओं २ के कुम. अस. अच मार म भि बा.अ ४ विचा का.१ में कुश अञ.अ. म. आहा. साका. अना. अना. प्र. प. अ. प. अ.

तेमिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दां जीवसमासा, चत्तारि पञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्सगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा''।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंदसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्मा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और सूक्ष्म-पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संक्षापं, तिर्यंचगित, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमिति और कुश्रुत थे दो अक्षान, असंयम, अचश्रुद्दर्शन, द्रव्यसे छहां लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-अपर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, बार अपर्याप्तियां, तीन माण, बारों संक्षापं, तिर्यंचगित, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, बारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रज्यसे कापोत और शुक्ल लेदयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोन लेदयापं: भन्यसिद्धिकः अभन्यसिद्धिकः मिध्यास्व, असंक्रिक,

नं. १८४ सामान्य एकेन्द्रियोंके पर्याप्त आलाप.

ग्	जी.	ч.	भा.	₹.	ग.	इं	क ा,	यो.	व. क.	লা.	सय.	द₌	ले.	म.	स.	साही.	आ.	ਤ
	२ बा.प सूप		¥					् १ आदाः	\$ 8				ह. ६ भा ३ अशु.	भ.		र असं	१ आहा.	२ साकाः अनाः

अमिणणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांं।

बादरेइंदियाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, दे जीवसमासा, चतारि पज-नीओ चत्तारि अपज्जतीओ, चनारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्खगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, निष्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुरंसण, दब्बेण छ लेस्माओ, भावेण किण्ड-णील काउलेस्मा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणां, आहारिणो अणाहारिणां, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां

आहारक, अनाहारकः साकारोपयांगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

बादर एकेन्द्रिय जीवेंकि सामान्य आलाए कहने पर—एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और बादर-अपर्याप्त ये दें जीवममाम, चार पर्याप्तयां, चार अपर्याप्तयां; चार प्राण, तीन प्राण: चारों संवाणं, तिर्यचगाति, बादर एकेन्द्रियज्ञाति, पांचों स्थावरकायः औदारिककाययोगः औदारिककाययोगः और कार्मणकाययोगः ये तीन योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रत ये दें। अज्ञान, असंयम, अचश्रदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याणं: भव्यभिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

नं. १८५ सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग जी प	षा, स स इ. का.	योः वःकाजाः म	य ड कि. म. म. महि	आ / उ.
१२ ४		२ १ ४ २ ।		२ २
्मि.वाअ अ.	नि _{, है} पस	ओ मि 🚙 🗆 🗇 म. त	म अच का न सि ['] अ म	आहा. साका.
म.अ.	- विनाः	कार्स, ोंट एअ.	5T. N.	अना अना
		, 1	सा ३,	
1			अया ।	
1	ı	I	1	
		į		I

नं. १८६ ब दर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप

į ग.	_र्जाः	q.	ч .	म	₹1.	€.	का.	या.	Ŧ.	क	झा.	मग्	ჳ.	rs.	भ	स	मझि.	′ आ.	्ड. २ साका, अना
,	ર	% व	Х	Х		۶	1,0	3	-,	:	2	,	Ł	σ ε	2	,	Ł	ર	२
मि.	बा. प.	४अ	₹		ांत	का ग	त्रम.	जा. २	han		TH.	अम	अच.	मा ३	भ	मि	अम	आहा	साका,
1	बा अ					जानि	विना	का. १	ie.		乘水.			সম্	¥.			अना	अना.
											. 3								

तेसिं चेव पज्जचाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जचीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंमयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्येण छ लेम्सा, मावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, भिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागाम्वयज्जता होंति अणागाम्वयज्ञता वां

'तिसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासी, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णयुंमयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण,

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, एक बादर-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यंचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, गांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कचाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहां लेख्याएं: भावसे कुण्ण, नील और कापोत लेख्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिध्यात्व, असंक्षिक, भाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादि शुणस्थान, एक बादर-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन भाण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजानि, पांचों स्थावरकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मण

नं. १८७ वादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

Ŋ.	जो.	q.	त्रा.	स	ग.	\$°.	का.	गोः वे	ু ন	ाता. ।	सयः'	द.	हे	4	≀, म	. सांत.	' आ.	उ.
18	2	6	8	ጸ	<u>ا</u> اا	8	2	Q	٠ ،	1 2 1	१	•	1	,	1/	•	2	2
मि.	बा.प.				ति	बा.ए.	त्रमः	आदाः निष	Ţ.	कृस. ३	गस∙	अच	भा	३ म	ांम	. मं.	आहा.	,साकाः 📗
					,	जाति.	विना		_	玉母			পুন	. 4	1			अना.
1					1								1					l

नं, १८८

बादर एकेन्द्रिय जीवांके अपर्याप्त आलाप.

गु जी. प. प्रा. सं. ग. इ. का. यो. वे. क. झा. सय. दः छे. भ. स. सिझ आः उ ११४३४११५२२१४२२११२२२ मि.बा.अ इ. ति.बा.ए. वस. ओ मि.इ. रम. अस. अचः का. म. मि. असं आहा साका. हे जाति. विना. कार्मः हे दुशु. गु. अ. अना. अना. भा. ३ अगु. दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारू-वजुत्ता वा ।

एवं बार्रेड्ंदियपज्जत्ताणं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं तिष्णि आलावा वत्तव्या । अपज्जत्तणामकम्मोदयाणं वाद्रेड्ंदियलद्विअपज्जत्ताणं भण्णमाणे बाद्रेड्ंदियअपज्जत्ता-लाव-भंगोर् ।

ें मुहुमेइंदियाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, वे जीवममासा, चतारि पज्ज-त्तीओ चत्तारि अपज्जतीओ, चत्तारि पाण विण्णि पाण, चतारि सण्णाओ, विरिक्खगदी, मुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जाग, णवुंमयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंमण, दहवेण काउ-मुक्कहेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउहेस्सा;

काययोग ये दे। योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र हैदयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत हेदयाएं। भवपसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिश्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी। और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे पर्याध्वनामकर्मके उद्यवाले बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवेंकि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवेंकि आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवेंकि आलापोंके समान जानना चाहिए।

म्हम एकेन्द्रिय जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादाष्टि गुणस्थान, म्हम-पर्याप्त और मृहम-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संवापे, तिर्धेचगति, सृहम एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थापरकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नपुंसक्षेद, सागें कपाय, कुमति और कुश्त ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत,

९ प्रतिपु ' बादरेहदियपः जतालावी भगी ' इति पाठः ।

मं. १८९ मृक्ष्म एकेन्द्रिय जीवांके सामान्य आलाप.

	. রী.							यो.	वे.	枣,	शा	सय	₹.	ું છે.	भ.	स.] सक्ति	आ.	उ.	ŀ
१	3	X	8	R	Ł	۶	eq	३					2					२	२	l
मि	. स्. प	q.	રૂ		ति	ŋ.u	त्रस	કોં₁. ૨	ريط		क्म.	असं.	अच,	का.	स.	मि-	असं.	'आहा.	सका.	ľ
	म्.अ.	ሄ				जाति.	विना	相。	Ī		ŢN.			अ.	₹.		1	अना.	अना.	
		अ.												मा ३						ŀ
<u></u>		1												अगु.				t		j

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं. अमिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणा, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव पज्जाणं भण्णमाणे अन्य एवं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चतारि पज्जाओं, चतारि पाण, चतारि जण्णाओं, निरिक्चगदी, मृहमेइंदियजादी, पंच शावरकाय, ओरालियकायजांगां, णहुंन गोउ, चतारि कसाय. दें। अण्णाण, अर्भजम, अचक्खुदंभण, द्व्येण काउलेम्मा, मांवण किण्हणील काउलेम्माओं; भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, अस्ण्णिओं. आहारिणों. सागाम्वजुना होति अणागान-वजुत्ता वां।

तेसि चेव अवज्जनाणं मण्णमाणे अन्य एवं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामा, चनारि अपज्जनीओ, िण्णि पाण, चनारि मण्णाओर तिरिक्षणगदी, सहमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जांग, णवुं त्यवेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-

और शुक्क लेक्याएं. भावसे क्षणण, मीठ आह कारीत लेक्सण भव्यांतिकक, अभव्यसिकिक भिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, आनाहारक, साकारोपयीशी आर अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं म् म एकेट्रिय जीके अपर्यत्तकालकंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-हिए गुणस्थान, एक मृ.म-अपयान जीवसमास, सार अपर्यादिनदी, तीन प्राण, सारी संबार, तिर्यसमित, मुद्रम एकेन्द्रियज्ञानि, पांची स्थावरकाव, औदर्शरकिश्वकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, न्युसकवेद, सारी कपाय, कुमान और कुश्रन ये दे। अज्ञान,

१ प्रतिष 'काउनकारुण्या ' शत पार । स प्राप्त रहेना प्रतास्था राजां र र . स. १९० सु म एकेस्ट्रिय जीवींक प्रयास्थि आसाप.

गु.	र्जा	q.	III.	₩.	. 4].,	_¢.	r 11	4	1,	ł	411	े सम	Ğ.	10	ਜ.	म	माश	जा	ું 3.
1	2	6	ሪ	ć	٤	9		>	١	3	~	7	/	म १	∢,	7	9	₹.	२
मि.	सू.प.					η <u>π</u> .			ţŦ		1 4	े च	47	11	4.	ŢΨ.	अस.	्या ्रा∙	साका.
1	,	1				હાંતિ∙	विना		E		₹ शु.			भा ३	. Я				अना.
						,								ુ ઍન્તુ.					
			!					f		,			ł		1.				- 1
1		}	i					ĺ					l		1		, ,		

दंसण, द्व्तेण काउ-सुक्लेस्या. भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा"े।

एवं पज्जन-णामकम्मोद्य सहियाणं सुहुमेईदियणिव्वत्तिपज्जनाणं तिण्णि आलावा वत्तव्या। सहमेईदियलद्विअपज्जनाणं पि अपज्जनणामकम्मोदय-सहियाणं एओ अपज्जनालावा।

वेइंदियाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, वे जीवसमासा, पंच पञ्जतीओ पंच अप-जत्तीओ, छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्क्यगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, ओगलिय-ओगलियामिम्स-कम्मइय-असचमोमविचिजामा इदि चत्तारि जोग, णवुंसयवेद,

असंयम, अन्तश्चर्यान, द्रव्यसे कापोन और शुक्क लेक्सापं, भावसे कृष्ण. नील और कापोन लेक्सापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिध्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक: माका-रोपयोगी और अनाकागेपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले स्थ्म एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवंकि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले स्थम एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके एक अपर्याप्त आलाप जानना चाहिए।

र्जान्द्रिय जीवोंके मामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, डीन्द्रिय-पर्याप्त और डीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: पर्याप्तकालमें स्पर्शनिद्धिय, रमनिद्धिय, वचनबल, कायबल, आयु और इषासीच्छ्यास ये छह प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त छह प्राणोंमेंसे वचनबल और इवासी-च्छवासके विना चार प्राण; चारों संक्षांप, तिर्थचगाति, डीन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, कार्मणकाययोग और असत्यमृपाचचनयोग ये चार योगः नपुंसकः

नै. १९१ मृह्म एकेन्द्रिय जीवींके अपर्याप्त आलापः

ग	जी.	q	भा,	सं	đĵ	इं	का.	यों.	वे	奪.	शा	सय.	द्.	ਲ.	भ	स	संबि.	आ.	3.
Į٤	₹	6	Ę	४	y	2	6	२	9	K	5	*		₹. २	₹	7	ş	ર	२ साकाः अताः
मि	.मृ अ	p.			ति.	£ 4.	वस.	ओ.सि	وبتا		कुम.	अ सं .	अच.	का.	म.	मि	असं.	आहा.	साका-
1		ल				जाति.	विना	कार्म.	I.		कुश्र.			झ्.	¥.			अना.	अनाः ।
ı														मा ३					· 1
乚														अगु.					

चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंमण, दृष्त्रेग छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्गिणे, आहारिणे। अणा-हारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ं ।

तेसि चेव पञ्जताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासी, पंच पञ्जतीओ, छप्पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्षगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अरांजम, अचक्खदंसण, दन्त्रेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, असिण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होंनि अणागारुवजुत्ता वां।

षेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्रुदर्शन, दृश्यसे छहों हेदयाएं, भाषसे कृष्ण, नील और काषोत हेदयाएं: भव्यमिद्धिक, अभव्यमिद्धिक: मिथ्यात्व, अमंक्षिक, भादारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं छीव्हिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक विध्याद्दाष्टि गुण-स्थान, एक छीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त छह प्राण, चारों संबाएं, तिर्थंचगित, छीन्द्रियजाति, त्रसकाय अनुभयवचनयोग और औदािक काययोग थे दो योगः नपुंसकयेद, चारों कपाय, कुमित और कुधृत ये दें। अज्ञान, असंयम, अचश्चद्रश्चन, द्रव्यसे छहां लेद्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेद्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, असंजिक आहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तं. १९२

द्वीन्द्रय जीवेकि सामान्य आसाप.

गु. जी प. ना सं, ग					ने. आ	उ. ∣
१ २ % ६ ४ १ मिर्द्धाप प. ४ ति	' १ १ ४ 1. ⊨ त्रसः औ, २	१४२	११ द्र.६	२ १ १	. ર લંગાદા	- साका
ह्या.अ. ५ अ	का.१	के कुश्र-	अगु.	7.1 	अने।	अनाः
1 1 1	अन.	<u>'</u>		l		- 1

203

डीन्ट्रिय जीवांके पर्याप्त आलाप.

																		ਰ.
١	११	4 8	γ	१	8	ধ	२	•	ሄ	ર	۶	१	₹. Ę	ર	₹	१	,	्र साका.
ł	मि.⊈ी			ति.	द्वी.	त्रस.				कुम.	असं.	अच.	मा-३	. भ.	मि	अस.	आहा	्साका.
1	٩.				जा.		अन्.	rt-		कश्च.			अंगु•					अना.
1							आ. र											ł
1		1																1

तेसि चेत्र अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओं जितसमासो, पंच अपजनीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्सगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवंपयेत्रद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउसुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

एवं वीइंदिय-पञ्जत्तणामकम्मोदय-सहियाणं वीइंदियपज्जत्ताणं तिण्णि आलावा वत्तव्या । वेइंदिय-लद्धिअपञ्जत्तणामकम्मोदय-सहिदाणं एगी आलावो वत्तव्या ।

तेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण पंच पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी,

उन्हीं द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याहिए, गुणस्थान, एक ह्वीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, कायबल और आयु ये चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्यचगित, ह्वीन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अञ्चान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यमे कापोत और श्रुक्त लेदयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यास्य, संक्षिक आहारक-अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे हीन्द्रियजाति और पर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले हीन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। हीन्द्रियजाति और लब्ध्यपर्याप्तक नामकर्मके उद्यवाले हीन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप ही कहना चाहिए।

त्रीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, त्रीन्द्रिय-पर्याप्त और त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, ब्राणेन्द्रिय, वचनवल कायवल, आयु, और द्वासोच्छ्वास ये सात प्राणः अपर्याप्तकालमें उक्त सात प्राणोंमंसे वचनवल और द्वासो-

नं. १९४ इतिहरूय जीवोंके अपर्याप्त आसाप.

्रागु. जी. पः प्राः∤सः सः	इं. का. थो.	वें क.∣ज़ा	- ∤संय√ ढ.	ਲ. ਸ	स-सिंहा आः	उ. ∖
१ १ ५,४ ४।१	8 2 3	1 8 3	2 2	ું દ્ર. ૨ ૨	8 8 3	٦ -
मि.डी. अ. अ. ति	हिं हैं। जिस्से	- कुम	. असं. अच्छ.	्रका. म∙	मि-अस- आहा	ं साका.
	क कार्म.	A 8		'লু अ∙	अना-	ं अनाः
	net		1 +	मा. ३		1 [
	ı	1	1	अम्.।	1 ,	

तसकाओ, चत्तारि जोग, णबुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-दंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा'ं।

ं तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच पज्जत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी, तमकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण, दृष्वेण छ लेम्सा,

च्छ्वासके विना शेष पांच प्राण, चारों संझाएं. तिर्यंचगाति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभय-चचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग. नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहां लेह्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यिनिद्धिक, अभव्यिसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादिए गुण-स्थान, एक त्रीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त सान प्राण, चारों संझापं, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति, जसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिककाययोग ये दे। योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अज्ञान, असंयम, अचश्रु-

नं. १९५

त्रीन्द्रिय जीवांके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	q .	प्रा	स ्र	1 इ	का	्यो	व	क.	हाः संयः	द.	छ.	4	₽.	सिन्न.	311.	3.
8	ર	५प.	ত ৷	8 8	1 8	١ ١	8	2	ጸ	2 9	8	द्र. ६			•	`	ા ૨
मि	त्री. प.	५अ	1,	ति	न् ।	त्रस.	व. १	11		क्म. असं∙	अच	भा. ३	म•	मि	असं.	आहा-	साका
1	ৰ্যা अ.			,		N.	अनु.	je.		ुम. असं. मृश्र.		अসু,	ਯ.			अना.	अनाः
İ			í	ı	괴	 	ાં . ર	1									
			-	i		1	का.१										
								1									
Į				i		l		I		!			I				

नं. १९६

त्रीन्द्रिय जीवेंके पर्याप्त आलापः

] गु. जं	វា.	q	प्रा	स	ग.	₹.	ुका.	यो.	बे	क	झा.	सय.	द.	हे.	भ.	स	सांज्ञ	आ.	ਰ.
5	8	4	v	Я	?	*	2	2	,	R	ર્	٤	2	द्र. ६	ર	٤	ą Stri	\$	२
मि त्री	.ч.				ति.	15	3편.	ब. १ अ.न	<u>. 11</u>		ाकु स. ॑ऋश्चर	अस.	∖ अच∙ ∣	भा∙३ अञ.	મ _ે 31.	14.	ગલ -	आहा	साका अना.
						품.		औ. १											
1												i		l	1 1		1	i	

भावण किण्ह-णील-काउलेम्सा, भवसिद्धिया अभवतिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेत्र अपन्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपन्जत्तीओ, पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, निरिक्खगदी, तीइंदियजादी, तसकाओ, दी जोग, णत्रुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असिणिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

एवं तीईदियणिव्यत्तिपञ्जत्ताणं पञ्जत-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलात्रा वत्तव्वा। लाद्धि-अपञ्जताणं पि अपज्जत-णामकम्मोदयाणं एगे। आलात्रो वत्तव्यो।

चर्जारंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जतीओ

दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापीत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, असंश्विक, आहारक, साकारीपयोगी और अनाकारीपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, आदिकी तीन इन्द्रियां, कायबल और आयु ये पांच प्राण, चारों संज्ञाएं, निर्यचगित, त्रीन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औद्दारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यस कापोत और गुक्रु लेक्याएं, भावसे कृष्ण, निल् और कापोत लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आद्दारक, अनाह्यरकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले ब्रान्ट्रिय निवृत्तिपर्याप्तक जीवेंकि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त य तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले ब्रान्ट्रिय लब्ध्यपर्याप्तकांके भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए।

चतुरिन्द्रिय जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर-एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, चतुरि-

नं. १९७ त्रीन्द्रिय जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी. प	. সা	स,	ग, इ.	का	. ्यां.	वे.	奪.	शा.	सय	ζ.	à.	भ	स.	संक्षि.	आ.	' उ.
	ং দ র্যা স স		8	१ १ तिः तीः जाः	यम.	२ ओ.मि कार्म.	१ चें		२ कृम् कुश्रुः		१ अच	द्र २ काः गुः भाः३ अशुः	२ स. अ.	१ मि.		•	२ साका. अनाः

पंच अपन्जत्तीओ, अह पाण छप्पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिश्विखगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जाग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माओ; भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, भिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा'ी

तेसिं चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, पंच पज्जनीओ, अह पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण छ लेम्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ: भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो,

न्द्रिय-पर्याप्त और चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियांः पर्याप्तिकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, झाणेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, कायबल, वचनवल, आयु और इवासोच्छ्वास ये आठ प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त आठ प्राणोमेंसे वचनवल और इवासोच्छ्वासके विना शेप छह प्राणः चारों संबाएं, तिर्यचगित, खतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमिति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यमे छहां लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंबिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्टे गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त आठ प्राण, खारों संझाएं, तिर्धेचगित, चतुरिन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिक-काययोग ये दो योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुशृत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहां लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, असंद्धिक, आहारक, साकारापयोगी और अना

नं. १९८ चतुरिन्द्रिय जीवोके सामान्य आलाप.

्रा.] जी. ्ष प्रा. स. ग.	इ., का. ' यो-	ये.क हा.	संय द	ं छं. भ ःस. साह्न	आ. ड.
1 2 4 6 8 2	8 8 8			द्र-६ २ १ १	२ २
भि च.प. प प ंति	च्चासः व. १ ह	🔑 कुम	अस चक्षु	भा ३ म. मि. अस.	आहा. साका.
च.अ ५ ६	01.3	ष्ट्रभू,	अच.	अगु, व	अना. अना.
અ. અ.	औ.२				. 1 1
	का. १	1 1 1			<u> </u>

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसि चेव अपजताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, चउिरियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंमण, द्ववेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणी, आहारिणो अणाहारिणो. सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्याहिष्ट गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच अपर्याप्तियां, आदिकी चार हिन्द्रयां, कायबल और आयु ये छह प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचमति, चतुरिन्द्रियजाति, जनकाय, ओदिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावने कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यासिद्धिक: मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १९९ चतुरिन्द्रिय जीवींके पर्याप्त आलाप.

ग्रजी प्रश	मंं ग इ	क यो व	乖	II	स्य	₹.	लें,	₩.	_म	सिन्न	आ.	₹.
हें १ फेंट मिच. प	४ / १ नि. <u>=</u>	^१ २ १ ^{• व. २} ^{• अन्. हि}		र हुम. उथा.	भुम	चंक्षु	ह. १ भा. ३ अग.	4	मि.		आहा.	२ साकाः अनाः
	T 1	ओं। १					1					

नं. २०० चतुरिन्टिय जीवींके अपर्याप्त आलाप.

1	ग. ,	जी	q.	भा	स	11	₫.	का.	यो.	वे.	क	্লা.	संय	蛋	à,	ਸ.	म.	माजि.	आ.	3.
١	1	7	14	Ę	X	2	۶	ŗ	٥	7	8	2	>	ર	₹. २	~	8		2	1 3
1	भि.	व,अ.	अ.	-		नि	चॅ.	7	श्रो.मि	-		रुम.	अस.	चक्षु.	FI	भ.	íH.	अस.	आहा.	माका
Į	į						जा		रामं.	Ť		कृथ.			গ্ৰ				ं अना,	अना.
١	Ì		1									- ,			भा.३					
ı	ł														সমূ-				1	
-	,		1										1							1

एवं चर्डीरंदियाणं पञ्जत-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्या । चर्डीरंदि-याणमपञ्जत्त-णामकम्मोदयाणं एओ आलावो वत्तव्यो ।

'पंचिदियाणं भण्णमाणे अत्थि चाहम गुणद्वाणाणि, चतारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्ञत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण चतारि पाण दो पाण एय पाण, चतारि मण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चतारि गदीओ, पंचिदियजादी, नमकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकसाओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त मंजम, चत्तारि दंमण, दच्ने-भाविह छ लेस्साओ अलेस्मा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, मण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि

इसीव्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले पर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले लक्ष्यपर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए।

पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—तोदहों गुणस्थान, संझी-पर्याप्त, संझी. अपर्याप्त, असंझी-पर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संझी-पर्याप्त जीवोंके छहों पर्याप्तियां, संझी-अपर्याप्त जीवोंके छहों अपर्याप्तियांः असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, असंझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकः संझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके दशों प्राण, संझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकः स्वास्तात प्राण, असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकः स्वास्तात प्राण, असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके मनोवलके विना ने प्राण, असंझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालभावी सात प्राण, सर्योगिकवली जिनके वचनबल, कायबल, आयु और स्वासोच्छवास ये चार प्राण, केवलिसमुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामं आयु और कायबल ये दे प्राण, और अयोगिकवली भगवान् के एक आयु प्राण होता है। चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गित्यां, पचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, पंद्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं तथा अलेक्श्यास्थान भी है। भव्यसादिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संझिक,

नं. २०१ पंचेन्ट्रिय जीवंकि सामान्य आलाप.

(गु.	जी-	q.	भा.	सं.∣ः	ग । ई	का	यो.	7	क	शा	सय	₹.	ਲ,	म	栮.	,मीझ	आ.	3.
98	8	٠.	80,0	8 ,	8 3	9	9"	₹	8	<	יט	ጸ	₹. ६	÷	Ę	١২	२	2
1	स. प.	६अ		ır.	<u>-</u> طا	त्रस.	F.	=	Ė		1		भा. ६	स	ļ	सं	आहा	साका
	सं. अ.	५प	४.२	<u>ख</u> ,	9	i	अयो	लुवा	तक्ष्य)		1		अलेश्य	अ.		अस.	अना.	अना.
1	अस प.	' ও	₹	20			(1)		,		I				İ	जन्,		यु. उ
	अ सं.अ .		1	1											Į			

अतिथ, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्रताणं भण्णमाणे अत्थि चे। इस गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्रतीओ पंच पज्रतीओ, दस पाण णव पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अद्व णाण, सत्त संज्ञम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भाषेहि छ लेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव मण्णिणो जेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्रत्ता होति अणागारुवज्रत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवज्रत्ता वा

असंब्रिक तथा संबी और असंबी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है। आहारक, अना-हारक: साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगींसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर—चेंद्रहों गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और असंबी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, नी प्राण, चार प्राण और एक प्राण: चारों संबाएं तथा क्षीणसंबास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग, विकिथिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग नथा अयोगस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों बान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्यास्थान भी है। आठों बान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्यास्थान भी है। अव्यक्तिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहों सम्यक्त्य, संबिक, असंबिक तथा संबी और असंबी इन दोनों विकल्पोंसे रहिन भी स्थान है। आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

त. २०२ पंचिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आसाप.

1	ग्	ओ.	ч.	श्रा.	₹.	ग.	₹.	का	यो.	वे.	죡.	লা	संय	₹.	ले. म	स.	संक्षि.	आ.	₹.
	१४	ર	Ę	ξo	8	Х	8	?	११ स.४	₹	¥	2		8		Ę	ર	3	२
ı		स.प	4	9	b÷.		द ∺.	b.	ৰ. ४	<u> </u>					भा. ६ स.		सं.	आहा.	साका-
l		अ.प		४स.	श्रीष्यस.		13	170	ब्र∙४ औ. १	<u>ਨ</u>	<u>6</u>				अले• अ		अस.	अना-	अना.
ı				१अ.	35				ब. १		19						ः अनु.	1	यु. उ.
1					- 1				आ. १										
١	-								अयो.									ì	

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपजत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, मत्त पाण मत्त पाण दो पाण, चत्तारि मण्णा खीण-मण्णा वा, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तमकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वा, चत्तारि कमाय अकसाओ वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दृष्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच मम्मत्तं, मण्णिणो अस्ण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा तदुभया वा

पंचिदिय-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अन्धि एगं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ

उन्हीं पंचिन्दिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्याद्दाष्ट्रं, सासादनसम्बन्दाष्ट्रं, अविरतसम्बन्दाष्ट्रं, प्रमन्तमंत्रत और संवोगकेवली ये पांच गुणस्थान, संक्षी-अपर्याप्त और असंक्षी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहों अपर्याप्तकालमें दो प्राण, चारों सात प्राण, सात प्राण, तथा सयोगकेविल-समुद्धातके अपर्याप्तकालमें दो प्राण, चारों संक्षापं तथा श्लीणसंक्षास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, तसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, विक्रियकिमिश्रकाययोग, आहारकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदम्थान भी है। चारों कपाय तथा अकप्रयम्थान भी है। विभंगाविधिक्षान और मनःपर्ययक्षानके विना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेद्रंपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयमः चारों द्र्यान, द्रव्यसे कापोत और गुक्ल लेद्याएं। भावसे छहों छेद्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्लिध्यात्वके विना पांच सम्यक्त्य संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभयस्थान भी है। आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अना-कारोपयोगी और दोनों उपयोगींसे युगपन उपयुक्त भी होते हैं।

पंचेन्द्रिय मिथ्यादि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, पूर्वीक चार जीवसमास, संबी पंचेन्द्रियोंके छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां असंबी पंचे-

मं. २०३ पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आसापः

गु.	र्जा-	q.	भा	सं -	4[,	ξ.	का.	यो	वे । कृ	शा.	संय] z .	ਲੈ	भ.	中.	साबे.	आ.	3.
4		€ 31.						8	३ । ४			18	4. 3		'5	२	' २	२
Ĥ.	स, अ.	৭ %,	S.	اندا		पं.	hr.	ओं मि.	अपग. शक्त्या	विस.	अस.		का	ਸ.	मि.	म.	आहा.	साका.
सा.	असं•अ,	}	1	SK OT			IK.	वे.भि	94	मन:							अना.	अना.
Э.			1	20			ŀ	आःमि	100 192	विना	उदा.	!	भा ६		ओप.	अनु.		यु. उ.
Я.						ļ		कार्म.			यथा.			İ	क्षा		1	
₩.			<u> </u>											ļ,	क्षायो			

पज्जन्तिओं छ अपजन्तिओं पंच पजन्तिओं पंच अपजन्तिओं, दस पाण सन्त पाण णव पाण सन्त पाण, चन्तिरि मण्णा, चन्तिरि गदीओं, पंचिदियजादी, तसकाओं, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चन्तिरि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमों, दो दंसण, दन्त्र-भाविहि छ रुस्साओं, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, सिण्णिणों असण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, मागारुवजुन्ता होति अणागारुवजुन्ता वार्षि।

तेसि चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जतीओ, दम पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दन्त्व-भाविह छ लेस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छ्नं,

िट्रयों के पांच पर्याप्तियां. पांच अपर्याप्तियां: संझी पंचेन्ट्रियों के दशों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्ट्रियों के नें। प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकिमश्रकाययोगके विना तेरह योग, नीनों वेद, चारों कषाय, नीनों अझान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहें। लेक्स्याएं, भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्रिक: आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाए कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, नी प्राण: चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वत्रनयोग, औदारिककाययोग और विक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं: भ्रव्यसिद्धिक, अभ्व्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक: आहारक,

नं. २०४ पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गुर्जी	q .	яг.	सं. ग	T- '	₹.	का	यो_	बे,	क.	ं ह्या.	संय.	₹.	ਲਂ.	म-	स	संक्रि	आ.	. 3
₹ 8	٤q.	7 0					7.4											વ
मि स प	ξ3∦,	ŭ	1		hr.	1	आर्बड.			अङ्गा	अस.	चश्च.	मा-६	भ∙	मि-	सं.	आहा.	साका. अमा.
,सं.अ	५५.	९			6	(C)	विना.					अच.		अ.		अस.	अना.	अमा.
असं प	৭জ.	v	,			1					į	,				1	•	
असं अ			1				1	,		1	<u> </u>	i	J.	<u> </u>		1		

सण्णिणो अस्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांै।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ अपजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्वेण काउ-मुक्कलेस्मा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागास्त्रज्ञत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जाँवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तिनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रम्यसे कापंत और शुक्क लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संझिक, असंझिक; आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २०५ पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

1	गृ.	जी.	q.	न्रा.	सं-	ग.	₹.	का.	यो		वे.	奪.	ह्या.	संय.	द.	ले	_ મૃ	स.	संक्षि.	आ.	उ.	ĺ
ı		3				ሄ	2	,१	₹ 6	,	₹ '		₹	۶.	2	द्र. ६	२	1	२	१	ર	
1	ांम⊷	सं.प -	14	8			पचे.	त्रस.	म.	ሄ			अ ह्या .	अस.	चक्षु.	भाः	६ म.	मि-	ेस-	आहा.	साका.	
		अस.)	वं.	¥					अच.		अ,	1	अस.		अना.	
-		ч.							ओ.	9				i			-	I				
١								' '	व.	\$	- 1							1	!			

नं. २०६ पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलापः

गु	जी.	ч.	श्रा.)सं <i>-</i>	ग	₹.	का	यो-	व.	क	न्ना-	सय	द.	ਲ.	ਮ.	स.	साझ.	आ.	' ड
9	•	4	1	X				₹ 6.			₹	9		द्र. २ का	3	9	٦ 1	२	२ साकाः
	स. अ. असं.अ	ં	1			च 다	त्रस	ओ.सि. वै.सि.			कुम. कुथ्रु		अच.		34	Ψ-		अना.	
		अ.					ħ	कार्म.						मा. ६					

सासणसम्माइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेविल त्ति मृलोघ-भंगो । एवं सण्णिपंचि-दियाणं पञ्जत्त-णामकम्मोदयाणं मिच्छाइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेविल त्ति जाणिऊण सकलालावा वत्तव्या ।

असिण-पंचिदियाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, पंच पञ्जत्तीओ, णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ष्वगदी, पंचिद्वियजादी, तसकाओ, दो

सामान्य पंचेन्द्रिय जीवेंकि सासादनसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मृल ओघालापके समान जानना चाहिए। इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवेंकि मिध्यादिष्ट गुणस्थानमे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके समस्त आलाप जानकर कहना चाहिए।

असंबी पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, असंबी-पर्याप्त और असंबी-अपर्याप्त ये दी जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, ने प्राण, सात प्राणः चारों संबाणं, तिर्यंचगित, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिककाययोग, औदारिककाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योगः तीनों वेद, चारों कपाय, दी अञ्चान, असंयम, चन्नु और अचन्नु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंबिक, आहारक, अनाहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंक्षी पंचेन्द्रिय जीवेंकि पर्याप्तक लसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, एक असंक्षी पर्याप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, नी प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्थचगति

नं. २०७ असंह्री पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलापः

गु	. জা.	q.	সা	स ग	इ	का	यो	व	क.	न्ना.	मंय.	₹.	ਲ.	.भ	₩.	सक्ति.	आ.	3.
१	э́.	५प.	ò	8 3	1	8	ሄ	3	8	ર	१	3	द्र. ६	13	₹.	*	2	ર
मि.	अस. प. ,, अ	५अ	O	ाति.	<u>حان</u>	tr	જા. ૧		I	कुम.	असं	अच	मा ३	≀म•	मि	असं -	आहा-	साका.
1	,, अ			ĺ	0	12	अन्.			ক্বপ্তু.	1	अन्.	अग्र.	Я.			अना.	अनाः
1							લોં. ર							i				
				,			का. १							į				1
1			1											1				
<u>'_</u>				_ }							1					l		}

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंज्ञमो, दो दंसण, द्वेण छ लेस्सा, मात्रेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणा, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा ी

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपजनतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभययचनयोग और औदारिककाययोग ये दो योगः तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अच्छु ये दो दर्शन, द्रब्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापीत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्रिक, आहारक, साकागोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंक्षी पंचिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाए कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक असंज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तियंचगित, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिथकाययोग ओर कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमाति ओर कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु ओर अचश्रु वे दो दर्शन, द्रव्यसे कापात और शुक्ल लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्य, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं, २०८ असंर्क्षा पंचेन्द्रिय जीवंकि पर्याप्त आलाप

) गु. जी∙	प्	प्रा	स ग.	इ ्का	्योः	वे.	क ज्ञाः	संय ेद-	ਲ•	म. म.	माञ्च	_া৷ ড.	Ì
र १	4	9	8 3	8 5	~ ·	₹	6 3	१ २	京. 年	2 2	2	र	l
मि असं			ति.	जिसे जा	व. १		कुम.	असः चिधु	ं भा∙ ३	्भ⊹ींस.	अस.	आहा ं साका	l
ष.				湖	अनु.		कथ.	अच	अग्रु.	अ.		अना,	l
•			Ť		ओं. १		ı		!				ı
1			1		1		1	1	1	1 1		t	l

नं. २०९ असंश्री पंचेन्द्रिय जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

गु. जी.	प. ग्रा.)	स ग . इं. ोक	ा.⊟ यो.ु	वे.] क.	ज्ञाः । सय	् द.	ાં છે. સ.	⊣स∙,र	प्रीज्ञ. आ.	ु उ
१ १		8 8 8 8	ર જો ઉત્ત		र । १	1	इ. २ २		१ २ अस _{ः।} आहाः	र
ામ. અસ.અ.	अव	ात _{विका}	.⊺आ . ',कार्म-	1	कुमः असः	1	्रशः अ		अस. आहा. अ ना.	
		1 1		·	1	(माः ३	j		
1 1	1 []			1	1	1	अगु.।	1		

मिणपंचिदिय लिद्धिअपज्जनाणमपज्जनः णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चनारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो जाग, णवंगयवेद, चनारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंगण, दब्बेण काउ-सुक्रलेस्मा, भावण किण्ह-णील-काउलेस्नाओ; भवमिद्धिया

अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवेंकि आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाणं, मनुष्यगति और तिर्थेच-गित ये दें। गितयां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापीत और जुक्ल लेदयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापीत लेदयाणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, सांज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले संक्षी पंचेन्द्रिय लड्यपर्याप्त जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्योप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सान प्राण, चारों संक्षाएं, मनुष्यगति और तिर्यचगति ये दे गितयां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नवुंमकवेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, चश्रु और अवश्रु ये दो दर्शन, द्व्यसे कापोत और शुक्रु लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं। भ्रावसिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व,

नं. २१० पंचेन्द्रिय रुब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आरुाप

गु. जी. पा. प्रा. स गु. ई. का. यो. थे. क ज्ञा. संय. दर छे. भ स.माज्ञे. आ. उ. १ २ ६अ ७ ४ २ १ १ १ १ ४ २ १ २ इ.२ २ १ २ २ **२** मि. स. अ. ५अ ७ म., पचे. चस. ओ मि हु. कम. असं. चक्ष का. भ.मि. सं. आहा साका. असं.अ ति कार्म. हिंकुयु. अच. अ. असं अना अना. सा. ३ अग्र. अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां"।

अमिणपंचिदिय-लिद्धिअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामक्रम्मोद्याणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दव्यण काउ-सुक्कलेम्साओ, भावण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमिण्णिणो, आहारिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

अणिदियाणं मिद्ध-भंगा।

एवं विदियमगणा समता।

संब्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले असंकी पंचान्द्रिय लब्ध्यपर्यातक जीवेंकि आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक असंकी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, तिर्धचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, अदिक्किमिश्रकाययोग ओर कार्मण-काययोग ये दे। योग, नपुंसकवद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दे। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दे। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिन्द्रिय जीवोंके आलाप सिद्धोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। इसप्रकार दुसरी इन्द्रिय मार्गणा समाप्त हुई।

नं. २११

संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्यान्तक जीवॉके आलाप.

] गृ.	. जी.	ų	別.	स	ग	Ť.,	का.	यो	à.	玉,	श्चा	सय	द	હ	ਮ.	ं_स.	साही.	आ.	उ.
١٤	8	ξ	৩	8	÷٤	٤	*	્ર	۶	ď	3	8	ર	द्र २	ર	₹.	!	3	ર
IIH.	. स. अ•	ગ,			ਜ ∙ ਗਿੰ.	पष.	111	कार्मः	<u>F</u> ,		ું.≽યું.	-गर्ग -	पञ्∙ अच	_{यत्त} .	भ. ⊴	।म• 	4.	अना.	साका अनाः
1														सा ३			1		
		}												अग्र.		ļ	<u> </u>		

नं. २१२ असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यर्याप्तक जीवोंके आलाप.

कायाणुवादेण ओघालावे भण्णमाणे अत्थि चोहस गुणद्वाणाणि, दो वा तिण्णि वा, चत्तारि वा छन्या, छन्या णव वा, अट्ट वा बारह वा, दस वा पण्णारह वा, बारस वा अट्टारह वा, चोहम वा एकन्यीम वा, मोलस वा चउर्वास वा, अट्टारह वा सत्तावीस वा, वीस वा तीस वा, बाबीम वा तेतीम वा, चउर्वीम वा छत्तीस वा, छन्यीस वा एगुणचालीस वा, अट्टावीम वा बायालीस वा, तीम वा पंचेतालीस वा, बत्तीस वा अट्ट तालीस वा, चउर्तीम वा एकपंचास वा, छत्तीस वा चउपंचाम वा, अट्टतीम वा सत्तपंचास वा जीवसमामा। दो जीवसमासोत्ति भणिदे पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि मन्ये जीवा दुविहा भवंति, अदो दो जीवसमासा वृद्यंति। तिण्णि जीवसमासोत्ति बुत्ते णिन्यत्ति पज्जत्ता लिन्यत्ति। वा इदि बुत्ते तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि वा इदि बुत्ते तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, थावरकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चत्तारि जीवसमासा। छन्या इदि बुत्ते दो णिन्यत्तिपज्जत्त्वीवसमासा। छन्या इदि बुत्ते दो णिन्यत्तिपज्जत्त्वीवसमासा। अथवा थावर-अपज्जत्त्वीवसमासा दो लिन्यत्ति-अपजजत्त्वीवसमासा दो लिन्यत्ति-अपजजत्त्वीवसमासा। दो लिन्यत्ति-अपजजत्त्वीवसमासा। स्वाया धावर-

कायमार्गणाके अनुवादसे आंघालाप कहने पर—चंदहां गुणस्थान होते हैं। दो अथवा तीन, चार अथवा छह, छह अथवा नो, आठ अथवा बारह, दश अथवा पन्द्रह, बारह अथवा कठारह, चौद्ह अथवा इक्षीम, सोलह अथवा चौवीस, अठारह अथवा सत्तावीस, बीस अथवा तीस, बावीस अथवा तेतीस, चौवीस अथवा छत्तीस, छवीस अथवा उननालीस, अट्टावीस अथवा बयालीस, तीस अथवा पैतालीस, बतीस अथवा अड्तालीस, चौतीस अथवा एकावन, छत्तीस अथवा चौपन, अड्तीस अथवा सत्तावन जीवसमास होते हैं। आगे इन्हींका स्पर्शकरण करते हैं—

दें। जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर पर्याप्तक और अपर्याप्तक भेदले सभी जीव दें। प्रकारके होते हैं: अतप्य दें। जीवसमास कह जाते हैं। तीन जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर निर्वृत्तिपर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और उद्ध्यपर्याप्तक इसप्रकार तीन जीवसमास होते हैं। चार जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर त्रसकायिक जीव दें। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार जीवसमास कहे जाते हैं। छह जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर अस और स्थावरके दो निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दो निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दो उद्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं। अथवा, स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके

र प्रतिषु 'ओषालावे भण्णमाणे ' इति पाठो नास्ति । २ प्रतिषु 'अटावीस वा ' इति पाठः । ६ प्रतिषु 'चांत्रीस वा तेत्तीस वा ' इति पाठव्युतकमः । अत उपरि प्रतिषु 'चंद्रतीस वा ' इति पाठोऽभिकः । ४ प्रतिषु 'पुतालीस 'इति पाठः ।

काइया दुविहा पज्जना अपज्जना, तसकाइया दुविहा सगिलंदिया विगलिंदिया, सगिलं, दिया दुविहा पज्जना अपज्जना, विगिलंदिया दुविहा पज्जना इदि छ जिव-समासा । तिण्णि णिव्यन्तिपञ्जनजीवसमासा तिण्णि णिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा तिण्णि लिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा तिण्णि लिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा एवं णव जीवसमासा हवंति। थावरकाइया दुविहा बादरा सुहुमा, बादरा दुविहा पज्जना अपज्जना, तसकाइया दुविहा सगिलंदिया वियलिंदिया नि, सयिलिंदिया दुविहा पज्जना अपज्जना, विगलिंदिया दुविहा पज्जना अपज्जना, विगलिंदिया दुविहा पज्जना अपज्जना एवं अद्व जीवसमासा । चनारि णिव्यन्तिपज्जनजीवसमासा चनारि णिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा चनारि लिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा चनारि लिव्यन्तिअपज्जनजीवसमासा एवं बारस जीवसमासा हवंति । थावरकाइया दुविहा पज्जना अपज्जना, तसकाइया दुविहा पज्जना अपज्जना, तसकाइया दुविहा पंचिदिया अपजिलां, सिण्णणो दुविहा पज्जना अपज्जना, अमिण्णणो दुविहा पज्जना अपज्जना, अपण्जिना दुविहा पज्जना अपज्जना, अमिण्णणो दुविहा पज्जना अपज्जना, अपण्जिना दुविहा पज्जना अपज्जना, अपण्जिना दुविहा पज्जना अपज्जना एवं दस जीवसमासा हवंति । पंच णिव्यन्तिपज्जनजीवसमासा पंच णिव्यन्तिअपज्जना एवं दस जीवसमासा हवंति । पंच णिव्यन्तिपज्जनजीवसमासा पंच णिव्यन्तिअपज्जना

होते हैं, पर्याप्तक और अपयोक्तक। जसकायिक जीव दें प्रकारक होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव हो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं। एकेन्ट्रिय, विकलेन्ट्रिय और सकलेन्ट्रियके तीन निर्धित्तिपर्याप्तक जीवसमास, तीन निर्धस्यपर्याप्तक जीवसमास और तीन लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसवकार ने जीवसमास होते हैं। स्थायरकायिक जीय दो प्रकारके होते हैं, बाहर और सुक्षम । बाहर जीय हो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक । सक्ष्म जीव हो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं. सकलेन्डिय और विकर्लन्डय । सकलेन् न्डिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार भाठ जीवसमास होते हैं। बादर स्थावर-कायिक, सक्ष्म स्थावरकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवेंकि चार निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास. चार निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और चार छुट्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार बारह जीवसमास होते हैं। स्थावरकायिक जीव दी प्रकारके होते हैं, बादर और सुक्ष्म। बादरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। सुक्ष्मकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, पंचेन्ड्रिय भौर अपंचेन्द्रिय (विकलेन्द्रिय)। पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संक्षिक और असंक्षिक। मंक्रिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। असंक्रिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अपंचेन्द्रिय जीव हो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। रसप्रकार दश जीवसमास होते हैं। बादर स्थायरकायिक, सक्ष्म स्थायरकायिक, संब्री

जीवसमासा पंच लिद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं पण्णारस जीवसमासा हवंति । पुढिविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउ
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वण्फह्काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जता, नसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वण्फह्काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जता, नसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं वारस
जीवसमासा हवंति । छ णिव्यत्तिपज्जत्तजीवसमासा छ णिव्यत्तिअपज्जत्तजीवसमासा छ
लिद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवमदारस जीवसमासा हवंति । एइंदिया दुविहा बादरा
सुदुमा, बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुदुमा दुविहा पज्जत्ता, अपज्जत्ता, तेइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, पंचिदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, पंचिदिया दुविहा सिण्णणो असिण्णणो, सिण्णणो दुविहा पञ्जत्ता
अपज्जत्ता, असिण्णणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता सि एवं चोहम जीवसमासा हवंति ।
मत्त णिव्यत्तिपज्जत्ता सत्त णिव्यत्तिअपज्जत्ता सत्त लिद्धअपज्जत्ता एदे सब्वे घेन्ण

पंचन्द्रिय, असंब्री पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवांके पांच निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, पांच निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और पांच लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार पन्द्रह जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक जीव दो प्रकरके होते हैं, पर्यान्तक और अपर्याप्तक। अक्तायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। बायुकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । जस-कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार बारह जीवसमास होते हैं। छहें। कायिक जीवोंकी अपेक्षा छ निर्देशितपर्याप्तक जीवसमास, छ निर्देश्यपर्याप्तक जीवसमास और छह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार अठारह जीवसमास होते हैं। एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और मुक्स । बादर दे। प्रकारके होते हैं, पर्या-प्तक और अपर्याप्तक। सूक्ष्म दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। होन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। चतुरिन्द्रिय जीव दा प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्या-प्तक । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संविक और असंविक । संविक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक ओर अपर्याप्तक। असंक्षिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार चंदिह जीवसमास होते हैं। बादर एकेन्द्रिय, सृक्ष्म एकेन्द्रिय, ब्रीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संबी पंचेन्द्रिय और असंबी पंचेन्द्रिय इन सात प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा सात निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सात निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सात सब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलकर इकीस जीवसमास होते हैं। पृथिवी-

एकवीस जीवसमामा हवंति । पुढिविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाजकाइया दुविहा पज्जता अपज्जत्ता, वाणफाइकाइया दुविहा पज्जता अपज्जत्ता, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जता अपज्जत्ता, साधारणमरीरा दुविहा पज्जता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सयिलंदिया वियलंदिया चेदि, सयिलंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियलंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवं सोलस जीवसमासा हवंति । णिब्वत्तिपज्जत्तजीवसमामा अष्ट, णिब्वत्तिअपज्जत्तजीवसमामा वि अष्ट, अष्टण्हमपज्जत्तजीवसमासाणं मज्ज्ञे अष्ट लिद्धअपज्जत्तजीवसमासा हवंति एवं चउवीस जीवसमासा । पुढिविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाजकाइया दुविहा पर्वयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोद-पाडिद्विदा बादरणिगोदअपिडिद्वदा चेदि, बादरिणगोदपाडिद्विदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता,

कायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अप्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। तैजस्कायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वन-स्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकदारीर और साधारणदार्गर ी प्रत्येकदारीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। साधारणशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रसकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विक-लेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार सोलह जीव-समास होते हैं। प्रथिवीकायिक, अन्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, प्रत्येकवनस्पति-कायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा आठ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, आठ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और आठ अपर्याप्तक जीव-समासोंमें आठ रुब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं। इसप्रकार सब मिरुकर चौबीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। जलकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अभिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्या-प्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणदारीर । प्रत्येकदारीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगीद्यतिष्ठित और बादर-निगोदअप्रतिष्ठित । बादरनिगोदश्रतिष्ठित जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। बादरणिगोदपिडिद्विदिरित्त-पत्तेयमरीरा दुविहा पज्जता अपज्जता, साधारणसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जता, तसकाइया दुविहा वियितिदिया सयितिदिया चेदि,
सयितिदिया दुविहा पज्जता अपज्जता, वियितिदिया दुविहा पज्जता अपज्जता, एवमहारस
जीवसमासा हविति। णव णिव्यत्तिपज्जत्तजीवसमासा णव णिव्यत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा
णव लिद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा। एदे सब्ये वि घेत्ण सत्तावीस जीवसमासा हविति।
पुव्विछ-अद्वारस-जीवसमासाव्यंतरे माधारण वणण्पद्धपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अविषय
साधारणवण्पद्धशाद्या दुविहा णिचिणिगोदा चदुगदिणिगोदा चेदि। णिचिणिगोदा दुविहा
पज्जत्ता अपज्जत्ता, चदुगदिणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि
जीवसमासे पिक्खत्ते वीस जीवसमासा हविति। दस णिव्वात्तिपज्जत्तजीवसमासा दस
णिव्वात्ति-अपज्जत्तजीवसमामा दस लिद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एदे तिस जीवसमासा
हविति। पुढिविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणण्फकाइया एदे सब्वे दुविहा

बादरनिगोद्यितिष्ठितसे भिन्न अर्थान बादरनिगोदअप्रतिष्ठितप्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारणशरीर जीव दा प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक आंर अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार ये अठारह जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायकायिक, सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय इन नो प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा नो निर्वत्तिपर्याप्तक जीवसमास, नौ निर्वृत्यपर्याप्तक जीव-समास और नें। लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर सत्तावीस जीवसमास होते हैं । पूर्वमें कहे गये अठारह जीवसमासोंमेंसे साधारणवनस्पतिकायिक जीवें<mark>कि पर्याप्तक</mark> ओर अपर्याप्तक ये दें। जीवसमास निकाल कर साधारणवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद। नित्यनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। चतुर्गातिनिगोद दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये बार जीवसमास मिलाने पर बीस जीवसमास होते हैं। पृथिचीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, नित्य-निगोद, चतुर्गातिनिगोद, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय इन दश प्रकारके जीवींकी अपेक्षा दश निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दश निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दश लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर नीस जीवसमास होते हैं। पृथिषीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक ये पांचां कायके जीव दो दो प्रकारके होते हैं. बाहर

र प्रतिष्ठ ' णवलाद्धि...समासा ' इति पाटा नास्ति ।

बादरा सुद्रुमा ति, सब्ने बादरा सब्बे च सुद्रुमा पज्जता अपज्जत्ता इदि चउन्तिहा हवंति, तसकाइया दुविहा पज्जता अपज्जता चेदि एवमेदे बाबीस जीवसमासा। णिव्यत्तिपज्जत्तजीवसमासा एकारह, णिव्यत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा एकारह, लिद्धि-अपज्जत्तजीवसासा एकारह एवं तेतीस जीवसमासा हवंति। बाबीस-जीवसमासा-णमब्भंतरे तसपञ्जत्तापञ्जत्तजीवसमासे अवणिय तसकाइया दुविहा हवंति समणा अमणा चेदि, समणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अमणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एदे चत्तारि पिक्खते चउवीस जीवसमासा हवंति। बारस णिव्यत्तिपञ्जत्तजीवसमासा वारस णिव्यत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा वारस लाद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे छत्तीस जीवसमासा हवंति। पुव्विहा-चउवीसण्हं मज्झे अमणाणं पज्जत्त-अपज्जत्त-दो-जीवसमासे अवणिय अमणा दुविहा स्यलिदिया वियलिदिया चेदि, स्यलिदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियलिदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि पिक्खते छव्बीय जीवसमासा हवंति। तेरस णिव्यत्तिपज्जत्तजीवसमासा तेरस णिव्यत्तिअपज्जत्तजीव-

और सक्ष्म । य सभी बादर और सभी सक्ष्म जीव पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं। इसप्रकार प्रत्येक एक एक कायके जीव चार चार प्रकारके हो जाते हैं। त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार ये सब मिलाकर बाबीस जीव-समास हो जाते हैं। प्रथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायकायिक और वन-स्पतिकायिकके बादर और सुक्षमके भेदसे दश भेद होते हैं और असकायिक इन ग्यारह प्रकारके जीवांकी अपेक्षा ग्यारह निर्वतिपर्याप्तक जीवसमास, ग्यारह निर्वत्यपर्याप्तक जीव-समास और ग्यारह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार सब मिलाकर तेतीस जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त बाबीस जीवसमासंमिसे त्रसकायिक जीवेंकि पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकालकर त्रमकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, समनस्क (संझी) और अमनस्क (असंब्री)। समनस्क जीव दो प्रकार्क होते हैं, पर्याप्तक, अपर्याप्तक। अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये चार जीवसमास मिलाने पर चौबीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सक्ष्मके भेदसे दश भेद और समनस्क असकायिक तथा अमनस्क त्रसकायिक इन बारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा बारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास. बारह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और बारह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त चोबीस जीवसमासों में अमनस्क जीवों के पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, सकले-न्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इन चार जीवसमासीका मिला देने पर छन्बीस जीवसमास होते हैं। पांची स्थावरकायिक जीवोंके बादर और

समासा तेरस लिख्जिपजजत्तजीवसमासा एवमेदे सब्वे घेन्ण एगूणचालीस जीव-समासा हवंति । छब्वीसण्हं मज्झे वणप्फइकाइयाणं चत्तारि जीवसमासे अविणय वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अप-ज्जत्ता, साधारणसरीरा दुविहा बादरा सुहुमा, ते दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे छ जीवसमासे पिक्खत्ते अद्वावीस जीवसमासा हवंति। चोहस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा चोहस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा चोहस लिख-अपज्जत्तजीवसमामा एवमेदे बायालीस जीवसमासा। अद्वावीसण्हं मज्झे पत्तेयसरीर-पज्जत्तापज्जत्ता दो जीवसमामे अवाणिय पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोयजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, तेवि सब्वे दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि एदे चत्तारि भंगे पिक्वित्ते तीस जीवसमासा हवंति। णिव्वत्ति-पज्जत्तजीवसमासा पण्णारम, णिव्यत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, लिख-अपज्जत्तजीव-

मुक्ष्मके भेवसे दश् भेद तथा विकलेन्डिय, असमनस्क पंचेन्डिय और समनस्क पंचेन्डिय इन तेरह प्रकारके जीवांकी अपेक्षा तेरह निर्शत्तपर्याप्तक जीवसमास, तेरह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और तेरह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर उनतालीस जीवसमास होते हैं। छुर्धास जीवसमासामें वनस्पतिकायिक जीवांके चार जीवसमास निकाल कर वनस्पतिकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर। प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक जीव दी प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारण-शरीर वनस्पतिकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं बादर और खक्ष्म । ये दोनों प्रकारके जीव भी दो हो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये छह जीयसमास मिला हेने पर अदावीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायकायिक और साधारण-वनस्पतिकाविक जीवोंके बादर और सक्ष्मके भेदसे दश भेद, प्रत्येकवनस्पतिकाविक, विक-लेन्द्रिय, समनस्कपंचेन्द्रिय और अमनस्कपंचेन्द्रिय इन चौरहीं प्रकारके जीवींकी अपेक्षा चौदह निर्वित्तिपर्याप्तक जीवसमास, चौदह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और चौदह लब्ध्य-पर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर व्यालीम जीवसमास होते हैं। पूर्वीक भद्दावीस जीवसमासोंमंसे प्रत्येकवनस्पतिकाथिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकदारीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगीदयोनिक और बादरनिगीदअयोनिक। वे भी सब दो दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इस प्रकार ये चार भंग मिला देने पर तीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणदारीर इनके बादर और सुक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति और अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति, विकलेन्द्रिय, अमनस्कपंचेन्द्रिय और समनस्कपंचेन्द्रिय इसप्रकार इन पन्द्रह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा पन्द्रह निर्वृतिपर्याप्तक जीवसमास, प्रम्हह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और प्रम्हह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास समासा पण्णारस एवमेदे सच्चे वि पंचेदालीम जीवसमामा ह्वंति। पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-साधारणसरीरवणप्फड्काइया पत्तेयं पत्तेयं वादर-सुहुमपज्जत्तापज्जत्तमेदेण चउिवहा ह्वंति, पत्तेयसगीरा वेहंदिय-तेहंदिय-चउिरांदिय-अमिण्णपंचिदिय-मिण्णपंचिदिया पत्तेयं पत्तेयं पज्जत्ता अपज्जत्ता दुविहा ह्वंति एदे मच्चे मिलिदे वत्तीम जीवसमामा ह्वंति। सोलम णिव्वतिपज्जत्तजीवसमामा सोलस णिव्वति-अपज्जत्तजीवसमामा सोलस लिव्वति-अपज्जत्तजीवसमामा सोलस लिव्वति-अपज्जत्तजीवसमामा सोलस लिव्वति-अपज्जत्तजीवसमामा सोलम लिद्धे अहुतालीस जीवसमामा ह्वंति। वत्तीम-जीवसमामेसु पत्तेयसरीर-देा-जीवसमामे अवणिय पत्तेयमगीरा दुविहा वादरणिगोदजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, ते च पत्तेयं पज्जत्तापज्जत्तभेदेण दुविहा एदे चत्तारि पिक्वित्तं चोत्तीम जीवसमामा ह्वंति। सत्तारस णिव्वतिपज्जत्ता मत्तारस णिव्वति-अपज्जता मत्तारम लिद्धि-अपज्ञता एदे सव्वे एकावण जीवसमामा ह्वंति। पुटवि-आउ-तेउ-वाउ-णिज्ञणिगोद-चउगिदिणिगोदा वादरा सव्वे एकावण जीवसमामा ह्वंति। पुटवि-आउ-तेउ-वाउ-णिज्ञणिगोद-चउगिदिणिगोदा वादरा

इसप्रकार ये सब मिलाकर पैतालीम जीवसमास होते हैं। प्रथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, बाग्रकायिक और साधारणदारीरवनस्पनिकायिक ये पांच प्रकारके जीव पृथक् पृथक् बादर, सृक्ष्म और उनमें भी पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार चार प्रकारके होते हैं। प्रत्येकद्यर्शस्यनस्पतिकायिक, ड्योन्डिय, बीन्डिय, चतरिन्डिय, असंबंधि पंत्रेन्टिय और संज्ञी पंत्रेन्टिय ये छहीं प्रत्येक प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदन दो दे। प्रकारके होते हैं। इसप्रकार ये सब मिलाने पर बनीस जीवसमास होते हैं। प्रथिवीकायिक कलकायिक, अग्निक।यिक, वायकायिक और साधारणदारीर-वनस्पतिकायिक जीवेंकि बादर और मुक्ष्मके भेदसे दश भेदरूप तथा प्रत्येकशरीर बनस्पतिकायिक, हीन्द्रिय, बीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंब्री-पंचेन्द्रिय और संब्री-पंचेन्द्रिय जीवेंकि अपेक्षा सोलह निवृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सोलह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और सोलह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिला देने पर अडनाळीस जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त बत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकदारीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये वं। जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक जीय दे। प्रकारके होते हैं. बादरनिगोदयोनिक (प्रतिष्टित) और बादरनिगोद अप्रतिष्टित। वे दोनों पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदस दो दो प्रकारके होते हूँ। ये चार जीवसमास मिला वेते पर चौतीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकार्यिक, जलकार्यिक, अग्निकार्यिक, वायुकार्यिक, और साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सक्ष्मक भेदसे दश भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येक-वनस्पतिकाथिक, अप्रतिष्ठितप्रत्येक-वनस्पतिकाथिक, द्वीन्द्रिय, जीन्द्रिय, जर्नारिन्द्रिय, असंबिक्षपंचेन्द्रिय और संबिक्षपंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सत्रह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास. सम्रह निर्कृत्यपूर्याप्तक जीवसमास और सम्रह लब्ध्यपूर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर इकावन जीवसमास होते हैं। पृथियिकायिक, जलकायिक, अभिकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगीद- सुहुमा च पज्जत्तापञ्जत्तभेषण दुविहा हवंति, पत्तेयवणप्फदि-वेहंदिय-तेहंदिय-चउरिंदिय-असाण्ण-सिण्णपंचिदिय-पज्जत्तापज्जत्तभेएण एदे वि पत्तेयं दुविहा हवंति एदे सन्वे वि छत्तीस जीवसमासा हवंति । अद्वारह णिन्वात्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिन्वात्तिअपज्जत्तजीवसमामा वि अद्वारह सन्वेदे एगद्धे कदे चउपण्ण जीवसमासा । पुणो पत्तेयसरीर-दो-जीवममासे छत्तीस-जीवसमासेस अविषय पत्तेय-सरीरवादरिणगोद-पदिद्विदापदिद्विदं-पज्जत्तापज्जत्त-सिण्णद-चदुस जीवसमासेस पिक्सिन्तेस अद्वतीस जीवसमासा हवंति । एतथ एगुणवीस णिन्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिन्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमामा हवंति, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमामा वि तेत्रिया

साधारणवतस्पतिकार्यिक और चतुर्गतिनिगोदसाधारणवनस्पतिकायिक ये छहीं प्रकारके जीव बादर और मृश्मक भेदसे बारह प्रकारके होते हैं। और वे प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्या-प्तकके भेदन दो दो प्रकारके होते हैं। प्रत्येकवनस्पतिकाधिक, झीन्द्रिय, बीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंब्री-पंचेन्टिय और संब्री-पंचेन्टिय जीव ये सभी पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दें दो प्रकारके होते हैं। इसप्रकार उक्त चौबीस और निम्न बारह ये सभी जीवसमास मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, नित्य-निगेद साधारणवनस्पतिकायिक और चनुर्गतिनिगोद साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सक्ष्म भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्ट्रिय, बीन्ट्रिय, चत्रिन्ट्रिय, असंबी-पंचेन्ट्रिय और संब्धि-पंचिन्डिय जीवोंकी अपेक्षा अठारह निर्वृत्तिपर्यात्तक जीवसमास, उतने ही अठारह निर्वृत्य-पर्याप्तक जीवसमास और अठारह लक्ष्यपर्याप्तक जीवसमास थे सब इकट्टे करने पर चौपन जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त छत्तीस जीवसमासीमेंसे प्रत्येकदारीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्या प्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकदारीरसंबन्धी पाद्रगनिगोद प्रतिष्ठित और अर्पातप्रित इन दोनोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक इन चार जीवसमासोंके मिलाने पर अड्तीम जीवसमास होते हैं। प्रथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगीद साधा-रणदारीरवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणदारीरवनस्पतिकायिक जीवींके बादर और सक्ष्म भेदरूप तथा सप्रतिष्टित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्टित प्रत्येकवनस्पतिकायिक क्रीन्डिया जीन्डिया चतरिन्डिया असंब्री-पंचेन्डिय और संब्री-पंचेन्डिय जीवासंबन्धी उन्नीस निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास होते हैं, उन्नीस ही निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं और उन्नीस ही लक्ष्यपर्यातक जीवसमास होते हैं। ये सब मिलाकर सत्तावन जीवसमास होते चेव सच्वेदे सत्तावण्ण जीवसमासा हर्वति। एदे' जीवसमासभेया' सव्व-ओधेसु वत्तच्या।

छ पजनीओ छ अपजनीओ पंच पजनीओ पंच अपजनीओ चनारि पजनीओ चनारि अपजनीओ, दस पाण सन्त पाण णव पाण सन्त पाण अहु पाण छ पाण सन्त पाण पंच पाण छ पाण चनारि पाण चनारि पाण चनारि पाण वनारि पाण वनारि पाण वनारि पाण वनारि पाण कारि कारि पाण कारि कारि पाण कारि कारि पाण कारि कारि अहिथ, अहु पाण, सन्त संजम, चनारि दंसण, दन्व-भावहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अतिथ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मन्तं, सिण्णणो असिण्णणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो वि अतिथ, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजना होति अणामारुवजना वा सामार-अणामारेहि जुगव-

हैं। ये उपर्युक्त जीवसमासींके भेद समस्त ओघालापोंमें कहना चाहिए।

जीवसमास आलापके आंग संक्षी पंचीन्द्रिय जीवंकि पर्याप्तकालमें आंर अपर्याप्तकालमें छहें। पर्याप्तियां, छहें। अपर्याप्तियां, असंक्षी पंचीन्द्रिय और विकलत्रय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियांः एकेन्द्रिय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः चार पर्याप्तियां; चार अपर्याप्तियांः संक्षी पंचीन्द्रिय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः वार प्राणः असंक्षी पंचीन्द्रिय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः नो प्राणः, सात प्राणः चतुरिन्द्रिय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः नो प्राणः वार्विद्रिय जीवंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः सात प्राणः, पंचे प्राप्तः अपर्याप्तकालमें क्रमद्याः चार प्राणः, त्याप्तकालमें क्रमद्याः चार प्राणः, त्याप्तकालमें क्रमद्याः चार प्राणः, तीन प्राणः सयोगकेवली जिनोंके चार प्राणः, तथा समुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें हो प्राण और अयोगकेवली जिनोंके एक आयु प्राण होता है। चारों संक्षाप तथा क्षिणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांची ज्ञातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, पन्द्रहीं योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगत वेदस्थान भी है, चारों कथाय तथा अकथायस्थान भी है, आठों क्षान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेक्सपंत तथा अलेक्सप्तस्थान भी है, भव्यस्तिद्रिकः छहीं सम्यक्त्य, संक्रिक असंक्रिक तथा संक्रिक और असंक्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है,

१ प्रतिषु ⁶ बीषु ⁹ इति पाठः ।

२ सामण्यज्ञां तसधावरेषु इगिष्ठिगलसयलचरिमदुगे | इदियकाये चीरेमस्य य दुतिचदुपणगभेद जुदै || पणज्ञाले तससिहिये तसस्य दुतिचदुरपणगभेद जदे | छटदुगपरोयग्दि य तसस्य तियचदुरपणगभेद जुदे || सगज्जालग्दि तसस्य य पणभंगज्ञदेसु होति उणक्षीसा | एयादुणवीसीस्य य इगिवितिगृणिदे हवे ठाणा || सामण्येण तिपंती पटमा विदिया अपुण्णगे इदेर | पञ्जने लक्किअपःजनोऽपटमा इवे पती || गो. जी ७५-७८.

दुवजुत्ता वा"।

तेंमि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोहस गुणट्ठाणाणि, एको वा दो वा तिण्णि वा चत्तारि वा पंच वा छच्वा सत्त वा अट्ठ वा णव वा दस वा एकारह वा बारह वा तेरह वा चउइस वा पण्णारह वा सोलस वा सत्तारस वा अट्ठारह वा एगुणवीस वा जीवसमासा, छ पज्जतीओं पंच पज्जतीओं चत्तारि पज्जत्तीओं, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण एक पाण, चत्तारि सण्णाओं खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओं, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओं, पुढविकायादी छक्काया, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकमाओं वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओं अलेस्सा वि अत्थि, भवसाद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन दानों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं पट्-कायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबंधी आलाप कहने पर—चेंदहीं गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी एक, अथवा दो, अथवा तीन, अथवा चार, अथवा पांच, अथवा छह, अथवा सात, अथवा आठ, अथवा नो, अथवा द्वा, अथवा न्यारह, अथवा बारह, अथवा तेरह, अथवा चोदह, अथवा पन्द्रह, अथवा सोलह, अथवा समह, अथवा बारह, अथवा तेरह, अथवा चोदह, अथवा पन्द्रह, अथवा सोलह, अथवा समह, अथवा अठारह, अथवा उन्नीस जीवसमास होते हैं, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तयां और चार पर्याप्तियां, पूर्वमें कह गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी द्वा प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संझाएं तथा श्लीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रिय जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वोकियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग और अयोगस्थान भी है; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्व्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेक्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और

नं. २१३ षट्कायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

1	ग् ∣जी	ч.	я	IT.	्सं <u>,</u> ।	ग्,	₹.	का	यो	वे.	क.	ह्या.	संय.	द.	ले.	भ-	स•	सीज्ञ	आ.	उ.
1	४।५७	प.अ	30,0	९,७	8	8	4	Ę	94	₹	8	6	v	ĸ	द्र. ६	3	Ę	2	ર	٦
1		€,€	८,६	७,५	tt			1	- ·	-	Ė		1		मा ६	म∙			{	साका.
i		५,५	₹,४	٧,३	खाव		- 1	1	अयाः	अव	अभ्य विभ्रम्				अले.	্স.	l	असं.	1	
1		8,8	४,२	. 1	800				67		ייו							अनु .		यु. उ.
ı	1				1 {	ĺ							l	- 1				1		!

सिंगणो असिंगणो पोत्र सिंगणो पोत्र असिंगणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा"।

तसं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, एगो वा दो वा, दोण्णि' वा चत्तारि वा, तिण्णि वा छन्त्रा, चत्तारि वा अह वा, पंच वा दस वा, छन्त्रा बारस वा, सत्त वा चोहस वा, अह वा सोलस वा, णव वा अहुारह वा, दस वा वीस वा, एकारस वा बावीस वा, बारस वा चउवीस वा, तेरस वा छन्त्रीस वा, चोहस वा अहुावीस वा, पण्णारस वा तीस वा, सोलस वा बत्तीस वा, सत्तारस वा चोत्तीस वा, अहुारस वा छत्तीस वा, एगुणवीस वा अहुतीस वा जीवसमासा; छ अपज्जत्तीओ पंच

असंक्रिक इन देतिं विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन देतिं। उपयोगींसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ — उपर सत्तावन जीवसमास बतला आये हैं उनमें उन्नीस जीवसमास पर्याप्तसंबन्धी हैं और अड़तीस अपर्याप्तसंबन्धी। उनमेंसे यहां पर्याप्तसंबन्धी उन्नीसका ही प्रहण करना चाहिये। जिनका प्रकृतमें 'एक अथवा दें।' इत्यादि रूपसे उल्लेख किया गया है।

उन्हीं पर्-कायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—िमध्याद्दिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट, अविरतसम्यग्दिष्ट, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये अपर्याप्तक जीवोंसंबन्धी एक अथवा दे।, दो अथवा चार, तीन अथवा छह, चार अथवा आठ, पांच अथवा दश, छह अथवा बारह, सात अथवा चौदह, आठ अथवा सोलह, नो अथवा अठारह, दश अथवा बीस, ग्यारह अथवा बाईस, बारह अथवा चौबीस, तरह अथवा छहासि, चौदह अथवा अट्टाईस, पन्द्रह अथवा तीस, सोलह अथवा बत्तीम, सब्रह अथवा चौतीस, अठारह अथवा छत्तीस, उन्नीस अथवा अङ्गीस जीवसमास होते हैं। छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह

१ प्रतिषु ' तिष्णि ' इति पाठः ।

नं. २१४ पट्कायिक जीवोंके पर्याप्त आलापः

1 7.1	जी.	q	त्रा.	सं	1 [.	₹.	酥.	यो.	ब	क.	ज्ञा.	संय.	₹.	છે્મ	स	साज्ञ	आ	उ.
१४	१ %	Ę	\$ 0			eş	Ę	११	₹	¥	<		R	द्र. ६ ५	Ę	٦	2 2021	2
1		ب ×	९ ८ ७ ६]जस				स.४ व.४	अवग	अक्षा.				मा. ६ म अले. अ		स. अस.	अनाः	साका. अना.
		٠	* 8	1300	į			એો. ૧	(1)	in						अनु.		यु. उ.
			₹					बे. १										
- 1	l				l		ı	आ. १										

अपज्जन्तीओ चत्तारि अपज्जन्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि- आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, द्व्वेण काउ- सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो अस्पिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभया वा

प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राणः चारों संक्षाएं तथा शीणसंक्षास्थान भी है, चारों गितयां, एकेन्द्रियजाित आदि पांचों जाितयां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, औदािरिकिमिश्र, वैकियिकमिश्र, आहारकिमिश्र और कार्मण ये चार योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावधि और मनः पर्ययक्षानके विना छह क्षान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापात और गुक्र छेद्याएं, भावसे छहों लेद्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिश्यात्वके विना पांच सम्यक्त, संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभयस्थान भी है। आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और उभय उपयोगोंसे गुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेपार्थ — ऊपर जो सत्तावन जीवसमास कहे हैं उनमें अपर्याप्त सामान्यके उन्नीस हैं जिनका यहां पर 'एक अथवा दो, दो अथवा चार, इत्यादि संख्याओं के कथनमें आई हुई पूर्ववर्ती संख्याओं का एक, दो, तीन इत्यादि संख्याओं से निर्देश किया है। अपर्याप्त निर्दृत्य पर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त ऐस दो भेद कर लेन पर उनका निर्देश दो, चार, छह इत्यादि संख्याओं के द्वारा किया गया है। यहां पर इतना और समझ लेना चाहिये कि पूर्व पूर्ववर्ती संख्याएं जीवसमासों को सामान्य कपसे और उत्तर उत्तरवर्ती संख्याएं उनको विशेष कपसे बतलाती हैं। इसका यह अभिप्राय हुआ कि किसी भी संख्याके द्वारा संपूर्ण अपर्याप्त जीव संप्रद्वीत कर लिये गये हैं। भिन्न भिन्न संख्याएं केवल उनके भेद-प्रभेदों को स्वित करने के लिये ही दी गई

नं, २१५

षट्कायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। गु.	जी. ।	ч.	श्रा.	н.	ग्.	इं.का.	यो	व.	क	श्रा.	संय.	द.	ले.	भ-	स.	संक्रि.	आ.	उ.
		६ अ.	9 (8 0	४	५ ६	8	₹	8	Ę	8	8	द्र. २	1	c4	२	3	२
मि.	1	٧,,	Ę	ф		2 4	ञा मि.	1	<u>:</u>	विभं	अस.	[आहा.	
सा.		٧,,	4	क्षांप्			व.मि	জ		मन	सामा	l I			विना.	असं.	अना,	अना.
Э.		l	R	00-	}			i	119	विनाः	छेदो.		मा.६		,	अनु.	j	यु. उ.
त्र. [∫]			₹				कार्म.				यथा.							
स. ∣) २	<u></u>														l —

मिच्छाइद्विष्पहुांडे जाव अकाया ति मृलोध-भंगो । णवरि मिच्छाइद्विस्स तिवि-हस्स वि कायाणुवाद-मृलोधब्भुत्तजीवसमासा वत्तव्वा । णित्थ अणत्थ विसेसो ।

ें पुढिविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जतीओ चत्तारि अपज्जतीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढिविकाओ, तिण्णि जोग, णवंमयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खदंसण, द्व्वेण छ लेस्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

हैं। पर्याप्त जीवसमासके उन्नीस विकल्पोंमें भी यही कम जान लेना चाहिये। गोम्मटसार जीवकाण्डमें जीवसमासोंको बतलाने हुए तीन पंक्तियां कर दी है। पहली पंक्तिमें एक, दी, आदि उन्नीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन सामान्यकी अपेक्षा किया है। दूसरी पंक्तिमें दो, चार आदि अङ्तीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त और अपर्याप्त इन दो भेदोंकी अपेक्षा किया है। तथा तीसरी पंक्तिमें तीन, छह आदि सत्तावनतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त इन तीन भेदोंकी अपेक्षा किया है।

सामान्य परकायिक जीवं के मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अकायिक अर्थात सिद्ध जीवों तकके आलाप मूल ओघालापके समान ही जानना चाहिए। विदेश बात यह है कि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इन तीनों ही प्रकारके मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहते समय कायानुवादके मूलोघालापमें कहे गये सभी जीवसमास कहना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्यव अन्य कोई विदेशका नहीं है।

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिण्यादाष्ट गुणस्थात, बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त थे चार जीवसमासः चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; बार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंचगाति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिककाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण

नं. २१६ पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

J.	जी.	q.	प्रा.	स-	ग	₹.	का.	यो.	ं वे.	क	शा-	सय	₹	ਰ.	भ	स.	मान्न	आ.	₹.
१	8		8	_	ξ	8	₹.	, ₹	₹	X	ર	9	9	द्र. ६	3	8	8	3	ર
मि.	बा-प	प∙	q .		ति.	16	ā	ં જો.્ર	יים		[मुम.	अम	अच.	भा ३	भ	मि -	अस.	आहा.	साका.
	,, अ	1	₹	l .		5		कार्म.	ांड		म्थ,			अगु,	1			अना.	अना.
ļ	सू. प	. अ.	अ-	,		({		1						1
1	,, अ							1											

लेस्साओः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असिष्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा चत्तारि वि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदिय-जादी, पुटविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, द्व्वेण छ लेम्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेम्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अयिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वज्जता वां ।

नील और कापोत लेह्याएं: भव्यांनाद्धिक, अभव्यांतिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, वांद्रपृथिवीकायिक-पर्याप्त और मृक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये दो जीवसमास, अथवा शृद्ध बाद्रपृथिवीकायिक-पर्याप्त शृद्ध सृक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त, खर बाद्रपृथिवीकायिक-पर्याप्त और कर मृक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त और कर मृक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये चार जीवसमासः चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संक्षापं, विर्थवगित, एकेन्द्रियज्ञाति, पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कथाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्रुद्दीन, दृष्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे हृष्ण, नील और कापोत लेक्ष्यापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेषार्थ — ऊपर पृथिवीकायिक जीवों के पर्याप्त आलाप कहते समय दो अथवा चार जीवसमास बतलाये हैं। उनमें दो जीवसमास बतलाके कारण तो स्पष्ट ही है। परंतु विकरपसे जो चार जीवसमास बतलाये गये हैं उसके दो कारण प्रतीत होते हैं एक तो यह कि गोम्मटसारकी जीवप्रवोधिनी टीकामें जीवसमासोंका विशेष वर्णन करते समय पृथिवीके शुद्धपृथिवी और खरपृथिवी ऐसे दो भेद किये हैं। ये दो भेद बादर और स्क्ष्मके भेदसे दो दो प्रकारके हैं। जाते हैं। इसप्रकार पर्याप्त अवस्था विशिष्ट इन चारों भेदों के प्रहण करने पर चार

नं. २१७ पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग	जी.	ч. ग	सं. । ग.	इ	का.	यो.	बे	क.	হ্না.	मय.	₹.	ਰ.	₽,	a.	साज्ञे.	आ.	उ.
		6 X	8 1 5			۶.	- 1			Ý					2	8	ર
ाम-	वा.प मृ.प.		ति.	(A)	Ã.	श्रीदा-	<u>ارم</u>			अस.	अच -			ास.	असं •	आहा.	साका.
	8. 4.		,				F	†	कुश्रु .			अगु.	ગ.				अना,
					-												

तेसिं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चतारि अपज्जनीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंमण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

जीवसमास हो जाते हैं। इसरा कारण ऐसा प्रतीत होता है कि वीरसेनस्वामीने स्वयं बाहर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके अतिरिक्त बादर और सक्ष्म प्रथिवीकाविक निर्वत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इसप्रकार तीन प्रकारके आलाए और बतलाये हैं। इनमेंसे प्रथम सामान्यालाएमें पर्याप्तक. निर्वत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन तीनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव हो जाता है और निर्वत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्यालापमें पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक इन दो प्रकारके जीवोंके आलापोंका ही अन्तर्भाव होता है। इसर पर्याप्तालापकी अंपक्षा प्रथम और द्वितीय दोनों पर्याप्तालापोंमं वास्तवमें कोई विशेषता नहीं है, क्योंकि, निर्वृत्तिसे पर्याप्तक जीव ही दोनों जगह पर्याप्तरूपसे ग्रहण किये गये हैं। अपर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रधम अपर्याप्तालापमें निर्वत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन दोनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव होता है। परंतु निर्वतिपर्याप्तक जीवोंके अपर्याप्तालापमें केवल एक निर्वत्यपर्याप्तक कालसंबन्धी आलापोंका ही ग्रहण होता है। इनमेंसे निर्वित्तपर्याप्तककी अपर्याप्तावस्थामें पर्याप्तनामकर्मका उदय ते। रहता है परंतु उसकी पर्याप्तियां पूर्ण न होनेके कारण वह अपर्याप्त कहा जाना है। इसप्रकार निर्वत्यपर्याप्तक पर्याप्तनामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्याप्त भी है। प्रतीत होता है कि इसी विवक्षाको ध्यानमें रखकर वीर सेतस्यामीने यहां पर चार आलाप कहे हैं। यदापि प्रथम कल्पना गोस्प्रदसारकी जीववबी-धिनी टीकाके आधारसे दी गई है परंत् उसकी यहां पर मुख्यता प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि, आगे जलकायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान बतलाये हैं। परंत जल आहिके उसी टीकामें शद्ध आदि भेद नहीं किये हैं। अथवा इसी बातको ध्यानमें रखकर उक्त टीकामें केवल पृथिवीके चार भेद किये गये हों। इसप्रकार पृथिवीकायिक जीवांके दे। या चार जीवसमास जान लेना चाहिये।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त और स्क्षमपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चारों अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संक्षापं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, जुमित और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्चद्दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्त लेक्याएं, भावसे कुष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभ्रष्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, असंक्षिक,

असिंगणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्त्रजुत्ता होति अणागास्त्रजुत्ता वा "।

बादरपुढिविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चतारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादरपुढिविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, द्वेण छ हेस्सा, भावेण किण्ह-णीलकाउहेस्साओ; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्जता होति अणागाहवज्जता वां ।

आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार आपर्याप्तियां, चार आपर्याप्तियां, चार आपर्याप्तियां, चार आण, तीन प्राणः चारों संझाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बाद्र-पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील ओर कापोत लेश्याएं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, असंविक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मे. २१८ पृथिर्वाकायिक जीवोंके अपयोप्त आसाप

गु	जी.	ष.	সা.	सं	9)	ई	का	यो.	वे.	奪.	श }	सग.	₫.	ਲੇ.	भ.	स	संजि	आ.	ਰ.	ĺ
	ર					٤		3											2	١
ाम.	बा.अ	अ.			ाते∙	एक,	Ŋ.	ओ.मि.	į.		कुम.	असं.	अच.	का.	भ	मि.	असं.	आहा-	साकाः	١
1	मृ अ							कार्म.	1E		奪門。			गु.	अ.			अना.	अनाः	Ì
1														भा. ३]	Ì
1_														अगु.	_				1	1

नं. २१९ बादरणुथिवीकायिक जीबोंके सामान्य आलाप.

्रा जी प. प्रा⊣संग. इं.	का. या. वे. क.	, हाः सय दः	ें छे. स. स.	साझे. आ. उ.
2 4 8 8 8 8 8	१ ३१४		द्र.६ २ १	१ २ २
मि.बा.प.प. ३ ति. एके.	ષૃ. લોં, ર 🚓 🦠	कुम. असं. अच.	मा ३ म । मि	असं ाजाहाः साका.
,, अ. ४	कार्म १ हि	कुश्रु•	সমূ, স	अना. अना.
अ.		ļ	1	
11				

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चनारि पजनीओ, चनारि पाण, चनारि सण्णाओ, तिरिक्ष्यगई, एईदियजादी, बादरपुढिविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवंसयवेद, चनारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजमो, अचक्खु-दंसण, द्वेण छ लेस्सा,भावेण किण्ड-णील-काउलेस्मा; भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, मिच्छनं, असिण्णिणो, आहारिणो, सागाहवजुना होंति अणागाहवजुना वां।

ंतिसं चेव अपन्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासी, चत्तारि अपजत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, निरिक्स्वगदी, एइंदियजादी, बादरपुटवि-

उन्हीं बादरणृथियीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक बादरणृथियीकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्थेचगति, एकेन्द्रियज्ञाति, बादरपृथियीकायः, ओदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुर्मात और कुथ्रत ये दो अञ्चान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापीत लेश्याएं। भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्यः असंश्चिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बादरपृथियोकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक भिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथियोकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संक्राण, तिर्थवर्गत, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदानिकमिश्रकायपंग

नं. २२० षादग्पृशिर्वाकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग	् जी		व., ब	J.	स	ग.	<u>¥</u> .	का.	या.	٠ ٩.										ЭП.	_ 3	ł
5	् १		ď e	\$	૪	١ ا	8	,	8	9	6	5	۶	१	5	Ę	२	9	9	ş	3	1
मि	, লা,	4 ्				ति	υ के	J	अंदा.	नप्.		कुम.	अग.	अच्.	भा	. २	47∙	ÍH.	अम	आहा.	साका	١
	i	i		ı	- [于月			্র হ	नु.	भ	1			् अनाः	1
1	1	i			- }			1		I			ļ		1	-)						1

नं. २२१ बाव्रपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। ग.	जी-	q	\mathfrak{Al}_{\bullet}	ŧŧ	11	₹.	का.	या.	वे	. 私	লা.	संय	ट. ∤ हे. ३	1. स	स्रीज्ञ.	आ.	3. 1
१	₹ .		₹				*			16	२	*	ँ१	१ १	2	2	٦_
मि.	षा.अ.	अ.			नि.	16	\mathfrak{F}	अं। मि		. n	कृम.	अस.	अच्छा । फा स गा अ	ांग-	अस.	आहा.	साका.
						E'		कार्भ.	IC.		亚鹎 。		'ল₊ ৠ			अना	अना.
1								ı					भा ३				
+								1			•		अध्,				
1											ı		1 1				: 1
1 '					1	1		l I		-	1		1 1				

काओ, दो जोग, णबुंसयवेद, चनारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अन्वक्खुदंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माओ; भविमद्धिया अभविसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा।

एवं बादरपुढविणिव्यत्तिपद्यत्तस्स तिण्णि आलाया वत्तव्या । बादरपुढविलद्धि-अपज्ञत्तस्स बादरेइंदिय-अपद्यत्त-भंगो । सृहुमपुढवीए सृहुमेइंदिय-भंगो । णवरि सुहुम-पुढिविकाइओ त्ति वत्तव्यं ।

आउकाइयाणं पुढवि-भंगो । णवरि मामण्णालावे भण्णमाणे आउकाइओ, द्वेषण काउ-सुक्क-फिल्हवण्ण-लेस्साओ वत्तव्वाओ । तसि चेव पज्जनकाले द्वेण मुद्रुमआऊणं काउलेम्या वा बाद्रआऊणं फिल्हवण्णलेस्सा । कृदो ? वणोद्धि-वणवलयागास-पिद्द-पाणीयाणं धवलवण्ण-दंमणादो । धवल-किसग-णील-पीयल-रत्ताअंब-पाणीय-दंम-णादो ण धवलवण्णमेव पाणीयमिदि के वि भणंति, तण्ण चडदे । कृदो ? आयारमाव

और कार्मणकाययोग ये दो योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेश्यापं, भावमे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं भव्यागिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिध्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवींके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिये। बादर पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। स्हम पृथिवीकायिक जीवोंके आलाप स्हम एकेन्द्रिय जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेषता यह है कि 'स्हम एकेन्द्रिय' के स्थानपर 'स्हम पृथिवीकायिक' ऐसा आलाप कहना चाहिए।

अक्तायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। विशेष बात यह है कि सामान्य आलाप कहते समय 'पृथिवीकायिक' के स्थानपर 'अक्तायिक कोर लेश्या आलाप कहते समय इच्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और गुक्क लेश्याणं और पर्याप्तकालमें स्फटिकवर्णवाली अर्थात गुक्क लेश्या कहना चाहिए। उन्हीं स्क्ष्म अक्तायिक जीवोंके पर्याप्तकालमें इव्यसे कापोत लश्या कहना चाहिए। तथा बादरकायिक जीवोंके स्फटिकवर्णवाली गुक्क लेश्या कहना चाहिए, क्योंकि, धनोद्धिवात और धनवल्यवात द्वारा आकाशसे गिरे हुए पानीका धवलवर्ण देखा जाता है। यहां पर कितने ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि, धवल, कृष्ण, नील, पीत, रक्त और आताम्र वर्णका पानी देखा जानेसे पानी धवलवर्ण ही होता है, ऐसा कहना नहीं बनता है ? परंतु उनका यह

माद्वियाए संजोगेण जलस्स बहुवण्ण-वबहार-दंसणादो । आऊणं सहाववण्णो पुण धवलो चेव ।

एवं चेव बाद्रआउकायस्स वि तिण्णि आलावा वत्तव्या। णवरि पजत्तकाले द्व्वेण फिलहलेस्सा एक्का चेव। णित्थ अण्णत्थ विसेसो । बाद्रआउकाइयणिव्यत्तिपजत्ताणं पि तिण्णि आलावा एवं चेव वत्तव्या। वाद्रआउलद्धिअपज्जत्ताणं बाद्रआउणिव्यत्ति अपज्जत्त-भंगो । सुहुमआउकाइयाणं सुहुमपुढविकाइय-भंगो । सुहुमआउकाइयणिव्यत्ति पजतापज्जताणं सुहुमआउकाइयलद्धिअपज्जताणं च सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-भंगो ।

तेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं वादरतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्ता-पज्जताणं च पज्जत्त-णामकम्मोद्यतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं वादर-तेउलद्भिअपज्जत्ताणं च, आउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जताणं वादरआउकाइयाणं तेमिं चेव पज्जतापज्जताणं पज्जत्तणामकम्मोदयआउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जतापज्जताणं

कहना युक्ति-संगत नहीं हैः क्योंकि, आधारके होने पर मटीके संयोगसे जल अनेक वर्णवाला हो जाता है ऐसा व्यवहार देखा जाता है। किन्तु जलका स्वामाविक वर्ण धवल ही है।

इसप्रकार बादर अध्कायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। विशेष बात यह है कि उनके पर्याप्तकालमें दृत्यसे एक स्फटिक वर्णवाली गुक्र लेख्या ही होती है, इसके सिवाय अन्य पृथिवीकायिकके आलापोंसे अपकायिक के अन्य आलापोंसे और कोई विशेषता नहीं है। इसीप्रकार बादर अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक जीवोंके उक्त तीन आलाप कहना चाहिए। बादर अपकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अपकायिक निर्शृत्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अपकायिक निर्शृत्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप महम्मपृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, सहम अपकायिक निर्शृत्यपर्याप्तक और सहम अपकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप सहम गृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके समान जानना चाहिए।

तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंक, बादरतेजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं बादरतेजस्कायिक पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-वाले तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्त अपर्याप्त भेदोंके तथा बादर तैजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्त अपर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, बादर अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक भेदोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा बादर अप्कायिक वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा बादर अप्कायिक

९ प्रतिषु ' पञ्जतापञ्जत्तणामकम्मोदयाण ' इति पाठः ।

बादरआउकाइयलिङ् अपजाणं च जहाकमेण भंगो । णवि तेउकाइयाणं दन्त्रेण काउ-सुक्क-तवणिजलेस्साओ । तेसिं चेव पजाणं दन्त्रेण काउ-तवणिजलेस्साओ । एवं पजाणामकम्मोदयाणं दोण्हं पि वत्तन्त्रं । बादरकाइयाणं तेउ-भंगो । एवं चेव तेसि-पजाणां । णवि दन्त्रेण तवणिजजलेस्सा । एवं पजाणामकम्मोदयाणं पि दन्त्र लेस्सा वत्तन्त्रा ।

सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुम-भंगो । वाउकाइयाणं तेउ-मंगो । णवरि दन्वेण काउ-सुक-गोम्रुत्त-मुग्गवण्णलेस्साओं । तेसि पज्जत्ताणं काउ-गोम्रुत्त-

डब्प्यपर्याप्तक जीवोंके आरापोंके समान यथाक्रमसे जानना चाहिए।

विशेषार्थ — तैजस्कायिक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं, इस बातके ध्वनित करनेके लिये मूलमें 'इव' या 'सहश' ऐसा के ई प ठ नहीं दिया है। परंतु पहले अप्कायिक जीवोंके संपूर्ण भेद-प्रभेदोंके आलाप कह आये हैं और यहां तेजस्कायिक जीवोंके अवस्कायिक जीवोंके अवस्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलापोंके समान बतलाये हैं यही समझना चाहिए। मूलमें आये हुए 'जहाकमेण' पदसे भी इसी कथनकी पुष्टि होती है।

विशेष बात यह है कि तैजस्कायिक जीवेंकि दृश्यसे कापीत, गुक्क और तपनीय छेर्या होती है। तथा उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्मजीवेंकि दृश्यसे कापीतलेश्या और पर्याप्तक बार्र-जीवेंके तपनीय छेर्या होती है। इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले सामान्य और पर्याप्त इन दोनेंही प्रकारके तैजस्कायिक जीवेंकि दृश्यलेश्या कहना चाहिए। बाद्र तैजस्कायिक जीवेंकि आलाप सामान्य तजस्कायिकके आलापोंके समान जानना चाहिए। इसीप्रकार बाद्र तैजस्कायिक पर्याप्त जीवेंकि आलाप भी होते हैं। विशेषता यह है कि इनके दृश्यसे तपनीय अर्थात् गुक्ललेश्या होती है। इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले तेजस्कायिक जीवेंकि भी दृश्यलेश्या कहना चाहिए।

सूक्ष्म तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म अकायिक जीवोंके अलापोंके समान जानना चाहिए। व गुकायिक जीवोंके अलाप तैजस्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि द्रव्यसे कापोत, शुक्क, गोमूत्र और मूंग के वर्णवालों लेश्याएं होती हैं। उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्म जीवोंके कापोतलेश्या और बाहर पर्याप्त जीवोंके गोमूत्र

९ बादरआऊतेऊ सुक्का तेऊ य××। गो. जी. ४९७.

२ तत्र घनोद्धयो प्रदूसिक्साः, घनवाता गोमृत्रवर्णाः, अव्यक्तवर्णास्तनुवाताः । त. रा. वा. ६. १. ७ × × वायुकायाणं । गोमुत्तमुग्गवण्णा कमसो अव्यक्तवण्णो य । गो. जी. ४९७. गोमुत्तमुग्गणाणावण्णाण घणंबुचण-तण्ण इवे । वादाणं वळयत्यं इनस्वस्स त्यं व छोगस्स ॥ त्रि. सा. १२३.

मुम्मवण्णलेस्साओ । एवं बादरवाऊणं तेसि पञ्जताणं च दन्वलेस्साओ हवंति । जिद वि मुग्गा अणेयवण्णा, तो वि रूढिवसा सामलवण्णो मुग्गवण्णो ति घेप्पदि । सुहुम-वाऊणं सुहुमतेउ-भंगो ।

ेंवणप्पर्काइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, वारस जीवसमासा, चतारि पश्चत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-मदी, एइंदियजादी, वणप्परक्षाओ, तिण्णि जोग, णवंमयवेद, चत्तारि कसाय, दो

और मूंगके वर्णवाली लेक्याएं होती हैं। इसीप्रकार बादर वायुकायिक सामान्य जीवोंके और उन्हीं बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंके द्रव्य लेक्याएं होती हैं। यद्यपि मूंग भनेक वर्णवाली होती है, तो भी रूढिके वहासे 'क्यामलवर्ण' ही मूंगका वर्ण प्रकृतमें ब्रह्म किया गया है। सूक्ष्म वायुकायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए।

वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, नौर बारह जीवसमास होते हैं, जिनमें सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके वार जीवसमास होते हैं। बाद्रनित्यनिगोद्-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, बाद्रनित्यनिगोद्-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, स्थानित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, स्थानित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बाद्रस्वतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बाद्रस्वतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बाद्रस्वतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बाद्रस्वतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बाद्रस्वतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक और स्थानवतुगितिनगोद-साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके अठ जीवसमास होते हैं। बार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्रत्य, तीन प्राण, चारों संझाएं तिर्यचगिति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औद्यारिककाययोग, औद्यारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग येतिन येता वेता वेता नपुंसकवेद, चारों कथाय, कुमति और कुश्रुत ये हो अक्रान,

#. २२२ वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

्य. १			शा. स. ४ ४	:- 1	इं. ¦व 1 .	हा १ !	यो. ३	ा वे. ⊹१	8	2	9	9	द्र. ६	3	3	9	आ <u>.</u> २	<u>उ.</u> २
1	साघा. ८	४अ	3	ति	ie h		ओ. २ का. १		l	कुम. कुभु	अस.	अच.	मा∙ ३ अगु.		मि		आहा. अना.	साका. अना.
	प्र को - ४				/_													

अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्त्रेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भविसाद्भिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवसुत्ता होति अणागारुवसुत्ता वा ।

तेंसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, छ जीवसमासा, चत्तारि पज्जतीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्फदिकाओ, ओरालियकायजोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्वेण छ लस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भविसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेति चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, छ जीवतमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्फइकाओ, दो जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्वेण

असंयम, अञ्चक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिकः आहारकः, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, सामान्य आलापोंमें बताये गये बाग्ह जीवसमासोंमेंसे पर्याप्तकसम्बन्धी छह जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संवापं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, ओदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्यापं, भावसे रूप्ण, नील और कापोत लेश्यापं: भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक आहाग्क, साकागेपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बनम्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यान्दि गुणस्थान, साम्रान्य आलापोंमें कहे गये वारह जीवसमासोंमेंसे छह अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तयां, तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्थचगित, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कन्नाय, कुमति

नं. २२३ वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप

શુ∙_	जी -	ч.	प्रा-	सं.	ग.	ŧ.	काः	यो	वे.	奪.	耓.	सय.	द.		भ.	म.	सकि.	आ.	ુ 3.
्र	Ę		8	ሄ	8	2	१		9	४	२	*	7	द्ध. ६	2	2	1	1	२
मि.	साधा.				नि.	एके	वन.	ओदा	F-2		कुम.	अस.	अच.	भा ३	म.	मि.	अस.	आहा.	साका-
	٧								15		কুপু.			अगु.	अ.		1		अमा.
	प्रत्ये.													I	1				
	ર								l ,										
																l			

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

पत्तेयसरीरवणप्पर्हणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जतीओ चत्तारि अपज्जतीओ, चत्तारि पाण निण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पत्तेयवणप्परिकाओ, निण्णि जोग. णउंसयवद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दन्वेण छ लेस्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

और कुश्रुत ये देा अज्ञानः असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क हेश्याणं, भावसं कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणंः भव्यानिद्धिक, अभव्यानिद्धिकः मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हैं।

प्रत्येकदारीर-वनम्पनिकायिक जीवेंकि मामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, प्रत्येकदारीर-वनम्पनिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: चार प्राण, तीन प्राण: चारों संक्षांण, तिर्धवगति, एकेन्द्रिय-जाति, प्रत्येकवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकिमश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंमकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुशुन ये दो अज्ञान, असंयप, अचशु-दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेह्याणं, भावने कृष्ण नील और कापोत लेह्याणं: भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक: मिथ्यात्व, अमंक्षिक, आहारक, अनुद्धारक माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २२४

वनम्पनिकायिक जीवेंकि अपयोप्त आलापः

गु.	ुजी प-∤श्र	ग	ब	₹.	平 [.	योः	ব	禕,	ज्ञा	मय	ट	d.	H	्स	माझ	आ.	₹.
18	1 & 18 a	8	¥	۶	,	₹			ે ર	,	8	द. २	~	9	,	2	२
मि	साधा, अ.		ন-	te	Ε-	ओ मि कार्मः	1		कम.	⊣स.	अच.	का	भ.	मि	अम	आहा.	साका
	8			Ē,	ज्य	कार्म.	ìr		कृ थ.			সূ ু	अ			ं अना.	अना.
	प्रत्ये -											भा.	Ł				. 1
	2											अगु.					}
1																	

नं. २२५

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

) ग्र	जी.	q. yı	सं _। ग	. । इ ., का	या.	à	4. 初.	सयः द	हें.	h "	₹.	माई।	आ.	₹.
2	ર	8 8	8 8	8 4	13	y	४ २	8 ,	द्र. ६		ž (m) Diri	2	2
ाम	त्र. प.	q. \bar{q}	ात	्राह्न वन-	्आः, र	ъ	कुम.	अस. अच	मा २	41 1	141-	সম -	आहा-	साका-
	प्र. अ		1	Ē	का १	ir.	कृश्रु-		अशु.	31.			अनाः	अना,
		अ			1					1				l
			1]	1	1	Ì]		1			L	

तेसिं चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पजत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पत्तेयसरीर-वणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णडंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दन्वेण छ लेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, मागाहवजुत्ता होंति अणागाह-वजुत्ता वां।

तेसिं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जनीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, पत्तेयसरीरवणप्तइकाओ, दो जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुईंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्माओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

उन्हीं प्रत्येकदारीर-वनम्पितकायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबधीआलाप कहने पर— एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, एक प्रत्येकदारीर-वनम्पितकायिक-पर्याप्त जीवसमास, वार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्धेचगित, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकदारीर-वनस्पित-काय, औदारिककाययोग, नपुंत्रकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे छहां लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं भव्यसिद्धिक, अभव्यमिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना . कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रत्येकदारीर-वनस्पितकायिक जीवें के अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकदारीर-वनस्पितकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संक्षापं, तिंथचगित, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकदारीर-वनस्पितकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुन ये दो अक्कान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं: भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिक,

नं. २२६ प्र	त्येकवनस्पतिक।यिक	जीयोंके	पर्याप्त	आलाप-
-------------	-------------------	---------	----------	-------

1 8 8 8 8 5 8	116 (द्र.६ २ १ १ १ २ . मा ३ म. मि. असं आहा साका
	£3.	अयु. 'अ. अना.

अणागारुवजुत्ता वा ी

एवं णिव्यत्तिपञ्जत्तस्य वि तिण्णि आलावा वत्तव्या । लद्धिअपञ्जत्ताणं पि एमो आलावो पत्तेयवणप्फइ-अपञ्जत्ताणं जहा तहा वत्तव्यो । जहा पत्तेयसरीराणं, तहा बादरणिगोदपिडिद्विदाणं पि वत्तव्यं ।

साधारणवणप्फइकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, अहु जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजमा, अचक्खुदंसण, दच्चेण छ लेम्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भविभिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो,

आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी ओर अनाकारोपयोगी दोते हैं।

इसीप्रकार निर्मृत्तिपर्याप्तक प्रत्येकदारीर-चनस्पतिकायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। लब्ध्यपर्याप्तक प्रत्येकदारीर-चनस्पतिकायिक जीवोंका एक अपर्याप्त आलाप प्रत्येकदारीर-चनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवोंके आलाप कहे हैं, कहना चाहिए। तथा, जिसप्रकार अभी प्रत्येकदारीर-चनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप कहे हैं, उसीप्रकारसे बादरनिगोद-प्रतिष्ठितचनस्पतिकायिक जीवोंके भी आलाप कहना चाहिए

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, नित्यनिगोद और चतुर्गानिनिगोद इन दोनोंके बादर और चतुर्म ये दें। दें। भेद तथा इन चारोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदले आठ जीवसमाम, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: चार प्राण, नीन प्राण: चारों संझाएं, निर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारण-वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, अंदारिकमिश्रकाययोग, अंद कामेणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमानि और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्चदर्शनः इन्यसे छहों लेह्याएं, भाषसे इन्ण, नील और कापोत लेह्याएं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिक,

नं. २२७ प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. उ	जी.	q .	मा	स.	ग.	₹.	का.	या.	वे.	क.	सा.	संय .	द.	ले.	म.	स.	सं।हा.	आ.	ਤ.
र मि. ऽ	₹ प्र. ¹ अ.	४ अ	₹	X	१ ति.	₹ ₩	ू जा	ર	• मयें•	8	ै २ कु म. कुश्रु.	१ अस	१ अच.	द्र. २ का शु. मा.३ अग्र.	ર મ. ઝ.	् १ मि.	१ अस.	२ आहा. अना	२ साका. अना

सागारुवजुत्रा होंति अणागारुवजुत्ता वांा।

तेसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाण, चनारि जीवसमासा, चनारि पज्जनीओ, चनारि पाण, चनारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फहकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेदो, चनारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दच्नेण छ लेस्मा, भानेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया; मिच्छनं, असण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुना होति अणा-गारुवजुना वां ।

मिथ्यात्व, असंक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-पर्याप्त, मृक्ष्मनित्यिनगोद-पर्याप्त, बादरचतुर्गति-निगोद-पर्याप्त और सक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्रुद्द्यांन, द्रव्यंस छहीं लेदयाएं; भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २२८ साधारण वनम्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप

ग. जी. प. प्रा. स. ग. इंका. यो. वे.क ज्ञा. सय. द. छे. भ स.सर्ज्ञ. अ. उ. १ ८ ४प. ४ ४ १ १ १ ३ १४ २ १ १ द्र.६ २ १ **१ २ २** भी. ४अ ३ ति.एके.वन. औ. २ हे कुम. असं.चक्ष. मा. ३ म.मि. असं. आहा साका. का.१ हे कुछु. अग्र. अना अना.

नं २२९ साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंक पर्याप्त आलाप.

गु.जी.प.प्रा.स ग.इं. का. यो. वं.क. ज्ञा. संगंद हे. म. स. सर्का आ. ड. १४४४४१११११४२१११२२ मि. ति.एके.वन. ओदा. - कुम. असं. अच. मा. ३म. मि. अस. आहा. साका. क कुझु. अज्ञ. अ. अना. तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, चतारि जीवसमासा चत्तारि अपज्जनीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अभंजमो, अचकखुदंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवभिद्धिया, मिच्छनं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

बादरसाधारणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चतारि जीवसमासा, चतारि पज्जतीओ चत्तारि अपज्ञत्तीओ, चतारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरसाधारणवणप्कइकाओ, तिण्णि जोग, णबुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दच्त्रेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपयांप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादाष्ट्रि गुणस्थान, बादरिनत्यिनगोद-अपर्योप्त, स्क्ष्मिनत्यिनगोद-अपर्योप्त, बादर-चतुर्गतिनगोद-अपर्याप्त और स्क्ष्मचतुर्गतिनगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्यचगित, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अझान, असंयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापीत और द्राक्क लेदयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापीत लेदयाएं: भृष्यसिद्धिक, अभ्रष्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

बाद्र साधारणवनस्पतिकायिक जीवांके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बाद्रनित्यनिगोद-पर्याप्त बाद्र नित्यनिगोद-अपर्याप्त बद्रचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त और बाद्रस्वतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमासः चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियांः चार प्राप्तियां, चार अपर्याप्तियांः चार प्राप्त, तीन प्राणः, चारों संक्षांपं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियज्ञाति, बाद्रसाधारणवनस्पति-काय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय. कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्चद्रदर्शन, द्रज्यसे

नं. २३० साधारण वनस्पतिकायिक जीवांके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी. प	, IR .	स ,	ग.	इं. व	ा.∤ यो	. वे	.] 略	्री हा-	संय.	द.	हे.	म-	स	स झि-	आ.	उ₌
1	8 8	₹.	8	१	2	१ २	 	18	२	8		द्र. २	२	5	1	ર	ર
मि.	अ	.		ति -	ا ا	औ.	मे∙¦,⊹	,'	कुम.	असं.	अच.	का.	ं म∙	मि -	अस.	आहा.	साका.
		İ			6 I	कार्य	i.	ı	कुष.	ļ		য়-	ж.			अना.	अना.
1						1			,			मा∙ ३			1		
							1	<u>i</u>		ļ 		अशु.					

णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^र।

तेसिं चेव पज्जताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जतीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्लगदी, एइंदियजादी, बादरसाधारण-वणष्कइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा"।

छहों लेश्याएं, भावसे रूप्ण, नील और कापोत लेश्याएं: भव्यिनिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक: माकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-पर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये दे जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों मंद्राणं, निर्यचगति, एकेन्द्रिय-जाति, बादरसाधारणवनस्पनिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दे अज्ञान, असंयम, अचश्रुदर्शन, दृज्यसे छहों लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्रिक, आहारक, साकारो-पर्योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २३१ बाहर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

ਹੁ.	जी-	प	प्रा.	सं	ग	₹.	का.	यो	वे.	क.	ह्या.	सय	द	ਲ.	भ.	स.	साहे.	आ.	उ. ∤
१	8	8	8	8	*	?	*	₹	9	X	3	*	*	द्र.६	٦ '	8	8	3	ર
मि.		ч.	₹		।त.	एक.	वन.	ओं. २ कार्म.१	<u>.</u> च		कुम. कुअर.	अस.	अच	भा∙३ अगु		ाम -			साका. अना.
!		अ.						.,,,,			2.3.			. ,	•		1	•(•(11	
-		1																	i

नं. २३२ बाहर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	प ्रा स.	ग.	₹.	का.	यो-	ं वे.	क	न्ना.	सय.	द.	े ले	₽.	स.	सहि,	आ.	उ.
१ २	8,8,8	१	१	₹.	.8	1	8	ે ર ⊦	१	_ १	द्र. ६	्र	9	१	2	
मि.		ति.	एके.	वन.	ओंदा.	नपु.		कुम.	अस.	अच	'सा. ३	म-	मि.	असं.	आहा.	सामाः
		1				į		[季 發.]	1		अशु•	अ.	1			अना.
	1 1 1	-		ļ	I	}					1	[]	i			

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, चतारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्यगदी, एइंदियजादी, बादरणिगोद-वण्फह्काओ, वे जीग, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्यु-दंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्या, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारु-वज्जता वा

एवं साधारणसरीरवादरवणप्पर्इणं पजत्तणामक्रम्मोदयाणं निण्णि आलावा वत्तव्या। लिद्ध-अपज्जत्ताणं पि एगा अपज्जत्तालावा वत्तव्या। मव्यमाधारणसरीरसुहुमाणं सुहुम-पुढवि-भंगो। णवरि चत्तारि जीवसमासा, सुहुममाहारणमरीरवणप्पर्दकाओ ति वत्तव्या। चउगदिणिगोदाणं साधारणमरीरवणप्पर्दकाइय-भंगो। निर्मि वादराणं बादरमाधारणमरीर-

उन्हीं बादर साधारण वनस्पितकायिक जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिश्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-अपर्याप्त और यादर चतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संबाण, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियज्ञाति, बादर निगोद वनस्पितकाय, ओद्दारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योगः नधुं-सक्वेद, चारों कपाय, कुमानि और कुश्रुत ये दो अञ्चान, असंयम, अचक्षुद्रश्नि, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेदयाणं, भावमे छुण्ण, नील और कापोत लेदयाणं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिश्यात्व, असंजिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले साधारणदारीर बादर वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त आर अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। लब्ध्यपर्याप्तक साधारणदारीर वनस्पतिकायिक जीवोंका भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए सभी सूक्ष्म साधारणदारीर वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप स्क्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंको आलापांके समान जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि जीवसमास अलाप कहते समय चार जीवसमास ' और काय आलाप कहते समय ' सूक्ष्म माधारणदारीर वनस्पतिकाय ' ऐसा कहना चाहिए। चतुर्गति निगाद वनस्पतिकायिक जीवोंके अलाप साधारणदारीर वनस्पतिकाय '

नं. २३३ बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

१	२	ß	₹	Х	*	*	*	२	2	1 8	3	2	₹ _	हे भ द्रद्र	۶	ą.	٦ -	उ. २
मि.		अ.			14.	48	পণ•	जा स कार्म.	15	,	ુક્ય. જ્ઞા.	अस -	अर्च	काः भः ग्रः,अ.	14	अस.	आहा. अना	साका. अना.
								1			9 5			भा ३				
									1		I			अ স্তু, i				
		ı				ı			Į	<u>i</u>	1	, ,						

वणप्पड्-भंगो । तेसि चेव सहुमाणं सभेदाणं साधारणमरीरसुहुमवणप्पड्काइय-भंगो । णविर चउगदिणिगोदो ति वत्तव्वं । एवं गिचणिगोदाणं पि, णविर एत्थ णिचणिगोदो ति वत्तव्वं ।

'तसकाइयाणं भण्णमाणे अतिथ चोहस गुणहाणाणि, दस जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चतारि पाण दो पाण एग पाण, चत्तारि मण्णाओ खीणमण्णा वि अतिथ, चत्तारि गदीओ, वेहंदियादी चत्तारि जादीओ, तमकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अतिथ, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अतिथ, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अतिथ, अह णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण,

स्पितिकायिक जीवोंके आठापोंके समान होते हैं। उन्हीं बादर चतुर्गित निगोद वनस्पितिकायिक जीवोंके आठाप बादर साधारणशरीर वनस्पितिकायके आठापोंके समान होते हैं। सामान्य पर्याप्त अपर्याप्त भेदसहित उन्हीं सुक्ष्म चतुर्गित निगोद जीवोंके आठाप साधारणशरीर सुक्ष्म वनस्पितिकायिक जीवोंके आठापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि साधारण शरीरके साथमें 'चतुर्गित निगाद दिना और कहना चाहिए। इसीप्रकार नित्यितिगोद साधारणशरीर-वनस्पितिकायिक जीवोंके भी आठाप होते हैं। विशेष बात यह है कि यहां पर 'नित्यितिगोद दिन पदको कहना चाहिए।

त्रसकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहन पर—चांदहों गुणस्थान. डीन्द्रिय, र्जान्द्रिय, चतुर्गिन्द्रय, असंक्षी पंचित्द्रय और संक्षी पंचित्द्रिय जीवोंक पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदने दश जीवसमास, छहां पर्याप्तियां और छहां अपर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राण, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, सार प्राण, दो प्राण, एक प्राण, चारों संक्षापं, तथा स्वीणसंक्षास्थान भी है, चारों गितयां, डीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, जसकाय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, नीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, आठों कान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहां

नं. २३४

त्रसकायिक जीवेंकि सामान्य आलाप.

			_																	₹.
1	5 2 0	rέd	١.	₹ o , o	४	. 8	R	8	914	₹	X	<	O	5	5 8		૬	4	ર	ર
		६ ३	T	९,७	, ,		31.	14.	नेय स	F.	÷				भा	६ म		स.	आहा	साका,
1		'4 q		८,₹	14		र्ना			<u>क</u>	145				अल "	य अ		अमं.	अना.	साका. अना.
		43	Ŧ.	७,५	-35		चन्.				4)							अनु.		यु. उ.
				₹,४			पचे													
_			,	४,२,१																

दन्त-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिणिणो असिण्णणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

तिसं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोह्स गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ ग्वीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदी, वेहंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकमाओं वि अत्थि, अद्व णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भाविहि छ लेम्मा अलेस्मा वि अत्थि, भवसिद्विया अभवसिद्विया, छ सम्मत्तं, सिण्णो अमिण्णणो णव मिण्णणो णव असिण्णणो वि अत्थि, आहारिणो

लेखाएं तथा अलेखास्थान भी हैं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संज्ञिक, असांज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंन रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगींसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चाँदहों गुणस्थान, डीन्ट्रिय, जीन्ट्रिय, चतुरिन्ट्रिय, असंक्षी पंचेन्ट्रिय और संक्षी पंचेन्ट्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण. चार प्राण और एक प्राण; चारों संक्षाण तथा क्षीणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्ट्रियजानिको आदि हेकर चार जातियां, त्रमकाय. अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योगोंको छोड़कर शेष ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतंबद्दर्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, आठों क्षान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान

नं. २३५ त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

J	_{ग_जी} .	q.	श्रा	मं । ग	₹,	का	यो	<u>व</u>	क	≨∏	सय	द	ल भ	स	साई	आ । उ. ।
23	8 4	ξ	\$ 0	6 6	8	2	११ स ४	₹	¥	<	৩	8	ड़. ६ र	Ę	3	2 2
	द्वी.प.	S,	8	HE .	र्जा	¥#.	व. ४	F	<u>بـ</u>				मा. ६ म		सं.	आहा. साका-
1	त्री.प		<	ह्यां <u>व</u>	र्त्रीः	W.	ओ. १	अपना.	अक्षना				अले• अ		अस.	उ नना अना.
1	चतु,पः		v	30	7.		व. १		m						अनु.	यु, उ.
	सं.प•	-	Ę	1	٩٠'		आ. १									
L	अस.प.	1	४ १	l			अयोग									<u> </u>

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा।

ंतिसं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीणमण्णा वा, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग चत्तारि वा, तिण्णि वेद अवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ

है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार उप-योगोंसे गुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विश्लेपार्थ - त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलापोंका वर्णन करते समय उन्हें अनाहारक भी कहनेका कारण यह है कि स्योगकेवली गुणस्थानमें केवलिसमुद्धातके प्रतर और लोकपूरणरूप अवस्थाओंमें नोकर्म वर्गणाओंके नहीं आनेके कारण जीव अनाहारक तो होता है परंतु उस लमय पर्याप्त नामकर्मका उद्दय और वर्नमान दारीरके पूर्ण होनेके कारण वह पर्याप्त भी है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त अवस्थामें भी अनाहारकता बन जाती है। इन्द्रिय मार्गणामें पंचेन्द्रिय मार्गणाके आलापोंका कथन करते हुए पर्याप्त आलापोंका कथन करते समय इसीयकार अनाहारक कहा है। वहां पर भी अनाहारक कहनेका ऊपर कहा हुआ कारण जान लेना। इसीयकार दूसरे स्थलोंमें भी जानना चाहिए।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर — मिथ्यादृष्टि, सासा-द्रतसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, द्रोन्द्रिय, जीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंबी और संबी पंचेन्द्रिय जीवासंबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और दो प्राण; चारों संबाणं तथा श्लीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, द्रीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, जसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी तीन योग अथवा चार योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावाध

नं. २३६ प्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्रगु⊹्जीः पः	श्रा.	से ।	ग⊹ इं.	का.	यो	व.	क.	ह्या	संय.	₹.	ੋ ਲੇ.	म.	₽.	सिश.	সা-	₹.
५ ५ ६ अ.	৩	8	8 8	1	8	₹	8	Ę	8	8	द्र. २	3	٤٩	2	3	२
मि-द्यी-अ-५ ,,	૭	1	द्वी.	h	आ मि. व.मि	عا	<u>-</u>	विमं	अस.		का.	म∙	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा. त्री. ,,	Ę	श्रीणसं	र्गाः	7	व.मि	अव	असम्भा.	मनः	सामा		जु.		सा.	असं.	अनी.	अना.
अ. च ,,	લ્	30	च.		आःमिः	1.	139	विनाः	छेदो.		भा.६		ओप	अनु.	100	यु. उ.
प्र. अ. ,,	8		ų٠.	ĺ	कार्म.				यथा.				क्षा.			
स. (सं. ,,	ર	1		1	l								क्षायो.]		1

वा, छ णाण, चत्तारि संज्ञम, चत्तारि दंमण, दन्त्रेण काउ-सुक्किलेसा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएणुवजुत्ता वा ।

ंतमकाइय-मिच्छाइद्वीणं भणामागे अत्थि एयं गुणहाणं, दम जीवसमामा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जत्तीओं, पंच पञ्जत्तीओं पंच अपज्जत्तीओं, दम पाण मत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण मत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि

और मनःपर्यय क्रानके विना रोप छह क्रान. असंयम, सामाधिक, छेदे।पस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्छ छेदयाएं, भावसे छहें। छेदयाएं: भव्यिसिद्धिक. अभव्यिसिद्धिक: सम्यग्मिथ्यात्वके विना रोप पांच सम्यक्त्य, संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभय स्थान भी है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, आनाकारोपयोगी तथा देनों उपयोगोंसे गुगपत उपयुक्त भी होने हैं।

विशेषार्थ — यहां पर विकल्पने नीन अथवा चार योग बनलाये हें इसका कारण यह है कि जन्मके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहर्नपर्यंत औदारिकमिथ्र और विक्रियिकमिथ्र थे दो योग होते हैं और विष्रहगतिमें कार्मणकाययोग होता है इसलिय ये नीनें। योग अपर्याप्त अवस्थामें बन जाते हैं। परंतु आहारकमिश्रकाययोग आहारकशारिकी अपेक्षा अपर्याप्त अवस्थामें होता तो अवश्य है। फिर भी औदारिकशरीरकी अपेक्षा वहां पर्योप्तता भी है, इसलिये जब छठवे गुणस्थानमें होनेवाल आहारकशरीरकी अपेक्षा अपर्याप्तताकी अविवक्षा कर दी जाती है तब तीन योग कहे जाते हैं, और जब उसकी विवक्षा कर छी जाती है तब अपर्याप्त अवस्थामें चार योग भी कहे जाते हैं।

त्रसकायिक मिथ्याद्यप्ट जीवें के सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्यप्टि गुण-स्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, त्रतृरिन्द्रिय, असंबी पंचिन्द्रिय और संबी पंचिन्द्रिय जीवमंबन्धी पर्याप्त अपर्याप्तके भेदसे दश जीवसमामः संबी पंचिन्द्रिय जीवेंकि छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां, असंबी पंचिन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवेंकि पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां, संबी-पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंबी-पंचेन्द्रियोंके नी प्राण

न. २३७ नसकायिक मिध्यादष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

ग्.	जी-	٩.	्राः	₩.	at-	₹.	का.	यो	वे.	क	ह्या	सय.	् द.	i ^ਲ .	भ.	म.	सिन्नि	आ.	3.
₹			20,0														ે ર	2	२
1	द्वी. २	1				āl.	H.	आर्गः.			अज्ञा	अंग.	चक्षु.	मा-६	14	मि.	स	आहा.	साका.
	त्री र	५प.	۷,۶			र्जा	रिष	विना.			١.,		अच		अ.		अस	अना.	अना.
	चतु.२	৭ঝ.	છ, પ			च.													
	असं २		ξ,γ			q.													
	स. २															İ			
_				- {				I											

सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्गाण, असंजम, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्याओ, भविसिद्धिया अभविसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो अपण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेमि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, पच जीवसमासा, ल पजनीओ पंच पजनीओ, दम पाण णव पाण अहु पाण मन पाण छ पाण, चनारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चनारि जादीओ, तमकाओ, दम जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंमण, दव्य-भावेहि छ लेस्मा,

ओर सान प्राण, चनुरिन्द्रियके अरु प्राण और छह प्राण, जीन्द्रियोंके सान प्राण और पांच प्राण, छीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण चारों संझाएं. चारों गतियां, छीन्द्रियजातिकों आदि छेकर चार जातियां, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकि शिक्षकाययोगके विना तरह योग, नीनों वेद, चारों कपाय, नीनों अक्षान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं छेद्र्याएं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, छीन्द्रिय, जीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, मंक्की और असंक्षी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, संक्षी पंचेन्द्रियोंके छहां पर्याप्तियां, असंक्षी पंचेन्द्रिय और विकले न्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां: संजी पंचेन्द्रियोंने लेकर छीन्द्रिय जीवों तक क्रमसे दश प्राण, नै। प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, और छह प्राणः चारों संजाएं, चारों गीतयां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग तीने। वेद, चारों कपाय, तीनों अक्कान, असंयम, चक्ष

नं. २३८ त्रसकायिक मिथ्याद्यप्रि जीवाके पर्याप्त आलाप.

ग.	जी.	P	न्रा.	सं.	₹,	Ę	का	यो	वे	奪.	ह्या.	मय.	₹.	ે હ	भ	स.	स्राह्म.	आ.	₹.
१	५३। प	٠ Ę	90	8	Х	6	۶	9 0	₹	8	₹	8	ર	13	ક ર	ę	२	۶	२
											भज्ञा								साका-
	च∙,		1					व् ४				İ	अच.		अ.		अस.		अनाः
	अस.,		9			च∙		ओं १				1			1		1 1		
·	्स.,	,	٤			प.	- 1	a. '		1				1	1	[1		

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेहंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां

और अचभु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, संक्रिक, असंक्रिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्ट् जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, ड्रान्ट्रिय, जीन्ट्रिय, चतुरिन्ट्रिय, असंक्षी पंचेन्ट्रिय और संक्षी पंचेन्ट्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, संक्षी पंचेन्ट्रियोंक छहों अपर्याप्तियां, असंक्षी पंचेन्ट्रिय और विकलेन्ट्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संक्षी पंचेन्ट्रियोंके छहों अपर्याप्तियां, असंक्षी पंचेन्ट्रिय और विकलेन्ट्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संक्षी पंचेन्ट्रियसे लेकर ह्रान्ट्रिय जीवोंतक कमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण और चार प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, इिन्ट्रिय-जातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कषाय, कुमिन और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रब्यसे कापोत और ग्रुक्त लेक्यापं, भायसे छहों लक्ष्यापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अना-द्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २३९ त्रसकायिक मिध्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. जी. प. था. स. ग. इ का यो. व क. झा. संय.	दः ले. म [स. सहि. आ, उ.
१ ५ ६अ. ७ ४ ४ ४ १ ३ ३ ४ २ १	र द्र. २ १ २ २ २
	चक्षु का. भ- मि सं आहा साका.
	अच. शु. अ.। असं अना, अना,
चतु । चतु कार्म.	भा-६
असं .,, ४ पंचे. सं ,,	
[7] 22	· · ·

सासणसम्माइद्विष्पद्रुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मृलोघ-भंगो।

अकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणहाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीद-पज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, चदुगदिमदीदो, अणिदिओ, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवलदंसण, दव्व-भाविह अलेस्सा, णेव भविसिद्धिया णेव अभविसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति'ं।

एवं तसकाइयणिव्यत्तिपज्जत्तस्म मिच्छाइद्विष्पद्वृडि जाव अजोगिकेविले ति मुलोघ-भंगो ।

तसकाइय-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, पंच जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण,

त्रसकायिक सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंसे ठेकर अयोगिकेवली जिन तकके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए।

अकायिक जीवोंके आलाप कहने पर—अनीत गुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत प्राण, श्रीणसंक्षा, अतीत चतुर्गाति, अतीन्द्रिय, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकपाय, केवलक्षान, संयम, असंयम और संयमासंयम इन नीनों विकल्पोंसे विमुक्त, केवलद्दर्शन, द्रव्य और भावसे अलेश्य, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, श्रायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

इसीप्रकार त्रसकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे हेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मृल ओघालापोंके समान जानना चाहिए।

त्रसकायिक रुष्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, हीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संशी और असंशी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीव-समास, संशी पंचेन्द्रियोंके छहों अपर्याप्तयां, असंशी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संशी पंचेन्द्रिय संशी पंचेन्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संशी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रियतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण,

नं. २४०	अकायिक जीवोंके आलाप.	
अतीतम्, ।स्य अतीतम्, ।स्य अतीतमः, स्य श्रीवतः, ।स्य अतीतमः, ।स्य अतीतमः, ।स्य अतीतमः, ।स्य		हे. म. स. संबि. आ. उ. १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १

चत्तारि सण्णाओं, दो गदीओं, बीइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओं, तसकाओं, वे जोग, णवुंसयवेदों, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमीं, दो दंसण, दन्बेण काउ-सुक्कलेस्साओं, भावण किण्ह-णील-काउलेस्साओं; भवसिद्धिया अभवसिद्धियां, मिन्छत्तं, सिण्णणो असिण्णणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागास्वज्ञता होंति अणागास्वज्ञता वांं।

एवं कायमग्गणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण अणुवादो मूलोघ-भंगो। णवरि विसेसी तेरह गुणहाणाणि, अजोगि-गुणहाणं अदीदगुणहाणं च णस्थि, तदो जाणिऊण मृलोघालावा वत्तव्या।

मणजोगीणं भण्णमाणे अन्थि तेरह गुणहाणाणि, एगो जीवममासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण । केई विच-कायपाणे अवर्णेति, तण्ण घडदेः तेसिं मित्ति-मंभवादा ।

पांच प्राण और चार प्राणः चारों संझाएं, तिर्यंच और मनुष्य य दो गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकप्रिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोन और शुक्क लेश्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई।

योगमार्गणाके अनुवादसे आलापोंका कथन मृत ओघ आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि यहां पर तेरह ही गुणस्थान होते हैं, अयोगिगुणस्थान और अतीतगुणस्थान नहीं होता है सो आगमाविरोधसे जानकर मूल ओघालाप कहना चाहिए।

मनोयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण होते हैं। किनने ही आचार्य मनोयोगियोंके दश प्राणोंमेंसे वचन और काय प्राण कम करते हैं, किन्तु उनका वैसा करना घटित नहीं होता है, क्योंकि, मनोयोगी जीवोंके वचनवल और काथबल इन दो प्राणोंकी शक्ति पाई जाती है,

नं. २४१ त्रसकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीर्वोके आलाप.

य.	जी.	q.	য়া	स.	η,	₹.	का.	यो-	वे.	क	्रहा.	सय.	₹.	ਰ.	स.	स.	माज्ञ.	आ.	₹.	i
1	4		9		3	X	8	3		8	ર	۶	ર	द्र. २		१	3	२	२	l
मि.	द्वी. अ,	अ.	U		ति.	द्वी.	br	ओ.मि.	F.		कुम.	अस.	चक्षु.	का	ं भ.	मि-	स.	आहा.	साका	į
		4			4.	त्री.	ir.	ओ.मि. कार्म	F		बुः ध		अच.	য়.	अ		अस.	अना.	अना.	
	चतु. ,,	अ.	ų			च					- 5			भा. ३						ı
	अस.,,		8			ġ.								अग्र.				1		l
1	सं•	,	1									ı						ļ <u>'</u>		

वचि-कायवलणिमित्त-पुग्गल-खंधसम अत्थितं पेक्सिअ पञ्जतीओ होंति ति सरीर-वचि-पज्जतीओ अत्थि । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अन्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो णेव सिण्णिणो णेव असिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागोरिहं जुगवदुवजुत्ता वा

मणजोगि-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

इसिलिये ये हो प्राण उनके बन जाने हैं। उसीप्रकार वचनवल और कायबल प्राणके निमित्तमूत पुड़लम्कन्धका अस्तित्व देखा जानेस उनके उन्त दोनों पर्याप्तियां भी पाई जाती हैं इसीलिये उन्त दोनों पर्याप्तियां भी उनके बन जाती हैं। प्राण आलापके आगे चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेत्द्रियजाति, जसकाय, सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उल्पाननोयोग और अनुभयमनोयोग ये चार मनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लक्ष्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहीं सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन उपयुक्त भी होते हैं।

मनोयोगी मिथ्याद्यप्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक भिथ्याद्यप्टि गुणस्थान, एक मंज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सङ्गापं, चारों गितयां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दो

नं. २४२ मनोयोगी जीवोंके आलाप.

1															आ	उ. │
१३ अयो. स	٠ * ا	Ę							۷	ড	¥				8	२
विनाः	1.4.		नस.	<u>व</u> ्	यस	मना.	भव्स	अक्षा.				मा.६	ન. ગ	स. अनु.	भार्।.	साका. अना.
			35				(1)	क						. 55		यु₌ उ.
I			i	ı						_						1

दन्व-भावेहि छ रुस्साओ, भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

मणजोगि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चतारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, (तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दे। दंसण, द्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्जता होंति अणागारुवज्जता वां।

मणजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो,

द्शीन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी सासादनसम्यग्दि जीवोंके आछाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, तीनों वद, चारों कपाय, तीनों अक्कान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेदयापं, भव्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादिए जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादिए गुणस्थान.

नं, २४३ मनोयोगी मिध्याद्यप्र जीवेंकि आलापः

गृ.जी∙	प	भा.	स	al.	\$	का	यो.	वे	ক. হা	सय.	₹.	ਰੰ.	भ.	स	मिन्नि	आ	ु उ. ।
१ १ मि.सं.प	Ę	१०	ጸ	8	१ पचे	१ त्रस	४ ⁻ मनो.	R	<i>ই</i> ় ३ সলা	१ अम	२ चक्षु.	द्र ६ भा∙ ६	२ भ	्र मि.	, म.	१ आहाः	२ साकाः अनाः

नं. २४४ मनोयोगी सासादनसम्यग्टा है जीवोंके आलाप.

١	गु.	जी.	٩.	प्रा	स	11	इं.	क ′	यो.	व.	4 5	ज्ञा.	सय	द.	ਰੌ. ਬ	Ŧ	म.	माने	आ	ਰ.
-	१	*	Ę	१०	б	б	2	8	૪	₹	Х	-	y	ર	द्र. ६	\$	१	*	8	ર
		स. प.							मनो.						मा. ६ म					

छ पजिताओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय,) तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणिहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

"मणजोगि-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों बेद, चारों कपाय, तीनों अक्षानोंसे मिश्चित आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेदयाएं, भ्रव्यसिद्धिक, सम्यग्निथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाप, चारों गतियां, पंचित्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेदः चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावस छहों लेखपएं, भव्यसिद्धिकः औपश्रामिक, श्लायिक और श्लायोपश्रामिक ये तीन सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

१ कोष्टकान्तर्गतपाठः प्रतिष् नास्ति ।

नं, २४५

मनोयोगी सम्याग्मिश्याद्यष्टि जीवींके आलाप.

ग.	∫ जी∙	्ष-∤प्रास-∣ग	इ. का.	यो. वे∣क.,	्रहा₊ सय	द. ह	म. ्म. स क्कि.	आ. ु उ.
۶	9	E 180 8 6	9 9 3	8 3 8	રૂ	२ द.६	>	१२
<u>ط</u>	स. प	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	म नि	ৰে ি	न्नान अस	चक्षुः माः ६	म सम्य सं	आहाः साकाः
H.			जी ची		₹		1	ं अनाः
1	1	,	1	1 1	अज्ञा.	F	l I	1
	1	1 1 1		_ ,	मिश्र.		<u> </u>	

नं. २४६

मनोयोगी असंयतसम्यग्दि जीवोंके आलाप

١	गु.	जी.	Ч.	ग्रा.	₩.	ग.	ŧ	का	्यो	वे.	क	ह्या.	संय.	₹.	ð	भ	स.	सबि.	आ	₹.
	*		ξ	80	R	x	2	8	8	ર		-		_	द्र. ६			,		ર
	अवि	सं. प.					<u>.</u>	±.	मन्।				असं.		भा ६	म.	ओ	सं	आहा	साका.
							Ď,	14				श्रुत.		विना			क्षा.			अना.
1												अव.	1				क्षायो.	1	ı	
- {			_	1	t				1	1							1	1 .	l 	

होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-मंजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओं जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्माओ, भावेण तंउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, निण्णि संजम, निण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्सा, भावेण नेउ-पम्म-सुक्कलेम्साओ; भवसिद्धिया, निण्णि सम्मत्तं,

पयोगी होते हैं।

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्थचगित और मजुष्यगित ये दो गितयां, पंचिन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमें छहों लेह्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेह्याएं, भव्यसिद्धिक, औपश्चिमक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगो प्रमत्तसंयत जीवांके अलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संवाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिक चार ज्ञान, सामायिक, छेद्रीपस्थापना और परिहारविद्युद्धि य तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे छहीं छेदयाएं, भावसे तेज, पद्य और द्रुद्ध छेद्रयाएं: भव्यिसिद्धिक, आपरामिक, क्षायिक और क्षायोपश्चिक

मं २४७ मनोयोगी संयतासंयत जीवींके आलाप.

:	ij	સાં	q.	्रा.	स	ग	₹.	का.	यो.	व.	죡.	ज्ञा.	स्य.	द∶	ਲੇ.	म-	स.	साज्ञ	आ	₹.
1	8	1	Ę	10			_	۶							द्र. ६			8	8	2
١,	:	F. 9.				ति	पचे.	त्रस.	मना.			माति -	देश	के.द	मा ३	म•	आप	स.	आहा.	साका.
ĥ	3	-		ŀ		म.						श्रत -		विना-	ग्म.		क्षा.			अना.
												अव.			3		क्षायो			- 1
ı				ł																- 1

सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

मणजोगि-अप्पमत्तसंजद्प्पहुडि जाव सजोगिकेविल ति ताव मूलोघ-भंगो।
णविर चत्तारि मणजोगा वत्तव्या। सजोगिकेविलस्य सम्मणजोगो असम्रमोसमणजोगो
इदि दो मणजोगा वत्तव्या। सम्मणजोगीणं मिच्छाइहिष्पहुडि जाव सजोगिकेविल ति
ताव मूलोघ-भंगो। णविर सम्मणजोगो एको चेव वत्तव्ये। एवमसम्मोसमणजोगीणं पि,
णविर असम्मोसमणजोगो एको चेव वत्तव्ये।

मोसमणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि वारह गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणमण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, मोसमणजोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि

ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मनोयोगी जीवेंकि आलाप मूल ओघालापोंके समान ही हैं. विदोष बात यह है कि योग आलाप कहते समय बारहवें गुणस्थानतक चारों ही मनोयोग कहना चाहिए। किन्तु सर्यागिकेवलीके सत्यमनो-योग और असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोग ये दो ही मनोयोग कहना चाहिए।

सत्यमने|योगियोंके आलाप मिथ्यादि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मूल ओवालापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक सत्यमने।-योग आलाप ही कहना चाहिए। इसीप्रकारसे असत्यम्या अर्थात् अनुभय मने।योगियोंके भी आलाप होते हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक असत्यम्या मनोयोग आलाप ही कहना चाहिए।

मृषामनोयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्राएं तथा क्षीणसंब्रास्थान भी है। चारों गतियां, पंचन्द्रियजाति, जसकाय, मृषामनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है।

नं. २४८ मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

1	गु.ं जी.	प⊷प्राः,}र	स ग.	इं. का.	यो.	वे.∤क.	ह्या-	्संय.	₹.	लं.	म.	स-	सि हि	आ.	ਰ.
	१	ξ ξ ο	४ १	8 8	R	3 8	8	₹	₹	5. €		3	2	y	ર
	स. प. इ.		्।म∙्	्म च	मनोः				के.द.		म.	ऑप.	स.	आहा.	साका.
ŀ	-	,	1	7			श्रुत.	छदा.	विनाः	गृस.		क्षा.	,		अना.
ı			i			1	अव.	परि.				क्षाया.			
l			i	1			मनः				ı	l	í I		_

कसाय अकमाओ वि अत्थि, केवलणाणेण विणा मत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दन्त्र भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, माण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

मोसमणजोगीणं मिच्छाइड्डिप्पहुांडे जाव खीणसण्णाओं ति ताव मणजोगि-भंगो। णवरि एको चेव मोसमणजोगो वत्तव्यो। एवं सचमोसमणजोगीणं वि वत्तव्यं।

विजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ पजनीओ पंच पजनीओ, दस पाण गव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण, मण-सरीर-पजनीहिंतो उप्पण्णसत्तीओ सरीर-मणबलपाणा उचंति । ताओ वि उप्पण्णसमयदो जाव जीविदचरिमसमओ ति ताव ण विणस्मंति । जेण मण-विच-कायजोगा पाणेसु ण गहिदा

चारों कषाय तथा अकपायस्थान भी है। केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहीं सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मृपामनायोगी जीवोंके मिथ्यादि गुणस्थानसे लेकर शीणकषाय गुणस्थान तकके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक मृषामनोयोग आलाप ही कहना चाहिए। इसीप्रकार सत्यमृपामनोयोगियोंके भी आलाप कहना चाहिए।

वचनयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, वीन्द्रिय, वतुरिन्द्रिय, असंबी और संबी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: संबी पंचेन्द्रियसे लेकर डीन्द्रिय जीवोतक कमशः दशों प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छह प्राण होते हैं। मनःपर्याप्ति और शरीरपर्याप्तिसे उत्पन्न हुई शक्तियोंको मनोबलप्राण और कायबलप्राण कहते हैं। व शक्तियां भी उनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर जीवनके अन्तिम समयतक नष्ट नहीं होती हैं। और जिसकारणसे मनोयोग, वचनयोग और काययोग प्राणोंमें नहीं ग्रहण किये गये हैं, इसलिये. वचनयोगियोंक वचनयोगसे निरुद्ध अर्थात् युक्त अवस्थाके होने पर भी दशों

नं. २४९

मृषामनोयोगी जीवोंके आलाप.

∫ गु.	ज ी,	प श्रा	स, ग इ	का	यो.	व कि.	ह्या.	सय.	द.	ಶ,	भ	स.	सिंहा.	आ.	उ.
9 २ सर्थ	_ . १ ⊩स.प	1 -	8 8 9			ै ३ ४ •	कं.झ	v		द्र. ६ । मा. ६		Ę	१ स	१ आहा.	२ साका.
अया विन			d	अस		अकृत	वना विना		विना		अ. ∖				अना.
ļ						1				1			_		

तेण विचजोग-णिरुद्धे वि दस पाणा हवंति । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि विचजोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अन्थि, चत्तारि कसाय अकमाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंमण, द्व्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो अमिण्णिणो णेव मिण्णिणो णेव अमिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा मागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

विजोगि-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, पंच जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण मत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि विचिजाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-

प्राण होते हैं। प्राण आलापक आगे चारा संक्षाएं तथा क्षीणसंक्षास्थान भी है। चारों गितयां, द्वीनिद्रयज्ञातिको आदि लेकर चार ज्ञातियां, जसकाय, चारों वचनयोग, तीनों बेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों क्षान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी म्थान होता है: आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वसनयोगी मिथ्यादि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, हीन्द्रिय जीवोंके लगाकर संक्षी पंचेन्द्रिय तकके जीवोंकी अपेक्षा पांच पर्याप्त जीवसमासः छहीं पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सान प्राण और छह प्राण: चारों संक्षापं, चारों गितयां, हीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, प्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इस्य

नं. २५०

वचनयोगी जीवोंके आलाप.

ग.	र्जा	p (प्रा	म्.	ग	₹.	का	यो.	वं	क	श्रा.	संय.	द		भ	₩.	साज्ञ.	आ	₹.
१३	وم	Ę	80	8	8	X	۶	8	3	¥	<	ø	8	द्र ६	4	Ę	3		ર
अयो	द्वी प	4	९	r.		zí۱	ь·	वच .	Ė	-				मा. ६	भ		स	आहा.	साका-
विनाः	त्री.प-		c	क्षीणस	I	द्वा संह	ir		अप्रग	अक्ष्या					3[अस.		, अना.
	चतु.पः		ø	80.	1	च,				(O)							अनु.	•	यु. उ.
	असं.प.		Ę			٩.													'
	सं.प.				į														1

भावेहि छ रेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ै।

सासणसम्माइद्विष्पहुि जाव सजोगिकेविक त्ति ताव मणजोगीणं भंगो । णविर चत्तारि विचिजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेविकस्स सचविचिजोगो असम्मोसविचिजोगो च भविर । सचविचिजोगस्स सचमणजोग-भंगो । णविर जत्थ सचमणजोगो तत्थ तं अवणेऊण सचविचिजोगो वत्तव्वो । मोसविचिजोगस्स वि मोममणजोग-मंगो । णविर मोसविचिजोगो वत्तव्वो । एवं सचमोसविचिजोगस्म वि वत्तव्वं । असचमोसविचिजोगम्स विचिजोग-भंगो । णविर असचमोसविचिजोगो एक्को चेव वत्तव्वो ।

और भावते छहों छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्रिकः आसंक्रिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसं लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके वचनयोगी जीवोंके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि वचनयोग आलाप कहते समय चार वचनयोग कहना चाहिए। सयोगिकेवली जिनके सत्यवचनयोग और असत्यमृषावचनयोग ये दो ही वचनयोग होते हैं। सत्यवचनयोगके आलाप सत्यमनो-योगके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि आलाप कहते समय जहां पहले सत्यमनोयोग कहा गया है वहां उस निकाल करके उसके स्थानमें सत्यवचनयोग कहना चाहिए। मृषावचनयोगके आलाप भी मृषामनोयोगके आलापोंके समान होते हैं। विशेषता यह है कि मृषामने/योगके स्थान पर मृषावचनयोग कहना चाहिए। इसीप्रकारसे सत्यमृषावचनयोगके भी आलाप कहना चाहिए। असत्यमृषावचनयोगके आलाप सत्यमृषा-मनोयोगके आलापोंके समान जानना चाहिए। असत्यमृषावचनयोगके आलाप वचनयोग-सामान्यके आलापोंके समान होते हैं। विशेषता यह है कि असत्यमृषावचनयोग आलाप कहते समय एक असत्यमृषावचनयोग ही कहना चाहिए।

नं. २५१ वचनयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

1	गु.	जी प	प्रा.	सं.	η_	₹.	का.	यो-	वे.	죡.	ज्ञा.	(संय.	द.	ਲੋ.	म.	स∙	सांब-	आ.	ु उ. ∣
ſ	१	५द्वी.प ६	80	४	X	ሄ	2	R	ર્	Х	3	8	1 2	द्र. ६	२	8	2	۶	२
1	मि•	श्री- 🕫 ५	8			द्वी	त्रसः	वच-			अज्ञा-	अस.	, चक्षु	भा-६३	म ∙	मि.	ंस.	आहा.	साका.
1		च. √	6	. 1		त्री.			I				अच.		अ.ं		असं.		अना.
Į		असं. ,,	v	1		च∙						ĺ		i l			,		
Į		सं. ,,	₹	l		पं.	'		1	1		l 		<u> </u>			1		

कायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, चोहस जीवसमासा, छ पज्जन्तीओ छ अपज्जन्तीओ पंच पज्जन्तीओ पंच अपज्जन्तीओ चत्तारि पज्जन्तीओ चत्तारि अपज्जन्तीओ, दम पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि मण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, सत्त कायजोग, निण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अहु णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ छस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ं।

काययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, चौदहीं जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां छहाँ अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां चार अपर्याप्तियां हिं। आण, सात आण; नें। आण, सात आण; आठ आण, छह आण; सात आण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण तीन प्राण; चार प्राण और दो प्राण; चारों संझाएं तथा क्षाणसंझास्थान भी हें, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञातिकें. आदि हेकर पांचों जातियां, पृथिवी-कायके। आदि हेकर छहीं काय, सातों काययोग तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हें, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी हें, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं हेर्यापं, भव्यसिद्धित, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षी और असबी इन दोनों विकल्पोसे रहित भी स्थान है; आहारक, अनाहारक, साकारेपयोगी, अनावारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगीने उपयुक्त भी होते हैं।

. 4	
_	2010
n.	~~~

काययोगी जीवोंके आलाप.

1 7	J.	जी	ч.	্যা	걕.	41.	₹	,ŦI.	यो	à.	क	झा	मय.	द.	€.	म.	स.	माञ्च	आ	उ.	Į
1	₹	१४	इप	,0,6	૪	6	4	1:	ً و أ	٦.	ĸ	2	v	1	₹ 6	2	ર્	ર	3	२	
अय			६ अ	8,0	l_				काय.	-	ا . ظ	l	1		भार	भ		मं .	आहा	साका,	ĺ
विन	₹1.		√ q	८,६	आणस					뷿	अक्र		i i			Я.		अस	अना	अना	
			' স.	ار. نارون	কৈ					1			1 1					अनु		यु∙ उ.	ĺ
			४प.	ξ,γ						í			1 1								
1			४अ.	४,३									1 1					1			
				٧, २									1 1			- 1		ı			

तेसिं चेत्र पज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि तेरह गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जतीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दम पाण णव पाण अह पाण मत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि मण्णाओ कीणमण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एहंदियादी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, वेउवित्रयमिम्मेण विणा छ जोग तिण्णि वा, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अक्रमाओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त संजम,चत्तारि दंमण, दव्व-भाविह छ लेम्मा, भवमिद्धिया अभवमिद्धिया, छ सम्मत्तं, मण्णिणो अमण्णिणो णेव मण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो आहारिणो चेव वा, मागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्ञत्ता वा मागार-अणागारिह जुगवदुवज्जता वा

उन्हीं काययोगी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिक तेरह गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण. सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और चार प्राण: चारों संहाएं तथा क्षीणसंहास्थान भी है। चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों क.य. वैकियिकमिश्रकाययोगके विना छह काययोग अथवा औदारिक-काययोग, वैकियिककाययोग और आहारककाययोग ये तीन काययोगः तीनों येद तथा अपगतिवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों जान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाणं, भव्यासिडिक, अभव्यासिडिकः छहों सम्यक्त्य, संजिकः असंविक तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है आहारक, अनाहारक अथवा आहारक ही होते हैं। साकाराययोगी, अनाकारोपयोगी और साकार-अनाकार उपयोगोंसे युगपत उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ — ऊपर काययोगी जीवोंके पर्याप्तकालमें जो विकिथिकमिश्रके विना छह अथवा तीन योग बतलाये हैं। इसका कारण यह है कि छठवें ओर तरहवें गुणस्थानमें आहारकसमुद्धात और केवलिसमुद्धातके समय भी विवक्षाभेदसे जब पर्याप्तना स्वीकार कर

नं.	হা43	काययोगी जीवोंके पर्याप्त	आलाप.
न.	445	काययागा जावाक प्रयाप्त	आला

ागु-ाजी-पत्रांम-ग	≰.का यो वे.क ।	ण मिय द ल स	म- माझी आ [उ.
१३ । ७ । ६ १० ४ ४	. 8 : 3 6	C 1 655 .	6 4 2 2
अयो पर्याः	् । वेगमः - ⊨	मा ६ म	स. आहा. साकाः
विनाः ४ ८ 🖺	त्रिना में हैं	अ	अस. जना अना
300	अय		जन. अथ [ा] यु उ.
-	₹		*
	_		आहा.

ेतिमें चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच' गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चनारि अपज्जनीओ, सन्त पाण सन्त पाण छ पाण पंच पाण चनारि पाण तिण्णि पाण दे। पाण, चनारि मण्णाओ खीणमण्णा वा, चनारि गदीओ, एइंदियजादि आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चनारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि, चनारि कमाय अकमाओ वा, छण्णाण. चनारि संजम,

ली जाती है तब उसकी अपेक्षा पर्याप्त अवस्थामें भी छहां योग बन जाते हैं और जब अपर्याप्तता मान की जाती है तब पर्याप्त अवस्थामें औदारिक, आहारक और विकायिक ये तीन योग ही बनते हैं। इसीप्रार आहारमार्गणांक कथनमें पहले आहारक और अनाहारक ये दो आलाप बतलाये हैं अनन्तर एक आहारक आलाप ही बतलाया है इसका भी कारण यह है कि तेरहवें गुणस्थानमें केवलियमुद्धातंक समय भी पर्याप्तत के स्वीकार कर लेनेसे आहारक और अनाहारक दोनों आलाप बन जाते हैं। परंतु कपाट, प्रतर और लोकप्रगण अवस्थामें केवल अपर्याप्ततांके स्वीकार कर लेने पर अनाहारक आलाप काययोगियोंकी पर्याप्त अवस्थामें नहीं बनता है। इसका यह तात्पर्य हुआ कि जब काययोगियोंकी पर्याप्त अवस्थामें छह योग कहे जावें, तब आहारक और अनाहारक ये दोनों ही आलाप कहना चाहिए और जब केवल तीन योग ही कहे जावें तब एक आहारक आलाप ही कहना चाहिए। सत्तें संयमोंके संबन्धमें भी यही विचक्षा येद जान लेना चाहिये।

उन्हीं काययोगी जीवोंक अपर्यात कालसंबन्धी आलाप कहने पर्—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि अधिरनसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थानः सात अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियांः सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और हो प्राणः चारों संझाणं तथा श्रीण संझाम्थान भी हैं: चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, औदारिकमिश्रकाययोग चेकियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कामणकाय-योग ये चार योगः तीनों वेद तथा अपगतचेदम्थान भी हैं: चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी हैं, विभंगावाधि और मनःपर्ययक्षानके विना छह झान, असंयम, सामायिक, छेदोपम्थापना भीर

१ प्रतिष्ठ ¹ भनारि ¹ दात पाट |

कं २५३ काययोगी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग जी। प	याः सं ्यः	इ.का यो	ते. कि झ	ः सय ∏ढः	. ∤ छे. स. [स.	मिन्नि आः । उ.
पा ७ ६अ	6 8 8	14 E X	₹ 81 €	8	४ इ. ३ ३ ५	1 2 2 2
मि अपर्या ५,,	9 -	्र ६ ४ ओ मि. बे.मि	हं ह वि	म अस-	का म सम्य.	सं. आहा. साका.
मा. ४,,	\$ 5	ये.मि	影影斯	ाः सामा	्र ग्र. अ. विना	. असं. अना. अना
36	4 35	आ र्ग	ি বিৰ	गाः छेदोः ।	मा.६	अनु. , यु. उ.
त्र.	8	् कार्म.		यथा.	1	
स.	રૂ રા	<u> </u>	1 1		1 1 1	1

चत्तारि दंसण, द्व्येण काउ-सुक्कलेम्साओ, भावेण छ लेम्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तद्भएण वा।

कायजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोहस जीवसमामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुट्वीकायादी छक्काया, पंच काय-जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंज्ञमा, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्विया अभविधिद्वया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

यथाख्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे काषोत और शुक्क लेखाएं, भावसे छहीं लेखाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्याग्मध्यात्वक विना रोष पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभयस्थान भी हैं: आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगींसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहते पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण+थान, चें।द्हों जीवसमास, छहों पर्याण्तियां, छहों अपर्याण्तियां। पांच पर्याण्तियां, पांच अपर्याण्तियां। चार पर्याण्तियां, चार अपर्याण्तियां। दशों प्राण, सात प्राण, सात प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण। सात प्राण, पांच प्राण। छह प्राण। चार प्राण। चार प्राण और तीन प्राण। चारों संक्षाएं। चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथियीक य आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना पांच कायथोग, नीनो वेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं. २५५ काययोगी मिथ्यादिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु	जी _	q	्रमा	й.	ąŗ,	₹"	का.	यो.	वे.	₮.	ना.	मय.	द	ले.	भ.	₩.	सन्नि	ञा.	₹.
1	१४ ६	q.	0,05	8.	8														
मि	Ę	अ.	९,७								अझा								साका.
	4	ď.	८,६					व. २					अच,		अ.		अमं.	अना.	अना.
			৩,'-					को १										-1	-
	४	٩.	₹,४																
	¥	अ.	४,३	_															

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जतीओ चत्तारि पज्जतीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, व जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च भावहि छ लेस्साओ, भविमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा

तेसिं चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया

उन्हीं काययोगी मिथ्याद्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राणः चारों संज्ञाणं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दशन, हृज्य और भावसे छहों लेड्यापं, भव्यासिदिक अभव्यासिदिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी मिथ्याद्दाप्ट जीवें।के अपर्यातकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्दाप्ट गुणस्थान, सान अपर्यातक जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सान प्राण, सान प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, औदारिकमिथ्रकाययोग, वैकिथिकमिथ्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके दें। अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत,

नं. २५६ काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलापः

١	∫. जी∙	Ч.	A 1.	स ग. इ	इ⊣्का.∣योः	व.	奪.	ज्ञा.	सयः। द.	ੋਂ ਹੈ.	म-, स	संक्षि.	आ.	उ.
र मि	। ७ पर्याः	Ę	१० ९	8 8	र ६। २ ओ.	₹ १		३ अला	1	-			र आहा	२ सा का .
		¥	د ق	1	्व.				_। अर्च ।		अ.	असं.		अना.
L			६ ४						į F	1	.		1	

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, माण्णणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

कायजोगि-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणं अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भाविद्वि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया, मामणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

और गुक्क लेह्याएं, भावसे छहें लेह्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संक्षिक, असिक्कः आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी सासादनसम्यग्हाष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमासः छहो पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण सात प्राणः चारों संबाणं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति. त्रसकाय. आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगके विना पांच काययोग, तीनों वेद. चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रथ्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २५७ काययोगी मिथ्याद्य जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग. जी.													3.
2 9	६आ.	O	6 3	8 3	Ę	3	3 18	२ । १	4	क. २,२	<u>र।</u> २	₹	
मि. अपर्या				ı		ओ मि.		कुम अर्ग		का भ-	मिं∣स.	आहा. स	सका.
	831	Ę	•			व,मि		कुश्र.	अच.	ञ्ज. 'अ	अस.	अना. ३	ग्नाः ∣
1	1	1,0	- 1			कार्म		- 2		भा ६			1
1	1	8	ĺ				1				t		- [
1		Ιŧί	ſ		1					1	1		1
	į		1	1	1		ł	1		1		1	l

नं. २५८ काययोगी सासाइनसम्यग्दाष्ट्र जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्	जी प	। । श	सं. ग.	इ . का	. ∣योः⊣	वं क.	ह्या-	संय.	₹.	ਲ.	म.	म.	मात्रि.	आ	હ
1	२ स. प. ६														२ साका. अना.
	स अप	ξ 37.		b	्व. ^२ का∙१	١			अच. 	1	1			अनाः	अन्।,

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमा, दो दंसण, दन्व-भाविहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सामणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तिसं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवेंकि पूर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पूर्याप्त जीवसमास, छहों पूर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियज्ञाति, असकाय, औदारिककाययोग और वैकियिक-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दिष्ट जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकर्गातके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग,

नं. २५९ काययोगी सासादनसम्यग्दिष्ट जीवींके पर्याप्त आलाप.

गु	র্জ	ī	ч.	я.	म्.	41.	\$,	का.	या.	1	व.	क	ना.	ंसय.	द.	ਰ		ਮ ,	स.	साज्ञ.	आ.	₫.
۶	,	- {	Ę	10	8	8	8	,	्र	-1	ą	હ	٠,	9	٦	蟒	Ę	,	Ą	ş	۶	3
सा	. स.	प					पच	त्रम.	आं.	8			कुम.	अम् -	चधु	भा	Ę	म •	मा.	सं .	आहा.	साका.
	I	i							व.	۱ ۲			ক্সপ্ত	L	अच.			l I	1	l		अना.
L					-	1	l	_	1				विभ.	1		1			<u>i </u>			

नं. २६० काययोगी सासादनसम्यग्द्रि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्रग्रं जी∙ाप प्रा₌	सं.√ग. इ.	का. यो.	क्रे.क	ज्ञा. संय	, द	ਲੇ ਸ ਼ਥ _ਾ	र्साज्ञ आः	उ.
						इर १ १		
मा.स.अ अ.	ति 😴			कुम. अस	• चंधु	का भ सा	स. आहा	साका-
1	स. ज	वे,मि,	:	कुश्रुः	अच	:I.	अनाः	अना.
	दे.	कार्म.				मा-६		
						·	l	- 1

तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भविमिद्धिया, मामणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजागि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगा जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणिहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-असंजदमम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दे। जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजतीओ, दम पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ,

वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेदः चारों कपाय, आदिके दो अक्कान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रश्यसे कापीत और शुक्क लेक्याएं, भावसे छहीं लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्यः संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी सम्यग्मिश्यादि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिश्यादिष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारों संझाएं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिश्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्य-ग्दिष्ट गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण सात प्राणः चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. २६१ काययोगी सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु		प ،	वा	H	η.	₹.	क।.	यो.	बे.	क	লা.	सय.	द. तं	हे- भ-	ч.	साज्ञे.	आ.	उ. ।
	1	Ę	१०	ጸ	Х	₹	Ł	્ર	₹	К	Ę	ধ	२ ⊦द	, ६ र	9	₹	1 8	२
H	ेर्	4	 				tr.	भा. १			ज्ञान.	अम.	चक्षु∙ाभ	. ६ म. ∣	सम्यः	स.	आहा.	साका.
HTT	1					न्य ।	JA.	वे. १			. ₹	1	अच.				1	अना.
-					Ĺ		I	i			अज्ञा.		I					
_]_		<u> </u>								मिश्र.							

पंचिदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं

त्रसकाय, ओदारिककाययोग, ओदारिकमिश्रकाययोग, चेक्रियिककाययोग, चैक्रियिकमिश्र-काययोग और कार्मणकाययोग ये पांच योग. तीनों बेद, चार्गे कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहो छेर्याएं, मन्यसिद्धिक, औए्रामिक, क्षायिक और क्षायोपरामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी असंयत्तसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दि गुणम्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छही पर्याप्तियां, दशों प्राण चारों संझाणं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और विकिथिककाययोग ये दें। योग तीनो चेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके

नं. २६२ काययोगी असयतसम्यग्दाप्ट जीवोके सामान्य आलापः

14	जी	ष । यः । स	भ ।	ड का यो	व व	इ	मय					सिन्न	31	₹.
,	,		8 8	8 8 1 4	২ ১	٠ ح	,		द्र ६		1		-	<
, le	स.प स. न	9 U	te	ुं क्रां श्रा⊾र		्भात	अस	क.द.	H	H	आप	H	आरा	साका.
m	स. भ	٤	Ė	र मि व र	1	भत	Ì	विना			क्षा		अनी	अना
		131		ां मा		্ৰাগ					क्षाया	1		İ
1_		1111					}	i						i I

नं. २६३ काययोगी असंयतसम्यग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप

																				3.
र भवि	* 4 4	६	,	R	8	त् च	१ म्ह	् आ व.	þ	≺	б	र माति टुत अव	्र अस	र ∤ द विना	द्र ६ मा	, सँ	र जा क्षा क्षाया	44	र आहा	र साका. अना-

छ रेस्सा, भवमिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, मण्णिणां, आहारिणां, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपजनाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेम्माओ, भावेण छ लेस्माओ; भवमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंनि अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अन्थि एय गुणद्वाणं, एअ। जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरा-लियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, मंजमासंजमो, तिण्णि दंमण,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छैदयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, श्रायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपयीप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक लंकी-अपर्याप्त जीवसमास, लहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाणं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकि यिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः स्त्रीवेदके विना दे। वेद, चारों कपाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यस कापोत और शुक्क लेदयाणं, भावसे छहों लेदयाणं: भन्यानिद्धिक, औपरामिक, आधिक और आयोपरामिक ये तीन सम्यक्त्वः संक्षिक, आदारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण. चागें संज्ञाएं. तिर्थचगति और मनुष्यगति ये दें। गतियां, पंचेन्द्रियजाति. जसकाय. औदारिककाययोग, तीनों चेद, चारों कपाय, आदिकं तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दशीन. द्रव्यसे छहों लेक्साएं, भावसे

नं. २६४ काययोगी असंयतसम्यग्दिए जीवोंके अपर्याप्त आस्राप.

ग.	ं जी	٩.	प्रा	म	ग	ŝ.	का.	या	व	4.	झा.	स्य	3	ਲ.	111	स	माझ	आ.	उ.
₹.	۶.	Ę	· v	Υ	ć	\$	9	3	(3)	6	3	,	₹	इ. २	9	३	2	2	ર
100	स∙ अ .	अ.				÷	÷	ओ मि	1.		मात	अस.	क.द.	平1.	₹,	, औप	स	भाहा.	माका. अना.
*						ਰੇ	ir.	व मि	न		શ્રત.		विना	रा.		क्षा		ंजना.	अना.
1								कार्म			अव.			भा. ६		क्षाया,			
lacksquare	 																		,

दन्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

कायजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिं-दियजादी, तमकाओ, ओरालिय-आहार-आहारमिस्सा इदि तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संज्ञम, तिण्णि दंसण, दच्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवासिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, मागारु-वज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेज, पद्म और गुक्क लेश्याएं: भव्यसिद्धिक, औपरामिक, आयिक और आयोपरामिक ये तीन सम्यवत्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राणः चारों संबाएं, मनुष्यगति, पंचेत्द्रियजाति, त्रसकाय, आंदारिककाययोग आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इसप्रकार तीन योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिक चार ब्रान, सामाधिक, छेदोपस्थापना और परिहारियगुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेद्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क छेद्याएं: भव्यसिद्धिक, आंपद्मिक, आयिक और आयोपदामिक ये तीन सम्यवस्य, संक्षिक, आहारक, साकागेपयोगी और अनाकागेपयोगी होते हैं।

र प्रतिप 'तिष्णि ' इति पाठ ।

नं २६५

काययोगी संयतासंयत जीयोंके आलाप.

गर्जा.पन्नास गईंका यो वंक का हा संयद्ध ले स स. र ११६ १०८२ १ १ १ ३ ४ ३ १ ३ ७ ३ ७ ३	0 4	
	۲ ،	ર
ति पच तम. ओ. मिति देश के.दर भार म. ओप र हिं में म. श्रुतः विना अस. क्षार अव. क्षायो	। आहा	साका. अना.

नं. २६६

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

1	ग जी.	٩.	সা	स.	ग	3	का.	यो.	व.ाः	क । ज्ञाः	सय.	द	₹.	म.	म.	सिन्न	आ.	उ.
١	१ २		•					િક્			₹	1.3	ਤ ξ	2	3		9	٦
ı	. स.प. इ. स.अ	Ŧ	ঙ	l I	म.		चस	ओॅं. १ आहा.२		केंब.	सामा.	कद.	भा ३	भ.	आप.	सं	आहा	साका.
	हर्म स.अ	Ę				5		आहा.२		्विना	. छे दो.	विना	गुम		क्षा.			अना.
١	1	अ.	ı					!		1	परि.	ı			क्षायो	1		
ļ									i									

कायजोगि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जता वार्षे।

अपुन्वयरणप्पहुांडे जात्र खीणकसाओ त्ति तात्र कायजोगीणं मूलोघ-भंगो। णवरि ओरालियकायजोगो चेव सन्वत्थ वत्तन्त्रो।

कायजोगि-केवलीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो दो वा, छ पञ्जनीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइयकायजोगं इदि तिण्णि जोग, अवगदवेदो,

काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्षाके विना शेष तीन संक्षापं मनुष्यगति, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार क्षान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविद्याद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावस तेज, पद्म और शुक्त लेश्यापं, भव्यसिद्धिक; संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर आणिकषाय गुणस्थानतक काययोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि काययोग आलाप कहते समय सर्वत्र केवल एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए।

काययोगी केवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, अथवा समुद्धातकी अपेक्षा पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, बार प्राण और केवलिसमुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा दो प्राण; क्षीणसंक्षास्थान, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाय-

नं. २६७ काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

ŋ.	<u>जी</u> -	ı q	त्रा	Ą	11	₹.	和.	41.	व.	巫.	श्रा	सय	<u> </u>	ल	મ.	_स.	∣ साझे.	आ.	, उ.
	ধ			•		١ . ٢	্ধ	31	4	ć	R	ŧ	∤્ર	द्भ ६	Ş	_₹	8	8	२
₽.	स प.			श्राह्य.	щ.	पचे.	ιþέ	आ			माते.	सामा	कद	'मा ३	भ.	आप	44	आहा.	साका.
क				विना	•		 -							शुभ .		क्षा.			अना.
j			İ			ſ						विर	İ			क्षाया			
		1	1			!	1		1		मन.		1						

अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खाद्विहारसुद्धिमंजमो, केवलदंसण, दृष्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, जेव सिंज्जिगो जेव अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति ी

ओरालियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दम पाण णव पाण अहे पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, दो गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुत्रवीकायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दच्व-भावेहि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, साण्णिणो असण्णिणो णेव मण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

योग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलक्कान, यथाख्यातविहारगुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे गुक्रलेश्याः भव्य-स्तिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षी और असंक्षी इन दोनों विकल्पोंसे रहिन, आहारक, अनाहारकः साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

औदारिककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, पर्याप्तक जीवोंके सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नां प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और चार प्राणः चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, तिर्थचगित और मजुष्यगित ये दो गितयां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, आठो झान, सानों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्तवः संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षी और असंक्षी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है;

नं. २६८ काययोगी केवली जिनके आलापः

(ŋ.	र्जा.	٩.	भा.	म.	ग	₹.	का	्या	ā	邨.	ह्या-	मय	द.	જે.	म.	म-	सिन.	आ.	3.
۱ ۹	9	Ę	8	0	9	1	11	1 = 1	0	0	9	9	3	ढ़ ६	9	5	0	२	2
सयो	. Ч		2		म.			ું આં, ર	<u>=</u>		के.	यथा,	के.द.	भा १	भ.	क्षा-	अनु.	आहा	साका.
	२	Į		H.	l .	व	3	कार्म.	अपर	अक्षा		l	ł	ग्रङ्ग.				अनाः	अना.
	प.अ.			स्ति					ליח	ক									यु. उ.
			1		ĺ												1		

होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवद्वजुत्ता वा ।

अंगलियकायजोगि मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, मत्त जीव-ममामा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण मत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि मण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दच्च-भावेहि छ लेस्माओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणा असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ै।

अहारक, साकारापयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोना उपयोगींसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

औदारिककाययोगी मिथ्यादिष्ट जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, सान पर्याप्न जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां: दशों प्राण, नै। प्राण, आठ प्राण, सान प्राण, छह प्राण और चार प्राण: चारों संक्षाएं, निर्धेच और मनुष्य य दो गतियां, एकेन्द्रियजानि आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिक-काययोग, तीनों वेद, चारों कपाय, नीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दशन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २६९ औदारिक काययोगी जीवोंके आलाप.

ग	र्जा.	प	भा.	सं.	₹.	इ	का	यो.	व	क.	রা,	मय.	द₌	ਰ.	भ.	स.	यांज्ञ.	आ.	હ.
१३	O	ξ	20	Х	ેર	eq.		9											
अयं।	पर्या.	4	9,	F.	िति			आ.	Ė	=				भा ६	भ.		स	आहा.	साकाः
विना	•			5					अपग	अक्ष्या					अ		अस.		अना,
1			હ	20-	1					(1)							अन.		यु. उ
_			ę 8		I														(

नं. २७० औदारिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवांके आलापः

गु	र्जा.	q	भा.	म	ग	इ	का	या	वे	क	झा	सय-	द.	ले.	भ.	स	मंज्ञि	आ	- उ.
१	9	ξ	10	Х	3	ч													ર
मि.	पयो	٩	9		ति			ओ,			अझा.	अस.	चक्षु.	मा. ६	भ	मि.	₩.	आहा.	साकाः
		ጸ	<		म.								अच.		अ.		असं.		अनाः
1			J																
1_			Ęγ								_						_		

ओरालियकायजोगि-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्माओ, भवमिद्धिया, मासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा '।

ं ओरालियकायजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, विण्णि णाणाणि तीहि

औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दिष्ट जीवेंकि आछाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यवगिति और मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयमः आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिककाययोगी सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगित और मतुष्यगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद,

नं. २७१ श्रीदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दप्रि जीवांके आलाप.

1 ग	়র্জা.	٩.	সা-	₹.	η.	₹.	का.	यो.	वे.	奪.	हा.	संय	द.	ले,	भ	म.	संक्षि.	आ.	ਤ. ∣
₹ #I	₹ #.	Ę	१०	8	२ ति	*	۶	शें.	ર્	8	≹ अ झा .	, अस	२ चक्ष	द्र. ६ भा. ६	ा स.	्र सःसाः	र स.	र आहा.	२ साका. अनाः
["	٩.				म	च	त्रस	-114			-14117	-1(1	अच.	-11- (-11011	अना.
	İ																		

नं. २७२ श्रीदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु जी.	पः प्रान्सः ग इ का यो	वे.∤क₁ झा.	सय द.	ਲੋ.	भ. <u>स</u> . सज्ज्ञ.	आ. उ.
1		₹ ४ ३				8 3
संस्	ति. । आ. म. हे हे	श्रीन.	সন বলু ⊥ अच.	सा. ५	स सन्य सः	आहाः माका अनाः
1		अज्ञा			1	
		मिश्र.	l			1

अण्णाणिहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्य-भाविहि छ लस्साओ, भविमाद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागास्यज्ञत्ता होति अणागास्यज्ञत्ता वा ।

अंगरित्यकायजागि-असंजदसम्माइटीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जचीओ, दस पाण, चचारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चचारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवमिद्धिया, तिण्णि मम्मचं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

संजदासंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेविल ति ताव कायजोगि-भंगो। णविर सञ्बन्ध ओरालियकायजोगो एको चेव वत्तव्यो । सजोगिकेविली च पञ्जता आहारि ति भणिदव्या।

चारों कषाय, तीनों अङ्गानोंसे मिश्चित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेदयाएं, भव्यसिङ्कि, सम्यग्मिश्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकाराययोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिककाययोगी असंयतसम्यग्दि जीवों के आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवममासः छट्टों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचिन्द्रियज्ञाति, जसकायः आंदारिककाययोगः तिनौं वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं छेश्याएं: भव्यसिद्धिक, ओपश्चामिक, धायिक और धायोपश्चिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिककाययोगी जीवोंके संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर संयोगिकेवला गुणस्थान तकके आलाप काययोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि सर्वत्र योग आलाप कहते समय एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए। और संयोगिकेवलींके जीवसमास कहते समय पर्याप्तक जीवसमास, तथा आहार आलाप कहते समय आहारक, इसप्रकार कहना चाहिए।

नं. २७३ श्रीदारिककाययोगी असंयतसम्यग्दि जीवांके आलाप.

	गु. नी १ १ सं. प	. प. प्राः ६ १०	सः ग ४२ ति म	का. १ । भा	यो • ओ.	वे	क. ४	ं ३ मति. अ त	सय १ अम•	द. ३ के. द. विना	हे. इ.६ भा६	म∙ • म	ं ३ अंप- क्षा-	स्राह्म. १ म	8	3	
-		1 1	J					अव.					क्षायोः				

ओरालियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवममासा, साण्णि-असण्णीहिंतो सजोगिकेवली विदिरित्ता ति अदीद्जीवसमासेण सजोगिणा
होद्ववं ? ण, द्व्यमणस्म अत्थित्तं भावगद-पुव्यगंइ च अस्सिऊण तस्स साण्णित्तब्भुवगमादो ।
पुढ्वी-आउ-तेउ-वाउ-पत्तेय माहारणमरीर-तम-पज्जत्तापज्जत्त-चोद्दस-जीवसमासाणं सत्तअपज्जत्तजीवममासेसु मजोगि-मत्तवभुवगमादो वा । एमो अत्था मव्वत्थ वत्तव्वो । छ
अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण मत्त पाण छ पाण पंच
पाण चत्तारि पाण निण्णि पाण दोण्णि पाण, चत्तारि मण्णाओ खीणमण्णा वि अत्थि,
दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढ्वीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकमाओ वि अत्थि,
विभंग-मणपज्जवणाणिहि विणा छ णाणाणि, जहाक्खादसुद्धिसंजमो असंजमो चेदि
दो मंजम, चत्तारि दंमण, द्वंण काउलस्मा। कि कारणं ? मिळाइहि-मामण-असंजद-

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोके आलाप कहने पर—मिथ्यार्टाष्ट, सासादनसम्यग्टिष्ट, अविरतसम्यग्टिष्ट और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा सात अपर्याप्त जीवसमास होते हैं।

र्गका—जब कि सर्थागिकवर्ता जिनेन्द्र संज्ञी और असंज्ञी इन दोना ही व्यपदेशोंसे रहित हैं, इसलिए सर्थोगी जिनको अनीत जीवसमासवाला होना चाहिए?

ममाधान — नही क्योंकि, इ-यमनके अस्तित्व और भावमनोगत पूर्वगित अर्थात् भृतपूर्व त्यायके आश्रयसे सर्योगिकवर्लाके संझीपना माना गया है। अथवा, पृथिवीकायिक, जरुकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, प्रत्येकदार्गरवनस्पतिकायिक, साधारणदारीर-वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीवेंक पर्योप्त और अपयोप्तसंबन्धी चौदह जीवसमासोंमेंसे सात अपर्याप्त जीवसमामोंमें कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्धानगत स्योगिकेवलीका सत्त्व । माना जानेसे उन्हें अनीत जीवसमामवाला नहीं कहा जा सकता है। यही अर्थ सर्वत्न । कहना चाहिए।

जीवसमास आलापक आगे छहां अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां। सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और सयोगिकेवलीके कपारसमुद्धातके कालमें दो प्राण होते हैं। चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, तिर्यच-गित और मनुष्यगति ये दो गितयां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों ज्ञातियां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, आदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। विभंगाविध और मनःपर्यय ज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, यथाल्यातिहारद्याहिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन और द्वयंस कापोतलेदया होती है।

शंका - द्रव्यसे एक कापोतलेक्या ही होनेका क्या कारण है ?

सम्माइद्वीणं ओरालियमिस्सकायजोगे बहुंताणं सरीरम्स काउलेस्सा चेत्र हबदि; छव्बण्णोरा-िलयपरमाणृणं धवल-विस्समोपचय सहिद्-छव्बण्णकम्मपरमाणृहि सह मिलिदाणं काबोद्व-वण्णुप्पत्तीदे। कवाडगद-सजोगिकेबलिस्स वि सरीरस्स काउलेम्सा चेत्र हबदि। एत्थ वि कारणं पुव्वं व वत्तव्वं। सजोगिकेबलिस्स पृव्विक्ल-सरीरं छव्बण्णं जिद्द वि हबदि तो वि तण्ण घेष्पदि; कवाडगद-केबलिस्स अपज्जत्तजोगं बहुमाणस्य पुव्विक्ल-सरीरेण सह संबंधाभावादो। अहवा पुव्विक्ल-छव्बण्ण-सरीरमस्मिकण उत्रयारेण द्ववदो सजोगि-केबलिस्स छ लेस्साओ हवंति। भावेण छ लेस्पाओ। कि कारणं १ मिच्छाइद्वि-सामण-सम्माइद्वीणं ओरालियमिस्यकःयजोगे बहुमाणाणं किण्ड-णील-काउलेस्सा चेत्र हवंति, कवाडगद-सजोगिकेबलिस्स सुक्कलेस्सा चेत्र भवदि, कित् देव-गेरइयसम्माइद्वीणं मणुमगदीए उप्पण्णाणं जीरालियमिस्यकायजोगे यहुमाणाणं अविण्वह-पुव्विक्ल-भाव-लेस्साणं भावेण छ लेस्साओ लव्यंति ति। भविभिद्धिया अनविभिद्धिया, उत्यमममम्मत्त-लेस्साणं भावेण छ लेस्साओ लव्यंति ति। भविभिद्धिया अनविभिद्धिया, उत्यमममम्मत्त-

सुम्। भान-अंदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिश्यादृष्टि, सासाद्दनसम्यग्दृष्टि और असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके द्वारंगकी कापातलेख्या ही होती है: क्योंकि, श्रवलविस्रसीपचय सिद्धत छहीं वर्णीके कर्म-पग्माणुश्रीके साथ मिल तृष् छहीं वर्णवाले श्रीदृर्शिकदारीरके परमाणुश्रीके कापात वर्णकी उत्पत्ति बन जाती है, इम्बिल्य श्रीदृशिकिमश्रकाययोगी जीवोंके द्वयसे एक कापातलेख्या ही होती है।

कपाटसमुद्धानगत सथे।गिकेवर्लाकं दार्गांकी भी कापानलेदया ही होती है। यहां पर भी पूर्वकं समान ही कारण कहना चाहिए। यद्यांग सयोगिकेवलीकं पढलेका दारीर छहीं वर्णीवाला होता है, तथापि वह यहां नढी अहण िया गरा है। वर्गीकि अपर्याप्तयोगमें वर्तमान कपाटसमुद्धात-गत सथे।गिकेवलीका पढलेके दारीरकं साथ सम्बन्ध नहीं रहता है। अथया, पहलेके पड्वणीवाले दारीरका आश्रय लेकर उपचारमें इत्यकी अपेक्षा सयोगिकेवलीके छहीं लेक्याएं होती हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंके भावम छहा छेदयाएं होती है।

रांका — औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके भावने छहीं लेश्याएं होनेका क्या कारणहे ?

समाधान — औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यार्दाएं और सासादनसम्यग्दिए
जीवोंके भावसे छूष्ण, नील और काणेतलेश्याएं ही होती हैं। और कपाटसमुद्धातगत
औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकवलांक एक शुक्रलेश्या ही होती है। किन्तु जो देव और
नारकी मनुष्यगतिमें उत्पन्न हुए हैं, अँदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान हैं और जिनकी पूर्वभवसम्बन्धी भावलेश्याएं अभीतक नए नहीं हुई हैं, ऐसे जीवोंके भावसे छहीं लेश्याएं पाई जाती
हैं। इसलिए ओदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके छहीं लेश्याएं कहीं गई हैं।

लेह्या आलापके आगे भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः उपरामसम्यक्त्व और सम्य-

सम्मामिच्छत्तेहि विणा चत्तारि सम्मत्ताणि, सण्गिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

ंओरालियमिस्तकायजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, मत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्नेण काउलेस्सा,

ग्मिथ्यात्वके विना राप चार सम्यवत्व, संक्षिक, असंक्षिक नथा संक्षी और असंक्षी इन दोनों विकर्ल्पोंसे राहित भी स्थान है। आहारक, साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगी मिध्यादृष्टि जीवंकि आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, सान अपर्योप्त जीवसमासः छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्योप्तियांः सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संझाएं, तिर्थचगिति और मनुष्यगित ये दें। गितयां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, औदारिकमिश्रकाययोग, नीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दें। अझान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, द्रश्यसे कापोनलेदया, भावमे कृष्ण, नील और कापोन लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्य-

नं	રઙ૪	अँदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके	आलाप
न	२५४	अद्यारकामश्रकाययागा जावाक	आ

। ग	र्जाः	q	য়া.	सं	₹Į.	इ.का	ं यो	व । क	朝	सय	₹.	ਲੇ.ਸ	स.	ृसक्ति.	आ.	ं उ. ,
×	v	ç 3i.	9	ઠ	3	4 8	7	3 8		ર		द्ध. १ २		ર		3
ाम	अप.	3 33	ঙ	4	र्गि 🖁		ा मि	अपना,	विभ	अस -		का⊦्भ	्रीम•	म.	आहा.	साका.
41.		٧,,	Ę	194	, म. ।			अस्व	ं मन -	यथा.		भा•६ अ	ीमा.	अस		अना
अ			M.	20	! i			. (विना			Į.	क्षा	अन्.		- {
4. ,			8		<u> </u>						ı		क्षायो			. [
<u> </u>			ર ર	1		1						1 1]		, }

नं. २७५ औदारिकमिश्रकाययोगी मिध्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गृ.	जी.	q.	या	स. ग इ	का	यो.	वं क	, শ্লী	संय∙	₹.	ਰ.	भ. _[र	ा. सिंहा.	आ.	ु उ.
,	ø	६ अ.	ঙ	8 2 4	Ę			4 3	>		3. >				1 2
मि '	अप.	५अ.	૭	नि		ऑामि.		कुम.	असं .	चक्षु	का	म. मि	ां स	आहा.	साका
		४अ	Ę	,म.		{		ंकृश्रु.	,	अच.	मा-३	Э.,	अस.		अना-
1			14	i					į		अशु.	1			}
ĺ		1	8				1						1		ı
1 1			₹									1			l
		1		1 1	<u> </u>						·		- 1		

भावेण किण्ह-जील-काउलेम्माओ; भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, मिच्छत्तं, मिण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

अंगलियिमम्मकायजोगि-मामणमम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एअं जीवममामा, छ अपज्जत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तमकाओ, ओर्गालियमिम्मकायजागिः, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजमा, दो दंमण, द्वेण काउलेम्मा, भावेण किण्ड-णील-काउलेस्माओः भविमिद्धिया, मामणमम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्ञत्ता होति अणागारु-वज्जता वा ।

अंशिलियिमम्मकायजोगि-असंजदमम्माइद्दीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एअं जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तमकाओ, ओर्गालियिमम्सकायजोगो, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेम्सा, भावेण छ लेस्साओ, जहा देव-मिच्छाइदि-

सिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः अष्टारक, साकारोपयेशी अंग अनाकारोपयेर्गा होते हैं।

अंदि(रिकमिश्रकायये। ग्रंशिसादनसम्यग्दिष्ट जीवेरके आलाप कहने पर—एक सामादन गुणस्थान, एक मही-अपर्याप्त जीवसमासः छहाँ अपर्याप्तियाः सात प्राणः चारों संज्ञाणं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति थे दें। गतियां, पंत्तित्रियज्ञाति, त्रसकाय औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दें। अज्ञान, असंयम, आदिके दें। द्र्शन, ह्रव्यसे कापोत्तलेदया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत्तलेदयाणं, भव्यामिद्धिक, सामादनसम्यक्ष्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अंदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवीके आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दिष्टि गुणस्थानः एक संजी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारी संझाएं, तिर्थवर्गात और मनुष्यगित ये दी गतियां, पंचिन्द्रियज्ञातिः जसकायः, औदारिक-मिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारीं कपायः, आदिक तीन झानः असंयम, आदिक तीन दर्शन, द्वयसे कापोतलेद्या और भावसे छहीं लेदयाएं होती हैं। यहां पर भावसे छहीं लेदया

नं. २७६ अादारिकामथकाययोगी सासादनसम्यग्टापृ जीवांके आलाप.

1	ग्र.	र्जा	ч.	Яľ	सं⊤गाइ	₹1.	यो	व	₮.	্কা.	सय	्र द.	_G.	Ħ,	म.	माई	. সা	उ
					8 3 8											,	, _	٦ -
स	1 4	अ	Ħ	f	वि-्राह	त्रस	भा, भि					पु क्ष	का	म.	मामा	स∙	आहा.	साका.
l					्म.					严 为。		अच	भा₃					अना,
1			ı	1	11	1							अगु.					1
١.			1		1 '	1												1

मामणमम्मादिद्विणो तेउ पम्म-सुक्कलेम्मामु वद्दमाणा णह-लेम्सा होऊण तिरिक्च-मणुस्सेसुष्पज्ञमाणा उष्पण्ण-पढम-सम्प चेव किण्ह-णील-काउलेम्साहि सह परिणमंति मम्माइद्विणो तहा ण परिणमंति, अंतोमुहुत्तं पुच्चिल्ल-लेम्माहि मह अच्छिय अण्णलेस्सं गच्छंति । किं कारणं १ सम्माइद्वीणं वृद्धि-द्विय-परमेद्वीणं मिच्छाइद्वीणं मरणकाले गंकिलेसाभावादो । णेग्इय-सम्माइद्विणो पुण चिगण-लेस्साहि सह मणुम्मेसुष्पज्जंति ।

अंके होनेका कारण यह है कि जिसप्रकार तेज, एक और गुक्क लेक्याओं वर्तमान मिथ्यादृष्टि और रगसादनसम्यग्दृष्टि देव तिर्यंच और मनुष्यों में उत्पन्न होते समय नष्टलेक्या होकरके अर्थात अपनी अपनी पृत्र गुभ लेक्याओं को छोड़कर (तिर्यंच और मनुष्यों में) उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही कृष्ण, नील और कापोत लेक्या स्पस्त परिणत हो जाते हैं, उसप्रकार समयग्दृष्टि देव अगुभ लेक्या समे नहीं परिणत होते हैं. किन्तु तिर्यंच और मनुष्यों में उत्पन्न होनेके प्रथमसमयभे लगाकर अन्तर्मुहत्तिक पूर्व भवकी लेक्याओं के साथ रह कर पीछे अन्य लेक्याओं को प्राप्त होते हैं, अतुष्व यहां पर छहां लेक्या है वन जाती हैं।

र्शका--तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दिष्ट देव अन्तर्मुहर्ततक अपनी पहली लेह्याओंको नहीं छोड़ने हैं, इसका क्या कारण है ?

समाधान — इसका कारण यह है कि बुद्धिमें स्थित है परमेष्ठी जिनके अर्थात् परमेष्ठांके स्वरूप चिन्तवनमें जिनकी बुद्धि लगी हुई है ऐसे सम्यग्द्धि देवेंकि मरणकालमें मिथ्याद्दि है देवेंके समान संक्रेश नद्दी पाया जाता है. इसलिये अपर्याप्तकालमें उनकी पहलेकी धुभ-लेखाएं ज्योंकी त्यों बनी रहती हैं।

विशेषार्थ — 'सम्माइई।णं वृद्धि-हिय परमेद्दीणं मिच्छाइद्दीणं मरणकाले संकिलेसा-भावादो 'इस वाक्यके दो अर्थ संभव हैं। एक तो यह कि मरणके समय मिथ्यादृष्टियोंको जिसप्रकार संक्लेश होता है उसप्रकार जिनकी वृद्धिमें परमेष्ठी स्थित है ऐसे सम्यदृष्टि देवोंको मरणके समय संक्लेश नहीं होता है। तथा दूसरा अर्थ इसप्रकारसे होता है कि सम्यदृष्टि देवोंके और जिनकी वृद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं ऐसे मिथ्यादृष्टि देवोंके मरणके समय संक्लेश नहीं पाया जाता है। प्रथम अर्थ करते समय 'मिच्छाइद्दीणं ' पदके आगे 'इव ' पदकी अपेक्षा है और दूसरा अर्थ करते समय 'च ' पदकी। परंतु 'मिच्छाइद्दीणं ' इस पदके आगे इन दोनों पदों में से कोई भी पद नहीं पाया जाता है और प्रकरणको देखते हुए पहला अर्थ संगत प्रतीत होता है, इसिलेथ ऊपर अर्थमें पहले अर्थका ही ग्रहण किया है।

किन्तु नारकी सम्यग्दाष्टि तो अपनी पुरानी चिरंतन लेक्याओंके साथ दी मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं। कारणं, जादिविसेसेण संकिलेसाहियादो। भवसिद्धिया, उनसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{***}।

अंरालियिमस्सकायजोगि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहुाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, आयु-कालबलपाणा दो चेव होंति, पंचिंदियपाणा णित्थः, खीणावरणे खओवसमाभावादो खओवसम लक्खण-भाविंदियाभावादो । ण च दिव्विदिएण इह प्रश्रोजणमित्थि, अपज्जत्तकाले पंचिंदियपाणाणमित्थितः पदुष्पायण-संतसुर्तं-दंसणादो । मण-विच-उस्सासपाणा वि तत्थ णित्थि, मण-विच-उस्सासपज्जत्ती सण्णिद-पोग्गलखंध-

शंका— नारकी सम्यग्दिए जीव मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लेक्याओंको क्यों नहीं छोड़ते हैं?

समाधान — इसका कारण यह है कि नारकी जीवोंके जातिविशेषसे ही अर्थात् स्वभा-वन:संक्षेशकी अधिकता होती है, इसकारण मरणकालमें भी वे उन्हें नहीं छोड़ सकते हैं।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

श्रीदारिकिमश्रकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपयोक्षक जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं। िकन्तु पांच इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं, क्योंकि, जिनके बानावरणादि कर्म नष्ट हो गये हैं ऐसे श्रीणावरण सयोगिकेवलीमें आवरण कर्मोंका श्रयोपश्म नहीं पाया जाता है, और इसलिये उनके श्रयोपश्म लक्षण भावेन्द्रियां भी नहीं पाई जाती हैं। तथा इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंसे प्रयोजन है नहीं: क्योंकि, अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रिय प्राणोंके अस्तिन्त्रका प्रतिपादन करनेवाला सत्प्रक्षपणाका सूत्र देखा जाता है। मनोबलप्राण, वचनबलप्राण, और इवासोच्छ्वासप्राण भी औदारिकिमश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके नहीं होते हैं; क्योंकि, मनः पर्याप्ति, वचन पर्याप्ति और आनापान पर्याप्ति संक्षिक पौटलिक स्कंन्धोंसे निर्मित

९ स. म. २७, ६**९,** ७६.

नं. २७७ श्रीदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दाष्ट जीवोंके आलाप

ग्राप्त ग्रांस ग्रां का यो वे क ज्ञा संय द छे मा स सिंह, आ उ ११६७४२१११४३१३<u>६,११२१२</u> अविसं.अ. अ. ति, प्रांभीस क्षापी, असं.केद का माक्षा सं आहा साका, म. क्षापी अवा अवा

णिट्यत्तिद्-सपाणसण्णा-संजुत्तसत्तीणं कवाडगद-केविलिम्हि अभावादो । अहवा तेसिं कारणभूद-पज्जत्तीओ अत्थि ति पुणा उविरम-छद्वममयप्पहुडिं विच-उस्सासपाणाणं समणा भवदि चत्तारि वि पाणा हवंति । व्वीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,

स्वप्राण संक्षाओं से अर्थान् मन, वचन और इवासीच्छ्वास प्राणोंसे संयुक्त शक्तियोंका कपाट समुद्धात-गत केवलीमें अभाव पाया जाता है। अथवा, समुद्धातगत-केवलीके वचनवल और इवासीच्छ्वास प्राणोंकी कारणभूत वचन और आनापान पर्याप्तियां पाई जाती हैं, इसिल्ये लोकपूरणसमुद्धातके अनन्तर होनवाले प्रतरसमुद्धातके पश्चान् उपरिम छठे समयसे लेकर आगे वचनवल और इवासोच्छ्वास प्राणोंक: सद्भाव हो जाता है, इसिल्ये स्योगिकेवलीके आहारिमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी होते हैं।

विशेषार्थ — समुद्धातगत केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें आयु और काय ये दो प्राण होते हैं रोष आठ प्राण नहीं होते हैं। उनमेंसे पांची इन्ट्रिय प्राण तो इसलिये नहीं होते हैं कि उनके ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम नहीं पाया जाता है। कदाचिन यह कहा जा सकता है कि केवलीके पांचों इच्येन्द्रियां पाई जाती हैं इसलिय इच्येन्ट्रियोंकी अंपक्षा उनके पांच प्राण मान लेना चाहिये। परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका उपचारसे ही प्रहण किया है, मुख्यतासे नहीं। यदि इन्टिय प्राणीमें द्रव्येन्द्रियोंका मुख्यतास प्रहण करना स्वीकार किया जांच ते। अपर्याप्तकालमें पांच इन्द्रिय प्राणोंका सङ्घाव नहीं बन सकता है। परंतु अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रियप्राण होते हैं ऐसा आगमवचन है, इसिल्ये यह सिद्ध हुआ कि इन्द्रिय प्राणोंमें मुख्यतांस पांच भावेन्द्रियोंका ही प्रहण किया गया है और वे भावेन्द्रियां केवलीके होती नहीं है. इसलिय उनके पांची इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं। उसीप्रकार केवलीके अपर्याप्त अवस्थामं मनोबल, वचनबल और इवासोच्छवास ये तीन प्राण भी नहीं होते हैं, क्योंकि, इन तीनों प्राणोंकी काम्णभूत मन, वचन और आनापान ये र्तान पर्याप्तियां है। परंत् अपर्याप्त अवस्थामें ये तीनें। पर्याप्तियां होती नहीं हैं, इसिलिये पर्याप्तियोंक अभावमें उनके उक्त तीनों प्राण भी नहीं पाये जाते हैं। इसप्रकार इन आठ प्राणोंके अतिरिक्त केवलींके अपर्याप्त अवस्थामें ज्ञेष दो प्राण पाये जाते हैं। अथवा, केवलींके विद्यमान शरीरकी अपक्षा पूर्वोक्त प्राणोंकी कारणभूत पर्याप्तियां रहती ही हैं, इसिलये छठे समयसे वचनबळ और द्वासोच्छ्वास ये दो प्राण और माने जा सकते हैं। इसप्रकार पूर्वोक्त दोनों प्राणोंमें इन दोनों प्राणोंके मिला देने पर केवलीके आंदारिकमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी कहे जा सकते हैं। मनःपर्याप्तिके रहने पर भी केवलीके मनःप्राण नहीं माना है, इसका कारण यह है कि मनःप्राणमें भावमन और मनःपर्याप्त ये दोनों कारण हैं, इस-लिये इनमें से जहां केवल एक कारण होता है वहां मनः प्राण नहीं कहा गया है। केवलीके भावमन नहीं पाया जाता है, इसिछिये मनःपर्याप्तिके रहने पर भी मनःप्राण नहीं कहा गया है और शेप संबंधि जीवोंके अपर्याप्त अवस्थामें भावमनका अस्तित्व होते हए भी मनःपर्याप्ति ओरालियमिस्सयकायजोगो, अवगद्वेदो, अकमाओ, केवलणाणं, जहाक्खाद्विहारसुद्धि-संजमो, केवलदंमणं, द्व्वेण काउलेस्मा, म्लमरीग्म्य छ लेस्माओ मंति ताओ किण्ण उचंति ति भणिदे ण, चोह्म-रज्जु-आयामेण मत्त-रज्जु-वित्थारेण एक-रज्जुमादिं कादृण वाहुद-वित्थारेण बारिद-जीव पदेसाणं पुव्वमरीग्ण पंग्वेडजंगुलोगाहणण पंवधाभावादो । भावे वा जीवपदेम-परिमाणं मरीगं होजा। ण च एवं, वंधहरस्म' मरीरम्म तेत्तियमेत्तद्धाण-पसरण-सत्ति-अभावादो, ओरालियमिस्सकायजोगण्णहाणुव निद्दो वा। ण चिराण-सरीरेण कवाडगद-केवलिस्स मंबंधो अत्थि। भावेण सुक्कलेम्मा; भविमद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव नहीं पाई जाती है. इसल्चिय मनःपण नहीं माना गया है।

प्राण आलापके आगे क्षीणसंज्ञास्थान, मनुष्यगति, पंकेन्द्रियज्ञाति, प्रसकाय, आँदा-रिकमिश्रकाययाग, अपगतवेदस्थान, अकपायस्थान, केबलजान यथारयातविद्वारशुक्तिसंयम. केबलदर्शन, और द्रव्यसे नापात लेक्या होती है।

शंका-- सयोगिकेवलीके मलशागिकी तो छदी लेख्याएं होती है, फिर उन्हें यहां क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, कपाट तमुद्धातक स्माप बादह राजु आयाम (लम्बाई) से और सात राजु विस्तारसे अथवा चांदह राजु आयामसे और एक राजुको आदि लेकर बड़े उप विस्तारसे व्याप्त जीवके प्रदेशोंका संख्यात अगुलकी अवगाहनावाले पूर्व दार्शर साथ संबन्ध नहीं हो सकता है। यदि संबन्ध माना जायगा, तो जीवके प्रदेशोंके पांग्माणवाला ही ओदारिक दारीरको होना पड़ेगा। किल्तु ऐसा हो नहीं सकता: स्योंकि, विशिष्ट बंधको धारण करनेवाल दारीरके पूर्वोक्त प्रमाणक्रपमे पसरने (फलेन) की दाक्तिका अभाव है। अथवा, यदि मृलदारीएके क्याटसमुद्धात प्रमाण प्रसरणदाक्ति मानी जाय के फिर उनकी ओदारिकमिश्रकाययोगता नहीं बन सकती है। तथा कपाटसमुद्धातगत केवलीका पुणते मृलदारीएके साथ संबन्ध है नहीं, अत्याय यही निष्कर्ष निकलता है कि लयांगिकेवलीक मृलदारीरकी लहीं लेदयाएं होनेपर भी कपाटसमुद्धातके समय उनका ग्रहण नहीं किया जा सकता है। किन्तु ओदारिकमिश्रकाययोग होनेके कारण एक कापोतलेदया ही कही गई है।

विशेषार्थ—पूर्वाभिमुख केवलीके समुद्धात करने पर कपाटसमुद्धातमें जीवके प्रदेश ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते हैं और उत्तर दक्षिण सात राजु फेल जाते हैं। तथा उत्तराभिमुख केवलीके कपाटसमुद्धातके समय ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते हैं और पूर्व पश्चिम एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए विस्तारके अनुसार फेल जाते हैं, परंतु मूलशरीर संख्यात अंगुलकी अवसाहना प्रमाण ही होता है, इसलिये मूलशरीरकी छेश्या औदारिकमिश्रकाययोगमें नहीं ली जा सकती है। किन्तु उस समय जो नोकर्मवर्गणाएं आती हैं उन्हींकी लेश्या ली जायगी। अतः केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगकी अवस्थानें द्वस्थसे कापोतलेश्या कही है।

१ प्रतिषु ' ए बंधहरस्स ' इति पाठः ।

सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो,सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वार्वे।

वेउन्वियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दम पाण. चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी देवगदि ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेउन्वियकायजोगो, निण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, अमंजमो, निण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लस्साओ, भविसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञता होंनि अणागारुवज्ञता वा ।

हृद्ये ह्या आलापके आगे भावसे शृक्कलेखा, भव्यसिद्धिक, **आयिकसम्यक्त्व,** सीद्धक और असंभिक्ष इत देखीं विकल्पोंसे रहिल, आहारक, साक्षार और अना**कार इन दोनी** उपयोगींसे युगदन् उपयुक्त होते हो।

वैक्षियिकपापदं ते जीतींके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक ने जीत्यर्शाण जीवसमान, उशी पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, नरकगति और देवगाति ये हो गतियां, पत्रीन्द्रयनाति, जसमाय, विकिथिककाययोग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों स्थान और आदिके तीन जात इसप्रकार ये छह जान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रस्य और मार्थस छहीं लद्याणे राज्यांसांखकः अभव्यतिखिकक, छहीं सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनुकारोपयोगी होते हैं।

नं. २५८ अंद्रारिकमिथकाययोगी सर्यागिकेवर्लाके आलाप.

	_ ਸ _	Ξí,	q	भा	$\mathcal{T}_{i,s}^{r} = \mathbb{I}_{L}$	3	का	यो.	લં લં	য়া	ा सय	₹.	ले.	स	य.	भक्ति.	आ.	उ
Ì	9	4	Ę	2	0.11	1	4	٩	0 0	9	1	1	5 1	1	1 9	9	9	٦ -
Į	संया	31.4	A	24	ь н.	p.	F.	अंग्रीम	+ 5	574	य स	क्रुंब,	4-7.	\mathcal{V}_{i}	धाः	अनु.	आहा.	२ साका. अना.
-				15	6	ò	20		17				मा. १		1		1	अना.
			}	\(\frac{1}{\sqrt{2}}\)	Œ				1 ,				\$1,5				! !	}
- 1				6							1							[

न. २७९ वैक्रिधिककाययोगी जीवोंके सामान्य भाजाय.

i	₹,	जा	q.	W	4.1	1. 2	(本) ⁽	यो	चे.	4.	- - -	πη.	۵.	ìE,	н.	ч.	याब	आ	₹.
Í		9	Ę	70	8	2 1	2	>	3	1	Ę	/	٠.	$\sigma_{\!\!k} = \xi$	₹	ě	,	?	२
1	मि.				Ť	₹	म य	ब,			ज्ञान ३	441	r, 🕏	मा 🤅	भ		म	आहा	माका.
-	मा.	H			ē	ξ. έ	- E				भंगा ३		विना	I	<i>₁</i> { •				अना.
	सम्य.	1															!		1
	आंब.									r							}		- 1
		1												ĺ	1				
		1					1		' !					1	}				1

वेउच्चियकायजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउच्चियकायजोग, तिण्णि बेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्माओ, भविमिद्धिया अभविसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा

ेंबेउव्यिकायजोगि-सामणसम्माइङ्घीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी,

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादार जीवोंक आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक मंत्री-पर्याप्त जीवसपास, छहों परिष्तियों: द्रों प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगित और देवगित ये दे गितियों, पंचित्रियज्ञाति, जसकाय, वैकिथिककाययोग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दे। द्रीन, द्रव्य और नायसे छहों छेद्याणं, सव्यक्षित्विक, अभव्यक्षित्विक: मिथ्यात्य, संज्ञिक, आहारक, स्थाकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिककाययोगी सासाइनसम्यग्हार् जीवेरिक आलाप करने पर—एक सासाइन गुणस्थान, एक संजी-पर्याप्त जीवसमास. छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणे, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेरिट्यजाति, जसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों

नं. २८० वैक्रियिककायथोर्गा मिश्यादष्टि जीवोंके आलाप.

ग जी. प. थ्रा मं. ग. इ. था. था. व. न. ा. मय. द हे. भ. स. स.सि आ उ. ११६१० ४२७ ४१ १ १ १ ४ १ १ १ १ १ १ १ १ मि सप. न पना तम वे अता तम चक्षु. भा १ स. मि. स. शाहा माका. द. अन अ. अना.

नं. २८१ विकिथिककाययोगी भासादनसम्यग्दृष्टि जीवींके आलाप.

Į ŋ		ज	1	ч.	प्रा	3		II.	₹.	का	या	ā.		शा.	म्य.	द.	ले		स,	म.	माही.	! आ.	उ.
,		۶	ĺ	દ્	۶ 4	-		ર	\$?	۶	₹	6	3	۶	3	蛋	Ę	7	۶	۶	,	2
म	I. ³	म_।	q				•	न	पन	त्रम	વ			গ্ৰনা	अस.	चधु.	भा	. 5	स.	मा.	मं.	आहा.	साका.
				1			•	r Š								अच.							अना -
1								- 1			1			}			1						

तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

वेउव्वियकायजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणिहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, द्वा-भावेहि छ लेस्सा, भवासिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागास्त्रजुत्ता होति अणागास्त्रजुत्ता वां

वेउन्वियकायजोगि-असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, नमकाओ, वेउन्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो,

वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैकियिककाययोगी सम्याग्मध्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संक्षापं, नरकगित और देवगित ये दो गितयां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, पंकियिककाययोग, तीनों येद, चारों कपाय, तीनों अक्षानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रस्य और भावसे छहां लेक्स्यापं, भव्यासिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं

वेकियिककाययोगी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविग्तसम्य-ग्दिष्ट गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति थे दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वेकियिककाययोग, तीनों चद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों

नं. २८२ वैक्रियिककाययोगी सम्यग्मिथ्याद्यप्र जीवोंके आलाप.

η	जी-	٩.	प्रा	म्	Ψ,	₹.	का.	यो.	वे.	奪.	ह्या.	सग	₹.	ले.	₽.	н.	साज्ञ.	आ	₹.
8	*	Ę	१०	K	3	7	9	У	3	હ				द्र. ६		9	₹.		२
100	÷				न.			ā.			সন্না	अस.	चक्षु-	भा. ६	ч.	मम्य.	₩.	आहा.	साका.
Hea	b				न द	<u>ط</u> ا٠	N.				₹		अच.						अना.
1						_					शान								
1_											मिश्र.						t		

तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेम्साओ, भविभिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वार्।

वेउच्वियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एगो जीव-समासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउच्वियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसण, द्व्वेण काउलेम्या, भोवण छ लेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्ञत्ता वा

लेक्यापं, भन्यसिद्धिक, आपक्षामिक, खायिक और क्षायोपद्यामिक ये तीन सम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवेंकि सामान्य आलाए कहते पर — मिश्याद्दष्टि, सासादश-सम्यग्द्दष्टि, और अविरतसम्यग्दिष्टि ये लीन गुणस्थान, एक संजी-अवर्याप्त जीवसमान, छहां अवर्याप्तियां, सान प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगीन और देवगीन ये दे। गीनयां, पंचेन्द्रियज्ञानि, असकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, नीनों येद, चारों कपाय, विभंगाविद्यानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेद्रया, भावने छहीं, लेक्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्निध्यात्वके विना पांच सम्यग्न्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २८३ वैक्रियिककाययोगी असंदनसम्यग्द(ए जीवोंके आलाप.

133		जी.	प	भा	म	9Ţ	₹.	ŁŢ,	यो-	1	Æ	帮!.	मय	द	75	¥Ľ	ग	म,इ	311.	<u> </u>
į	₹	۶	ફ્	10	8	₹		7	8	ર	É	3	5	2	₹. €	¥	ಫ	>	9	સ
1,		स. प.		i		न.	te:	h.	बे.			र्मात	ìЧ.	के,द.	•Π. ξ	भ.	आप	स	स्था.	साका
1	5					द.	Ö	ar.				शत.		विना,			भा			अना.
-	į			1								अव.					धाया,	,	,	
				1															J	ĺ
- (ļ			1																

मं. २८४ वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

] ਗੁ.	∫र्जा.	q	श्रा.	मं	ग.	₹	का	यो.	ব	ą,	न्रा	सय	द्	ढे	47	स	मांज	अं।	ं उ
₹	?	ξ	৩	8	á	Ŗ	۶	8	ર	¥		*	₹	द्व १	4	60	۶	, ,	٦
मि	सं.अ	31.			न.	q.	, H:	वे भि			कुम.	असं.	क.द.	का.	भ	र्म.	स.	आहा	साकाः 'अनाः
					दे.		ন				~ 3		विना	भा. ६	अ	सामा		}	ं अना.
अवि											मीत.					आ		'	İ
1	1				1						श्रुतः					क्षा			. 1
1	1			ı			1				अब.					क्षायो.			i .

वेउन्तियमिम्सकायजोगि-मिन्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवममामो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तानि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, वेउन्तियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंगण, दन्वेण काउलेम्सा, भावेण छ लेस्माओः भवमिद्धिया अभवभिद्धिया, मिन्छत्तं, म्यिणणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे

वेउव्वियमिस्सकायजोगि-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीं, पंचिदियजादी,

विकिथिकिमिश्रकाययोगी मिश्यादिष्ट जीवोंके आलाए कहने एर—एक मिश्यादिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीउसमास, छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, नरकगित और देवगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, वैकिथिकिमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दशेन, द्रव्यमे कापात- छेदया, भावसे छहां छेद्याएं: भट्यसिद्धिक, अभ्व्यसिद्धिक: मिश्यात्व, संविक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रिथिकांमश्रकाययोगी सारादशसम्बर्ग्टि जीवेंकि आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक लंकी-अपर्यक्ष जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सःत प्राण, चार्ने संकारं, देवगति,

९ ण सामणा णारयापुण्णे । गी. जी १२८.

नं. २८% चेकियिकनिश्रकाययोगी मिथ्याद्यप्ट जीवोंके आलापः

िग	जी.	q.	भा.	म	4]	ร์	का.	यं।	व.	क	লা.	मय	द.	હ.	स.	स.	गांश	भा	3.
	9	Ę	৩	1	ş	*	/	, 9	3	6	ર	ধ	ર	₹ ?	₹	,	y	,	1 २
ाम.	म अ.	अ			न दे.	प.	त्रम	व.1म						का. मा ६			म.	आहा.	'साकाः अनाः

न. २८६ वैकि येकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दीष्ट जीवोंके आलाप.

																		3.
१	۶	Ę	৩	813	7	2	,	ર	ĸ	ેર્	,	ર	द्रः	7	×	1 3		. २
मा.	म.अ	अ.		₹.	q	त्रस.	वे.मि.	.₹//		कु.म.	अस.	चक्षु.	का.	म.	मा.	स.	आहा.	माकाः
1 1								Ŋ.		कुथ.		अच.	भा-ह			1		अना.
1 1				1												1		
1		t		1									i			i		1

तसकाओ, नेउब्नियमिस्सकायजोगो, णवुंसयनेदेण निणा दो नेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्नेण काउलेस्सा, भानेण छ लेस्साओ; भनसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुनजुत्ता होति अणागारुनजुत्ता ना ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगि-असंजदमम्माइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, वे गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, पुरिस-णवुंसयवेदा त्ति दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वां

पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्षियिकमिश्रकाययांग, नपुंसकचेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेद्या, भावसे छहों लेद्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, नरकगित और देवगित ये दे। गितियां, पंचेन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, यैकियिकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दे। वेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्वयसे कापोत लेदया, भावसे जघन्य कापोत लेदया और तज, पद्म तथा शुक्क लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, औपद्मिक, आयिक और आयोपद्मिक ये तीन सम्यक्त्व; संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २८७ वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्द्धि जीवोंके आलाप.

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर--एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय. आहारककाययोग, एक पुरुपवेद होता है तथा स्त्री और नपुंसकवेद नहीं होते हैं।

शंका- आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान - क्योंकि, अप्रशस्त वेदोंके साथ आहारकऋदि नहीं उत्पन्न होती है।

वेद आलापके आगे चारों कपाय, आदिक तीन ज्ञान होते हैं। मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका यह कारण है कि आहारकऋदि और मनःपर्ययञ्जानका सहानवस्थानलक्षण विरोध है अर्थान् ये दोनों एक साथ एक जीवमें नहीं रहते हैं। ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं परंतु परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है; क्योंकि, इसके साथ भी आहारकहारीरका विरोध है। संयम आलापके आगे आदिके तीनों दर्शन, इन्यसे शुक्ललेख्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेख्याएं: भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपश्चामिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं, परंतु उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है; क्योंकि, इसके साथ भी आहारकहारीरका विरोध है। सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ मणपङ्जनपृहिहारो पुरुष्पुत्रसम्मत्त दोण्णि आहारा । <u>एदेस पू</u>क्रपगदं णस्थि ति असेस**यं जाणे** ॥ गोः जी, ७२८.

नं २८८

आहारककाययोगी जीवोंक आलाप.

गृ.	जी.	ч.	मा.	स.	η.	ž.	का.	यो.	व.	奪.	লা.	सय.	द.	ı हे.	। म.	्रम.	! सक्रि	्र आ.	ब.
?	₹.	Ę	? o	४	Ą	ş	7	१	₹.		•		•			ર	₹_	, ,	٦ -
7#.	ь				म.	पंचे.	त्रम .	आहा.	Ţ.		माते.	सामा.	के.द.	गु.	ਮ.	क्षा.	सं.	आहा.	्रसाका.
ii.	1		1								श्रुत.	छदा.	विना	भा ३		क्षायो.			अना.
1			1								अव.	1		शुम∙	İ			l .	:
<u></u>					١.,		j					1		j	1)	1		

आहारिमस्तकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एअं। जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, भणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, आहारिमस्तकायजोगो, पुरिसवेदो, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, दो संजमा, तिण्णि दंसण, दव्येण काउलेस्सां, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्माओ; भवमिद्विया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होंनि अणागारुवज्जता वा

कम्मइयकायजोगाणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, मत्त जीवसमामा, क्र अपन्जत्तीओ पंच अपन्जत्तीओ चत्तारि अगन्जत्तीओ, सजागिकेवलिं पहुच दो पाण, संसाणं सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण निण्णि पाणः चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजागो, तिण्णि वेद अवगदेवेदो वि अस्थि, चत्तारि

आहारकमिश्रकाययोगी जीवेंकि आलाप कहते पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास्त छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, वारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेत्द्रिय-जाति, असकाय, आहारकमिश्रकाययोगः पुरुषयेद चारे। कपाय, आदिकं तान ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना य दे। संयम, आदिकं तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेद्या, आवसे तेज, पद्म और गुक्क लेद्याएं, भव्यसिक्तिकः आधित और आयोपदामिक ये दे। सम्यक्त्य, संविक, आहारक, साकारोपयोगी और जनाकार एकेसी होते हैं।

कार्मणकाययोगी जीवंकि सामान्य आराप करन पर—िमण्याद्यष्टि, सासादनसम्यन्द्यि, भिदिरतसम्यन्द्यि और संयोगिकेवली ये चार गुणस्यान, मंकी-पंचिन्तिय जीवंकि लेकर एकोन्दिय जीवंकी अपेक्षा अपर्याप्तकालभावी मान अपर्याप्त जीवसमास, छही अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, प्रतर और लोकपुरण ममुद्धातगत संयोगिकेवलीकी अपेक्षा आयु और कायबल ये दो भाण होते हैं तथा दोष जीवंकि कमद्या सान प्राण, सात प्राण, छह भाण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों संक्षाणं तथा श्लीणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां, एकोन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी

१ प्रतिषु 'काउ-सुक्कंस्सा ' इति पाठः ।

नं. २८९

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप.

गु	. র	1.	đ	प्रा र	g. a	T \$	্কা.	यो.	वे.	क.	ज्ञा-	सय	द.	ਲ.	भ	स.	संज्ञि	311.	ु उ.
1		१ अ. उ	٠,	u	у ; П	2 2	्र त्रम	१ आ भि	lγ	У	्र मानि	२ सामा	के द	द्र. १ का	१ भ	२ श्रा	्र । सं	१ आहा	२ माका.
Γ.					**	4	1		3		धुत			मा. ३		क्षाया	. (1.	-1161.	अना.
				1	-				}		अव.			गुम.		1		, !	

कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपजन-विभंगणाणेहि विणा छ णाणाणि, जहानसाद-विहारसुद्धिमंजमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, द्व्येण सुक्कलेस्सा, अहवा छिह पजनीहि पजन-पुव्यमरीरं पेक्खिऊणुत्रयारेण द्व्येण छ लेस्साओ हवंति । मावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मन्तं, साण्णणो असण्णणो णेव साण्णणो णेव साण्णणो णेव असण्णणो, अणाहारिणो, णोकम्मग्गहणाभावादो । कम्मग्गहणमित्थत्तं पदुव आहारिनं किण्ण उच्चिद ति मणिदे ण उच्चिद; आहारस्म तिण्णि-समय-विरहकालोव-लद्धीदो । सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा सागार-अणागारेहि जुगबदु-वज्जता वा

है, मनःपर्ययक्षान और विभंगावाधक्षानं विना छह ज्ञान, यथाख्यात विहारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन, इत्यसे शुक्रुलेश्या होती है। अथवा, केवलीके छहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त पूर्व दारीरको देखकर उपचारसे इत्यकी अपेक्षा छहाँ लेश्याएं होती हैं। भावसे छहाँ लेश्याएं, भव्यिमिद्धिक, अहत्यि निहकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संहिक, असंबिक तथा संहिक और असबिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। अनाहारक शेत हैं। आहारक नहीं होनेका कारण यह है कि कार्मणकाययोगी जीव नोकर्मवर्गणाओंको यहण नहीं करते हैं।

शंका — कार्मणकाययेश्वर्का अवस्थामं भी कर्मवर्गणाओंक श्रहणका अस्तित्व पाया जाना है, इस अंप्रका कार्मणकाययोगी जीवोंको आहारक क्यों नहीं कहा जाता ?

ममाधान — ऐसा शंकाटाम्के कहते एर आचार्य उत्तर देते हैं कि उन्हें आहारक नहां कहा जाता है, क्योंकि, कामिणकाययोगके समय नोकमणाओंके आहारका अधिक से अधिक तीन समयतक विरहकाल पाया जाता है।

आहार आलापके आगे स्पाकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंने युगपत उपयुक्त भी होते हैं।

नं. २९० कार्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलापः

गु.	जी∙ ∤	ч.	या- ¹	स.	ग- । इ.	्या	⊺यो	वे.	∣क.	ह्या.	मय.	िद	∣ ক.	₩.	_ A.	सिंहा.	आ.	₹.
7	છ	६अ.	(y	8	8 3						1 2	8	A. ?	1 2	الع	ર	1 3	ર
मि.	अप.	٦,,	ø.	<u>.</u>		ĺ	कामी	. ⊨	1=	मन.		[ा .	म.	ांभे	₹.	अना	साका.
मासा.		٧,,	Ę	क्षीयभ	1			1 12	अकषा	्विम.	यथा.		अथ.	अ.	मा.	अस.		अना-
अवि.		į	7	35	1			1	7)	विना	1		, ê	1	क्षा.	अनु.	1	यु.उ.
सर्या.			¥			1	1			1		1	मा. ६		क्षायो.			
			₹,२				İ	1	1				1		ओप.			

कम्मइयकायजाग-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, यत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंगण, दच्चेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां

कम्मइयकायजोग-सासणमम्माइहीणं भण्णमाणे अन्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लस्साओ; भवसिद्धिया,

कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, अपर्याप्तकालभावी सात अपर्याप्त जीवसमासः छहां अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां सात प्राण, सान प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकोन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद. चारों कपाय. आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इन्यसे शुक्कलेख्या, भावसे छहों लेख्याणः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कामणकाययोगी सासादनसम्यन्दि जीवोके आळाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमामः छहीं अपर्याप्तियां; सात प्राणः चारों संज्ञाणं, नरकगतिके विना रोप तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कामणकाययोग, तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे गुक्रलेख्या, भावसे छहीं

नं, २९१ कार्मणकाययोगी मिथ्याद्यप्रि उ	जीवींक	आलाप.
---------------------------------------	--------	-------

गु.	जी.	۲.	प्रा	स	ग 🗦	का । यो ∣वे	क. ⊢ सा. संय.	₹.	∣ ले. म.∤स. मिझ.∤ आ.∤ उ.	1
9	હ	६अ	ড	8	8 4	ξ ; ° ; ξ	४ २ १		3. 2 2 2 2 2 2	1
मि	अप.	५अ.	৩			⊤कार्म.	बुम ⊣अस	चक्ष	्रेञुः भा∙िम । स अनाः साका	ı
	i	४अ	ξ		1	1	બુ ઝ્.		सा.६ ज. अस अना.	1
	•		**)		1		1	1
1			X	1	ŀ	1				١
	i	İ	₹	1		1				1
				'		<u> </u>	1 1			j

सामणसम्मत्तं, साण्णिणो, अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

कम्मइयकायजोग-अनं जदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामो, छ अपज्ञत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, दो वेद, इत्थिवदो णिथः; चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण सुककलेस्मा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवजुत्ता वां।

लेखाएं, भृष्यासिद्धिक, सामादनसम्यक्त्व, संक्षिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कार्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवों के आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमाम छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, कार्मणकाययोग, पुरुष और नपुंसक ये हो वेद होते हैं, स्त्रीवंद नहा होता है। चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृष्ट्यसे ट्युक्तलेश्या, भावसे छहाँ लेश्याएं: भन्यसिद्धिक, औपरामिक, आयिक और आयोपरामिक ये तीन सम्यवस्य, संजिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २९२ कार्मणकाययोगी सामादनसम्यग्दाप्र जीवींके आलाप.

1:	ij	र्जा	. प.	TR.	सं.।	ग्.	₹.	का.	याः	वै.। य	ू ज्ञा-	संय.	₹.	ੁਲੇ _	- ¥1.¦	न,	माज्ञे.	आ.	उ
1:	ę	۶	Ę	ي ر					1 - 1							₹ .	۶	>	२
ग	1	म ३	[] 3	,	·	ति.	F	1 47.	कार्भ-	1:	कम.	अस-	चक्षु.	ર્ગ	म.	पामा-	स	अनाः	माका.
1			1			म.	Ġ.				कुश्रु.		अर्थ.	मा 🙃					अना.
			1	- 1		द. │													- 1
1		,	ŧ		ļ	- 1	-			1			I		- 1				

नं. २९३ कार्मणकाययोगी असंयतसम्यग्द्य जीवोंके आलाप

ग.	र्जा-	ч.	प्रा.	₩.	₹.	इं	का	्याः	ब.	क	ह्या.	संय.	₹.	ਲ.	₩.	स.	सिहा,	आ.	3.
,	-		৬	Х	6	7	₹	y	3	6	₹	₹	ą	ह. र	1	3	,	,	ર
अधि	स.अ.	্য.				F	ħ.	कामे.	न.		माते.	अमं.	क.द.	ગ.	д.	ओप.	सं	अना,	२ साका, अना,
1						Ь	hr-		ч.		धृन.		विनाः	भा. ६		V			अन्।
ļ											अव.					क्षायो.			- 1
1								1				J	<u> </u>			1	1	1	

कम्मइयकायजोग-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ अपञ्जनीओ, दो पाण, खीणसण्णा, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खादसुद्धिसंजमा, केवलदंसण, दच्वेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, भावेण मुक्कलेस्सा चेव; भवसिद्धिया, खइयसम्मन्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, मागार-अणागोरेहि जुगवदुवजुना वा ।

सुगममजोगीणं।

०वं जोगमग्गणा समत्ता ।

वेदाणुवादेण अणुवादो जहा मूलोघो णीदो तहा णेदच्यो । णवरि णव गुणहाणाणि त्ति वत्तच्यं; वेदे णिरुद्धे उवरिमगुणहाणाभावादो । अन्थि म्वीणयण्णा, अवगदजीगो,

कार्मणकाययोगी सयोगिकेयितयोक आलाप नहने पर—एक सयोगिकेयली गुणस्थान, एक अपयोत जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियों, आयु और कायचल ये दी आण, श्लीणसङ्कात मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतनेद, अकपाय, केवललान, यथाख्यातिवहारगुद्धिसयम केवलदर्शन, द्रव्यस गुक्तेद्रया, अथवा आदारिकदारीगकी अपशा छहीं लेक्याएं होती हैं, किन्तु भावसे गुक्तलेक्या ही होती हैं। भव्यविद्धिक, शायिकसम्यक्त्य, संक्षिक और असंक्षिक उन दोनों विकल्पोंने गहित, अनाहारक, साकार और अनाकार उन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

अयोगी जीवोंके आलाप सुगम ही हैं।

इसप्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई।

घेदमार्गणाके अनुवादसे कथन करने पर आलापोंका कथन जैमा मूल ओवालापमें लिया गया है विशा यहां पर भी लेया चाहिये । विशेष बात यह है । क यहां आदिके नें। गुणस्थान होते हैं ऐसा कहना चाहिए। क्योंकि वेदनिरुद्ध अवस्थामें अर्थात् वेदोंसे युक्त रहने पर ऊपरके गुणस्थानोंका अभाव है । तथा यहां पर क्षीणसंक्षा, अपगतयोग, अपगतवेद, अकपाय, अलेक्य,

१ अ प्रती 'तं जहा णेख्या ' क त्रता 'ज जहा णेख्या आ प्रती 'तम्हा णेख्या 'इति पाटः । मं. २९४ कार्मणकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप.

ग्	जी₊	q	प्रा.	सं	ग.	₹	का	या.	वे	क.	श्रा.	मय.	₹.	हे.	₽.	स.	माझे.	आ.	₹.
1 2	2	Ę	ર	0	8	*		1	0	٥			8	द्र.१	3.	٤	0	8	2
सयो.	अप.	÷	आयु.	H-	म.	q	त्रसः	कार्म.	-	<u>:</u>	केव.	यथा	क.	ગુ.	स.	क्षा	अन्,	अना.	साकाः अनाः यः उः
		ক	काय,	<u>च</u>					अव	195				अथ.६					अना,
				80						מו				मा.र					यु. उ.
l	ĺ						1	_		<u></u>				શુ.					

अवगदवेदो, अकसाओ, अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, णेव सिण्णिणो णेव असिण्णिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति त्ति एदे आलावा ण वत्तव्वा । केवलणाणं, केवलदंसणं, मुहुमसांपराइयसुद्धिमंजमो जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो च अवणदच्या। अणिदिया वि अत्थि, अकाइया वि अत्थि, एदे वि आलावा ण वत्तव्या।

ं इत्थिवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जनीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, आहार-आहारिमस्सकायजांगेहि विणा तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, मणपज्जव-केवलणांगेहि विणा छ णाण, परिहार-सुहुमसांपराइय-जहाक्खादविहारसुद्धि-संजमेहि विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेम्सा, भवसिद्धिया अभव-

भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे गृहित स्थान, साकार और अनाकार उपयोगोंसे गुगवन उपयुक्त स्थान, इतने आलाप नहीं। तहना चाहिए। तथा नेत्रल्लान, केवलद्दीन, सूक्ष्मसाम्परायगुद्धिसंयम, और यथाल्यातिविज्ञान्द्र, दिस्यम इतने अलाप भी निकाल देना चाहिए। और अनिन्दिय भी होते हैं, अकादिक भी होते हैं ये आलाप भी नहीं कहना चाहिए।

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नो गुणस्थान, संक्री-पर्याप्त, संक्री-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संक्रीके छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां। संज्ञीके दशी प्राण, सात प्राणः असंज्ञीके नो प्राणः सान प्राणः चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचीन्द्रयज्ञाति, असकायः आहारककायये। ग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योगः स्त्रीवेद, चारों कपायः, मनःपर्यय और केवछज्ञानके विना शेष छ ज्ञानः परिहारविद्युद्धि, स्क्ष्मसाम्पराय और यथाल्यातविहारशुद्धिसंयमके विना शेष चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेदयापं, भव्यसिद्धिक, अभ्रन्यसिद्धिकः छहाँ सम्यक्तवः

नं. २९५

स्रीवेदी जीवोंके सामान्य आराप.

1 1	जी-	प. प्रा.	स- ग- इ.	का. यो	वे.∣क झा.	सय. द.	હેં ક	भ. स.	सक्ति.	આ.	હ.
९	8	₹ प. १०	8 3 9	३ १३	3 8 8	४ ३	द्र. ६	२ ह	` २	3	2
,ig	स. प.	६अ ७	ति ।	be 3∏ा. √ ३	र्था. मनः कं≭.	अमं केंद्र.	भा. ६	म ¦	सं.	आहा-	साका.
NE SE	स अ	५प. ९	ਸ. ^{ਹੋ}	कि विना.	कर.	देश विना	;	अ.ं	अस.	अना.	वनाः
1	अस प.	५३४, ७	दे.	1	वना	स मा,		1			
	असं.अ.	' '		1	1	डे दो.			, ,		

नं. २९६

सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजनीओ पंच पजनीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवदो, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

इत्थिवेद-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणद्वाणाणि, वे जीवसमामा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमा,

संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके ना गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, ना प्राण, चारां संज्ञाएं, नरकातिके विना शेष तीन गतियां, पंचिन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयाग, चारों वचनयोग, ओदारिककाययोग और विकियिककाययोग ये दश योगः स्त्रीवद, चारों कपाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, इच्य और भावसे छहों लश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहां सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्रीवेदी जीवोंक अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां सात प्राण, सात प्राणः चारों संझाएं, नरकगितके विना रोष तीन गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्त आलापः

t o string	. जी २ स.प. असंप	प ६ ५	प्रा १० ९	स ग. ४ ' ३ ति - ' म. दे.	इ.का. यो. १.१ १० प. त्र. म.४ व.४ औ १	वं १ स्रो	क. हा. ४ ६ मन कत्र विना.	सय• ४ अस• दश• सामा	द. ३ के द. विनाः	ह. ६ मा. ६	स∙, २ भ∙ अ∙	स मिह्न ६ २ स • असं-	. आ. ु उ. १ २ आहाः साकाः अना.	
13				द.	ाओं र ⊤वें∙ १		विगा-	खामा छदो		<u> </u> 				1

दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तमिदि दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ं।

इत्थिवेद-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपन्जनीओ पंच पजनीओ पंच अपजनीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जाग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दन्व-मावेहि छ

दं। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शृक्क लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

नं २९७

स्त्रींवदी जीवांके अपर्याप्त आलाप.

, ग	र्जा.	ď	भा,	मं	ΨĮ	इ.का	या	প,	4	হ্যা	सग	¹ द.	छ. स∙	펵.	मिश्	आ.	ਤ.
2	- 2	६अ.	U	γ	, 2	2 5	. -	3	ď	ર	y	¹ ર	द्र. २ २	્ર	२	ેર	্ ২
मि-	ग अप	ور ۲۰	وا		र्गि	q. 3.	ओं.मि	. Fúi.		कुम	गस.	चक्षु	का. भ.	्रीम.	ਂ ਚ.	आहा.	साका.
	असं		1		स.		वःभि.			कुथ.			शुं अ.				
	,				दे		कार्म.			- 3			मा,३		1		
-			1	}	F.C.	1							'अञ्.।		1		. [
1		ì	ĺ			ı I			i			1	1		1		

ने. २९८

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी-	q.	प्रा.	सं	ग.	\$	का.	यो-	व	क	⊨ ह्या - [सय.	्द.	, છે.	्रभ	. स.	सक्नि-	आ.	उ.
१								۶ ۶											ર
मि.	सं. प.	६अ.	0		iđ.	q.	नस	आहा.२	र्ह्या.		अज्ञा.	अस.	चक्षु	ंभा	६ म -	मि,	स.	आहा.	साका-
	स. अप		1 *		म.			विनाः					अच.		अ.	1	असं.	अना.	अना.
1	अस. प.	431.	y		ζ.		1				,				1		1		
	अस.अप.		<u>,</u>				1				I	1		I	1	l			

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, मण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणं अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ पंच पजनीओ, दम पाण णव पाण, चनारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चनारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भाविह छ हेस्साओ, भवमिद्विया अभवसिद्विया, मिन्छनं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुना होंति अणागारुवजुना वां।

तेसिं चेव अपजन्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, वे जीवसमासा, छ अप-अत्तीओ पंच अपजनीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

छहीं लेश्यापं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिश्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादि जीवोंके पर्यात्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, ना प्राण: चारों संज्ञाण, नरकगितके विना शेष तीन गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग, आदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योगः स्त्रीवद, चारों वचाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व. संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादिष्ट जीवींके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण: चारों संज्ञाण, नरकगतिके विना रोप तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वेकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग: स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २९९ स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

																					J. ,
	?																				
मि-	सं.प.	u,	6		ति.	पचे.	तस	Ħ	γ	र्म्चा		अझा.	अमं -	चक्षु.	सा	ફ	म.	मि-	सं.	आहा.	साका.
	असं.प.				Я.			व	ሄ					अच			अ.		अस.		अना.
1					दे.	1		ओ	. ?												
1			1		1			व.	. १				ı	ı							
L) l		}	ì	1	1	1	1		J	l	1	l								

असंजमो, दो दंमण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-मिद्धिया अभवमिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु वजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-मामणमम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, वे जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिद्यिजादी, तमकाओ, तरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लस्माओ, भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

दो दर्शन, द्रव्यमे काणीन और शुक्क लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और का<mark>पोतलेक्याएं:</mark> भव्यसिद्धिक: अभव्यक्षिद्धिक, निष्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनुकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी सामादनसम्पर्दा जियेकि नामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: इजों प्राण, स्त्र प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगतिके विना दोप तीन गतियां, पंत्रेन्त्रियज्ञाति, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना दोष तेरह योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञात, असंयम् आदिक दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेदयापं, भव्यसिद्धिक, सालादनसम्बन्धत्व, सिज्ञक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ प्रति । तर उत्स्विकः पाटः समस्ति ।

नं, ३००	स्त्रीवेदी	मिथ्याद्यध्	जीवांके	अपर्याप्त	आलाप.
41. 4	• જાાનવા	समय्या नह	जाभाक	ગવવાળ	- अवस्त्यम् अन

1 7	जा.	ч.	41.	η	41	٠	का	या	ર્વ	Ŧ,	គារ	मय.	₹.	₼.	મ.	7(म शि	311	ड.
) >	~	Ę	پ	8	₹	- 7	/	3	,	1	ą	9	ર	7.3	3	,	J	ર	ર
																			साका-
	अस.,,	4			म			व.मि			कुश		अंचे	"I.	1		अम्.	अना.	अनाः
		গ.			ढे			कार्म.			_			मा- र					
]_														州 河。					

नं. ३०१ र्स्नाचेदी सामादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी,	। प.	त्रा.	म, ग.	を。	4.1	या.	व. ∣व	, ना.	स्य.	₹.	v.	4. 开	. माही.	् आ.	ुउ. ।
,	۲.	ξ	y 0	- -	8	,	/ ₹		₹ 3		•	7. 4		Ŗ	ર	7
मा.	स.प	प	₉	্রি	पुच	<u>.</u>	जाहा. े	र्याः	अन्ना	अम.	ન્વશુ	सा ः	स- ॑गा,	₹.	आहा.	साका.
	स•अ,	ે ફ		म.		li	译事。				अर्घ.			1	अना-	अना.
		[3]-		!दे.			विना-	J	1	1	ł	<u> </u>				

तेसिं चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंत्रमी, दो दंसण, द्व्य-भावेहि छ लेस्साओ, भविष्टिया, सामणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासा, छ अपज्जनीओ, यत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एंचिदियजादी, तमकाओ, तिण्णि जाम, इस्थिवेद, चत्तारि कमाय, दा अण्णाण, अमंजमा, दा दंमण, दृष्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ड-णील-काउँलेन्याओ; मर्यामद्विया, मामणमम्मत्तं, मण्णिणो,

उन्हीं स्त्रीवेदी सामादनसम्पर्टी जीवीक ए प्रित्तकाट संवर्षी आलाए कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवपनास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, नरकगतिके विजा शेष तीन गतियां, पंचीन्द्रपञ्चाति, वश्वसाय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोगः औद्यारककात्रयोग और देशियकका ग्रंथा में दश योगः स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दशन, द्रव्य और भावसे छहा लेदबाएं: भ्रथ्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त, संक्षिक, आहारक, साक्षारोपयोगः और अवाकारोपयोगः होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी सामादनसम्बर्धाष्ट जीवेंकि अपर्यानकालसंबर्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान एक रांजी-आर्याप अध्यासाम, छवां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचीन्द्रयज्ञाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, अस्यम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे काषीत और शुक्क लेश्याणं, भावसे हुण्ण, नील और काषीत लेश्याणं भव्यामिद्धिक, सान्यादनसभ्यक्त, संज्ञिक, आहारक,

९ प्रतिष् 'तेड ' इयाधिक पाठः समास्त ।

नं. ३०२ स्त्रीवेदी सासादनसम्प्रश्टि जीवेंकि पर्याप्त आसाप.

																	आ.	₹.
		90	6:	3	,	2	20	1	r	રે	,	5	3 € ¢	4	,	,	*	ર
सा.	स.			์ส	नाः	٠	म. ४			ह्या.	dp+,	चशु.	सा. ५	म.	यभा	η,	आहा.	साका. अनाः
1	ч.			ц	Ë	R.	व. ४					अच.						अना.
1				₹.			औ. १											
]						व. १											J

आहारिणो अणाहारिणो, सामास्त्रजुत्ता होति अणागास्त्रजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-सम्मामिन्छ।इड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, वत्तारि सण्णाओ, निण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दम जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि नीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, अमंजमो, दो दंसण, दन्व-भोवेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्माभिन्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागास्वज्ञता होति अणागास्वज्ञत्ता वा

इत्थिवेद-असंजदसम्माउङ्गीणं भण्णमाणे अन्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवसमामो,

अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी सम्याग्मध्यादृष्टि जीवेंकि आलाप कहने पर—एक सम्याग्मध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझा-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, जारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, जारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग स्त्रीवेद, चारों कपाय, नीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन जान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृष्य और भावसे छही छह्याएं, भव्यासिद्धिक, सम्याग्मध्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दिए गुण-

नं. ३०३ स्त्रीवेदं। सासादनसम्यग्द्धि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप.

ग.	जी.	q	मा.	मं	Ψ,	S	का	याः	₫.	Ŧ	आ.	मग.	₹_	65	म.	स	,मीइ	आ.	ਤ.
	-	•			•												1		ર
मा. स	તું અ.	अ.			Íн.	ч.	तम.	भौगम	圳		कुम.	अस.	चथु.	हा ग	म-	मा.	स	आहा.	साका-
1					Ħ			व.मि.			कुश्रुः		अच.	मा.३			1	अना	अना.
1					₫,			कार्म.						अगु.			1		ł (
					1												1		

नं. ३०४ स्त्रीवेदी सम्यग्गिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

ŋ.	जी.	q	ЯI	4	₹,	₹.	का.	यो.	ब.	죡.	ξII.	मय	द.	છે.	₫.	_म.	साझि.	आ	उ.
श	*	_ξ	90	X	₹	Ę	?	9 0		ಕ	3	Ŗ	ર	ቻ. ዩ	*	2	7	₹.	ર
1	Г				ति.	_		म ४	+1		अबा.	अस.	च क्षु	मा, ह	म.	सम्भ	η,	आहा.	साका.
#	Н. Ч.				₽.	व	7	ब्४			₹		अच						अना.
					दे.			ओं १			शान.								
_								व. १			मिश्र.								

छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दम जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंमण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ं।

ं इत्थिवेद-संजदामंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान. एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चागें संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चागें मनोयोग, चागें वचनयोग, अंदारिक काययोग और विक्रियिककाययोग ये दश योगः खिंचद, चागें कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्य और भावभे छहों लेश्याएं, भव्यमिद्धिक, अँपशमिक, आयिक और आयोपशमिक ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी संयतामंयत जीवेंकि आछाप कहते पर नाक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संजाएं, तिर्यचगित ओर मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनायोग, चारों यचनयोग और

नं. ३०'५ स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके आलाप.

[गु₊ जी ्	प प्रा स	ग	इं. का.	यो-	ন	क्,	লা.	मग	S	ϵT_{i} .	भ	म	मार्घ	1 41.	;
8 8	& 120 8	₹	१ - १	8	,	6	٠.	۶	<	द्ध. ५	9	ಚ	,	1 9	₹
<u>क्ष</u> स. प.	1	निः म. दे.	य य	स. ४ व ४ ओ.१			मति. शृतः अवः	अग.	क.द. विना.		स.	आप क्षा क्षायी		भाग.	याका अनाः
11		``		व. १			11					4 (1	1	ı	

नं. ३०६ स्त्रीवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.∤ जी.	q.	. त्रा., स	ग.	₹.	, का.	य	Ì.	वे	Æ	ह्य	सय	٦.	ले.	भ.	य.	,माझ	. Ж.	ਰ.
१ १	ξ	80 8	3	8	1.	0			R	ર	, १	₹	द. ६		ર	7	?	ર
. सं. प. कि			ति	্বা	4	स्	6	· il.		मात.	डग.	ंके.द.	सा २	भ	·Ph	स	जाह्म	, साका. अना.
cho.			Ħ	-	100	ৰ	1			अत.		ंबिना-	ञभ.		क्षा.			अना.
	f					आ.	,			अव.					ञ्चायो.			
ļ		ſ																, 1

जोग, इन्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमा, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्पाओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

इत्थिवेद-पमत्तसंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चतारि मण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जाग, आहारदुगं णिन्धि । इत्थिवेदो, चत्तारि कमाय, मणपजनणाणेण विणा तिण्णि णाण, परिहारमंजमण विणा दो मंजम, कारणं आहारदुग-मणपजनणाण-परिहारसंजमिहि वेददुगोदयस्य विरोहादो । तिण्णि दंमण, दन्नेण छ लेस्माओ, भावेण तेउ-पम्म-सुककलेम्माओ: भवमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

आंदारिककाययोग ये नो योगः स्त्रीवद, चारों कपाय, आदिके तीन क्षान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेह्याएं, भावसे तेज, पद्म और ट्युक्ट लेह्याएं, भव्यसिद्धिक, औप-शामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संशीपर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संबाएं, मनुष्यगति, पंवेन्द्रियजाति,
त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योग होते हैं
किन्तु आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोग नहीं होता है। योग आलापके आगे
स्त्रीवेद, चारों कपाय, मनःपर्ययक्षानके विना आदिके तीन क्षान, परिहार्गविद्युद्धिसंयमके विना
आदिके दो संयम होते हैं। यहांपर आहारकाहिक मनःपर्ययक्षान और परिहार्गविद्युद्धिसंयमके
नहीं होनेका कारण यह है कि आहारकाहिक, मनःपर्ययक्षान और परिहारविद्युद्धिसंयमके
साथ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उद्य होनेका विरोध है। संयम आलापके आगे आदिके
तीन दर्शन, इत्यसे छहीं लेश्याणं, भावमे तेज, पद्म और द्युक्क लेश्यापं: भव्यिमिद्धिक,
औपरामिक, आयिक और आयोगशियोगिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी

तं. ३०७

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयन जीवोंके आलाप.

ग.	जी	q	ЯI	म	ग .	\$	和	यो	वे.	क	লা	सय	द	ल	भ	म	साज्ञ.	आ	, उ.
, ,	2	Ę	10	8	8	ĸ	- 8	9	१	Y	3	ર	₹	द्र , €	7	4	7		` 2
प्रम -	सं.प				Ħ	ч.	'n	# 8	FÍI.		मित.	मामा.	क.द.	मा. ३ म	ī.	ओ	₹.	आहा	साका-
							(TV	व. ४			श्रुत.	छदो.	विना	गुम		क्षा.			अना.
ł					,			आ. १			अव.				3	हायो.			1
1																			- 1
1	1)														, 1

अणागारुवजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-अष्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जतीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, नसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, द्वेषण छ लेस्साओ, भावेण नेउ-पम्म-सुक्तलेम्साओ, भविमिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवज्ञता वा ।

इत्थिवेद-अनुवन्नयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, तिण्णि मण्णाओ; मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो मंजम, तिण्णि दंमण, दव्वेण छ

और अनाकारीपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, जारों मनायोग, चारों यचनथोग और औदारिककाययोग ये ने योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिक तीन ज्ञान, आदिक दे। संयम, आदिके तीन दर्शन, इन्यसे छहां लेह्याएं, भावसे तेज, एवा और श्रुक्त लेह्याएं: भव्यसिद्धिक, औपश्रमिक, आयिक और आयोपश्रमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों शाण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, चारों मनोथोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन,

नं. ३०८ स्त्रीवेदी अप्रमत्तम्यत जीवोंके आलाप.

(गु	जी.	प. भा	₹,	ा ग्र∣ इं.	का	्यो.	व क	ह्या.	सय.	द.	छ,	Ħ.	स्	मित्र.	आ.	उ. ∣
9	9	६।१०	ર્	9 1 9	9	٧,	9 8	3	ર	્રે	≭ ६	9	ৃং	9	9	2
15	स.प.		आहा	म. हि	E.	म ८	र्मा।	मति	गामा	के.द.	मा २	म.	आप.	म.	आहा.	साका.
ক			विना	6	Į.	वे. ४		श्रुत.	छदा.	विना	ग्म.		क्षा.		1	अना.
1				}		आ.१		अव.					क्षाया		ł	,
L		l l													1	<u> </u>

लेम्साओ, भावेण सुक्कलेस्मा, भवसिद्धिया, वेदगेण विणा दो सम्मर्त्त, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ं।

इत्थिवेद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्या; भवमिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा

दृष्यसे छहों लेक्याएं. भावसे शुक्कलेक्याः भव्यासिद्धिक, वेदकसम्यक्स्वके विना औपका-मिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्वः संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-वागोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमाम, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिष्रह ये दो संबाएं: मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयाग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योगः स्त्रीवंद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दा संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यस छहों लेश्याएं, भावसे शुक्तलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दें। सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं. ३००

र्म्यावेदी अपूर्वकरण जीवोंके आछापः

ग	जी.	ч.	яı.	स	ग्.	¢	का	या	व.	奪.	₹1.	सय.	₹.	હ.	н.	स.	साहा.	ं आ.	ं उ₊
,	१ पप.	ξ	9 0	३ आहा	१ म.	,	, 	्. म. ४	ક થી	6	३ माति.	्र मामाः	् _र क.द.	द्र. हे भा. १	, भ.	ર ઓવ.	१ सं.	१ आहा.	२ साका,
7				বিনা.		p	ir.	व ४ ओ. ४			श्रेत्. अवः	उदा .	विना	মুক্ত,		क्षा.			२ साका. अना
																	į	1	

नं ३१०

स्त्रीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

गु	ৰ্জা.	ч.	त्रा	स	1	₹.	का	यो-	वे.	죡.	झा.	सय.	₹.	ले.	η.	े स.	संहि	आ.	ਚ.
1	*	ξ						8								२	8	2	2
J.	5			Ħ	П.	पचे.	त्रम.	$\mathfrak{U}^* \ \chi$	IAI.							आंप.	, सं.	आहा.	साका.
ल	#			ď				व. ४			भ्रुत.	उदे ।	विना.	হা,≇,		क्षा.			अना.
								आ. १			अव.					1	1		i
L				_											j	}	<i>i</i> ,		1

पुरिसवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जनीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पिचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच मंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि. देा जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दम पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेम्माओ, भविभिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

पुरुषवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नो गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त, संक्षी-अपर्याप्त, असंक्षी-पर्याप्त और असंक्षी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नो प्राण, सात प्राण, नो प्राण, सात प्राण: चारों संक्षाएं, नरकर्गातके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, केवलबानके विना शेष सात क्षान, सृक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं रुस्पाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहीं सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक: आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके ने गुणस्थान, संक्री-पर्याप्त और संक्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमाम, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राणः चारों संक्षापं, नरकगिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकायः चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वेकियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्याप्ह योगः पुरुषवेद, चारों कपाय, केवलकानके विना शेष सात क्षानः सुक्षमसाम्पराय और यथाक्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य

न. ३११ पुरुपवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी-	ч.	प्रा	स-। ग	₹.	का.।	यो.	व.∤क	. হা:	सय.	₹.	ले.	भ.	स₌	साझ.	आ.	ਤ.
9												द्र. ६		Ĝ	ર	ર	२
您	स. प. स. अ.	६अ.	v	∥ते.	, 'di	be !		ď.	क 🛪 🕻	दश	के द्	भा, ६	#		सं.	आहा.	साका.
IĘ.	स. अ.	५प.	8		ا حظ	Tr.			विना	सामा.	विना		अ.		अस.	अना-	अनाः
112	असं प	५अ.	6	ंदे.		1		. 1	ł	छेदो.	! 						1
1	असं.अ.	,	'	1				1 1	i	र्वार.			1				

मण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा "।

'तेसि चेव अपजराणं शृष्यमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जतीओ पंच अपज्जतीओ, सत्त पाण, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंमण, दच्येण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच मम्मत्तं, मण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता

धार भावसे छहों लेह्याएं, भव्यमिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त्वः संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, माकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषचेदी जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, आविग्तसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण: चारों संझाए, नग्कगितके विना रोप तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग, विकिथिकमिश्रकाययोग, आहर्रकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग, पुरुपचेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान इसप्रकार पांच झान: असंयम, सामाथिक और छेदोपस्थापना चे तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, इन्यसे कापोत और ह्युक्त लेदयाणं, भावसे छहीं लेदयाणं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिध्यात्वके विना रोप पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षकः आहारक, अनाहारक;

नं. ३१२

पुरुपवेदी जीवांके पर्याप्त आछापः

गु.	जी-	q	प्रा	स ग	Ę	क्रा	यो	q	क झा	सय	्र.	. છે.	भ- म	मिश्रि	आ. ,	₹. (
۶,	2	ξ	90	8,13	,	9	। ११ म ४	9	हे । इव विना	५ अम	'ं इ	∉,५	₹∣६	ą	,	٦ -
160	स प•	لع	8	ांन	۹,	₹.	ସି. ୪	1	स्व.	देश	कद	सा ६	ਮ-	4.	आहा ।	साकाः
113	असं प			म			भा १		[वन।	मामः.	ावनाः		ř	अस.	ſ	अना.
9				द			्वं १				1					
1							आहा. १		1	परिः	1				-	1

नं. ३१३

पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

										द. ल.			आ.	ਰ. ∣
8	ર	६ अ.	છ	8 3	হ 1	8	, 8	c _q	₹	द् इ.२	. २ , ५	2	ર	२
ींम-	स. अ	५ अ.	৩	ित	מו ישו	ુંગાર્ગમ	- पु. ।	कुम	अस	कंद. काः विना∤ श	स सम्य	सं	आहा	साका.
सा.	असं.अ			щ.	er 17	ं वे.मि	1	कथ्र	मामा	विना 🗵 घ	अ. विना.	असं.	अना.	अना,
अवि•	1			₹.	i	्रा भ		माते.						- 1
प्रम.	1				I	कार्म.	1	अत.		1	1			Į
						1	, }	अव.		i	1			1
<u> </u>	}					1	` i					1		1

होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पुरिसवेद-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणं अत्थि एयं गुणहाणं, चत्तारि जीवसमामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्गि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, तेरह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि अण्णाण, अमंजमी, दे। दंमण, दव्य-भाविह छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मण्गिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, देः जीवसमासा, छ पजनीओ पंच पजनीओ, दम पाण णव पाण, चत्तारि नण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दम जोग, पुरिसवेद, चनारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणम्थान, संक्री-पर्याप्त, संक्री-अपर्याप्त, असंक्री-पर्याप्त और अमंक्री-अपर्याप्त ये चार जीवममासः छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, सात प्राण, चारों संक्षाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पचिन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगंक विना शेष तेरह योगः पुरुष-वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृश्य और भावने छहेर लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंजिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदी मिथ्याद्दि जीवें । पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवस्मास, छहां पर्याप्तियां-पांच पर्याप्तियां- दशों प्राण, नो प्राणः चारों सजाएं, नरकगतिक विना शेप तीन गतियां, पंचीन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकि-पिककाययोग ये दश योगः पुरुषवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. ३१४ पुरुषवेदी मिथ्याद्यप्र जीवोंक सामान्य आलापः

1 J.										संयः	₹.	ਰ.	₩.	स	माझ.	आ.	उ ।
2					8 2							द्ध. ६				7	٦-
ामे∙	सं. प	६अ	v	ति.	मं चे	आहा	q.		अभा.	जम	चश्चु.	भा. इ	भ-	ોમ	स.	अक्ष	साका अनाः
1	सं. अ.	49	5	म.	D 157	ÍI.					अच		अ.		अस.	अनाः	अना.
	असं.प.	५अ.	9	द.		विनाः				1			- 1				
	अस.अ.						1	_					İ				

असंजमो, दो दंमण, दब्ब-माबेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा "।

तिमं चेत्र अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जतीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-मिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्मिणा अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

दर्शन, इच्य और भावसे छहाँ लेक्याएं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुपवेदी मिथ्यादिए जीवोंके अपर्याप्तकाललंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिए गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांत्र अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण: वारें। संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंत्रेश्ट्रियज्ञाति, तसकाय, ओदारिकमिथ्र, वेकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुपवेद, चारों कपाय, आदिके दे। अञ्चान, अत्यम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापेत और शुद्ध लेद्याएं, भावसे छहाँ लेद्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक: आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३१५ पुरुपवेदी मिथ्याद्यप्टि जीवोंक पर्याप्त आलाप.

۶	٦.	Ę	10	8 3 1 8	٤	₹ 0	1 2 8	ज्ञाः∤संयः ३ / १	4	€. €	ર	2	,	8	1 3
	् स प. जिमापः	اير	,	ातः प च	त्रम .	म. ४ व्४	Ţ	अहा. अमं	चक्षु अच्.		भ∙ अ.		-स अस	आहा.	साका अनाः
}	, ,		1	द		ओ. १ व. १				'		}	i		
			;	1 1						1					

नं. ३१६ पुरुपवेदी मिथ्याद्यष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जा-	्ष-्प्रान् स			व - कः	ह्या.	सय.	द.	्छ₊ भ	. स.	्स्रीज्ञ.	आ.	उ.
٩		६अ. ७ । ४			9 'X	3	9	3	द्र-२ ।	5 9	1 २	3	२
मि	स. अ	۶ ,, ه	्नि प्राप्त	. आ.मि.	q.	कृष.	अम.	च धु	ंका. स	ं भी	स.	आहा	साका.
1	अस.अ		म ।	त्र मि.	,	কুপ্ত	,	अर्थ.	जु. 13	7	अस.	अन्।	अना.
	,	Į	दे.	कार्म.	i		l į		भा ६				
-{	l í	. (1			Í		1	1			Ì
		1	1 1 1	1 1	,					1		i	1

पुरिसवेद-सासणसम्माइद्विष्पहुडि जाव पढम-अणियद्वि त्ति ताव मूलोघ-भंगो । णवरि सञ्वत्थ पुरिसवेदो चेव वत्तच्यो । मामण-सम्मामिच्छा-असंजदमम्माइट्टीणं तिण्णि गदीओ वत्तच्याओ ।

ं गवुंसयवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जनीओ छ अपज्जनीओ पंच पजनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि पजनीओ चत्तारि पजनीओ चत्तारि अपजनीओ, दस पाण मत्त पाण गव पाण मत्त पाण अह पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ देवगदी णित्थि, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तेरह जोग, णवुंसयवेद,

पुरुपवेदी जीवोंके सासादनसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागतकके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि वेद आलाप कहते समय सर्वत्र एक पुरुपवेद ही कहना चाहिए। तथा सासादनसम्यग्दिष्ट, सम्यन्मिध्यादिष्ट और असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके गति आलाप कहते समय नग्कगतिके विना जोब तीन गतियां कहना चाहिए।

नषुंसकवेदी जीवोंक सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, चौदहों जीयसमास, संझी-पंचेन्द्रिय जीवोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: असंझी-पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: एकेन्द्रिय जीवोंक चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: संझी-पंचेन्द्रिय जीवोंक लगाकर एकेन्द्रिय जीवोंक कमशः पर्याप्त अपर्याप्तकालमें दशों प्राण, सान प्राणः ना प्राण, सात प्राणः आठ प्राण, छह प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः छह प्राणः सात प्राणः चारों संझाएं, नरकगाति, तिर्यंचगाति और मनुष्यगति ये तीन गतियां होती हैं परंतु नषुंसकवेदी जीवोंके देवगित नहीं होती है। एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगके विना तेरह योगः नषुंसकवेद, चारों कपाय, मनःपर्ययझान

नं. ३१७ नपुंसकवेदी जीवोंके सामान्य आस्ताप.

18	१४ ६प.	प्रा. १०,७	8 3	५ ६	यो. वे क. इ १३ १ ४ ६ आदा क्र म	K	₹ 4.4	२ ६ २	२ । २
आदिके.	५प. ५अ.	८,६ نرو			िद्विकः ^{कि} । के	वः देशः नासामाः	विना	अ. असं.	अना, अना,
		₹,४ ४,३			1	छदा.			1

चत्तारि कसाय, छण्णाण, चत्तारि संजम, तिष्णि दंमण, दव्व-भावेर्हि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेत्र पज्रचाणं भण्णमाणे अत्थि णत्र गुण्डाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जचीओ पंच पज्जचीओ चत्तारि पज्जचीओ, दस पाण णत्न पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुडवीकायादी छक्काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, द्व्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मन्तं, सिण्णणो असिण्णणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति अणागारुवज्जता वा ''।

और केवलक्कानके विना दोष छह क्कान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयमः आदिके तीन दर्शन, ट्रप्य और भावसे छहीं छेदयाएं, भव्यिमिछिक, अभव्य-िछिकः छहीं सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारकः, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नी गुण-स्थान, पर्याप्तकालभावी सान जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नां प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राण; चारों संक्षापं, देवगतिके विना शेष तीन गितयां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और विकियककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, मनःपर्ययक्षान और केवलक्षानके विना छह क्षान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३१८

नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग्र- जी.	प. ्रग्रा.	स. ग. इ.	का. यो. व. क.	ज्ञाः सय.	द. हं.	मः स.	संक्रि आः	ਰ.
० ७	£ 80	X 3 6	E 80 8 8	६ ४	३ द्र.६	₹ _ €	1 2 7	3
्र पर्या. क्ष्मुहार	e, e,	न.	म४ न	मन. अस.	के.द. भा ६	स.	सं. आहा.	साका.
मादि	Y 2	। ति.	વ.૪	कव दश.	विनाः	¥.		अना.
100	9 ç	म्	આ.શ	वेना सामा.				
·			ाव.र	बेदो.		1	ļ	- 1

तेसिं चेय अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्दाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्ञत्तीओ पंच अपज्ञत्तीओ चत्तारि अपज्ञत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासण-खइय-वेदगमिदि चत्तारि समत्ताणि, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारु वज्ञता वा

णवंसयवेद-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, चोहस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ; दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छह पाण

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादिए, सासादनसम्यग्दाए और अधिरतसम्यग्दाए ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तकालमावी सात जीवसमान्त. छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण: चारों संक्षाएं, देवगतिके विना दोप तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, औदारिकमिश्र, विकायकामिश्र और कार्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, आदिके दो अक्षान और आदिके तीन क्षान इसप्रकार पांच क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्कलेश्याएं, भावस कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, सासाद्दन, क्षायिक और वेदक इसप्रकार चार सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिकः अहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदृह जीवसमासः छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दृशों प्राण, सात प्राण: ने प्राण, सात प्राण: आठ प्राण, छह प्राण:

नं. ३१९ नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

যু.	जी.	₹.	प्रा.	स	η.	ŧ.	का,	यो.	वे.	邨.	हा .	सय	द.	ਲ.	भ.	म.	साईं।	आ.	उ. │
٠,		६अ		४	₹	1,0	Ę	₹	2	У	५ कुम.								٦ -
मि	÷	५३१.	O		न.			ओं.मि.			कुश्रु.	असं.	केद	का.	भ.	्रांम. '	₩.	आहा	साका.
सा.	ক	४अ.	Ę		ía.			वं भि.			मति.		विना.	য়.	31.	सामा.	अस.	अना	अना.
अ			ч		Ψ.			कार्म.			श्रुत.			भा ३		्रशा.			
			٧,३								अव.			अशु.		क्षायो.		1	{

मत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिणिण पाण, चत्तारि पणाओ, निण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया नरह जोग, णवंमयवेद, चनारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमी, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भविमाद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिसं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, इ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दम जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमा, दो दंमण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

सान प्राण, पांच प्राणः छह प्राण, चार प्राणः चार प्राणः तीन प्राणः चारों संझाएं, देवगतिके विना होप तीन गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, आहारककाययोगिहिकके विना होप तेरह योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अहान, असंयम. आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी मिध्यादृष्टि जीवों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—पक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, बार पर्याप्तियां: दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण और चार प्राण; बारों संक्षाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः नपुंसकवेदः चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्य और भावसे छहों लेश्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, संक्षिक, असंकिकः

नं. ३२० नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

म	जी. प		মা	सं.	ग.	8	का	यो.	व	平.	ना,	मय.	₹.	ं लं.	भ.	स.	साहे.	आ.	उ. ,
١ ١	१४६०	1.	90,0	К	₹	Leg.	Ę	» ३	*	8	₹	\$			-			2	3
ांम	६	Я.	0,0		न			आश.	59		अहा	34.	चक्षु.	भा. ६	н.	मि .	सं.	आहा.	साका.
}	५	₹.	८,६		नि-			द्विक.	IIC"				अर्च.		э.		असं -	अना.	अना.
1	4	₹.	૭,હ		म.			विना-											
1		- 1	₹,४											1					
-	8	अ.	४,३		 					1				1	İ	Ì			
١_						1								1	1				

मिच्छत्तं, सिण्णणो असिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाः ।

तेसि चेव अपज्जनाणं भणामाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, सन्त जीवममासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चनारि अपज्जनीओ, मन्त पाण मन्त पाण छ पाण पंच पाण चनारि पाण तिण्णि पाण, चनारि मण्णाओ, तिण्णि गईओ, एईदियजादि-आदी पंच जादीओ, पृढवीकायादी छक्काया, तिण्णि जोग, णउंमयवंद, चनारि कसायर दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्माओ, भावण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवासिद्विया अभविध्विया, मिच्छनं, मण्णिणो अमण्णिणो. आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याक्षियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां सात माण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण आप तांन प्राण: चारों संज्ञाणं, देवगतिके विना शेष तींन गतियां, एकेन्द्रियज्ञांत आदि पांचों जातियां. श्रीथतांकाय आदि छहाँ काय, औदारिकिमश्र, वैकिथिकिमश्र और क्रिक्षणं ये तीन योग, नपंसकवेद, चारों कथाय, आदिके दो अञ्चान, असंयम. आदिके दो दर्शन, द्रव्यस कापोत और शुक्क लेश्याणं, भावसे छच्ण, नील और कापोत लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अन्वश्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३२१ नपुंसकवेदी मिथ्यादिष्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

																				<i>,</i>
१	v	Ę	\$ 0	8	₹	ч	Ę	* o	Ł	К	*	9	a	彦	3	٦	ŧ	2	>	2
मि -	पर्या.	ц	9		न.			म. ४	न		अज्ञा	अम-	चक्षु.	सा	ξ	ਮ.	नि-	मं.	आहा	माका.
		¥	6		ति.			ब. ४					अचे.			¥.		अस.		अना.
			ড		म			ओ. १	,											- 1
		1	Ę					ब. १												l
			٧							_										j

नं. ३२२ नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

																		आ.	् उ.
1	હ	६अ.	ভ	ጸ	₹	54	Ę	઼રૣૺ	₹	K	ર								ર
मि.	보	ধ্য. ধ্য	b		न .			आं मि	न.		कुम	अस	चधु.	का	Ħ	मि.	म	आहा.	साका.
	10	४अ.	Ę		ति.			व मि .			कुश्रु-		अच	J.	ЭĮ.		अस.	अना.	अनाः
1			tq		म	1		काम.						मा. ३					
L		1	४ ३	_										अग्रु.					

णवुंमगवेद-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, वे जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, मासणगुणेण जीवा णिरयगदीए ण उप्पज्जंति तेण वेउविवयमिम्मकायजागो णित्थ। णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंमण, दच्य-भाविह छ रुस्माओ, भविमिद्धिया, सासणसम्मन्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामाहवज्ञता होति अणागाहवज्जता वा

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अन्यि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दम पाण, चनारि सण्णाओ, तिष्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दम जोग, णउंसयवेद, चनारि कमाय, तिष्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्ब-

नपुंसकवेदी सामादनसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन
गुणस्थान, संज्ञा-प्रयोग्न और संज्ञा-अपर्याग्न ये दे जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ
अपर्याप्तियां: इसों प्राण, सान प्राण: चारों संवाण, देवगातिके विना शेष तीन गतियां, पंचेि, यजानि, जसकाय, आहारककाययांगांद्रक, और विकिथिकमिश्रकाययोगके विना शेष बारह
योग होते हैं। यहां पर विकिशिकमिश्रके नहीं होनेका कारण यह है कि सासादन गुणस्थानसे
सर कर जीव नरकगतिमें नहीं उत्पन्न होते हैं, इसीलए यहां पर विकिथिकमिश्रकाययोग नहीं
है। नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं किर्याण, भव्यत्मिद्धिक, सामादनसम्यक्तव, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और
जनकारोपयोगी होते हैं।

नपुंत्रविदी सामादनसम्यग्दिए जीवोंके एयी जितालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सामादन गुणस्थान, एक संजी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संकाएं. देवगतिके विना दोप तांन गतियां, पंचेत्वियजाति, जसकाय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोग, ऑदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इव्य और भावसे छहों ठेश्याएं, भव्यसिदिक,

नं. २२३ नपुंसकवेदा सासादनसम्यग्दाप्र जीवोंके सामान्य आलाप.

							्या.			_						मैं।ज्ञ	आ.	उ.
							१२स.४		6	₹	y	3	₹, ६	,	₹	,	ે ર	ર
771.	,स.प.	٦.	e	न.	(III)	٠	વ- ૪ ઓ,ર	च		अधा	अस	चक्षु	刊. :	₽.	यामा.	₹.	आहा.	साका.
	स अ	Ę		ति.	ъ	12	ાં∦, ર					अच.						अना
	İ	37		Ħ			વે. શુ	1										
L	<u> </u>						का १								1			į

मानेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सामणयम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अन्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवममासो, छ अपजतीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, देव-णिरयगदी णित्थि । पंचि-दियजादी, तसकाओ, वे जोग, वेउव्वियमिस्मकायजोगो णित्थि । णउंमयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, द्व्वेण काउ-मुक्कलेम्मा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, मामणमम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागाह-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सासाइनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारापयोगी होते है।

नषुंसकवेदी सासादनसम्यग्दाप्रे जीवोके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— पक सासादन गुणस्थान, एक संकी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तयां, सात प्राण, चारों संक्षापं, तिर्यंचगित और मनुष्यगित थे दें। गितयां होती हैं: किन्तु देवगित और नरकगित नहीं होती हैं। पंचेन्द्रियजाित, जसकाय, औद्दारिकिमश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग होते हैं: किन्तु यहां पर वैकियिकिमश्रकाययोग नहीं है। नपुंसकवेद, चारों कथाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, इव्यस कार्यात और शुक्र हेश्यापं, भावसे हुन्ण, नील और कापोत लेश्याणं, भव्यिमिडिक सामाद्वसम्यक्त, सज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३२४ नपुंसकवेदी सामादनसम्यग्दयि जीवींके पर्याप्त पाटाप.

ŋ.	जी.	q.	प्रा.	स.	ग.	₹.	का	या.	व	砟	₽ ∏.	यम,	ኛ.	C.	भ. म	मित्र	आ.	3
2	2	६	90	8	₹	,	*	१०म्,४	/	6	ą	,	₹	<i>3</i> 4	,	,	۶	٦
सा.	सं.प	. '	ì		न	पचे	10°	ब. ४	स्य		171	भम.	ন গ্নু	भा ः	म गा.	म	आहा	माका
					ति-		100	ओ १					अर्घ				1	अन्।
1					म.	1		वि १		_						1	ĺ	

नं. ३२'१ नपुंसकवेदी सामादनसम्यग्टीष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

1 3.	जी-	۹.	श्रा,	ਜ.	η,	₹.	का.	या.	ঐ.	寉	রা.	सय.	5	ਰ.	₽.	म	र्माज	आ.	उ.
	•	-		8	2	,	9	•	,	1	2	,	÷	द्व ३	7	7	,	2	2
सा.	सं.अ.	अ.			ía.	q	त्रम.	आनम	귀		कुम.	গ্ৰ	चक्ष	माज.	Ŧ	η_1	स	श्राहा.	साका
					म.			काम			कुश्रु		अच.	मा.३				अना.	ा अन्।
		į	t											अशु.					ļ
					(

णवुंसयवेद-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दम जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, अमंजमा, दो दंमण, द्व्य-भावेहि छ ठस्माओ, भविमिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवज्ता होंति अणागारुवज्ता वा

णवंसयवेद-अगंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अन्थि एगं गुणहाणं, व जीवसमामा, छ पञ्जनीओ छ अपञ्जनीओ, दम पाण सन्त पाण, चनारि मण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वारह जाग, ओरालियमिस्मकायजागां णन्थि। णउंसयवेद, चनारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजमां, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ,

नपुंसकवेदी सम्यग्मिध्याद्दाष्ट जीवोंके आठाप कहते पर—एक सम्यमिध्याद्दाष्टि गुणस्थान, एक संबी पर्योप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाण, देवगिके विना शेष तीन गतियां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग, औद्दानिककाययोग और वैकि। येककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन जान, असंयम आदिके दो दर्शन, दृश्य और भावसे छहाँ छश्यापं, सन्यसिदिक सम्यग्निध्यात्व संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तपुसकवेदी असंयतसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आठाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दि गुणस्थान, लंकी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राणः चारों संबाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारो मनोयोग, चारो वचनयोग, औदारिककाययोग, वैकियिककाय-योग, वैकियिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग य वारह योग होते हैं। किन्तु यहां पर औदारिकिमिश्रकाययोग नहीं होता। नपुंसकयेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्य और भावने छहीं छेदयाएं, भव्यसिक्तिक, औपशामिक, धायिक

तं. ३२६ नपुंसकवेदी सम्याग्मध्यादृष्टि जीवींके आलाप.

17_	जी.	q	A1	η.	ग	gr _a	का.	यो.	থ.	事	झा.	मग	σ.		भ.	귀.	माझ.	आ	૩. ર
,																			
F	b				4		÷	Ħ R	<t< th=""><th></th><th>ामा</th><th>14</th><th>चे धुर</th><th>सा. ६</th><th>भ</th><th>मभ्य</th><th>4.</th><th>왜건.</th><th>साका अना.</th></t<>		ामा	14	चे धुर	सा. ६	भ	मभ्य	4.	왜건.	साका अना.
मध्य	Ħ				તિ.	핵	E.C.	व ४			₹		সশ						अना.
					Щ.			ओं :	₹		शान.								
_								ā. १			मिश्र.								

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ं।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दम जोग, णवंसयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, द्व्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ी

और <mark>क्षायोपशामिक ये तीन सम्</mark>यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनःहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीत्रसमात्म, छहां पर्याप्तियां: दशें। प्राणः चारों संबाएं, देवगितके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदाश्किकाययोग और वेकियिककाययोग ये दश योगः नपुंसक-वेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दशीयः द्रश्य और आविने छहां लेड्याएं, मर्व्यासाद्विक, आपश्चिमक, क्षायिक और क्षायोपश्चिक ये तीन त्रश्यवत्वा संजिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३२७ नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	q.	।प्रा	स.	41	\$	ΦĪ.	यो -	ৰ.	事	्रजा.	सय	द	ਰੇ.	ħ	म.	म ज	आ.	3
₹	2	६प.	120	8	₹	,	7	8 -	?	6	4	5	₹	द्र. ६		3	>	। २	₹
	स.प.	ξ ϶,	0		न.	<u>.</u>	÷	म. ४	ન.		मति.	अस.	क.द.	भा. ६	ਮ.	अंग्र	स्	भाग.	साका अनाः
क	स.प. सं.अ		1		ति-	Б	175	व. ४			થત.		विना			क्षा.		1871±	`1नाः (
			ŧ		н,			গা. গ			अव.					क्षाया	•	'	}
1								वं २											
1	ļ							कार्भ. ध											

नं. ३२८ नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्टाप्टि जीवोंक पर्याप्त आलाप.

[<u>ग</u>	.⊹र्जाः.	٩.	গা	₩.	। ग	\$	का	यो.	à	奪.	झा.	सय.	₹.	ਲ.	भ	₩.	र्गाञ्च.	आ,	उ.
9	1	Ę	90	ጸ	₹	9	9	90	9	8	₹	9	₹	灵. 長	9	્₹	9	1	2
100	सं.प.				न.	च	b:	म. ४ व.४	न्		मात.	अग.	वे, द	. मा. ६	स	ગાવ.	म.	नाहा	सावा
ক					ld.	-	IV.	व्. ४			श्रुत.		विना			क्षा.			अना.
1					म.			ુઓ.૧		1	अव.					क्षाया.		ļ	
}		ŀ	1		1	1		à. 9		'		ŧ				i			1

तेमि चेव अपज्जत्ताणं भणामाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णउंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, दव्वेण काउ-मुक्कलेम्मा, भावेण जहण्णिया काउलेम्माः भविमिद्धिया, दो सम्मत्तं, कदकरिणज्जं पद्च वेदगम्मतं लद्धं। मण्णिणां, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवज्ञता वा ।

णउंमयवेद-संजदामंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव ओग. णउंमयवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, मंजमामंजम, तिण्णि दंसण, दव्येण छ

नपृसक्षेत्रहों असंगत्तसम्यग्दाष्ट्र जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविगतसम्यग्दाष्ट्र गुणस्थान. एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण. चारों संजाण, नग्कगति, पंचिन्द्रयजाति, जसकाय, येकियिकमिश्रकाययोग और कामिणकाययोग ये हो योगः नपृसकवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन हर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेश्याण, भावसे जबन्य कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोगश्यमिक ये दो सम्यक्त्य, होते हैं। यहां पर क्षायोगश्यमिक सम्यक्त्यके होनेका कारण यह है कि इत्तकृत्यवेदककी अपेक्षासे यहां पर क्षायोगश्यमिकसम्यक्त्य पाया जाता है। संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, तिर्यंचगित और मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और आंदारिककाययोग ये नो योगः नपुंसकवेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्वयसे छहों लदयाएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्याएं, भव्यसिदिक,

नं ३२९ नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दाप्र जीवींके अपर्याप्त आलाप.

. ग		र्जाः	q	भा.	Ϋ.	ą,	₹.	का	यो	व.	क	झा	संय.	द.	ਰ.	भ.	म.	सिंग.	आ.	ਤ.	í
1 2	•	ş	६अ	v	X	۶	7	9	• •	9	x	βį	۶	, 3	द्र. २	8	े्	*	ર	3	1
1,5	,	ग अ.				न.	प	7	व.भि.	न,		र्मात.	अस.	क.द.	का.	भ∙	क्षा.	म.	आहा.	साका.	l
क्र		3 .		t		1	[कार्भ.		1.	श्त.		विना.	াস্,		क्षायो.		अना.		
l					1	ĺ			ļ	1 .	1	अव.		1	सा. १	ĺ		1	t		ł
			,	1			i	1							का-		1		1	ı	l
1			1		1			}	ļ	1	1				1		1			<u> </u>	ļ

रेस्ता, भावण तेउ-पम्म-मुक्करुस्साः भविमिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणा, आहारिणा, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

णउंसयवेद-पमत्तमंजदप्पहुडि जाव पटम-अणियद्धि त्ति नाव इत्थिवेद-भंगो । णवरि मञ्चत्थ णउंभयवेदो वत्तन्त्र्वा ।

अवगद्वेदाणं मण्णमाणे अत्थि छ गुणद्वाणाणि अदीद्गुणद्वाणं पि अत्थि, दो जीवसमामा अदीद्जीवममामो वि अत्थि, छ पजनीओ छ अपजनीओ अदीद्पजनी वि अत्थि, हम पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीद्पाणो वि अत्थि, परिग्गह-मण्णा खीणसण्णा वि अत्थि, मणुमगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तमकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगा वि अत्थि, अवगद्वेदा,

अंपरामिक, सायिक ओर आयोपरामिक ये तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी जीवेंकि प्रमन्तमंयत गुणम्थानमें लेकर आनिवृत्तिकरण गुणम्थानके प्रथम भागतकके आलाप स्त्रीवेदी जीवेंकि आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि बंद आलाप कहते समय सर्वत्र एक नपुंसकवेद ही कहना चाहिए।

अपगतंवद् जीवेंकि आलाप कहने पर—अनिवृत्तिकरणके अवेद भाग ले लेकर अन्तके छह गुणस्थान और अतीतगुणस्थान भी होता है, संक्षा-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अनीतजीवसमास स्थान भी होता है, छहां पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तयां तथा अनीत-पर्याप्तिस्थान भी होता है, दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी होता है, परिश्रहसंक्षा तथा क्षीणसंक्षास्थान भी होता है, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी होती है, पंचेन्द्रियज्ञाति तथा अतिन्द्रियस्थान भी होता है, वसकाय तथा अकायस्थान भी होता है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकिमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग थे ग्यारह योग और अयोगस्थान भी होता है, अपगतवेद, चारों कपाय

९ प्रतिष ' पचिदिय अणिडियने अधि ' इति पाठ ।

नं. ३३० नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु. जी. प. प्रा. स. ग. इ. का. यो. वे. क ज्ञा. सय द. हे. स. स. सांज्ञ आ. उ. १ १ ६ १० ४ २ १,१ ९ १ ४ | ० १ ३ त.६ १ ३ १ २ २ १ सं. प. ति. कि. स. अन. मिति. देश. के.द. सा ३ स. ओप स. आहा साका. १ स. कि. व. ४ थून. विना. शस. अन. अना. ओ.१ अव. आव. चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि,पंच णाण, चत्तारि संज्ञम णेव संजमो णेव असंजमो णेव मंजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, दें। सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा यागार अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा वि

विदिय-अणियट्टिप्पहुडि जाव सिद्धा ति ताव मूलोघ-भंगो।

एवं वेदमग्गणा समत्ता।

कमायाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-मंगा । णवरि दस गुणहाणाणि वत्तव्वाणि । अदीदगुणहाणं, अदीदजीवसमासो, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी,

तथा अकषायस्थान भी होता है. मितशान आदि पांचों श्वान, सामायिक, छेदोपस्थापना, मूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात ये चार संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम विकल्पोंसे रिहत भी स्थान होता है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों ठेर्याएं, भावसे गुक्कछेर्या तथा अछेर्यास्थान भी होता है: अव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रिहत भी स्थान होता है. औपश्मिक और शायिक ये दो सम्यक्त्य, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रिहत भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा माकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपस् उपयुक्त भी होते हैं।

अपगतवेदी जीवोंके आनिवृत्तिकरणके द्वितीयभागसे टेकर सिद्ध जीवोंतकके प्रत्येक स्थानके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई।

कषायमार्गणाकं अनुवादसे भोघालाप मूल ओघालापांकं समान हैं। विशेष बात यह है कि कषायमार्गणामें दश गुणस्थान कहना चाहिए। यहां पर अनीतगुणस्थान, अतीत-जीघसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, श्लीणसंज्ञा, निद्धगति, अनिन्द्रियत्व, अकायत्व,

#. 331

अपगतवेदी जीवोंके आलाप.

गु.	्रजी.	đ	श्रा.	₹.	η.	Ę	का	यो.	वे.	क	न्ना	सय	₹.	çi	ः भ	स.	साह्य.	्ञा	ਤ.
Ę	२	ξq.	80,8	,	8	۶	7	११	0	¥	4	8	6	3	€ ₹	3	p	2	2
अनि.	सं.प	६अ	٦, १	q.	म	ψ,	₹.	म, ४			मीत.	सा.		मा	भ	ओं.	स	अहा.	माका-
स	स.अ.	÷	¥.	_		_		ब. ४	अवः	अकवा	श्रुत.	छ.		गु	**	क्षा.	अनु.	अना.	अना.
अया.	र्हें	÷		Ē	सिद्ध म	<u>জ</u>	<u>क</u>	ओं∤.२		75	अब.	丏。		अ	लं . हे		1		यु. उ.
अती.	अती.	अती	अती.	36	-			कार्म. १			मनः.	य . ⊹							_
गु.	চ				l		}	अयो.			केव.	अनु.ं							

4. 332

अणिदियत्तं अकायत्तं, अजोगो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसणं, दच्व-भावेहि अलेस्साओ, णेव भवसिद्धिया, णेव मण्णिणां णेव असण्णिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ति णन्थि।

कोधकसायाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, चोहम जीवसमासा, छ पजाणीओ छ अपज्जाणीओ पंच पजाणीओ पंच अपज्जाणीओ चत्तारि पजाणीओ चत्तारि अपजाणीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, कोधकसाय, सत्त णाण, पंच संजम सुहुम-जहाक्खादमंजमा णत्यि, तिण्णि दंसण, दञ्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं. सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होनि अणागारुवजुत्ता वा

अयोग, अकषाय, केषलकान, यथाक्यानिवहारगुङिसंयम, केषलदर्शन, दृश्य और भावसे अलेस्यत्व, भन्यसिद्धिक विकल्पसे रहित, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त इतने स्थान नहीं होते हैं।

कोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, चौदह जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, वार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: नौ प्राण, सान प्राण: आठ प्राण. छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण. चार प्राण: चार प्राण, तीन प्राण: चारों संझाएं. चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग. तीनों वेद तथा अपगतवदस्थान भी है, कोधकषाय, केवलक्षानक विना शेष सात झान, पांच संयम होते हैं. किन्तु यहां पर स्क्ष्मसाम्पराय और यथाख्यानसंयम नहीं होते हैं: आदिके तीन दर्शन, इन्य और भावसे छहों लेश्याएं, भन्यसिद्धिक. अभन्यसिद्धिक: छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक: माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

९ आ प्रती ' अणियद्वियत्तं पि अस्थि ' इति पाठः ।

गु .	नी	•	q.	श्रा-	सं	- -	ग.	₹-	का.	यो.	à.	事.	ह्या-	सय-	द.	ਰ.	म.	स.¦साई	हो. आ	ु ड.
	ı						8	4	Ę	24	₹	8	. 0	4	3	द. ६	2	દ ર	२ - आहा- ा- अना-	2
1				۲,				i			 	का	कंब.	सृक्ष्म.	क.द.	मा ६	मः¦	स	. आहा	साका-
	1	•		۷,	- 1	. 1	Ì	j	j		8	1	विना	्यथा	विना		अ	ाअस	≀ो अनाः	ं अना
1		1	. अ.	1 1	٠,	٠.	i	1	į			ł	1	विना.		1	i		1	
1		-	-	ξ,	¥	1		- 1			1							1		1
_	_	13	a [.	¥,	₹!	4					1	1						-	1	

कोधकवारी जीवोंके सामान्य आलाए.

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पज्जनीओ चत्तारि पजनीओ, दस पाण णव पाण अद्घ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, कोधकसाओ, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंनि अणागारुवजुत्ता वा

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अतिथ चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्ञत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ,

उन्हीं क्रोधकषायी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुण-म्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, ना प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रिव-जाति आदि पांचों जातियांः पृथिवीकाय आदि छहों काय, पर्याप्तकाल-भाषी ग्यारह योग, तीनों वेद. तथा अपगतंबदस्थान भी है, क्रोधकषाय, क्रेबलझानके विना शेष सात झान, स्क्मसाम्पराय और यथाख्यातस्यमंक विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रम्य भीर भावसे छहों लेदयाणः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्ष्य, संक्षिक, असंक्रिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकपायी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यादृष्टि, अविग्तसम्यादृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छिंह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जानियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकन

नं. ३३३ कोधकषायी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

																		₹.
٩	৩	Ę	१०	X	8	∢ ह												2
16	पर्या.	دم	o,	\$	'		व. ४	F-	का.	केवः	सूक्ष.	के.द.	भा. ६					साका.
Ę.		¥	۷_	*				1		विना	यथा.	विना		अ.		अस.		अना.
18			9 Ę				व. १	1	1		विना			ı	1			
'_			8	I			आ. १	1		1				<u> </u>		L	1	

पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दृव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, पंच सम्मत्तं, मण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा ।

कोधकमाय-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुठवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, कोधकमाओ, तिण्णि अण्णाण, अमंजमा, दो दंमण, दव्च मोबेहि छ लेम्माओ,

मिश्रकाययोग, आहारकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग. तीनें। वेद, क्रोधकषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिक तीन ज्ञान ये पांच ज्ञानः असंयम, सामायिक और छेद्दोपस्थापना ये तीन संयम. आदिके तीन दर्शन, इच्यम कापोत और शुक्क लेदयाएं, भावसे छहीं लेदयाएं: भर्च्यायदिक, अभन्यसिद्धिकः सम्यग्मिध्यात्वके विना पांच सम्यक्त्य, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकषायी मिथ्यादिष्ट जीवोके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुण-स्थान, चोदहों जीवसमासः छहां पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: ना प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण: पांच प्राण: छह प्राण, चार प्राण: चार प्राण, तीन प्राण: चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, एथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकमिथकाययोगके विना शेष तेरह योग: तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृष्य और भावसे छहों लेक्याएं,

नं. ३३४ कोधकपायी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग्.	র্জা-	q.	प्रा. स	ा _{•।} ग₊	इ. का	.! यो.	व क	हा ।	संय.	द. ले.	- स₁ स₊	संक्षि	आ.	उ
8	৩	६अ	৩ ४	8	υ, ξ	8	Ş y	4	₹	३ द्र.	२ २ ५	1 2	ર	3
मि-	अ प .	'९ऑ,	O			ગોર્ગમ	4.1.			क.द⊹ का-				
सा.	1	४अ	Ę		1	व 1ंस.		कुश्रु	मामा.	.बिना गु.	अ. विना	ंअ स -	अना. अन	TI
अवि-	1		•			∣आ.मि		मति.	छदो	मा-ध	ŧ	-		
प्रम.			¥			कार्म.	1	श्रुत.			1			
			₹			1	i	अव.		1				- 1
L	<u> </u>		ı	,		<u> </u>				- 1	<u> </u>	1		

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो अमिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्रत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्रतीओ पंच पज्रतीओ चत्तारि पज्रतीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ ठेस्साओ, भविसिद्धिया अभविसिद्धिया, मिन्छतं, मण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवज्ञत्ता वा

भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाद्वारकः साकारा-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी मिध्याद्दां जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, सात पर्याप्तियां, सात प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संक्रापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अहान, असंयम, आदिके हो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३३५ कोधकवायी निथ्यादृष्टि जीवोंके सामास्य भारतापः

गुंजी प्राासंग्रह.	का यो वि	. क.: हा. सथ.	्द. ॄ हे[∉	र∤स-मकि-	આ ૩.,
१ १४६प. २०,७ ४ ४ ५					२ २
मि. ६अ. ९,७	आहा.२	की अज्ञा अम.	चश्च । मा ६ म	. मि. स.	आहाः साकाः
५प. ८,६	त्रिनाः ,	1 1	अच- अ	ं अस.	अना जना
પત્રું. હ,લ					
४प. ६,४				i	
४अ. ४,३ ।					
	1 1		1	,	

नं. ३३६ क्रीधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

યુ.	जी-	q,	प्रा.	स. ग.	-इ ⊣का-्।	यो.	वे	ጭ.	₹1.	संय-	द.	ਰੋ.	स.	स.	सक्ति.	आ.	ड.
?			₹ o	X X	५ ६	80									3	₹	ર
भि.	पर्या.	4	S		Į	म, ४		की.	अज्ञा.	असं.	चश्रु	भा ६	म-				साका
l		8	C		1	4 8				ļ .	अच.		স.		असं.		अमा•
			9		1	आ १								[1
<i>'</i> _	<u> </u>	1	€ ¥			वि. १				ĺ	1	1					

तेमिं चेत्र अपज्ञत्ताणं मण्णमाणं अन्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जतीओ चत्तारि अपज्जतीओ, मत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, निण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, द्वंगण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्गिणां अमण्णिणां. आहारिणो अणाहारिणो, मागाहवज्जता होति अणागाहवज्जता वा ं।

कोधकसाय-मामणमम्माइद्वीणं भण्णमाणे आन्धि एयं गुणहाणं, दे। जीवसमासा, छ पज्जीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, तेरह जोग, तिण्णि बेद, कोधकमाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण. दच्व-भाविहि छ लेम्माओ, भविमिद्विया. मामणमम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं कोधकपायां मिथ्याद्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, स्थान अपर्याप्त जीवसमान, छहों अपर्याप्तयां पांच अपर्याप्तियां खार अपर्याप्तियां सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकोन्टियज्ञाति आदि पांचों जातियां, एशियोकाय आदि छहें। काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकपिश्रकाययोग और कार्मणक ययोग ये तीन योगः तीनों वद, कोधकपाय, आदिके दो अक्रान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इत्यस कार्पात और राक्क लक्ष्याणं, भावस छहों लेक्ष्याणं भव्यानिद्धिक, अभव्यनिद्धिकः मिथ्यात्य, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकपायां सासादनसम्यन्दिए जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रमकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष नेरह योग: नीनों वेद, क्रोध-कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं,

तं. ३३७ क्रोधकपायी मिध्यादिष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. ∤ जी.	ष. प्रा.	सं ग.	इ. का	यो	वे. क	\$11.	सय	द.	જે.	म.	स.	सिन्नि.	आ.	₹.
9 0	६अ. ७	8 8	له قر	3					द्र. २		9	3	ર	2
मि.∣अप•	4 ,, 6		1	अं। मि.	को	कुम.	अस	च क्षु.	का.	म.	मि	₹.	आहा.	साका.
1	٧,, ६		!	व मि.		कुश्रु.			31 •				अना.	अना -
1	فر	١		कार्भ.		. ~			भा. इ	į)			!	\
	४ ३					l !						!		

आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ी

नेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं. एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दम जोग, तिण्णि वेद, कोधकमाओ, तिण्णि अण्णाण, अमंजमा, दे। दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भविमिद्धिया, मामणमम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ

भव्यिमिद्धिक, सासाद्नसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्रीधकपायी सामादनसम्यग्दिष्ट अविोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सामादन गुणस्थान, एक संक्षीत्पर्याप्त जीवनमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाणं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोगः औदा-रिककाययोग और वैकि यककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, क्रीधकपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शनः द्रव्य और भावसे छहां लेख्याणंः भव्यामिदिक सासादनसम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्रोधकपायी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मासादन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवममाम, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, वारों

नं. ३३८ क्राधकपायी सामादनमध्यम्हिष्ट जीवांके सामान्य आलाप

j ₹.	जी.	ч.	मा	म	ग्.	Ę	का.	यो उड	ৰ	₮.	सी.	यय.	्र द.	ನ್ಯ.	म- स	सांह्य.	आ.	3. 1
erer.	स.प. सं.अ	५ গ	৩			q,	7. □	आहा २ विनाः		क्रेग	नहा	ગમ	चथु अच े.	मां.६	भ	म.	आहा अ ना .	साका अना,
							Ì						1					ı

नं. ३३९ क्रोधकषायी मासिद्नसम्यग्दाष्टि जीवोंक पर्याप्त आलाप.

13	जी	्ष.	भा	सं.	ग.	£	का	, य	i).	∣वें क.	. ज्ञा-	संय.	द.	लें.	ਸ.	स∙	साझे.	आ.	उ
1	۲.		ξ o	x	Х	8	۶	₹	0	3 8	₹	Q	2	द्र. ६	9		9	₹.	ર
Ì≓	स. प	1				1	<u>-</u>	म.	ጸ	को.	স #।∙	अस -	चक्षु.	मा- ६	म- व	वासा.	सं.	आहा	साका अना
E				١.		Ü	ir	व	1				अच.						अन्।
1		1	,					ऑ।	۶.	1									
_		i	'					ā.	2	!					1				

अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ- सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

कोधकसाय-सम्मामिन्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ,, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिन्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

संज्ञापं, नरकगतिको छोड़ कर शेष तीन गतियां; पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैिकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, कोधकपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्रु छेश्यापं, भावसे छहों छश्यापं: भव्यसिद्धिक, सासाद्नसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकषायी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संद्वी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, बारों संद्वापं, बारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, बारों मनोयोग, बारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकि-यिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अद्वानोंसे मिश्रित आदिके तीन द्वान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेड्यापं, भच्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यास्व, संदिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

```
गु. जी. प. प्रा. सं. का. यो. वे. क. का. सय दे हे भे. स. साक्षे. आ. उ
११६अ ७ ४ ३ ११३ ३ १ ९ १२ दे २ १११ १२ २
सा. हे ति पंचे त्र आं.भि को कुम. असं. चक्षु का म. सासा सं. आहा साका.
क्ष्म म. वे.भि. कुश्रु. अच श्रु अना अना. अना. अना.
दे. कार्म.
```

नं. ३४१ कोधकवायी सम्याग्मिथ्याद्यष्टि जीवोंके आलाप

ŋ.	ৰ্জা-	ч.	श्रा.	H -	11.	₹.	का,	यो.	₫.	क.	₩ī.	संय.	द.	ले	. भ	₩.	सीत्र.	आ.	उ.
1	₹	Ę	? 0	ď	ĸ	₹	?	\$ 0	ą	2	₹	*	ર	貫.	ह १	₹:	3	₹	२
₩.	й. Ч.					ip.	þ.	म. ४		का.	श्रान.	भग.	चक्षु.	भा.	६ मः	सम्य.	सं∙	आहा.	साका. अनाः
1						.0	Mr.						अच.						अना.
1								ओ. १			अशा.								
								व. १			मिश्र.								

कोधकसाय-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

तेसिं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकमाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दाष्ट जीवोंके सामान्य आळाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दाष्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रज्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्य, संविक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचीन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भ्रष्य-सिद्धिक, औपश्चामिक, क्षायिक और क्षायोपश्चामिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आद्वारक,

नं ३४२ कोधकषायी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.जी. प. प्रा सं ग. इं.का यो वे क. ज्ञा. संय द छे. स. स. संक्रि. आ. छ. १ २ ६प. १०४४१११३३१३१३६६१३**२२२** १ सं.प. ६अ.७ कोहा.२ को.मिति अस. के.द. मा ६ म. ओप. सं. आहा. साका. इ. स.अ. विना अत. विना आहे.

अणागारुवजुत्ता वां वां

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद इत्थिवेदो णित्थः; कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्रोधकपायी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणम्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, चारों गतियां, पंचिन्द्रयजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैिक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुप और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, किन्तु यहां पर स्त्रीवेद नहीं होता है: क्रोधकपाय, आदिके तीन ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्श्यापं, भावसे छहां लेक्श्यापं: भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न ३४३ क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवींके पर्याप्त आलाप.

गु. १	जी, े	प. त्रा. स, ६ ९० ४	्र ४	₹. 9	काः यो.	3	9 3	9	₹	द्र. ६ १	₹	9	आ.	उ
आबे.	सं.प.	,		वं	क्षेत्र । वि. ४ ओ व		की. मति - श्रुत - अव -	असं. 	के.द. विना		अंप. क्षाः क्षायो.		आहा.	साका अ ना.
}				1	वै. १		94.				काषा			

नं. ३४४ त्रोधकषायी असंयतसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्यु∙	जी.	q.	न्रा.	≀सं -	ग.	₹.	का.	यो	वे∙	क.	朝	संय.	द.	ਲੇ.	भ.	स.	सझि.	आ.	उ.
2		६ अ.	v	8				3	13	8	₹	8		द्र. २		₹ .	٠,	ર	3
10	सं. अ] 				٩.	স.				माते.					आप.	स.	आहा.	साका.
न्त			1					व.मि.	न.		भृत.		विना.	য়ু.	i	क्षा.		अना.	अना.
1	1							काम.		1	अव.		ŀ	मा.६		क्षाया.			
1				1						ļ			1	1					
L	1	ì		1				ł						<u> </u>	1	1	1		1

कोधकसाय-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंविंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होंति अणागारुवज्जत्ता वा ।

कोधकसाय-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, (मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओं,) चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भव-

कोधकपायी संयत्तासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशाविरत गुणस्थान, एक सङ्की-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संद्वापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचित्र्यजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदानिककाययोग य नौ योग, तीनों वेद, कोधकपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

कोधकपायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त य दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राणः चारों संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, कोधकपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारिबशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावने तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं;

१ प्रतिपु कोष्ठकान्तर्गतपाठी नास्ति ।

नं. ३४५ कोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु. जी. १ १ सं. प.	प- त्राः । सं ६ १० ४	. ग. इं २ १ ति ्ष्म म.	. का. यो. १ ९ म. ४ जो. १	₹ ₹	ह्याः स्या ३ १ मतिः देशः अतः अवः	3	3	सक्ति. १ स.	आ. १ आहा	ड. २ साका. अनाः
	,		ओ. १		अव.		क्षायो.			

सिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रजुत्ता होंति अणागारुत्रजुत्ता वां "।

कोधकसाय-अष्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अतिथ एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ं।

भन्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकपायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अव्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्षाके विना शेष तीन संक्षापं मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योगः तीनों वेद, क्रोधकपाय, आदिक चार क्षान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं: भव्यसिद्धिक, ओपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

નં. રુકદ્

कोधकपायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	۹.	भा	स	₹,	₹.	কা,	यो-	व∙	क	্ল(.	सय.	द∙	જે	भ	स.	साज्ञे.	आ.	उ
1	ર	६प.	80	8	Ŗ	8	8	\$ \$	₹	Ł		ર્	₹	द्र. ६	¥	্ৰ	₹.	Ą	2
10	सं.प.	६ अ.	19		म.	- व्य	÷	म, ४ व. ४		की.				भा. ३	म.	ऑप	सं.	आहा.	साका
農	सं.प. सं.अ.					Ъ	ir.	ब. ४					विना.	गुभ		क्षा.		! .	अना.
								ओं. १			अव.	परि-				क्षायो	•		
1	1							आ.२			मनः,								
1	l											1						1 1	l

नं. ३४७

क्राधकषायी अप्रतसंयत जीवोंके आलापः

1	जीः	q.	प्रा.	. #:	ग	\$	का.	यो	बें.	क.	ह्या.	सय.	₹.	हे.	भ.	म.	संझि.	आ.	ਭ
₹	2	Ę			¥	۶.	Ś	8	•	?	_	₹	_	द्र. ६		્રે	٠,	*	२
8	b			_ `		q	त्रसः								म.		₩.	आहा.	साका.
ੀਲ	, p E			विना,				वं. ४			3	छेदी.	विना	ग्रम		क्षा.			अनाः
	1		1					आ. १				परि.				क्षायो	'		
1_	ı		, '				,				मनः.						_		<u>'</u>

कोधकसाय-अपुन्वयरणाणं मण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ ठेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, मागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा ं।

ंकोधकसाय-पढमअणियद्दीणं मण्णमाणे अत्थि एगं गुणहाणं, एगो जीवसमासी, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

क्राधकपायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक नंज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाणं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योगः तीनों चेद, क्रोधकपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छदीपस्थापना ये दा संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्याः भव्यासिद्धिक, औपशमिक और आयिक ये दो सम्यक्त्वः संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकपायी प्रथम भागवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आछाप कहने पर—एक अनिवृ-त्तिकरण गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संबाएं: मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजानि, त्रसकाय, पूर्वोक्त नो योग, तीनों

नं. ३४८ कोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप.

```
गु.जी.प.प्रा.स. ग इं.का.यो. वंक का. सय द. छे. भ. स. सिक्क आ. उ.
११६१०३११९३१ ४२३३ इ.६१२११२
हे अहा म. म ४ की. मिति. सामा. कंद सा. १म. औप. स. आहा.साका.
हे विना हिंदि ४ थ्रुत. छेदी. विना. गुळु. क्षा. अना.
औ१ अव.
```

नं. ३४९ कोधकपायी प्रथम भागवती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

ű.	जी.	٩.	'Al	म.	ग.	₹.	का.	या.	वे.	ক.	हा-	संय	द.	छे,	म.	स.	संक्रि.	आ.	उ. ∣
10	₹	Ę	१ 0	3	ş	₹	٤	9	₹	१	8	ર		द्र. ६		ર	₹	2	२
आन. प्र.	सं∙प.			स प	म.	पचे.	त्रस	म. ४ व. ४ औ. १		की	मतिः श्रुतः अवः			मा. १ गुक्तुः		जोप. क्षा .	सं.	आहा.	साका. अना
ক						l		OII.			जव. मनः,					ı			

तिण्णि वेद, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, द्व्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकक्लेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

कोधकसाय-विदियअणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंमण, दच्तेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जता होति अणागारुवज्जता वां।

एवं माण-मायाकसायाणं पि मिच्छाइद्विष्पहुढिं जाव अणियद्वि ति वत्तव्वं । णविर जत्य कोधकसाओ तत्थ माण-मायाकसाया वत्तव्वा । लोभकसायस्स कोधकसाय-भंगो। णविर ओघालावे भण्णमाणे दम गुणद्वाणाणि, छ संजम, लोभकसाओ च वत्तव्वा ।

वद, क्रोधकपाय, आदिके चार ज्ञान, सामाधिक और छेदोपस्थापना ये दे। संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेक्याएं, भावसे शुक्रलेक्याः भव्यसिद्धिक, औपश्रमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकपायी डितीय भागवर्ता अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिष्रहसंक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद कोधकपाय, आदिके चार क्षान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेद्याएं, भावसे गुक्कछेद्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे मानकपायी और मायाकपायी जीवोंके मिथ्यादिए गुणस्थानसे लेकर अनि-मृत्तिकरण गुणस्थानतकके आलाप कहना चाहिए। विशेष बात यह है कि कपाय आलाप कहते समय जहां ऊपर कोधकपाय कहा है, वहांपर मानकपाय और मायाकपाय कहना चाहिए। लोअ-क्षायके आलाप कोधकपायके आलापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि लोभ कषायके ओघालाप कहने पर-आदिके दशा गुणस्थान, संयम आलाप कहते समय यथाल्यातसंयमके

गु. जी.	प. प्रा.। सं., ग.। इं का-	यो∙्∣वे ∣क	्रहा	संय. द.	हे. म.	₹.	साहो, आ.	ਰ.
१ १	६ १० १ १ १ १	९ ०१ म∙४ <u>÷</u> को	४ माते. अत्र.	२ ३ सामा के द	द्र. ६ १ भा. १ स	र अं।प	१ १ सं. आहा.	र माका
सं.प. हा हि		व ४ है औ. १	अव. मनः.	छदो. विना	3 ₹.	क्षा.		अना.

ें अकसायाणं मण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि अदीदगुणहाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ अदीदपज्जती वि अत्थि, दस चत्तारि दो एगं पाण अदीदपाणो वि अत्थि, खीणसण्णा, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खादविहार-सुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दक्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्या वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो

विना छह संयम और कपाय आलाप कहते समय लोभकषाय कहना चाहिए।

अक्षायी जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकपाय, क्षीणकषाय, स्योगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, संझी-पर्याप्त और अपयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है: दशों प्राण, सयोगिकेवलीके संभवित चार प्राण और दो प्राण, अयोगिकेवलीकं संभवित एक प्राण और सिद्ध जीवोंकी अपेक्षासे अतीतप्राणस्थान भी है: क्षीणसंझा, मनुष्यगति तथा सिद्धगित भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियत्वस्थान भी है, असकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग, औदारिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगत्वेद, अकषाय, पांचों सम्यग्झान, यथाख्यातिबहारगुद्धिसंयम तथा संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रिहत स्थान भी है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे गुक्रलेश्या तथा अलेश्यास्थान भी है; भन्यसिद्धिक तथा भन्यसिद्धिक और अभन्यसिद्धिक इन दे।नों विकर्षोंसे रिहत भी स्थान है, औपश्रामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त, संक्षिक तथा

१ आ. प्रतो '' एग १०-४-२-१ '' इति पाठ. ।

नं. ३५१

अक्यायी जीवोंके आलाप.

y .	जी.	q.	भा.	सं.	ग.	₹	का	यो.	à	क ्	্লা,	सय.	۲,	ਰੇ.	भ.	स.	साझे.	आ.	ु उ.
४ अंत सं अती स गु. उ	ર	६प.	80.8		8	₹	₹ 7. °165	9 8	अपन. ०	अक्षा. ०	14	,	×	e 8	,	1 3	9	2	

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ('सागार-अणागारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा ।)

उवसंतकसायप्यहृडि जाव सिद्धा ति ओघ-मंगो ।

एवं कसायमग्गणा समत्ता।

णाणाणुवादेण ओघालावा मृलोघ-भंगा ।

ंमिद्-सुद्अण्णाणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्जंत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त

सांक्रिक और असंक्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन् उपयक्त भी होते हैं।

अक्रवायी जीवोंके उपशान्तकपाय गुणस्थानसे लगाकर सिद्ध जीवोंतकके प्रत्येक स्थानके आलाप ओघालापके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार कवायमार्गणा समाप्त हुई।

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए।

मति श्रुत-अज्ञानी जीवोंकं सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, चैाद्दों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां। पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः छह प्राण, चार प्राणः

१ प्रतिपु कोष्टकान्तर्गतपाठी नास्ति ।

A. 342

२ १४ मिर सा	हप. २० ६अ. ९ ५प. ८ ५अ. ७	:,E 9,4 1,8	इ का	र - <mark>यो-</mark> १३	वे. ३	ጸ ቁ ያ'	ह्या . २	सय. १ अस.	्द. २	द्र.६ ∣भा∙६	२ भ.	२ मि,	२ स.	२ आहा.	उ. २ साका- अना-
	४अ.	٤,₹			1										

मित धत-अञ्चानी जीवोंके सामान्य आलाप.

पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गर्दाओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंगण, दव्व-भावेहि छ छेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तिर्ति चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजभो, दो दंसण, दच्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भविभिद्धिया अभविसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

चार प्राण तीन प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां पृथिवीकाय आदि छहां काय, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगके विना तेरह योगः तीनों वेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्य और भावले छहां छेद्र्यापं, भग्यसिद्धिक, अभ्व्यसिद्धिकः मिश्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मित-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, ना प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गितियां, पक्षेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योग; तीनों चेद, चारों कपाय, आदिके दो अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इन्य और भावसे छहों लेक्यापं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिक; मिध्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक;

नं. ३५३ माति-श्रुत-अक्कानी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ı																			હ.
₹ .	৩	Ę	१०	8	४	4	Ę	20	₹	8	3	*	ર	द्र. ६	ર	ર	ર	3	२
भि	पर्या.	4	\$					म. ४			कुम.	असं-	चक्षु.	भा ६	म.	मि-	सं.	.आहा-	साका.
सा.		¥	<					व. ४			कुश्र,		अच.		37.	सा.	असं.	,	अना.
1			৩					ओं. १			•								
1			Ę					वे. १								,		•	
_			٧													<u>.</u>		<u> </u>	

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, मत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेम्मा, भावेण छ लेम्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जता वा"।

मदि-सुदअण्णाण-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, चोद्दस जीय-समासा, छ पज्जचीओ छ अपञ्जचीओ पंच पज्जचीओ पंच अपज्जचीओ चचारि पज्जचीओ चचारि अपज्जचीओ, दस पाण सच पाण णव पाण सच पाण अट्ट पाण

आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मित-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, लह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गितयां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि लहों कायः औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदि हे दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्याएं, भावस छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व और सासा-दनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारकः, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आठाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदह जीवसमासः, छहां पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां, पांच पर्यप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दृशों प्राण, सात प्राणः नो प्राण, सात

નં. ३५४	मति-श्रुत-अश्वानी जीवें	के अपर्याप्त आलाप.
---------	-------------------------	--------------------

। गु.	जी∙	प	সা.	सः∣	ग्र-	₹.	का.	यो.	वे∙	丣.	ज्ञा.	संय.	द.	ਲੇ-	म.	₩.	सांज्ञ.	आ.	उ. ।
ર				8	8	c ₅		્ર		R	3	₹.		द्र-२			2	ર	ર
भि.	्अप -	۲,,	v]				ओंशीम			कुम.	अस.							साकाः
सा.		٧,,	Ę	,				वै.मि.			कुश्रुः		अच.	য়ু.	अ.	सा.	अस.	अनाः	अनाः
1			ч	1				कार्म.						मा-६				1	
L	1	<u> </u>	४ ३						1						<u> </u>		}		i ,

छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

तिसं चेव पजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पजनीओ पंच पजनीओ चत्तारि पजनीओ, दम पाण णव पाण अहु पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गईओ, एईदियजादि-आदी पंच

प्राणः आढ प्राण, छह प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः छह प्राण, चार प्राणः चार प्राण, तीन प्राणः चारों संकाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहीं काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदि के दो अक्षान. असंयम, आदि के दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मित-श्रुत-अज्ञानी मिध्यादिष्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिध्यादिष्ट गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां: दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण: चारों

नं.	३५५	मति∗श्रुत∗अ ज्ञान ी	मिध्याद्यप्रि	जीवोंके	सामान्य	आलाप.
-----	-----	----------------------------	---------------	---------	---------	-------

17	जी प	श्रा म	. ग इ	का यो.	वे	事	ज्ञाः सय	द.	ਲ.	म.	. म.	'संक्षि.	आ.	₹.
	≀४६ प	10,0	8 8 4	16 13	₹	8	4 8		पं. ६				ર	2
मि	६ अ	९,७	}	। अर्धेंद्र-			रुम, अय	चक्षु.	मा• ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
1	५ प.	८,६	1 1	विना	1 1		五年	अच		अ		अस.	अना.	अना.
	५ अ	6,4	1	i j	1 1				ì					1
	४प	₹,४	. i		1 1			}		1)
L	४ अ	₹,₹	1 1]]	1 1				<u> </u>		_	<u> </u>		

नं. ३५६ मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ा जी प. त्रा स. ग इ.	∣का∣यो वेक ज्ञा∗्	मंग द है. भ. म. मंहि. आ. डि.
1 6 10 8 8 4	E 40 3 8 2	१ - इ. ६ २ १ १ २
मि. पर्याः ५ ९	म. ४ क्रम.	असः चक्षु मान्हमः मि सं आहाः साका
8 <	[] 本 8	अच. अ अस. अना .
৬	ऑ.१	
4.8	ंब १	

जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंगण, दन्व-मावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धियाः मिन्छत्तं, सिण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागास्त्रजुत्ता होंति अणागास्त्रजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सन्त जीवसमासा, छ अपजनीओ पंच अपजनीओ चनारि अपजनीओ, सन्त पाण सन्त पाण छ पाण पंच पाण चनारि पाण तिण्णि पाण, चनारि सण्णाओ, चनारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चनारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छन्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजना होति अणागारुवजना वा

संद्वाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जानियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और चेकि येककाययोग ये दरा योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दें। अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिध्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मित-श्रुत-अज्ञानी मिथ्याद प्रि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, सात अपर्यात जीवसमाम, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्ट्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिशीकाय आदि छहाँ काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग ओर कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यस कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे छहाँ लेक्यापं, भव्यिनिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः, आहारकः, अनादारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हाते हैं।

नै. ३५७ मति-श्रुत अञ्चानी मिथ्यादृष्टि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप.

गु∙∣ जी∙	ष. प्राः	सं ,ग.	इ.का	या	वे. क.	हा-	सय	द.	ले.	स.	स∙	, सीब	आ.	उ. ∣
9 9	६अ. ७		५ ६	3	∃્રે ૪	२	9	₹	द्र. २	2	9	२	3	२
मि. अप.	4 ,, 4	i		ओं.मि.		कुम	असं	चक्षु	का.	ਸ਼.	ं भि	सं.	आहा.	साका.
} !	¥ ,, ξ			व मि.	-	कुश्रु.		अच.	ग्र-	₹,	'	अस.	अना.	अनाः
	4			काम.					भा. ६	i	l F			1
	४३	1 ;				<u> </u>					<u> </u>	<u> </u>	ļ .	<u> </u>

मदि-सुदअण्णाण-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्ञत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गर्दीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा न

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

मित-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्पन्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञापं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारकद्विकके विना तेरद्व योग, नीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावने छहीं लेश्यापं, भव्यामिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मानि-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दाप्रि जीवींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर- एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग,

नं. ३५८ मित-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दप्रि जीवोंके सामान्य आलापः

1	۶	इप	90	818	र १ प. ∣त्र.	योः १३ आहि त्रिनाः	*	8	ર	≀ अस.	२	र्ज.६ मा∙६	१ भ-	₹ =	१ स.	२ आहा	
ļ				J								1		•			

नं. ३५९ माति-श्रुत-अञ्चानी साासदनसम्यग्हाप्र जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग्र जी प. प्रा सं ग.	ड.,का∣ यो-∣वै∣	क, ज्ञा∙ संय-∣दः	. हे स ास-	मंहि., आ.	उ. ∣
	१ १ १० ३		इ६ १ १	१ १	3
सं. प.	म. ४ ज ज ४	कुम. असः चक्कु अरच	.मा.६ स. सासा •	सः ।आहा	साका अनाः
	ओ. १ वि. १		l	{	

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंज्ञमो, दो दंसण, दव्व-मावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचि दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सामणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

विभंगणाणाणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पर्चिदियजादी, तसकाओ,

औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः नीनों वेद, चारों कपाय, कुमित और कुश्रुत ये दो अज्ञानः असंयम, आदिके दां दर्शनः द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मित-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दि जीवांके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—पक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकर्गातके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुद्ध लेदयापं, भावसे छहां लेदयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हैते हैं।

विभंगञ्चानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. ३६० मित श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

Ŋ.	जी.	Ч.	प्रा	स	ग.	₹.	का.	यो.	वे,	巫.	झा	सय	द.	ਲੇ	म,	स.	¦ साक्र	, आ.	उ
2	₹	६अ	હ	R	3,	2	8	3	₹	Х	•	*	ર	द्र २	8	2	₹.	, २	२
सा.	÷				ति.	पचे.	त्र	ओं मि.			कुम.	असं,	चक्षु.	কা.	भ.	सासा	सं.	आहा	साका.
ļ	*				Η.			वे भि.			कुञ्ज.		अच	ग्रु.		1	1	अना	अना.
1	Ψ.				₹.			कार्म.						भा ६			1		
1		ł														<u> </u>			

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणं, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

विभंगणाणि-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

त्रसकायः चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वै कियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, एक विभंगाविधिश्वान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावने छहाँ छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व और सासादनसम्यक्तव ये दो सम्यक्तव, संश्विक, आहारक, साकारापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विभंगञ्जानी मिथ्यादि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कपाय, विभंगाविधिज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इन्य और भावसे छहों लेश्याएं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३६१ विभंगज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप

ग	जी.	q.	प्राः	₽.	स.	Ę	का	या	वे.	क	झा.	सय.	₹.	ले.	भ	स.	सक्ति.	आ.	ਤ. ∤
								10									3	₹`	2
२ मि	र प.										विभ	असं.	चक्ष.	मा. ६	Ħ	मि	सं	आहा.	साका,
]ના.						16	N.	म. ४ व. ४					अचे.		3[सासा.			अनाः
								ओ. १											
<u> </u>								व १											

नं. ३६२ विभंगश्चानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

									ल. म स. संहि⊢ुआ∙	₹.
		8	8 1	8	70	3 8 8	P.	२	द्रहर्ष्ट्रा १	ર
ाम स.प.		1	ď	त्रस	म ४	विम.	अस.	चक्षु	मा ६ म. मि ेसं आहा	मका.
1		1		.	व् ४			अच.	3f. [†]	अना.
		i		'	ओं. १	,	Ì		1	1
L	I	1 1		1	वे. १]]]				

विभंगणाणि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जता होति अणागारुवज्जता वां ।

आभिणिबोहिय-सुदणाणाणं भण्णमाणे अतिथ णव गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अतिथ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगद-वेदो वि अतिथ, चत्तारि कमाय अकमाओ वि अतिथ, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

विभंगक्षानी सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोंक आलाप कहने पर—एक सासादनसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञानि, त्रसकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कपाय, विभंगायधिक्षान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिबोधिक और श्रुनक्कानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर — अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसे लेकर श्रीणकषाय गुणस्थान तकके नी गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राणः सान प्राणः चारों संबाप्तं तथा श्रीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकपायस्थान भी है, मित और श्रुन ये दो ब्रान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रश्य और भावसे छहों लेहराएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, श्रायिक और श्रायोपशमिक ये तीन सम्यवस्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-

न. ३६३ विभंगज्ञानी सासादनसम्यग्टाप्ट जीवोंके आलाप.

। ਹ.									1							साझ	आ.	ਤ
1	1	Ę	10	8 8	8	121	90	(₹	8	8	*	3	द्र ६	१	₹	1	*	ર
सासा.	स. प			J	q,	7	म ४	(į	विभं.	अस	चक्ष	भा-६	भ.	सा.	सं.	आहा	साका.
1							व. ४					अचे.	1			[अना
						l	ओ. १		1							1		1
1						1	ā. Į		Ì				1	,				1
{						1 .							1	į				i
		1				1			}				1	ì		}		

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा संभा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होंति अणागारु-वज्जता वा

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुनज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— आविग्तसम्यग्हिए गुणस्थान से झीणकपाय तकके नो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्नियां: दशों प्राण, चारों संज्ञाएं तथा झीणसंज्ञाम्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, मित और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भग्यासिद्धिक, औपश्मिक आदि तीन सम्यक्त्य। संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३६४

माति-श्रुतक्कानी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	٩.	श्रा.	₹.	ग्.	₹.	का.	_ यो.	वे.	क	লা .	सय.	द.	ले.	भ	स.	सान्न	्रा.	ं उ. ,
्र अबि		ξq.	\$ 0	8	8	,	۶	१५	₹	¥	ર	હ					2	3	2
अवि . सं क्षीण.	म.प. स.अ	६अ.	G	गस.		प.	₹.		अपग	अक्ष्या	मति.		क द विनाः		भ.			1	साका-
क्षीण.				PH I					ক্	No.	श्रुत.		19गा-			क्षा. क्षायोः		अन्।.	अमा.
1													1			41111		1	
	1															1			

नं. ३६५

मति-श्रुतन्नानी जीवोंके पर्याप्त आळाप.

<u>a</u> .	जी.	φ,	प्रा,	₩.	ग.	ŧ.	का. यो.		वे.	죡.	騆.	संय.	द.	हे.	म.	स.	संक्रि.	आ.	ं उ. ∫
् ९ अवि.	१	ξ,	१ 0	8	ጸ	8	8 88	म.४	₹	¥	ર	৩	₹	इ. ६	₹	3	\$?	ર
से.	n.4.			पस		<u>d</u>	्।व.` हें औ.	۶ ۲	अपरा	अम्बर	मति.		कि.द. विनाः		भ.	आप.	स.	आहा.	
क्षी.				g,		- 1	[।] व.	8	क	ক	अत.		1441.	 		क्षा- क्षायो-			अना.
	1				,	ļ	आ.	2		ļ				1					

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणहाणाण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसक्तओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञता होंति अणागारु-वज्जता वा "।

आभिणिबोहिय-सुद्गाण-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतक्कानी जीवोंके अपयीप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— अविरतसम्बन्दि और प्रमत्तसंयत ये दें। गुणस्थान, एक संक्षी-अपयीप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्काएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकिमश्र, वैकियिकिमश्र, आहारकिमश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कवाय, मित और श्रुत ये दो क्षान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और श्रुक्त लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं, भन्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिबोधिक और श्रुतक्षानी असंयतसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राणः चारों संबाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, आहारकदिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वद, चारों कषाय, भित और श्रुत ये दो बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्याएं,

न.	३६६	मति-श्रुतकानी जीवोंके अपर्याप्तः	आलाप.
----	-----	----------------------------------	-------

y .	जी-	٩.	प्रा. सं.	ग.	₹.	का.	यो-	वे∙,	奪.	शाः	संय-	द.	ले.	म.	स.	संझि.	आ.	ड.
२	2	Ę	8	18	١ ٤	1	8	3	X	3	₹	₹	द्र. २	8	્રે	₹.	2	ર
अवि .	10	अ.	-		q .									म-	आप.	सं.	आहा-	साका.
1स-	4					i ı	वै. मि			श्रुत-	सामा-		रु ∙		क्षा.		अना-	अनाः
	-						आ.मि			I	∣ छेदो.		मा- ६	ı	क्षायो	1		
!	١	}	{		<u> </u>		कार्म.							I		1	l	1

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता ना रा ।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पंजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-मावेदि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{सद}।

भव्यसिद्धिकः औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतक्षानी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दे बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीनों सम्यक्त्य, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ३६७ मति-श्रुतशानी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

١	गु.	जी.	q .	श्रा-	सं	ग.	\$	का	यो -	वे.	ক.	ज्ञा .	संय	द.	ले.	म•	स.	संक्रि-	ना.	₹.	1
					R				१ ३		X	ર		3	द्र. ६	Ş	₹	*	2	2	ĺ
I	o o	स.प. स.अ.	६अ.	9			.	E.	आ. द्वि. विना.			माति-	असं.	के.द.	मा. ६	म.	ओप.	सं.	आहा.	साका.	ĺ
ı	ক	स.अ.					ö	lic.	विना.			अु त.		विना-			क्षा.		अना.	अना.	l
1																	क्षायो.				1
ı																					١

नं ३६८ मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गुःजी,	प. त्रा.	सं.	ग.	₹.	⊤का	यो.	वे.	क. ह्या-	संय.	₹.	ਰੇ	म-	सं.	संक्रि.	आ.	उ.
9 9	६ १०	لا	8	9	٩	90	3	४ । २		₹	द्र. ६	1	्३	9	9	ર
् <u>ट</u> सं.प				- q	b	म. ४		'मति	असं.		. मा- ६	. म	ओप.	सं.	आहा.	साका.
ক				b	7	व. ४		श्रुत		विना	•	-	क्षा.			अना.
i						ઓ.૧			ĺ	!			क्षायो.			
				,		वै. १		l i	1		1			Į į		

तेसि चेव अपन्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपन्जनीओ, सन पाण, चनारि सण्णाओ, चनारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चनारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मन्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा

संजदासंजदप्पहुर्डि जान खीणकसाओ ति तान मूलोघ-मंगो । णनि आभिणि-बोहिय-सुद्णाणाणि वत्तन्त्राणि । एनमोहिणाणं पि नत्तन्त्रं । णनि ओहिणाणं एकं चेन भाणिदन्त्रं । णाण-दंसणमग्गणाआ जेण खओनसममस्सिऊण द्विआओ तेण मदि-सुद्णाणेसु णिरुद्वेसु दोहि तीहि चउहि ना ओहि-मणपज्जनणाणेसु णिरुद्वेसु तीहि

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दि जीवोंके अपयोक्तकालसंबन्धी आलांप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपयोक्त जीवसमास, छहों अपयोक्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययेगा ये तीन योगः पुरुपवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कपाय, मित और श्रुन य दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेदयांपं, भावसे छहां लेदयांपं, भच्यसिद्धिक, औपदामिक आदि तीन सम्यक्त, संज्ञिक, आदारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर श्लीणकषाय गुणस्थान तकके मित-श्रुतक्कानी जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि ज्ञान आलाप कहते समय आमिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान ही कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधिज्ञान के आलाप जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि यहां पर पूर्वां के देश ज्ञानमें एक अवधिज्ञान ही कहना चाहिए।

शंका — जब कि मतिझानादि क्षायोपशमिक झानमार्गणा और चक्षुदर्शनादि क्षायोप-शमिक दर्शनमार्गणाएं अपने अपने आवरणीय कमें के क्षयोपशमके आश्रयसे स्थित है, तब मति-झान और श्रुतझान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर दो, तीन अथवा चार झानः तथा अवधिझान

ગુ.	जी-	٩.	प्रा.	¦सं -	η.	इ.का	<u>यो</u> _	व.	क	ना	संय	₹.	ਲੇ.	म-	स.	सिन्न.	आ.	ੁਰ.
3			હ	¥			3				?	₹	द्र. २	*	3	?	3	२
任	सं. अ.	ĺ					्ञा । व.मि.			मातः श्रुतः		क द. विना.			क्षा.	1	'	साका. अन्।
1"							कार्म.	٠.,		300			भा.६		. ५०० इसायो.	!	ગગ1.	जना.
																		ļ [
1_				1										<u> </u>				! [

चउिह वा णाणेहि होदन्त्रमिदि सच्चमेदं, किंतु इयरेसु संतेसु वि ण विवक्खा कया, तेण विवक्खिय-णाण-विदिरित्त-णाणाणमवणयणं कयं ।

मणपडजवणाणीणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणहाणाणि, एओ जीवसमासी, छ पडजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, आहारदुगेण विणा णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपडजवणाणं, परिहारसंजमेण विणा चत्तारि संजम, विण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, वेदगसम्मत्त-पच्छायद-उवसमतम्मत्तसम्माइद्विस्सं पढमसमए वि मणपडजवणाणुवलंभादो। मिच्छत्त-

और मनःपर्ययक्षान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर तीन अथवा चार क्षान होना चाहिए ?

विशेषार्थ — शंकाकारके कहने का यह भाव है कि जब मतिज्ञान आदि चार ज्ञान क्षायोपशामिक होनेके कारण मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञानके साथ अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान हो सकते हैं: तब विवक्षित किसी भी ज्ञानमार्गणाके आलाए कहते समय अपने सिवाय शेष ज्ञानोंको भी कहना चाहिए। अर्थात् छद्मस्थ जीवोंके कमसे कम मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ये दो ज्ञान तो होते ही हैं: तथा इनके साथ अवधिज्ञान, अथवा मनःपर्ययज्ञान अथवा दोनों ही ज्ञान हो सकते हैं, इसिलिये मित-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय मित और श्रुत ये दो अथवा मित, श्रुत और अवधि य तीन अथवा, मित, श्रुत और मनःपर्यय ये चीन अथवा, मित, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चीर ज्ञान कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधि ज्ञानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंक आलाप कहते समय--क्रमशः मित, श्रुत और अवधि ये तीन तथा मित, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञान अथवा मित, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये वीन नथा मित, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञान अथवा मित, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये वीन कहने समय--क्रमशः मित, श्रुत और मनःपर्यय ये वीन तथा मित, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञान अथवा मित, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए।

समाधान — आपका यह कहना सत्य है, किन्तु विवक्षित ज्ञानके साथ इतर ज्ञानोंके होने पर भी उनकी विवक्षा नहीं कि गई है: इसिलिये विवक्षित ज्ञानसे आतिरिक्त अन्य ज्ञानोंको नहीं गिनाया गया है।

मनःपर्ययद्वानी जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयतसे लेकर क्षीणकपाय तकके सात गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्रापं तथा क्षीणसंब्रास्थान भी है, मनुष्यगित, पंचीन्द्रयज्ञाति, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकिमश्रकाययोगके विना नी योग, पुरुपवेद, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, मनः-पर्ययद्वान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्वयसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, तीन सम्यक्त्व होते हैं, मनःपर्ययद्वानीके भीपश्चिकसम्यक्त्व कैसे होता है, इसका समाधान करते हुए अवार्य लिखते हैं कि जी

⁹ उनसमचिरियाहिमुहो वेदगसम्बो अण विजीयिता। अंतोमुहुत्तकार अधापमची पमत्ता य ॥ तत्तां तिर्यणिविहिणा दंसणमोहं समं ख़ु उनसमिदि। छः क्षः २०३, २०४.

पञ्छायद-उवसमसम्माइहिम्मि मणपञ्जवणाणं ण उवलब्भदेः मिच्छत्तपच्छायदुक्कस्सुव-समसम्मत्तकालादो वि गहियसंजमपढमसमयादो सञ्जवहण्णमणपञ्जवणाणुष्पायण-संजमकालस्स वहुनुवलंभादो । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-

वेदकसम्यक्त्वसं पीछे हितीयोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस उपशमसम्यग्दाप्टिके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययक्षान पाया जाता है। किन्तु मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दाप्टि जीवमें मनःपर्ययक्षान नहीं पाया जाता है, क्योंकि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दाप्टिके उत्कृष्ट उपशमसम्यक्त्वके कालसे भी ब्रह्मण किये गये संयमके प्रथम समयसे लगाकर सर्व जघन्य मनःपर्ययक्षानको उत्पन्न करनेवाला संयमकाल बहुत बड़ा है।

विशेषार्थ-- ऊपर मनःपर्ययक्षानीके तीनी सम्यक्तव बतलाये गये हैं। आयिक और क्षायोपशामिकसम्यवस्यके साथ तो मनःपर्ययञ्चान इसलिये होता है कि मनःपर्ययञ्चानकी उत्पत्तिमें जो विशेष संयम हेत् पड़ता है वह विशेष संयम इन दोनों सम्यक्त्योंमें हो सकता है। अब रही औपराभिकसम्यग्दर्शनकी बात, सी उसके प्रथमीपरामसम्यक्त और द्वितीयी-परामसम्यक्त्व ऐसे दो भेद हैं। उनमें प्रथमोपरामसम्यक्त्वको अनादि अथवा सादि मिथ्या-हाप्रे ही उत्पन्न करता है और उसके रहनेका जघन्य अथवा उत्क्रप्रकाल अन्तर्महर्त ही है। यह अन्तर्मुहर्तकाल, संयमको ब्रहण करनेके पश्चात् मनःपर्ययक्षानको उत्पन्न करनेके योग्य संयममें विशेषता लानेके लिये जितना काल लगता है उससे छोटा है। इसलिये प्रथमोपशम-सम्यक्तके कालमें मनःपर्ययन्नानकी उत्पात्ति न हो सकतेके कारण मनःपर्ययन्नानके साथ उसके होनेका निषेध किया गया है। द्वितीयोपज्ञामसम्यक्त्व उपज्ञमश्रेणीके अभिमुख विशेष संयमीके ही होता है. इसिलिये यहांपर अलगसे मनःपर्ययक्कानके योग्य विशेष संयमको उत्पन्न करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है और यही कारण है कि द्वितीयोपराम-सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमं भी मनःपर्ययक्षानकी प्राप्ति हो सकती है। अथवा जिस संयमीने पहले वदकसम्यक्त्वके कालमें ही मनःपर्ययञ्चानको ग्रहण कर लिया है उसके भी उपदामश्रेणीके अभिमुख होनेपर हितीयोपदामसम्यक्तकी प्राप्ति हो जाती है, इसिलिये भी द्वितीयोपशमसम्बत्वके प्रहण करनेके प्रथम समयमें मनःपर्ययक्षान पाया जा सकता है। क्रवर रोकामें 'पदमसमय वि' में जो अपि शब्द अत्या है उससे यह ध्वनित होता है कि द्वितीयोपशमसम्यक्तवके श्रहण करनेके द्वितीयाहिक समयमें वर्द्धमान चारित्र रहता है, इसलिये बहां तो मनःपर्ययञ्चान उत्पन्न हो ही सकता है, किन्त प्रथम समयमें भी संयममें इतनी धिशेषता पाई जाती है कि वह मनःपर्ययञ्चानकी उत्पत्तिमें कारण हो सकता है। इस कथनका तारपर्य यह हुआ कि प्रथमीपशमसम्यक्त्वके अनन्तर या उसके साथ संयमकी उत्पत्ति होती है, इसिंछये उसमें तो मनःपर्ययक्षान नहीं उत्पन्न है। सकता है। परंतु द्वितीयो-पद्मामसम्यक्त संयमीके ही होता है. इसिलये उसमें मनःपर्ययक्षानके उत्पन्न होनेमें के है विरोध नहीं है। इसप्रकार मनःपर्ययक्षानके साथ तीनों सम्यक्त्व तो होते हैं, किन्तु औपरा-

वजुत्ता वा ।

मणपज्जवणाण-पमत्तसंजदप्पहुिं जाव खीणकमाओ ति ताव मूलोघ-भंगो। णवरि मणपज्जवणाणं एकं चेव वत्तव्वं। परिहारसुद्धिसंजमो वि णत्थि ति भाणिदव्वं।

केवलणाणाणं भण्णमाणे अतिथ वे गुणद्वाणाणि अदीदगुणद्वाणं पि अतिथ, दो जीवसमासा एगो वा अदीदजीवसमासो वि अतिथ, छ पज्जनीओ छ अपज्जनीओ अदीदपज्जनीओ वि अतिथ, चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाणा वि अतिथ, खीणसण्णाओ, मणुसगदीं सिद्धगदी वि अतिथ, पंचिदियजादी अणिदियं पि अतिथ, तसकाओ अकाओ वि अतिथ, सत्त जोग अजोगो वि अतिथ, अवगदवेद, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादसुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमो गेव संजमो वि

मिकसम्यक्त्वमें द्वितीयोपरामका ही ग्रहण करना चाहिए, प्रथमोद्गामका नहीं। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, अहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनःपर्ययक्षानी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे छेकर श्लीणकषाय गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानके आलाप मूल ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि ब्रान आलाप कहते समय एक मनःपर्ययक्षान ही कहना चाहिए। तथा संयम आलाप कहते समय परिहारविद्याद्विसंयम नहीं होता है, ऐसा कहना चाहिए।

केचल हानी जीवों के आलाप कहन पर—सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये दो गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो अथवा एक पर्याप्त जीवसमास है तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी होता है, वचन हल, कायहल, आयु और श्वासोच्छ्रास ये चार प्राण, अथवा समुद्धातगत अपर्याप्तकालमें आयु और कायहल ये दो प्राण और अयोगिकेवली के एक आयु प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, श्वीणसंहाः मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंवे- विद्याति तथा अतीविद्यस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकवायस्थान भी है, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये सात योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकवाय, केवलहान, यथाख्यात-

नं. ३७०

मनःपर्ययञ्चानी जीवोंके आलाप.

J.	जी.	q . 9	IF ₹	Î.	η,	₹.	का.	यो.	वे.	죡.	ह्या-	संय.	द.	ਲੇ.	म.	स.	सं।ज्ञिः	आ.	उ.
b	2		(0)	\$	8	₹	१	8	8	X	2	¥	₹	द्र, ६	*	3	₹ .	₹	ર
	सं.प.)	Þ	-	म	- □	1	म• ४	Ţ.	÷	मनः.	सामा.	के.द	मा. ३	म.	ओप.	सं.	आहा.	२ साका. अना
से.			Ę	<u>.</u>		ь	ir.			अकदा			विना.	गुम∙		_			अना ।
क्षीण.			1					ओ. १		n		सूक्ष.		,		क्षायो			
L	<u> </u>		1	ı								यथा.				1			

अत्थि, केवलदंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भव-सिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागोरिहं जुगवदुवजुत्ता वा³³¹।

सजोगि-अजोगि-सिद्धाणमालावा मूलोघो व्व वत्तव्वा।

एवं णाणमग्गणा समत्ता ।

संजमाणुवादेण संजदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस सत्त चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि

विद्वारगुद्धिसंयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनोंसे रहित भी स्थान है, केवल-दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं. भावसे गुक्रलेक्या तथा अलेक्यास्थान भी है: भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन देशों। विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिकसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोग और अनाकारो-पयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

केवलज्ञानकी अपेक्षा भी सयोगिकेवली अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान कहना चाहिए।

इसप्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई।

संयममार्गणांके अनुवादमें संयतींके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लंकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण; चारों संज्ञापं तथा श्लीणसंज्ञास्थान भी है, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिक-काययोग और वैकिथिकमिश्रकाययोग इन दें। योगोंके विना शेष तेरह योग तथा अयोग-

नं. ३७१

केवलशानी जीवींके आलाप.

л .	जी.	q.	प्रा-	₹.	η.	ŧ	का	यो.	वे.	क्	ক্না,	सय.	₹,	ले.	म्,।	स.	!संश्रि.	आ.	3.
ર	ર	ξq.	x	0	1	₹.	₹.	v	0	0	ş	₹.	*	द्र.ह.		2	10	ર	ર
सयो.	पर्या.	६अ.	ર	.II	म.	q.	₹.	म- २	-	글	कव.	यथा.	के.	भा. १	ਮ,	क्षा.	·	आहा.	साका. अना.
अया.	अप.	<u> </u>	ર	क्षीण	F-	=	-	व्२		अक्षा.		i .	द.	गुरू-	્ય જો		क	अना.	अना.
5	<u>.</u> सं	अतीत	Ė	86	क्र वि	अत्रा	ক	ગ્રાં ર	į			अनुभय.		अले	ক				यु. उ.
अतीतमु.	અતાતિની.	ক	अतातमा.		(2)			कार्म्. १	. I			ন							
क	ক	i	6					अयो.	.								, ,		
1		İ	l							,						<u> </u>			<u></u> '

अत्थि, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, पंच संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागोरिर्हे जुगवदुवजुत्ता वा होंति

पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जतीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि

स्थान भी है, तीनों वेद तथा अवगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मितिक्षानादि पांचों सुक्षान, सामायिकादि पांचों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावले तेज, पद्म और शुक्क लेक्याएं तथा अलेक्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक, औपशामिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

संयममार्गणाकी अपक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त य दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण: चारों संझाए, मनुष्यगित, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकायः चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कवाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविद्युद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, दृष्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पश्च और शुक्क लेश्याएं, भग्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक,

नं. ३७२

संयमी जीबोंके सामान्य भाळाप.

∤ ग्रु.	जी.	ч.	श्रा.	₹,	₹.	₹.	का.	यो.	₹.	存.	हा।	सय.	₹.	छे.	म.	स.	स्राह्ने.	आ.	ਫ.
9	2						*	₹ ₹	₹	8	· ·	وم	8	₹. €	,	₹		વ	ર
प्रम. से	स.प.	६ अ.	o	<u>.</u>	П.	der	hċ	व ईि.	<u>, -</u>		मति.	सामा. छेदो.		सा. ३.	भ.	ओप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.		R	Ē		, F2.	N.	विना.	34	5	अत.	छेदो.		शुभ -		क्षा.	अनु .	अना.	अना-
अयो.	1		ર	, ST				अयो.	.,	ir	अव.	परि.	,	अंख.	,8	झायो,	1		यु. उ.
			٤,								मनः.	मुक्स.	1	i					
	i ,		1						<u>.</u>	ı	केव.	यथा.	1	.	_ ŧ				. 1

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ै।

अप्पमत्तमंजदाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ आहारसण्णा णिट्ध, मणुमगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्माओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागास्वजुत्ता होति अणागास्वजुत्ता वा ं।

अपुव्ययरणप्यहुडि जाव अजोगिकेविल त्ति ताव मृलोय-मंगो।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्षीपर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तयां. दशें प्राण, भय, मेश्रुन और परिश्रह ये तीन संक्षाएं
होती हैं किन्तु यहां पर आहारमंक्षा नहीं है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों
मनोयोग, चारों वचनयोग और आँदारिककाययोग ये ने। योगः तीनों वेद, चारों कपाय,
आदिके चार क्षान, सामायिकादि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्याएं,
भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेड्याएं: भव्यसिद्धिक, औपद्मिकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक,
आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक संयमी जीवोंके आलाप मूल भोघालापोंके समान होते हैं।

नं. ३७३ संयमकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

17	Ţ,	ŀ	जी.	٩.	ग्रा.	₹1.	₹.	\$	4 ,,	यो	ণ.	ĉ,	গা	सय	₹.	्र,	4	स.	मोन.	শা.	₹.
1	٤.		ર	६प	10	x	9	4	9	9 9	-	¥	6	7	વ	द्र ६	9	÷.	7	>	3
5	Ŧ	स	q.	€अ,	৬		म	15	F-	ग ४ व ४			मात	वामा	क द्ध	सा. ३	4	. आप	सं	आहा.	साका,
1		स	. अ.					5	1	न ४			श्रत.	रद्यो	'रना	গ্ৰা,		सा			अमा.
1										ओ. १			17.	qfr				क्षाया			
1										नाहा ४			मन:								- 1

ने. ३७४ संयमकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयन जीवोंके आलाप.

Ŋ.	जी.	q	प्रा	स	41	₹.	का,	यो.	à	4 5.	ह्या.	सय.	₹.	ਲ	भ.	- स	सांहा.	आ.	ਰ.
2	₹,	ξ	90	₹	*	₹	2	9	ŧ	У	X			द्र. ६		3	₹	*	2
ļ.:	6			आहा	ц.	ber.		म ४ व. ४			मात.	मामा	के .द	भग. ३	म	आप.	स.	आहा.	साका.
क्रि	b H			विना		P.	175	व. ४			12			गुभ.		क्षा			अमा.
1	1							ओ, १			अव.	परि.				क्षाया.			ļ
1	1		1		j						मन:.) [

सामाइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगाग्ह जोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, सामाइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंमण, दन्त्रेण छ ठेस्साओ, मानेण तेउ-पम्म-सुक्करेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जता होति अणागारुवज्जता वा ।

पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियद्धि ति ताव मृलोघ-भंगो। एवं छेदोवद्घावण-संजमस्म वि वत्तव्वं।

परिहारसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ

मामायिकशुविसंयत जीवंकि आलाप वहने पर—प्रमातसंयत, अध्मत्तसंयत, अपूर्व-करण और अनिवृत्तिकरण ये चार गुणमणत, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौँ प्राण, सान प्राणः चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचितिव्यज्ञाति, असताय, चारों प्रनायोग, चारों पचनसंद, आंद्रारिकका ग्रयोग आहारक-काययोग और आहारकिमश्रकायये से स्वत्यत्व देशाः विसे वेद तथा अपगतवेदम्थान भी है, चारों कपाय, आदिके चार प्रात, सामायिक्षण्यत्व विस्त्र, आंप्रामिकापि तीन सम्यक्त्व, संशिक, आहारक, माकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हैति हैं।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे छेकर अनिशृत्तिकरण गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती सामायिकामुद्धिसंयतींके आछाप मूल ओघाछापके समान हैं। विशेष बात यह है कि संयम आछाप कहते समय एक सामायिकामुङ्गिसंयम ही कहना चाहिए। उसीप्रकार छेदोपस्थापना-संयमके भी आछाप जानना चाहिए। दिन्तु संयम आछाप कहते समय एक छेदोपस्थापना-संयम ही कहना चाहिए।

परिहारविद्युद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये

नं. ३७५

सामायिकगुद्धिसंयत जीवींके आलाप.

गु.	जी.	q.	श्रा.	सं,।	ग.	ţ.	का-	यो.	वे	事	ज्ञा.	सय.	₹.	हे	•	A.	.स.	साझे.	आ.	ं उ. ∣
४ प्र.	₹	Ę	ه ۶					११म.४					3	桌	ξ	?	₹	१	8	3
अप.	स.प.	व	9		म.	ф	蛇	व. ४	1 5		श्रन	मामा,	क. द.	H	₹,	म.	अं।प.	सं.	आहा.	साका-
	⊩स.अ.	Ę	,		ĺ	1	150	ऑ⊷ १	동		अव.		विनाः	,34	1		क्षा.			अना.
अनि.		э.	1	1				आ. २	ĺ	1	मनः.	1		1			क्षायो.	l		1

परजरीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग आहाराहारिमस्सा णित्थ, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण मणपज्जवणाण णित्थ, कारणं आहारदुगं मणपज्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो एदे जुगवदेव ण उप्पज्जंति। परिहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मतं विणा दो सम्मत्तं, सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

पमत्त-अप्पमत्त-परिहारसुद्धिसंजदाणं पुध पुध भण्णमाणे ओघ-भंगो । णवरि आहारदुग-मणपञ्जवणाण-उवसमसम्मत्त-सामाइय-छेदावट्टावणसुद्धिसंजमा च णित्य । परि-हारसुद्धिसंजमो एको चेव संजमद्वाणे । वेदद्वाणे पुरिसवेदो चेव वत्तच्यो ।

दो गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षांय, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वननयोग और औदारिककाय-योग ये नो योग द्वाते हैं, किन्तु यहांपर आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोग नहीं होते हैं। पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं, किन्तु यहांपर मनःपर्ययक्षान नहीं है; क्योंकि, आहारकिहिक, मनःपर्ययक्षान और परिहारविश्वाद्धिसंयम ये तीनों युगपत् नहीं उत्पन्न होते हैं। क्षान आलापके आगे परिहारविश्वाद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रष्यसे छहों लेक्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, आपश्वामिकसम्यक्तिके विना क्षायिक और क्षायोपश्वामिक ये दो सम्यक्तवः संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत-परिहारिवशुद्धिसंयत और अप्रमत्तसंयत-परिहारिवशुद्धिसंयत जीवेंकि आछाप पृथक् पृथक् कहने पर उनके आछाप ओधाळापके समान हैं। विशेष बात यह है कि यहां पर आहारककाययोगिद्धिक, मनःपर्ययक्षान, औषश्मिकसम्यक्त्य, सामायिकशुद्धिसंयम और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयम इतने आळाप नहीं होते हैं। संयमस्थान पर एक परिहार- विशुद्धिसंयम ही होता है। तथा वेदस्थानपर एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए।

१ प्रतिष्ठ 'एदाओ' इति पाठः ।

मं. ३७६ परिद्वारविद्यक्तियत जीवोंके आलाप.

संज्ञिः आ. १ १	٦
सं. आइ।	सका
۲,	अनाः
1	
1	् सं. आइ।

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे मृलोघ-भंगो ।

जहाक्खादसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खाद-सुद्धिसंजमो, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सिण्णणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा

उवसंतकसायप्पहुं जाव अजोगिकेविल चि मृलोघ-भंगो । संजदासंजदाण-

स्हमसाम्पराधिकगुडिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर उनके आलाप मूल ओघाला-पके समान ही जानना चाहिए।

यथाख्यातिवहारणुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकपाय, श्रीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपयोध्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राणः श्लीणसंझा, मनुष्यगति, पंचीन्द्रयज्ञाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, आंदारिककाययोग, औदारिकिमश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः अपगत्वेद, अकवाय, मितझानादि पांचों मुझान, यथाख्यातिवहारणुद्धिसंयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे गुक्कलेख्या तथा अल्ड्यास्थान भी हैः भव्यसिद्धिक, वेदकसम्ययत्वके विना शेष दे! सम्यवत्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकरणोंसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन उपयुक्त होते हैं।

उपशान्तकपाय गुणस्थानसे लेकर अयागिकेवली गुणस्थानतकके यथाख्याताविहार-

नं. ३७७ यथाख्यात गुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

गु. जी.			इ ⊬का√ यो⊷									संहि.	आ.	उ. [
			8 8 88						द्र.६	8	ર્	2	3	ર
उसप.	६अ	४ . म. ५	त्र, म.४ व.४	÷	÷	श्रत.	यथा.		मा. १	भ∙	ओप.	स.	आहा.	साकाः
क्षी. अप		२ हिं	व- ४	अव	अक्	৹ ≇.			गुक्तु.		क्षा.	अनु.	अना.	अना.
н.		8 90	ओं. २		19	मन			अछे.			İ	1	यु. उ.
अ.		l	का. १			केव.			١	{		1 1		1

मोघ-मंगो।

असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पण्डातीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णणो असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव पजाणां भणामाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा,

द्युद्धिसंयत जीवोंके भालाप मूल ओघालापोंक समान हाते हैं।

संयतासंयत जीवांके भारतप ओघालापके समान हाते हैं।

असंयत जीवोंके आछाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; नी प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संशापं, चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययागि दिकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छश्यापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान,

सं.	3196

थसंयत जीवोंके आलाप.

यु.	जीः	9.	श्रा.	₹.	ग.	₹.	奪].	यो.	वे.	奪.	啊.	सय.	् द.	. છે.	म.	स.	संक्रि.	आ.	ड. ∣
		६प.	20,0	8	8	ч	Ę	१ ३	*	8	Ę	2	} {	द्र. ६	२	Ę	3	२	ર
गि.		६ अ.	8,0					आ द्वि.			अज्ञा.	अस.	के द	भा. ६	म∙		स.	आहा.	साका.
सा.		५५.	८,६					विना-	1		3		विना-		अ.	!]	अस.	अना.	अना.
स.	l	५ হা.	७,५								श्चान	I							
અ.		४प.	€,४	İ							3						1		
1		४अ.	¥,₹	1											١.,				} j
L		l 		1													1		

छ पजनीओ पंच पजनीओ चत्तारि पजनीओ, दस पाण णव पाण अद्ध पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, ड णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो अस्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि तिष्णि गुण्डाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि अपजनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिष्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिष्णि जोग, तिष्णि बेद, चत्तारि कसाय,

सात पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां कार पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, मौहारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कचाय, तीनों भक्षान और आदिके तीन क्षान इस प्रकार छह क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रस्य भौर प्रावसे छहां लेश्यापं, भ्रव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहां सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्याहि सासा-दनसम्यग्हि और अविरतसम्यग्हि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संक्षापं, चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिभकाययोग, वैकियिकमिभकाययोग, और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति, कुभुत और आहिके

नं. ३७९ असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु	जी.	q.	সা-	सं.	ग.	<u> Ę</u> .	郁.	यो.	बे.	奪,	W	सय.	₹.	₹.	स.	स.⊦संहि	आ .	ਰ.
¥	9	Ę	₹ •	X	X	ų	Ę	8.0	ą	8	Ę	*	₹	द्ध. ६	ર	६ २		1 2
ामे.	पर्या.	4	9					#. ¥			हान.	असं.	के.द.	भा. ६	म.	₹.	नाहा-	साका.
स्रा.		¥	6					ब. ४			₹		विना.		अ,	गसं.		अना.
₹.		ı	৩					जो. १			अज्ञा.	1	ĺ			1		
अ.		1	Ę					ंबे. १			₹				1			
		!	8					!				_]	1				

पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; मवसिंद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां

मिच्छाइंद्विप्पहुर्डि जाव असंजदसम्माइद्वि ति मृलोघ-भंगा।

एवं संजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण ओघालावा मृलोघ-भंगो।

चक्खुदंसणीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, छ जीवसमामा, छ पञ्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ,

तीन ज्ञान ये पांच ज्ञानः असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे छहीं लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिध्यात्वके विना पांच सम्यक्तव, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मिध्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तकके असंयत जीयोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार संयममार्गणा समाप्त हुई।

दरीनमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं।

चक्षदर्शनी जीवोंकं सामान्य आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, चतुरि-न्द्रिय-पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त, असंबीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त, संबी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संबीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये छह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्यीप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: नौ प्राण, सात प्राण; आढ प्राण, छह प्राण; चारों संबाएं तथा श्रीणसंबास्थान भी है चारों गितयां,

नं. ३८० असंयत जीवोंके अपर्याप्त आराप.

ਹ.	जी.	Ч.	সা.	स.∣	ग.	₹.	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा .	सय.	द.	छे.	ं म∙	₩.	सोंझ.	, आ.	ੁਰ.]
		६ अ.		8	X	ч				8	५ कुम	2	₹	द्र.२	२	4	1 2	ર	2
मि.ः	अप -	۷,,	B					अं। मि			कुथु.	अस.							साका.
सा.		٧,,	Ę					बै.मि			माते.		विना-	¥.	अ.	विना.	अस.	अना.	अना.
(અ.ૃ		1	4	- (- 1	I		कार्म.			श्रुत.			मा ६	1			1	
		, ;	४ ३,	l		}					, अव.	ı					l		

चउरिंदियजादि-आदी व जादीओ, तमकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कपाय अकमाओ वि अत्थि, मत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दृष्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव पज्जताणं भण्णमाणे अस्थि वाग्ह गुणद्वाणाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पडजतीओ, दम पाण णय पाण अह पाण, चत्तारि मण्णाओ खीण-मण्णा वि अस्थि, जतारि गदीओ, चडिंगिदियजादि-आदी दो जादीओ, तसकाओ, एगाग्ह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कमाय अकसाओ वि अस्थि, मत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दच्च-भोविहें छ हेस्साओ, भवसिद्धिया अभव-मिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणा असिण्णणो, आहागिणो, मागाह्वजुत्ता होंति अणागाह-

नतृर्गिन्द्रयजाति आदि दो जातियां, वसकाय, पन्द्रही योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं. चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी हैं, केवछज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, चश्चदर्शन, इव्य और भावसे छहीं छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहीं सम्यक्त्व, संविक, असंविकः आहारकः अनाहारकः माकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं चश्चदर्शनी जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमासः छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, ना प्राण, आठ प्राण; चारों संबापं तथा श्रीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, जसकाय, पर्याप्तकालभावी स्थारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, केवलजानके विना सात जान, सातों संयम, चश्चदर्शन, दृष्य और भावसे छहाँ लेदयाएं, भव्यासाद्धिक, अभव्यासिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्य, संविक,

नं. ३८१ चश्चदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

वजुत्ता वांं।

तेसिं चेव अपज्ञत्ताणं भण्णमाणे अन्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, तिण्णि जीवसमासा. छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जतीओ, सत्त पाण मत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, चउरिंदियजादि-आदी व जादीओ, तमकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, चक्खदंसण, दच्वेण काउ-मुक्कलेस्साओ, मावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सिण्णणो असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वज्ञत्ता होंनि अणागास्वज्ञता वा

असंत्रिकः आहारक, साकारापयोगी और अनाकारापयोगी होते हैं।

उन्हीं बश्चदर्शनी जीवोंक अपर्याप्तकालमंबन्धी आलाए कहते पर- िश्याद्यणि, साया-दनसम्यग्दाष्टे, अविरतसम्यग्दाष्टि और प्रमत्तसंयत य चार गुणस्थान, चत्रिरिट्य-अपर्याप्त, असंक्रीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त और संक्रीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त के तीन जीवसमासः छहीं अपर्या-त्रियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राणः चारों संक्रापं, चारो गतियां चतुरिन्द्रियजाति आदि दे। जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावं चार योग, तीनो चेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामाधिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, चश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और गृहः छेएयापं, भावसे छहों छेश्यापं: भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः सम्याग्मध्यात्वके विना पांच सम्यक्त्य संक्षिक. असंक्रिकः आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

નં. રે૮ર

चशुद्रीनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	q.	। प्रा.	स.	ग.	夏.	का	2	ÌI.	व	ক	. লা	सय.	द.	ಲ್.	4;∙	म्	माञ्च.	¥7.	3
१२	વ્	Ę	ŧ o	8	8	2	9	7.7	Ħ	K 3	8	৬	৩	१	<i>5.</i> ξ	ર	Ç	~	۶	ं स्का अन्ः
मि.	च. प.	4	18			ਚ.	٠	व	8	<u>_</u>		केव.		বধু.	Hi :	4T		म.	211 z 1	ाद्वाप्त
स	असं,प.		۷	गिव		q .	1	ओ	. !	अ	19	विनाः				अँ		अस.		अन्।
क्षी -	सं. प.	·		200				a .	9	_	- '1									
					}			आ	. १					ı						

नं. ३८३

चअदरीनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

Ŋ. 1	जी-	d	श्रा-	स	η.	₹.	का.	या.	व.	क,	झा.	सय	द.	ਲ	€,	н.	माञ्च	आ.	उ
8	₹	६अ	15	X	8	ર	8	8	₹	8	५ उ.म.	₹	ş	₹. ₹	ર્	4	२	2	ર
	च.अ∙					च.	त्र.	अं।.मि.			कुश्.						1		
	असं.अ.		Ę			ч.		व.मि.			मान.	मामा		भु	अ.	विना.	ंअस.	अना.	अना.
अ.	सं. अ.							आ-ाम			श्रुत	छदो.		भा ६					İ
प्र.	l			_				कार्म.			अव .				_				- 1

चक्खुदंसण-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, छ जीवसमासा, छ पज्ञत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण अह पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चतारि गईओ, चउरिंदियजादि-आही व जादीओ, तसकाओ, नेरह जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमा, चवम्बुदंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारियो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, तिण्णि जीवसमासा, छ पज्जन्तीओं पंच पज्जन्तीओ, दस पाण धव पाण अह पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चटरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तमकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

चश्चदर्शनी मिध्याद्यप्ट जीवोके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादिष्ट गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-एर्याप्त और अपर्याप्त, संबी-पंचिन्द्रिय-एर्याप्त और अपर्याप्त ये छह जीवसमासः छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां। गंन पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां। दशौं प्राण, सात प्राणः नी प्राण, सात प्राणः आठ प्राण, छट जाणः चारों संजाण, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियज्ञाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, अपराक्तकाययोगिहिकके विकाले हिट योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अब्रान, असंयम, वश्चदर्शन, द्रश्य और भावने छहीं छेदयाणं, भव्यानिद्धिक, अनव्यसिद्धिक, मिध्यात्य, संबिक, असंजिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों च अद्दर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशौं प्राण, नो प्राण, आठ प्राण: चारी संशापं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियज्ञाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, चारों मनायोग, धारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों बेद,

नं. ३८४ चल्रुदर्शनी मिथ्याद्यष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

ग, जी	q.	त्रा. म.⊣ग	13.	का.	्या.	वं.	क	न्ना-	मय.	द.	हे	ਮ.	स.	संक्षि.	आ.	₹.
१ ६ च प. ६	ч.	₹0,0,8 8	, २	₹.	१३	₹	¥	₹	١ ١	,	द. ६			₹	ર	ર
मि च अ ६	뎨.	9.5	च.	ৰ	आर्गंड.		·	भना.	अस.	चक्षु.	मा•६	म.	मि.	सै.	आहा.	साका.
अस.प ५	ч.	८,६।	١q.		विना.	}			1		.	अ.		असं.	अना.	अना.
अस अ. ५	ाः	1	1		l	ı					' [
सं. प•					I I		!		1		,					
स. अ.				ĺ			j	1								

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दन्त्र-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, माण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वार्ति।

'तिसं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्यि एयं गुणहाणं, तिण्णि जीवसमासा, छ अपन्जनीओ पंच अपन्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चउरिदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंनण, दव्येण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्ट्रां, मण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो

चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयज, चशुद्दीन, द्रव्य और भावसे छहीं छेदयाएं, भव्यिसिद्धिक, अभव्यिसिद्धिकः मिध्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आद्दारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चश्चद्दरीनी मिथ्याद्यष्टि जीवींके अपर्याप्तकालसंबन्धी अलाप कहने पर—एक मिथ्याद्यष्टि गुणस्थान, चतुर्रिन्द्रय-अपर्याप्त, अतंद्यीपंदिन्द्रय-अपर्याप्त और संजीपंचिन्द्रिय-अपर्याप्त थेता जीवसमासः छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राणः चारों संजाणं, चारों गित्यां, चतुर्गिन्य जाति आदि दें। जातियां, जसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग ओर कामणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों काया, आदिके दो अज्ञान, असंयम चश्चदर्शन, इत्यमे कापोन ओर गुक्क लेक्याणं, भावमे छहीं

नं. ३८५ च अदुर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवाँके पर्याप्त आसाप.

ा गु.	ुजी⊦	Ч.	त्रा	म.ग	\$.	Æ]	यो.	4	Ŧ	नी.	गय	t G	E.	₩,	ᆈ.	सिन्न	. आ.	₹.
2	जी- ३	Ę	90	8 8	ર	Ł	70	5	¥	٠.	9	/	75, ξ	₹	*	3	1 8	ँ २
मि.	च. प.	ч	3															साका
	असं.प		<		पर्च.	ı	व ४							ŀć		अस.	1	अना.
1	सं. प.						आ १								- 1		1	1
1	,					,	वे र								ŧ			1

नं. ३८६ चश्चदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवीके अपर्याप्त शालाप.

गु.	्रजी-	q.	भा•	सं.,	₹.	₹.	का	47	वं		ł.,	刊.	संय	₹.	ক.	भ	н.	स्राज्ञ	3[].	હ.
٩	₹	६अ	ড	Х	8	Ę	3	4	-		R.	ર	7	9	इ. २	₹	9	ર	२	3
मि.	च. अ.	43 .	ও	- 1		च.	τ.	भा. भि	ī., '		1	कुम	भूमं	यं धु	का.	ਮ੍.	मि	स.	आहा.	साका-
	असं.अ		Ę		!	q		व भि	4			কুপ্ব.			য়ু.	ĸ		अस.	अनाः	अनाः
1	स. अ.			1	i			कार्म.	,		f	-			माः ६				'	
┖			ı	,	}				1	1	1							!		

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

चक्खुदंसण-सासणसम्माइद्विष्पहुडि जाव खीणकसाओ कि मृलोघ-भंगो, णवरि चक्खुदंसणं ति भाणिदव्वं।

'अचक्खुदंसणाणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ पंच पज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चनारि पज्जनीओ चनारि अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण मत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चनारि पाण चनारि पाण तिण्णि पाण. चनारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चनारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णा-रह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चनारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, मन णाण, मन संजम, अचक्युदंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

लेश्यापंः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, अमंक्षिकः आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

चश्चदर्शनी सासादनसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर श्रीणकपाय गुणस्थान तकके आलाप मूल ओबालापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि दर्शन आलापमें 'चश्चदर्शन ' ऐसा कहना चाहिए।

अचश्चदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर — आदिके बारह गुणस्थान, चौद्दहीं जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण: नी प्राण, सात प्राण: आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण: चार प्राण, चार प्राण, तीन प्राण: चारों संझाएं तथा क्षीणसंद्वारथान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कवाय तथा अकपायस्थान भी है, केवलकानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, अचश्चदर्शन, दृश्य और भावसे छहाँ लेदयाएं, भर्व्यासाद्धिक, अभन्यसिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिकः

नं. ३८७

अचश्चदर्शनी जीवींके सामान्य आलाप.

गु∙	<u>जी.</u> प.	श्रा.	सं.∤ ग	₹.	का.	यो.	वे.	あ	ब्रा.	संय.	ኛ.	ले.	्रभ.	स.	संक्रि,	अ।	₹.
8	१४६ प.	0,0	8 8	ч	Ę	\$ 14	₹	¥	ঙ	9	8	₹. ₹	₹.	Ę	ર	3	1
मि.	६ अ.	९,७	, a				Ŀ		केव.		अच.	भा. ६	म.				साका-
स	५प.	९,७ ८,६	百				अपग	3	विना				₹.		ગલં. ∶	अना.	अना.
क्षीण.	५अ.	७,५	'BE-				.,	n									
	४प-	₹,¥											1				
	४अ.	४,३									_						

छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वारह गुणद्वाणाणि, मत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पञ्जतीओ चत्तारि पञ्जतीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण मत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एंइदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एमारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकमाओं वि अत्थि, मत्त णाण, सत्त संजम, अचक्खदंसण, द्व्व-भावेदि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति चणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपन्जत्ताणं भणामाणे अन्धि चत्तारि गुणहाणाणि, सत जीवसमासा, छ अपन्जत्तीओ पंच अपन्जत्तीओ चत्तारि अपन्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण ह पाण

आहारक, अनाहारकः साकारापथोगी और अनाकारोपयोगी हाने हैं।

उन्हीं अचश्चदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमाल, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां। दशों प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण: चारों संक्षाण तथा शीण-संक्षास्थान भी है, चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि गांचों जातियां, पृतिर्यक्ष य आदि छहों काय, पर्याप्तकालभावी न्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कथाय अकपायस्थान भी है, केवलक्षानके विना सात ब्रान, सातों संयम, अवश्चर्यान, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहों सम्यक्ष्य, संविक, असंविक: आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

बन्हीं अचश्चव्हानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्याद्दि सासादनसम्यग्दि अविरतसम्यग्दि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, नात प्राण, सात प्राण,

गु. नी. प. प्रा. स. ग. इ. का. यो. १२ ७ ६ १० ४ ४ ५ ६ ११ म भि. पर्यो. ५ ९ से. ४ ८ इ. जा. १ इसी. ७ इ. ४ आ. १	3 8 9 9	द. ित. स. स. १ द्व. ६'२ । ६ अच मा.६ म. अ.	मिक्कि. आ. उ. २ १ २ स. आहा. साका. असं. अना.
---	---------	--	--

पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ', एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, अचक्खुदंसण, दव्येण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ, भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

अचक्खुदंसण-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, चोइस जीवसमासा, छ पज्ञत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढर्वाकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दुव्व-भावेहि छ

छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्रणः चारी संज्ञाण, चारी गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पाची जातियां, पृथिचीकाय आदि छहीं काय, अपयीसकालभावी चार योगः तीनों वेद, चारी कवाय, कुमति, कुशृत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये तीन संयम, अचश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेद्यापं, भावस छहीं लेद्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अचक्षुद्रीनी मिथ्यादृष्टि जीवांके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, चौद्हों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: नौ प्राण, सात प्राण: चार पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चार प्राण: चारों संज्ञापं, चारों गितयां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोगितकके विना तेरह योग: तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान,

१ प्रतिषु ' चत्तारि गदीओं ' इति पाठो नास्ति ।

तं. ३८९

गु	जी -	φ.	त्रा.	स	ग	इ	का	यो.	बे.	奪.	ज्ञा.	सय.	द.	ल∙	स.	स.	संक्रि.	आ.	ुं ड.
8	Ŀ	६अ	৩	У	6	ч	Ę	8	₹	8	५ कुम	₹	Ą	द्र. २	₹	ુ ધ્યુ	3	ą	२
मि.	अ	431.	O					ओं नि			कुश्रु	अस.	अच.	奪 [。	म.	सम्य	सं.	आहा.	साका.
सा.		४ अ.	Ę					व. मि				सामा.		गु.	अ.	विना	अस.	अना.	अना.
अवि .			ч					आ.मि.			श्रुत.	बेदो.		मा. ६					
प्रम्			४३					कार्म.			अव.								

अचश्रदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

लेस्ताओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

ंतेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अहु पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच-जादीओ, पुढविकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खंदंसण, दन्व-भावेहिं छ छेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिश्यात्वः संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचशुद्दानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, सात पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संक्षाएं, चारों गित्यां, एकेन्द्रियज्ञानि आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेड्याएं,

नं ३९० अचशुद्दीनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

, ग्र,	जी. प. 🗆	प्रा	स. । ग.	इं	का.	यो.	ब.	죡.	লা.	सय.	ቒ.	ਰ.	-स.∤ स	. साज्ञ.	आ.	૩. ∖
1	१४६प.	20,0	8 8	ч	Ę	१३	2	×	₹	2	*	द्व. ६	ं रु∮ः	ર	٦	` २
ÎĤ.	६ अ. ि	9,0				आ,द्रि.			अज्ञा.	अस.	अच.	भा. ६	म.ं मि			साका.
1	'· q.	८,६				विना							¥	अयं.	अना.	अना.
	५अ.	७,५	1													
1	४वः		\													1 1
	૪ઍ.	४,३	,						ı							1
1													l l			

नं. ३९१ अचक्षुदर्शनी मिध्यादि जीवींके पर्याप्त आलाप.

ুুুুুুুুুুুুুুুুুুু	, q.	श्रा.	₹.	ग.	₹.	का	यो.	वे.	क.	朝.	संय.	द.	ਲੇ.	स.	स∙	सिन्न.	आ.	₹.
			K	8	4	Ę	90	₹			9	_	द्र. ६			2	1	2
मिःपर्य	١. ٩	9					म. ४			अक्षा.	अस.	अच.	भा. ६	म∙	मि-	सं.	आहा.	साका.
1	8		1		1		ब. ४							ः अ₌		ंअस.		अना.
'		৩	1			1	ओ.१	l	1									
	1	€ 8			- 1	(वै. १			1				1				l

मिच्छत्तं सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, अअपज्जत्तीओ पंच अपज्जतीओ चत्तारि अपआतीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा³¹¹।

सासणसम्माइडिप्पहुंडि जाव खीणकसाओ ति ताव मूलोघ-मंगो। णवरि अचक्खदंसणं ति भाणिदव्वं।

भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचश्रदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दें। अझान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेद्यापं, भावसे छहों लेद्यापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिकः, असंक्रिकः आहारकः, अना-हारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके अखशुद्दीनी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय 'अखशुद्दीन, ही कहना चाहिए।

नं. ३९२ अञ्चक्षुदर्श	ि भिथ्यादृष्टि <mark>जीवॉके</mark>	अपर्याप्त आलाप.
----------------------	------------------------------------	-----------------

13.	जी-	ч	সা.	स.	ग.	, Ę .	का.	योः	वे.	奪.	ह्या-	संय.	द.	छे.	भ.	स.	संकि.	आ.	₹.
2		६अ.		ጸ	8	4		₹	₹	K	ર	₹	?	द्र,२		3	1 3	3	3
मि.	अप.	۷,,	৩			1		औं मि			कुम.	असं.	अच.	का.	भ∙	मि.	₹.	आहा.	साका-
1		٧,,	Ę			ı		वे.मि.			कुश्रु.			₹.	अ.		असं.	अमा-	अमा.
		į	4			1		कार्म.						मा. ६					
<u> </u>			४ ३			l 			ļ								1		

ओहिदंसणीणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दन्वभावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ णव गुणहाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पष्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अतिथ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अतिथ, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अतिथ, चत्तारि णाण, सत्त मंजम, ओहिदंसण, दन्व-भावेहि छ हेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंनि

अविवर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दाष्टे गुणस्थानसे लेकर भीणकवाय गुणस्थान तकके ना गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाणं तथा श्रीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कवाय तथा अकवायस्थान भी है, आदिके चार झान, सातें। संयम, अवधिदर्शन, इस्य और भावसे छहीं लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, भाहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अवधिदर्शनी जीवोंके पर्यात्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यन्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर श्लीणकषाय तकके नौ गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं तथा श्लीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, असकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, खारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार झान, सातों संयम, अवधिदर्शन, दृश्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यासिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक,

नं. ३९३ अवधिवर्ज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

Į Į.	जी∙_	q.	प्रा	स.∣	ग.	₹.	का.	यो.	वे	क	VII-	सय	₹.	ਲੇ. 1	H-	₩.	सिह	आ.	₹.
9	₹ #	ξη, \$30					1 1	₹4	₹	8	४ मतिः	૭	7	द्र.६ मा-६ ३	٤ r	3 200	₹ 	२ आस	٦
	संअ	• অ	G	झीणसं		प.	1.		अपग.	अकर्षाः	श्रुत.		M4.	मा ५	1.	क्षा-	4.	अनाः	साकाः अनाः
क्षीण.				30	i						अव. मनः	ì				क्षायो-	ı		

अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अतिथ दो गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, ओहिदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, विण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अवधिद्दीनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्रिष्ट और प्रमन्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,
सात प्राण, वारों संझाएं, वारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्र, बैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रीवेदके विना पुरुषवेद और
नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, अवधिद्दीन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं,
भव्यिनिद्धिक, औपदामिक आदि तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं, ३०,४

अवधिद्दीनी जीवांके पर्याप्त आलाप.

1 1		जी.	q,	di	₹.	η,	Ę.	郁.	ये।	वे.	奪.	हा	संय	द.	₫.	म	₩.	संक्षि.	आ.	उ∙ ।
3		*	₹	80	R	8	\$	8	११म.४	3	R	¥	હ	•	द्र. ६		3	₹		٦.
अवि	ì	सं.प.			Ħ.		<u>.</u> चि	150	व. ४	=	÷	केव.		अव.	मा. ६	स.	ओंप.	स.	आहा.	साका.
से		1			क्षाणस.		5	N.	ब. ४ औ. १ बे. १	क	4	विना					क्षाः			अना.
क्षीप	η.				w				व. १		19						क्षायो			- 1
									आ. १											

नं. ३९५

अवधिद्दीनी जीवोंके अपर्याप्त आलापः

	गु.		f	1	1					-				i			1	संकि.	आ.	3.
ı	ર			છ	*	ጸ	٤	2				3	₹.		द्र. २			₹ .	ર	2
- 1		सं. अ.	1				पं-	্ব.	ओ मि					į.	1	ł .		स.	'	साका.
ľ	म.					i			वे.मि.	1 '		भृत.			₹.	1	सा-		अना.	वना.
-		İ							आःमिः			अव.	कदा.		मा.६		क्षायो.			
1		1				l	ĺ		कामे.		1			ľ	1					1
Ţ		i			<u> </u>			_	<u> </u>	_						<u> </u>	l	}		!

असंजदसम्माइहिप्पहुडि जाव खीणकसाओ ति ताव ओहिणाण-भंगो। णविर ओहिदंसणं ति माणिद्व्वं।

केवलदंसणस्स केवलणाण-भंगो।

एवं दंसणमग्गणा समता।

हेस्साणुवादेण ओघालावो म्लोघ-मंगो । णवरि अजोगिगुणहाणेण विणा तेरह गुणहाणाणि अत्थि, तेण अजोगिजिण सिद्धे च पड्डच जे आलावा ते ण भाणिदव्या।

"किण्हलेस्सालावे भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,

अवधिद्दीनी जीवोंके असंयतसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतकके आलाप अवधिकानके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय अवधिकानके स्थान पर अवधिदर्शन कहना चाहिए।

केवलदर्शनके आलाप केवलकानके समान होते हैं।

इसप्रकार दरीनमार्गणा समाप्त हुई।

हेरयामार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि अयोगिकेवली गुणस्थानके विना तेरह गुणस्थान ही होते हैं, इसलिये अयोगिकेवलीजिन और सिद्धभगवादकी अपेक्षासे जो आलाप होते हैं: वे नहीं कहना चाहिए।

कृष्णलेक्यावाले जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियांः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियांः चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियांः दशों प्राण, सात प्राणः नौ प्राण, सात प्राणः आठ प्राण, छह प्राणः सात प्राणः, पांच प्राणः छह प्राणः चार प्राणः चार प्राणः चारों संक्षापं,

नं. ३९६ कृष्णलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

		٩.									सय.	्द.	हे.	भ	स.	संझि.	आ.	₹.
8	28	ξЧ.	20,0	8/1	5 4	Ę	१३	1	8	Ę	8	; ₹	द्र. ६	2	\ \{	ર	२	ર
मि		६अ.	े९,७		İ		आ हि .	1		अश्रा.	अस.	के. द	मा- र	म.		स.	आहा.	साका.
सा.		44.	८,६				विनाः	I		3	 	विनाः	कृष्ण.	अ.	1	असं.	अना.	अना.
ਚ.		५अ.	19,4	; ;	1		}		ì	शान								
э.		४प.	₹,४	İ						₹ .				1		1		i
		४अ.	४,३													- 1		((
										- 1								

चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्नेण छ लेस्साओ, भानेण किण्हलेस्सा; भनसिद्धिया अभन्नसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुनजुत्ता होति अणागारुनजुत्ता वा।

ं तेसि चेव पज्रत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा छ पज्रतीओ पंच पज्रत्तीओ चत्तारि पज्रतीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, देवगई णित्थः, देवाणं पज्रत्त-काले असुह-ति-लेस्माभावादा । पंच जादीओ, छ काय, दस जीम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया। छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो,

चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग. तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिक तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याएं, भावसे कृष्ण छेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेक्ष्यावालं जीवांके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशौं प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संक्षापं, नरकगति विर्धचगति और मनुष्याित ये तीन गतियां, यहांपर देवगति नहीं हैं: क्योंकि, देवोंके पर्याप्तकालमें अशुभ तीन लेक्ष्याओंका अभाव है। पांचों जातियां, छहाँ काय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग, औदािक काययोग ओर विकिथिक काययोग ये दश योगः तीनों बेद, चारों कथाय, तीनों अक्षान और आदिके तीन क्षान ये छह क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, इन्यसे छहां लेक्ष्यां, भावसे कृष्णलेक्ष्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहां

नं. ३९७ कृष्णलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु.	जी.	Ψ.	श्रा.	सं. ग. ४ (३) न.	ई .	का.	यो.	वे.	布.	₹1.	सय.	द.	ले.	स.	₩.	संक्रि.	आ.	ड.
18	৩	Ę	ţ o	8 3	ų	Ę	20	3	Х	ξ	٤	₹	₫. ξ	ર	Ę	₹ .	2	र
ामि∙	पर्या.	4	9	न.			स. ४			ज्ञान.	अमं.	के.द.	मा. र	Ħ.		सं.	आहा-	साका.
सा.		¥	۷	ति.			ब. ४			₹		विना.	Peal	37.		असं.		अना.
स.			৩	स.			औ. १			अग्रा.								
अ.			Ę				वे. १			3								
			٧														i	

सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं वेदगसम्मत्तं च भवदि; छट्टीदो पुढवीदो किण्हलेस्सा-मम्माइद्विणो मणुसेसु जे आगच्छंति तेसि वेदगसम्मत्तेण सह किण्हलेस्सा लब्भिद ति । सिण्णणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्ञता होति अणागाहवज्ञता वा ।

सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेक्यायाले जीवोंके अपर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, सान अपर्याप्त जीवसमास, छहां अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सात प्राण, सान प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, जार प्राण, तीन प्राणः चारों संज्ञाणं, चारों गीतयां, पांचों जातियां, छहां काय, औदान्किमिश्र, वैकिथिकिमिश्र और कामणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्यापं, भावसे कृष्णलक्ष्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और वेद्दकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्व होने हें। कृष्णलेक्ष्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें वेद्दकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि छठी पृथिवीसे जो कृष्णलेक्ष्यावाले अविरतसम्यक्षि जीव मनुष्योंमें आते हें, उनके अपर्याप्तकालमें वेद्दकसम्यक्त्व साथ कृष्णलेक्ष्या पाई जाती है। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, अनाद्यकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं. ३९८ हुष्णलेह्यावाले जीवोंके अपूर्याप्त आलाप.

J .	जी.	٩.	भा.	₹.	ग.	Ę.	কা,	यो.	वे.	₹.	हा.	संय.	₹.	ले.	₽.	स.	साझे.	अा.	ख.	l
₹	ড	€अ.	v	٧	\mathbb{Y}	4	Ę	3		R	٠,	₹.	3	द्र. २	3	3	₹	२	3	ł
मि.		५अ. ४अ.	U		•			ओ.मि			कुम.	अस.	के दे.	का.	स.	मि.	सं.	आहा.	साका.	l
सासा.	ক	४अ.	Ę					वे मि.			कुश्र.		विना.	शु.	अ.	सा.	अस .	अना.	अना.	l
अबि.			4					कार्म.			मति.			मा, १		क्षायो.				l
			¥				•				श्रुत.			कृष्ण.				J		
			₹								अव.	1			1]	i	
	_			_								1								

किण्हलेस्सा-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दत जीवसमासा, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ पंच पज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वां।

तेसि चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, मत्त जीतसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दम पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ,

कृष्णलेख्यावाले मिध्यादि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादिष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: ने। प्राण, सात प्राण: भाठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण, चार प्राण: चार प्राण, तीन प्राण: चारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहें। काय, आहारककाययोगिहकके विना नेरह योग, तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसं छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिध्यात्य, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेइयाचाले मिथ्यादाष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संक्षापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोग,

નં. રૂ९९	कृष्णलेक्यावाले मिथ्यादि जीवोंके सामान्य आलाप.
----------	--

۱ ^{بړ} .	जी.	q.	त्रा.	स	ग.	इं. क]	यो	बे.	ፋ.	ह्या.	सय.	द.	ਲे. ' भ	स.	सक्ति.	ाह	ं ड. ।
१ मि	१४	६प.	20,0	ሄ	R	4 8	13	; ₹	8	₹	*	ર	द्र. ६ २	१	ર	3	ર
114			8,0				आ. हि			अज्ञा.	अस.	चिधु-	भाः ग्रमः	ीम.	सं.	आहा.	माका.
		५प-	ζ,ξ			1	विना.					अच.	कृष्ण. अ.	ĺ	असं.	अना.	अना.
		५अ.	৬,५			1							·	ı			
		४प.	€,8			1			- 1					I			. 1
		४अ.	¥,₹		1	l	1	1	'	J	1	}	i	}	l l		

छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंज्ञमो, दो दंसण, दस्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वाँ ।

''तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण

भौदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों येद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयमः आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याएं, भावसे कृष्णछेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सिश्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले मिथ्याद्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, खार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण: खारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्षियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग: तीनों वद, चारों कपाय, आदिक दो अक्षान, असंयम,

नं. ४०० कृष्णलेश्यावाले मिथ्यादिष्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गृ				म. ग.						ቒ.	ਲੇ.	भा	स.	साझ	आ.	उ
Į į	y	Ę	१०	8 3	५ । ६	१०	ą			3	द्र. ६		9	ર	۶ .	ર
मि	पर्या.	فع	9	न•		म. ४		अझा	अस.	चक्षु.	भा. १	म.				साका.
		ጸ	۷	ति.		व. ४				अच.	कृष्ण	अ	l	असं.		अनाः
			৩	म.		ओ. १		ĺ								
1			₹ ४			बै. १	j						l .			

नं. ४०१ कृष्णलेश्यावाले मिथ्याद्दाप्टे जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ŋ.	जी	ч.	प्रा.	स.	बा	₹.	का.	यो.	वे.	क .	W I.	सय.	द.	ਲੇ.	भ.	⊦स.	सक्ति.	आ.	उ. ∣
				8	ď	4	Ę	₹ .	₹	x									3
मि	نو	५ अ . ४अ.	৩					औ.मि.			कुम.	अस.	चक्षु.	का.	म्.				साका.
1	ক	४अ.	Ę					वै. मि.			₹ %.		अच.	য়ু.	अ.	1	असं.	अना-	अना.
l			ч					कार्म.						सा. १					
<u> </u>		1	¥ξ											कृष्ण.					

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

किण्हलेस्सा-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जजीओ छ अपज्जजीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ', पंचिंदिगजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्नेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, साण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्जत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो

आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे कृष्णलेक्याः भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कृष्णलेदयावाले सासादन सम्यग्दि जीवों के सामान्य आलाप कहने पर—एक सासा-दनसम्यग्दिष्ट गुणस्थान. संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, घसकाय, आहारककाययोगि हिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्णलेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाद्वारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दिए जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संब्रापं देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वारों मनोयाग, वारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, वारों कषाय,

१ प्रतिषु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठा नास्ति । नै. ४०२ कृष्णेलस्यावाले सासादनसम्यन्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

1 1	जी.	q.	प्रा-	ġ.	ग	₹.	का.	यो.	बे. क	₹ 1.	सय	द.	ਰ.	स.	स.	संक्षि.	आः	ુ હ.
	ર			8	Х	8	8	₹ ₹	₹ ' ४	₹	₹.	ર	द.६	2	ŗ	2	ર	ર
साः	सं, प.	Ę 3 Į .	9			ď.	ন.	आ दि.		अज्ञा.	अस.	चक्षु.	मा∙र	भ	मा.	सं.	आहा.	साका-
	सं. अ.		į					विना.	İ			अच.	अध्या.				अना-	अना.
		1							- 1		i		1					
		}]						-		,				1			<u> </u>

दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, मासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेसिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामा, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्ञता वां ।

तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याएं, भावसे कृष्णछेश्याः भश्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेह्यावाले सासादनसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास. छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबापं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचिन्द्रियजाति, जलकाय, औदा-रिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो बहान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और श्रुक्त लेह्याएं, भावसे कृष्ण-लेह्याः भव्यसिद्धिकः सासादनसम्यक्त्व, संविक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं, ४०३	कृष्णलेख्यावाले	सासादनसम्यग्दष्टि	जीवोंके	पर्याप्त ३	शास्त्राच.
4, 604	राज्यक्षरवाचाल	त्याच्याक्यराज्यन्द्राह	जापाम	પવા જા	गएसप.

J.	जी-	q.	श	सं. ग.	₹.	का	यो.	à.	क.	शाः	सय.	द.	ਰ.	₹,	स.	सिह्न	, আ,	ु उ. ।
2	र	Ę	१०	- , .					¥	₹ !	۶	3	द्र. ६	7	*	\$	1	2
सा.	सं. प.			न -	पंचे.	7	म. ४			अज्ञा.	अस.	चक्षु	भा ।	ਮ.	मा	स	अ.हा.	साका
1		İ		म.			व्४					अच.	कृष्ण					अना•
		ļ		ति			आ र								1			
						'	व. १			- 1			1				Į.	

न. ४०४ कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी.	q.						वे.,	क.	श्ला .	सय	द.	हे.	स.	म-	मं शि	आ.	उ.
1	9	६अ.	હ			9 9		₹	8	ર	٩	3	₹. ₹	9	9	9	२	ર
सा.	स. अ.	l I	,		ति.	पं. त्र.			ļ	कुम.	अस.	चक्षु.	का.	н.	सासा-	सं.	आहा.	साका-
		i I	1	i	म.		वे मि.			कुश्रु.		अच.	श्र-		1		अना.	अनाः
1		1			दे. ∣		कार्भ.		i				भा- १	1		ŀ		
L	<u> </u>							1_1					ऋच्या.		1		<u> </u>	

किण्हलेस्सा-सम्मामिच्छाइटीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पजनीओ, दम पाग, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दम जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणिहिं मिस्ताणि, अमंजमो, दो दंनण, दन्त्रग छ लेस्माओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छनं, मण्णिणो, आहारिणो, सागाहवज्जता होति अणागारु-वजुत्ता वां

किण्हलेम्सा-अमंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दे। जीवसमासा, छ पज्जनीओ छ अरज्जनीओ, दय पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदीए विणा तिलिंग गदीओ, पंचिदियजादी, तयकाओ, वेउन्तियमिस्मेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, मावेण

कृष्णलेश्यावाले सम्यग्निध्यादिष्ट जीवांके आलाप कहने पर—एक सम्यग्निध्यादिष्ट गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संब्रापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचित्त्रियज्ञाति, वसकाय, वारों मनोयोग, वारों वचनयोग, आदानिककाययोग आर चेक्रियिककाययोग य दश योगः तीनों वेद, वारों कषाय, तीनों अञ्चानोंसे मिश्रित आदि के तीन बान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्याः भव्यसिद्धिक, सम्यग्निध्यात्व संजिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हूं।

कृष्णहेश्यावाले असंयनसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहनेपर—एक अविरत-सम्यग्दिए गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दी जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशाँ प्राण, सात प्राणः चारीं संझाएं, देवगितिक विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, वैकिथिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगिकके विना शेष बारह योग, तीनों वद, चारों कपाय, अदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

मं. ४०५	ऋण्णेळश्या चाळे	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	जीवंकि	आलाप.
---------	------------------------	--------------------	--------	-------

्गुंजी प∙ था स	.ग. इका	यो. वे. क	ज्ञा. सय	द. हे. म. स.	मंहि आ. उ.
1 1		1		२ ।दि∙६ १ १	
क्रम प.	न प. र.	म ४	अज्ञा. अम	चंक्षु, मान्य मन्त्रम्यः	मं. आहा साका.
Ř.	नि ।	व. ४	₹	ત્ર ચે. મે મે.	अना.
	म.	अं। १	न्नान.		
		∣वे १	निय.	1	
		1			
	ļ				

किण्हलेस्ताः भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-बजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे।

तेसि चेव पजनाणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मन्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

द्रश्यसे छहीं लेक्याएं, भावसे कृष्णलेक्याः भव्यसिद्धिकः औपशामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दिष्ट जीवींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक मंझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारौं संझाएं, देवगितके विना शेष नीन गितयां, पंचीन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारौं मनोयोग, चारों बचनयोग, औदारिककाययोग आर वैकियिककाययोग थे दश योगः तीनों वेद, चारौं कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्याएं, भावसे कृष्णलेश्याः भव्यसिद्धिक, ओपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहरिक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं, ४०६ कृष्णलेक्यावाले असंयतसम्यग्दिए जीवींके सामान्य आलाप

ग्र.	जी.	٩.	प्रा.	स∙	ग.	ŧ.	का	्या	व.	क	श्रा	सय	द	જ	भ	स.	सांझ.	आ.	ਤ. (
1	ર	ξq,	१०	8	3	ŧ	?	यां रिरोम.४	₹	४	4	9	ą	द्र. ६	٤	3	\$	3	3
अ.	सं. प.	६अ,	9		न.	le-	э. Н	ું. ૪ ઔ. ૨			माति	अम	क.द	भा १	4	. आप-	सं	आहा.	साका.
	सं. अ.				ति.	"	Ir.	आ. २					विना	क्राचा.		क्षा.		अना,	अना
					म.			व १			अव.					क्षायो			
								का १											- 1

मं. ४०७ कृष्णलेख्यावाले असंयतसम्यग्द्रप्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

J .	जी.	पन्त्राः सं.	ग. इ. क	ा. यो₁ं वे	क हा.	मय. द.	हे. , म.	स. सिहा.	आ. उ.
1 1	१	€ 100 8	1 3 8 1	१०म४ ३	४ ३	s 3	द्र. ६, १	3 , 2	१ २
अवि.	सं.प	,	न. प.	ुव्.४ ॑	मति	्अस के द.	भा. १ भ	आंप. सं.	आहा, साकाः
			id.	औ. १	, পুর	विनाः	ऋटण	क्षा.	अना.
1			म-	बै. १	अव	- 1		क्षायो.	

तेसि चेत्र अपज्ञत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

णीललेस्साए भण्णमाण ओघादेसालावा किण्हलेम्या-भंगा। णवरि सञ्बत्थ णीललेस्सा वत्तव्वा।

काउलेस्साणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणहाणाणि, चोहस जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपन्जत्तीओ पंच पञ्जतीओ पंच अपन्जत्तीओ चत्तारि पञ्जतीओ चत्तारि अपन्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि

उन्हीं कृष्णहेदयावाले असंयतसम्यग्दि जीवोंके अपयोप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिए गुणस्थान, एक मंझी-अपयोप्त जीवसमास, छहाँ अपयोप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क हेद्याएं, भावसे कृष्णहेदयाः भ्रव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

निल्लेड्यांक आलाप कहने पर—ओघ और आदेश आलाप कृष्णलेड्यांके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि लेड्या आलाप कहने समय सर्वत्र नील्लेड्या कहना चाहिए।

कापोतलेक्यावाले जीवोंकं सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: नौ प्राण, सात प्राण: आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण, चार प्राण: चार प्राण, तीन प्राण: चारों संवापं,

नं. ४०८ कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दाप्र जीवोंके भएर्याप्त आलाप.

यः जीः प. १ १ ६अ अ. सं. अ.	प्रा. संग. इं. का. यो. वे. क. ७ ४ 🕄 १ १ 🕄 😵 ४ म. पं. त्र. ऑ.मि. 🚜 कार्म.	हाः सयः ३ १ मतिः असं. श्रुतः अवः	द. है. भ. स. ३ द्व २ १ १/ ३.द. का. भ. सायो विना छः भा-१	१ १ २
	4		कृत्व.	

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दथ्येण छ लेस्माओ, भायेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो असिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पञ्जनीओ चत्तारि पञ्जनीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्माओ, देवगदीण विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, दम जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, छ णाण, असंजमें, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवमिद्धिया अभवमिद्धिया, छ सम्मत्तं,

चारों गितयां, पांचों जातियां, छहां काय, आहारककाययोगां कि विना तेरह योगः तीनें वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, अलंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे छहां छेरयाएं, भावने कापोनलेरयाः भव्यासि दिन्तः अन्य्यसिद्धिकः छहां सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारकः, अनाहारकः साकागेपयोगी और अनाकागेपयोगी होते हैं।

उन्हीं काषोतलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, स्थां प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चारों संकाएं, देवगातिके विना शेष तीन गतियां, पांचीं जातियां, छहाँ काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्षियिककाययोग ये दश योगः तीनों चेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान और आदिके तीन कान इस प्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यांत छहाँ लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्याः भव्यासिद्धिक. अभव्यासिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्य, संविक,

नं. ४०९ कार्पातलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

	जी. प.	Яï.	₹.	ग.	₹.	4 1.	यो.	वं	4	লা	संग	. द.	ले.	भ.	₹.	माजे	्री उसा	.E (
	रिं¥६ व.	10,0	8	8	4	Ę	8 3	ą	¥	Ę	*	₹	द. ६	₹	(3)		1 2	2
मि.	` ६ अ.	8,0	-				आ. द्वि			ब्रान	अस.	कद	भा. १				आहा.	साका-
सासा	५प-	८,६	-				विना,			₹		विना.	कावो.	¥.				अना.
सम्य.	५अ.	9,4	1							अल्ला							{	
अवि	४प	₹.४								3								,
	४अ.	¥,₹															1	!

सिणाणो असिणाणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

तेसि चेत्र अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, सन जीत्रसमासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्त्रण काउ-सुक्कलेस्ता, भावण काउ-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागालवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा"।

असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेड्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिध्यादृष्टि, वासादनसम्यन्दृष्टि और अविरतसम्यन्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, नीन प्राण: चारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कथाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेड्यापं, भावसे कापोतलेड्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिक ओर आयोगशामिक ये चार सम्यक्त्वः संक्षिक, असंक्रिकः आहारक, अनाद्द्वारकः साकारोगयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४१० कापोतलेक्यावाले जीवांके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी प	яі,	स. ग. इ.	का.' यो.	वे. क. जा. सय	द. ∤हे∙ म₁	स⊢ृसक्तिः,_आ	હ.
8			8 3 4	£ 30	3/8/8/3	३ द्र. ६ २	६ २ १	₹
मि	पर्या. ५	9	न.	H R		के द. सा १ म		साका.
स'स।	18	۷	ात.	वं ४	₹	विनाः क्षेपो. अ.	असं.	अना.
सम्य.	1	19	म.	ओ, १	'अज्ञा-	'	1	
अवि		€ 8	ı	व १	1 1 1 1	i		

न. ४११ कापोतलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलापः

							यो.									संहि	आ.	ਰ.
વ	৬	६अ	৩	ሄ	R	4	13	ą	لا	५ कुम	₹	₹	द्र. २	ર	જી	3	2	२
मि		५अ	৩				ओं मि			कुश्रु	अस.	के.द	₹].	भ	्मि-	सं.	आहा.	साका.
	F	४ अ.	Ę				व. मि			मति		विना	ग्र.	अ.	ंसा-	अस.	अना.	अना.
अवि.			دم				कार्म.			श्रुत.			माः र		क्षा.		1	
<u></u>			8 3							अब.		ŧ	कापो.	1	क्षायो.		Ţ	

.d. 1 1 es 4 3 1 e

काउलेस्सा-मिच्छाइद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ पंच पज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णणो असण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

तेसि चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण

कापोतलेश्यावाले मिध्यादि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: सात प्राण: सात प्राण: सात प्राण: सात प्राण: चार प्राण: सात प्राण: पांच प्राण: छह प्राण, चार प्राण: चार प्राण: तीन प्राण: चारों संक्षापं, सारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगिहिकके विना नेरह योग, तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक. अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संक्षिक, मसंक्षिकः आहारक, अनादारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, स्नार पर्याप्तियां: दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण: चारों

नं ४१२ कावीतलेश्याचालं मिथ्याद्यप्रि जीवोंके सामान्य आलाप.

	जी. प														
	१४ ६प.	१०,७	ሄ	¥	4										
मि.	६अ.	8,0					1	अज्ञा.							साका.
	५प.	८,६		· }		विना			अच.	कापो.	3{	'	असं.	अना.	अना.
ľ	५अ.	0,4													
	४प.	€,¥										ı	1		
	'४अ.	₹,₹											1		
ļ										1			<u> </u>		

छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो अस्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा'' ।

ं तेसिं चेव अवज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अवज्जनीओ पंच अवज्जनीओ चत्तारि अवज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

संज्ञाणं, देवगतिके विना राप तीन गतियां, पांचां जातियां, छहां काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, ओदारिककाययोग और वैक्षियककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहां लेक्यापं, भावसे कापोतलेक्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेदयावाले मिथ्यादृष्टि जीवांके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमासः छहां अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियांः सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षापं, चारों गितयां, पांचों जातियां, छहां काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दो अक्कान, असंयम, आदिके

नं. ४१३ कापोनलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग_ जी.	ď	न्नाः स	. ग. ¹ इ. का.	योः वे.	布.	ह्या-	सय.	द.	ਰ,	स.	स.	सं श्लि •	आ.	ਰ∙
			3 4 8	्रिं० इ									१	2
ाम वर्याः	u	8	न•	स. ४ ।	3	महा. उ								साका.
	R	<	ाते∙¦	व. ४	1		1	अच.	कापी.	अ.		असं.	1	अना.
		9	म.	आ. १			i						'	- 1
<u> </u>		६४		ब. १,	į [- 1		}		į

नं. ४१४ कापोतलेश्यावाले मिध्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

₹.	जी.	q.	प्रा.	स	11	ई.,	का.	यो.	व.	奪.	ज्ञा .	सय.	₹.	लं.	स.	स.	संक्रि.	' आ.	ਰ.
		६ अ	ঙ	8	8	Ŀ	Ę	3	₹	8	ર	٤	ર	द्र, २	ર	8	2	2	2
मि	.	५अ ४अ.	ড					ओ_भि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि-	स.	आहा.	साका.
1	়ক	४अ.	Ę					वर्गम.			कुश्रुः		अच.	য়ু.	अ.		असं.	अना.	अमा.
}			4					कार्स.						मा. १					
_			४ ३											कापो.		'			

दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्माः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

काउलेस्सा-सामणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्मा; भविमिद्धिया, सामणसम्मत्तं, साण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेसि चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ एगं गुणहाणं, एओ जीवसमामा, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओं, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी,

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे कापोतलेक्याः भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आद्दारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेहरावाले सासादनसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संजी-अगर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाणं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोग इन दो योगोंके विना तेरह योग, तीनों वद, चारों कवाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यस छहों लेह्याएं, भावसे कापोतलेह्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले सासादनसम्यग्दि जीवांके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर्य-एक सासादन गुणस्थान, एक संकी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, बारों संकापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४१५ कापोतलेश्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु-	()					1	योः	∣ वे.	क. _:	ज्ञा.	सय.	द्∙	ਰੇ.	म-	म.	सन्नि	आ.	ु उ
2	ર	६५.	₹ 0	8	(8) x	1	₹₹	₹	४	ą	₹	ર	द्र. ह	8	१	۶	2	ર
सा.	सं.प.	६अ.	ঙ		q .	₹.	आ. हि	-{		अज्ञा,	अम.	चक्षु.	भा.र	म.	मासा.	सं.	आहा.	भाका.
	सं.अ				1		विना.	1				अच.	कापी.				अना-	अना.
									!	ì		ĺ	· !	1				
1								! !	i	ļ								
1	i .			1 '		1		1	j			I	ļ 1	. 1				

तसकाओ, दस जोग, विण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, संण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वार्षे ।

तिसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, अ अपजनतिओ, सत्त पाण, चतारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, णिरयगई णित्थ । पंचि-दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजनो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मर्च,

चारों वचनयोगः औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, अमंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेदयाएं: भावसे कापोत- छेदयाः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेहयावाले सासादनसम्यग्हिष्ट जीवींके अपयोप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चार्री संज्ञाएं, तिर्थव, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं: किन्तु नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, ओदारिकिमिश्र, विकिथिकिमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः नीनो वेद, चार्रो कपाय, आदिके दे अज्ञान, असंयम, आदिके दे दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेहयाएं, भावस कापोतलेहयाः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संविक,

नं. ४१६ कापीनलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[]	. ज [ि] ,	ч.	त्रा.	स. ग	इं का	यो.	वे क	ज्ञा.	सय.	₹.	ले.	म-	स∙	संक्रि.	आ.	उ. ∣
٩	٩	ধ্	90	8 12	9 9	90	3 8	3	9	ર	द्र. ६	3	9	8	3	3
	. स.प			न.	<u>पि च</u>	, ¹ म. ४	1	अज्ञा.	अस.	चधु.	मा- १	म-	सासा.	स.	आहा.	साका.
1				, la	į	व्. ४				अच	कापी.					अना.
1		'		ंम.		ુંં!. ૧						. i		i		
1	1	i		1	ĺ	, व. १	1	1				ì		Ì		

नं. ४१७ कापोतलेस्याचाले सासाइनसम्यग्दप्रि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

∤ गु. जी.	प. ग्रा <u>.</u>	स-∤ग-इं-व	ा यो∙्वे.क.	ह्या.	संय.	द.	हे.	भ स	. _। संक्रि.	आ.	ु उ. ∣
र [†] १	સ્ત્ર. હ	8 3 1		٦ -	₹	3	द्र-२	٤ ۽	१ १	2	2
सा. स अ		ति. पं. 🤋	. श्रीनिम [ा]	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	1. Al	प्ता. स.	आहा.	साका.
		म.	वे.मि.	कुश्रुः		अच.	શુ.		1	अना-	अमा.
		द. ,	कार्म.				मा- र		1		
							का.				

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेम्साओ, भावेण काउलेस्मा; मवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा

काउलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, नेरह जोग, निण्णि वेद, चत्तारि कसाय, निण्णि

भाहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारः।पयोगी होते हैं।

कापोतलेदयावाले सम्यग्मिथ्यादि जीवेंकि आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योग, तीनों वेदः चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, स्वकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेइयावाले असंयतसम्यग्दि जीवोके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दिष्ट गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंत्रेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेग्ह योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिक

मं. ४१८ कापोत्रहेश्यावाहे सम्योग्नध्यार्राष्ट्र जीवींके आलाप.

મુ.	जी.	ч.	प्रा.	मं, ग,	₹.	का.	या.	ō[.	के,	, झा.	सय.	. द	ਲ.	₫.	स.	सिन्न.	आ.	₹.
₹ .	2	Ę																2
सम्य.	सं. प			न.	पचे.	त्रस.	म ४					चक्षु.	भा. १	ዛ.	ET.	सं.	आहा.	साका.
[ति.			व. ४			₹		अच	का		17			अना.
1				Ψ.			आ.	9		इ।न-								
1							वें. १	:		मिश्र-	•							
1																		

णाण, असंज्ञमो, तिष्णि दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भनसिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, सिष्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वां^भी

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दस जोग, तिण्णि वद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दक्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्साः, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां।

तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां छेश्याएं, भावसे कापोतछेश्याः भव्यसिद्धिक, ओपशिमकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दिए जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्दिए गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संक्षाएं, देवगितके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वारों मनोयोग, वारों वचनयोग, ओदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दशेन, द्रव्यसे छहां लेश्याएं, भावसे कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, अपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४१९ कापोतंळऱ्यावाळे असंयतसम्यग्हिष्ट जीवोंके सामाग्य आलाप.

गृ.	जी.	प प्रा	संग, इ.का	ा यो ।	वं. क.	ज्ञा -	[सय	द्.	ਲ.	स√	स.	सक्रि.	आ.	₹.
			6 3 2 2						द्र.६				3	ર
अवि.	स-प-	६अ ७	न प्राप्त			मति.						सं.	आहा.	साकाः
}	सं अ		বি.	विना.	1	भृत-		विना-	का.	- {	क्षा.		अना.	अना.
			म.	1		अंब.				18	श्रायो-			
1				ļ				,		1				

नं. ४२० कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दप्रि जीवांके पर्याप्त आलाप.

1 1		जी.	٩.	${\rm IP}_{\rm i}$	स.	ग्.	₹.	का.	यो.	बे.	क.	हा.	संय.	द.	ळे.	म.	₦.	सं)ही.	आ.	उ. ∤
8	.]		Ę	१०	R	3	*	Ą	यो. १० म. ४ व. ४	₹	ጸ	34	8	્રક્	द्र. ६		(3)	*	2	2
अ ∻	1.	सन्प.				न जि	<u>ط</u>	Ė	म्.४ त ४			माते. श्रुत.	अस.	क.द.	भा- १ का,	म.	आप.	स.	आहा.	साका.
1						म् म•	_	(C	औ. १			शुता. अ व .		।भगाः	4710		क्षायो-	I		91111
									वे. १										_	,

तेसि चेव अपन्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपन्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि क्रवाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-मुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

तेउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओं छ अपञ्जत्तीओं, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, णिरयगदीर विणा तिण्णि गदीओं, पंचिंदियजादी, तसकाओं, पण्णारह जांग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त जांग, पंच संजम, तिण्णि दंसणा, दच्वेण छ लेस्मा, भावेण तेउलेस्मा; भविभिद्विया अभविमिद्विया,

उन्हीं काषोतलेइयावाले असंयतसम्यन्दि जीवोंके प्पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यन्दिष्ट गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त एविनामास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगतिक विना दोष तीन गतियां, पंत्रेन्द्रियज्ञाति, असकार, औद्यारिक-मिश्र, वैकिथिकमिश्र, और कार्मणकाणयोग े तीन योगः क्रीवेद के विना दोष दे। वेद, चारों क्षाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यंग कापोत और आद्राप्त लेखां, आवसे कापोतलेइयाः भव्यगिद्धिक, अपदामिकसम्यक्तवके विना आधिक और आयोपदामिक ये दो सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः नामारीपयोगी और अवस्वारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेख्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सान गुणस्थान, संजी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास. छहों पर्याप्तियां. छों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: चारों संज्ञापं, नरकगतिक विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जल-काय, पन्द्रहों योगः तीनों वेद, चागं कपाय, केवलज्ञानके विना दोष सात ज्ञान, सृक्ष्म-साम्पराय और पथाख्यातसंयमक विना दोष पांच संयम, आदिक तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेखाएं, भावसे तेजोलेखाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त, संज्ञिक,

नं ४२१ कापोतलेस्यावाले असंयतसम्यर्ग्हाए जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.																	'मझि.	आ.	3.
१	१	६अ.	હ	Х	(3)	१	2	₹	3	8	\	Ł	₹	द्र. २	8	(2)	₹	3	2
अवि.	सं. अ.										मति-							आहा.	साका.
					ति.			व.मि.	न		श्रुत.		विना.	शु.	ĺ	क्षाया.		अना.	अना.
	İ				म.			कार्म.	l		अव.			मा. १		4			
1														का.		,			
				1											i]		

छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ै। तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेषार्थ — गोमहानार जीवकाण्डके अन्तमें आलाप अधिकारके ऊपर पं. टोड्रमलुजी ने जो संदृष्टि^मों दी हैं उनमें इन्द्रियमार्गणाकी अपक्षा असंक्षी पंचेन्द्रियके पर्याप्त अवस्था**में** चार लहुयाएं, तेजोलेह्याके आलाप बतान हुए तेजोलेह्यामें संझी-पर्याप्त और अपर्याप्तके अतिरिक्त असंजीपंचीन्द्रय-पर्याप्त जीवसमास और संजीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंतियोंके चार लेक्याएं बनलाई हैं। परंत जिस आलाप अधिकारके अनुसार पंडितजीने ये संद्राप्रियां संग्रहीत की हैं उसमें केवल संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए ही असंज्ञियोंके चार लेक्याएं बतलाई हैं। किन्तु इन्द्रियमार्गणाके आलाप बतलाते एए असंशियोंके तीन अद्यक्त लेह्याएं और तेजोल्हेड्याके आलाप बनलाने हए संभी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये हो ही जीवसमास बतलाथे हैं। किन्दु धवलामें सर्वत्र असंज्ञियोंके तेजोलेश्याका अभाव या तेजोलेश्याम असंबीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमःसका अभाव ही बतलाया है। इससे इतनः तो निश्चित हो जाता है कि गोमहसार जीवकाण्डमें संशीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंश्रियोंके जो चार लेस्याएं बतलाई हैं वह कथन धवलाकी मान्यताके विरुद्ध है। परंतु गोमहसार जीव-काण्टके मूल आलाप अधिकारमें ही जो दो मान्यताएं पाई जाती हैं उसका कारण क्या होगा, इसका ठीक निर्णय समझमें नहीं आता है। एक बात अवश्य है कि पंडित टोड्र-महाजीने सर्वत्र एक ही मन्यता अशीन असंबियोंक तेजीलस्या या तेजीलस्यामें असंबीपंचे-न्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासको स्वीकार कर लिया है, इसलिये उनके सामने सर्वत्र उक्त मान्य-नाका पोपक ही पाठ रहा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। यदि पंडितजीने मूलमें दिये गये संबीमार्गणाके निर्देशके अनुसार ही सबैत सुधार किया होता तो कहीं ने कहीं उन्हेंने उसका संकेत अवस्य किया होता। जो कुछ भी हो, फिर भी यह प्रश्न विचारणीय है।

उन्हीं तजोलेदयावाल जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर- आदिके सात

वीत् नं. ४२२ तेजाल्डस्यावाले जीवांके सामान्य आलाप.

७ रो	हप. ८० ४ ६अ. ७		१५ ३ ४		
अ प्र.		द्ध.		विना.	

पन्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे ।

ं तेसिं चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंनि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच

गुणस्थान, एक संबी:पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संबाएं, नरक गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचीन्द्रयज्ञाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसम्बंधी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल बानके विना शेष सात बान, मृक्ष्मसाम्पराय और यथाक्यातः संयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्व्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे तंजीलेश्या; भव्यासिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यवत्व, संविक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेस्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—िमध्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत य चार गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमासः छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चार्गे संबाएं, देवगित और मनुष्यगित ये देव गितियां, पंचीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी वारों योग, नपुंसकवेदके विना शेष देव वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान,

નં. ૪૨૩

तेजोलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलापः

गु.	जी.	प. प्रा.	सं-	ग.	₹.	का.	यो	. 1	व 🏻	क.	सा∙	संय.	द.	ल∙	स•	₽.	माज्ञ .	आ.	उ.
9	(3)	६ १०	8	(3)	2	٤.	११ म	8.	₹							E	*	٤	े २
भि.	सं.प.			ित	q .	ব.	ब. '	8	1						म.	1	₩.	आहा.	माका
से	 	1		म.			ओ.	१	1		विनाः	मामा	विना	त.	अ.				अना.
अप्र.		I		दे.		1 :	a.	१				बेदो.	ì						
<u> </u>		ı	}	<u> </u>	}		आ.	2	}			परि.				!			<u> </u>

नं. ४२४

तेजालेश्याबाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

									मग्.	द.	हे.	। स.	स.	यांज्ञ.	आ.	₹.
		v				¥				₹ _						ર
मि.	ক		दे.	Ť .	₹.	आं.मि	g.									साका.
सासा	100		म.			वे मि.				विना.	शु.	3[.	त्रिना.		अनाः	अना.
अवि .	ļ					आ.मि			छदो.		मा.	₹				
त्रम•						कार्म.		શ્રુત.			त-	1				
1		 1						अब.	1							

णाण, तिण्णि संजम', तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेउलेस्सा-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अवज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणादारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्ज-

असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना य तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे तेजोलश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्निष्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्यावाले मिध्यादृष्टि जीवं के सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संझापं, नरकगितके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगिडिकके विना शेष बारह योगः तीनों बेद, चारों कषाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोठेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक

९ प्रतिषु ' असजमो ' इति पाठः ।

नं. ४२५ तेजोलेश्याचाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

्य जी. प. । प्रा स. ग. इ का यी. वि. क. ज्ञा. संय. द. ह.	भ. स.साही.	आ. उ.।
र १ इप. १०४ (३) १ १ १२ ३ ४ ३ १ २ इ. इ	२ १ १	२ २
मि.सं.प.६अ.७ तियानास.४ अज्ञा असं. चक्कुमा.१३ सं.अ. म व.४ अज्ञातः		आहाः साकाः अनाः अनाः
दे और है।		जनाः जनाः
बे २		
		1

त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, णिरयगदी णित्यः पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्याः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां

ं तेसि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामा, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, दो

मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संझापं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गितयां हैं, किन्तु नरकगित नहीं हैं। पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग य दश योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान असंयम आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहां लेख्यापं, भावसे तेजोलेक्याः भव्यिनिद्धिक, अभव्यिनिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले भिथ्याद्यप्ति जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारों संबापं, देवगति, पंचेन्टियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग वे

नं. ४२६ तेजोलेझ्यावाले मिथ्याद्यप्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

्य.	जी ₋₍ ष-प्रा. ₎										
₹	₹ E 80				३ । ≯	ે ર	દ્ર. ફ ર ી	,	į 9	*	2
मि-	सं. प.	ाति पंत	म. ४		तानः असं	चक्षु.	म⊦ श्रम	मि	स	आहा	साका.
1	,	स.	व, ४	,		अच-	त. अ.	l		1	अना
1	1	दे.	ुंग. १					1			
1			वं १	- 1	1						

नं. ४२७ तेजोलेश्यावाले मिध्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

ग्	. র	î.	q .	म्.	स	ग	\$	का.	यो-	वे.∣क	झा.	संय.	द.	लं	भ	स	मंहि	आ.	ਚ. ੂ
	,	ę į	६अ.	ঙ	ሄ	G	₹	१	ર	13/8	ર	*	5	द्र २	3	,	8	2	2
Ti	۲. _{ا ج}	ন				देव.	٩.	74.	व, म	q.	कुम.	अस.	चक्षु	का.	भ	ाम.	सं	आहा	साका,
ļ	1.9								कामें.	स्री.	कुश्रु-		अच.	য়ু.	अ.			अना.	अना.
1	'							ı	İ	1	1			भा. १					
L		}				į _		i	l					ते.					<u> </u>

जोग, दो वेद, णबुंमयवेदो णित्थः चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजमी, दो दंसण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, मिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-सासणमम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दे। जीवसमासा, छ पजनीओ छ अरजनीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिणिण गईओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय. तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वार्षे।

नेसि चेय पञ्जनाणं भण्णभाण अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ-

दो योगः पुरुष और स्त्री ये दो वद होते हैं, किन्तु नपुंसकवद नहीं होता है। न्नारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इत्यसे काषोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे नेजोलेक्याः भव्यानिद्विक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

ने जो लेह्याचाले सामादनसम्बग्दाष्टि जीवों के सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान. संजी-पर्याप्त और लंजी-अपयीप्त ये दें जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां: दशों प्राण. सात प्राण, चारों संजाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, ओदार्कि मिश्रकाण्योग और आहारककाययोगिक के विना शेष बारह योग, तीनों घेद, चारों कपाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेह्याएं, भावतं ते जो लेह्या; भायसिद्धिक, सासादनसम्बग्दान, संज्ञिक, आहारक, अनाहरक, सासादनसम्बग्दान संज्ञिक, आहारक, अनाहरक, सासादनसम्बग्दान संज्ञिक, आहारक, अनाहरक, सासादनसम्बग्दान साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेइयावाले सासादनसम्यन्टीए जीवींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने

नं. ४२८ वं तंजोलस्यावाले सासार्नसम्यग्दाप्र जीवींके सामान्य आलाप.

q	जी.		ग्रा. म								उ
8			₹ o 8								र
	स अ.	૧ ઝા		ात प सः		€.	अस	ते.	71. KI		अना.
1				द	व	₹					1
_	<u> </u>				, का	7		1		1	(

सीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमी, दो दंमण, दव्वेण छ हेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, मासणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुष्णुता होति अणागारुगजुत्ता वां।

"तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञा-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशां प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगातिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकि यककाययोग ये दश योग, तीनों बद, चारों कचाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिकं दो दर्शन, द्रव्यमे छहों छेदपाएं, भावसे तेजोछेर्याः भव्यसिद्धिक, सामादनसम्यकत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्याबाले सासादनसम्यन्दां जीवोके अपर्याप्तकालसंबन्धा आलाप कहने पर—पक सासादन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारों संबापं, देवगतिः पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिथ और कार्मणकाययोग

नं. ४२९ तेजीलेश्याबाले सासादनसम्गग्हिए जीवींक पर्याप्त आलाप.

गु.। जी । प	श्रासःग इ. का	यो वे.	क झा. सय.	હ ਲં, મ	ूम् मिझ्, अः	इ.
१ १ ६	प्रांस.ग इ. का १० ४ हि १ १ ति पंचे. त्र	1 50 -	¥ 4 /	२ %.५१	१ १ १	२
सा. सं. प.	ति पच. त्र	म. ४	अज्ञी, अम	चेश्रुमी.∕म.	. सा सः∫आहाः	साका
1 1	म	व ४		अचः तः	,	अनाः
()	₹.	aij. t				ı
		ब. २			1	, 1

भं. ४३० तेजोलेस्यावाले सासादनसम्यग्हाप्र जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्य ग	जी-	प. भा.	सं.∣ग.	∣ इं. का.	, यो	वे.,	死 。	₹].	मय	₹.	ਰ.	₽.	स∙	संह	आ.	उ. ∣
9	9	६अ. ७	89	9 9	२	12	8	3	7	ર	इ. २	9	1	9	2	ર
सा	सं. अ.	, ,	दे.	प. त्र.	वे मि.	4.	j	कुम.	अस	चं क्षु	का.	स.	सासा.	स.	आहा.	साका.
1	,			ł	कार्म.	यां.	á	कुश्रु.		अचे.	য়ু.		I		अना.	अनाः
		1	l I	İ		. 1	1	•			भा. १		ı			
L_	1	į									ते.		<u>. </u>			

जोग, णबुंमयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्वेषण काउ-सुक्केस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेउलेस्सा-सम्मामिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासी, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्ताणि, अमंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भासिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, मण्णिणां, आहारिणों, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारु-वज्जता वां ।

ये दो योग, नवुंसकवेदके विना शेप दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेदयाएं, भावसे तेजोलेक्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो॰ पयोगी होते हैं।

तेजोलेइयावाले सम्याग्मध्यादृष्टि जीवांके आलाप कहने पर—एक सम्याग्मध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, लहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संब्रापं, नरकः गतिके विना शोव तीन गतियां, पंचिन्द्रियजाति, तसकाय, वारों मनोयोग, वारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग थे दश योगः नीनों वेद, वारों कवाय, तीनों अज्ञानांसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, अलंबम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेक्यापं, भावसे नेजे लेक्याः भव्यसिद्धिक, सम्याग्मध्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

न. ४३१ तेजीलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आह्याप.

गु. जी. प. प्रा. सं.ग.	इं.का थी वे.		
	१११०३		
सम्य सं प	पं. त्र. म. ४	अज्ञा. असं. चश्च. मा १ म	. सम्यः सं. आहा साका.
म.	ब. ४	३ अचा ते.	अमा.
वे.	ું આંે ₹	शान.	
}	वे १	मिश्र.	

तेउलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चतारि मण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चतारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्माओ, भावण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवज्जता वां।

तेसि चेव पज्ञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि मण्गाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, अमंजमो, तिण्णि दंतण, दव्वेग छ हेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवमिद्धिया, तिण्णि सम्मनं, मण्जिजो, आहारिणो, मागारू-

तेजोलेइयावाले असंयत्तसम्यग्दृष्टि जीवंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक आंवरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संजाएं, नरकगातिक विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययांगि, कके विना शेष तेग्ह योग, तीनों चंद, चारों कथाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, ह्यापे छहीं लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तोन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अलाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्रिष्ट जीवींके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्रिष्ट गुणस्थान, एक संबिष्याप्ति जीवसमास्त, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकगितके विना शोप तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयाग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योगः तीनों बेद, चारों कथाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमे छहीं लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक,

मं. ४३२ तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्दप्रि जीवोंके सामान्य आलाप

ग्	जी	ч.	प्रग	सं.	ंग्,	👣 का	यो	ब.	क	# 11.	सय.	द	ले		भ	स	मीब.	आ	उ
1	2	ξq.	8 0	R	3	, ,	Tra	₹	R	3	٤	₹	₫.	Ę	¥	· ₹	₹	ર	4
अ	स प.	€ 3 7 .	s		iते. ˈ,	her 1 1	∣ओं हि विना.			मन्ति	अस	क द	मा.	5	भ	औप	स	श्राहा	माका,
	स. अ.				म.ं		विना.			श्र्त.		वना.	ते			क्षा		अना	अना
1		1			द. ∣	ł				अव.						क्षायो			
L		1			1 1		1			I		1	1	1			į į	١	

वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^णी

तेमि चेत्र अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एश्रो जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्येण काउ-सुकक्रेस्मा, भावेण तेउलेस्मा; भवसिद्धिया तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुना होंति अणागारुवजुना वार्षे

नेउलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एत्रो जीवसमासो, छ

श्राहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नेजोलेड्यावाले असंयतसम्यग्दिए जीवींके अपयीप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, स्वात प्राण, नारों संज्ञाणं, देवगिन और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकिभिश्च वैकिथिकिमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुपवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापीत और शुक्क लेह्याएं, भावसे तेजोलेह्याः भव्यसिद्धिकः अपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेइयावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर-एक देशविरत गुणस्थान, एक

नं. ४३३ नेजोलेश्याचाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवेंके पूर्याप्त आलाप.

J.	जी.	प । मा.	मं,⁴ग इ	काः	्यो.	वे क	্লা.	मंग् द.	िले. ३	ा. स _{्र} ास हि ,	आ, उ
,		8 120	४ इ।	۶ و	१०म.४	3 8		۶ 3	द्र	१ ३ १	१२
अवि.	. स.प	1 1	ति. प	- ED	्व ४	}	मति-	अस. कंद.	मा. १,म	. औष सं.	आहा, साव्हा
1		3	म-	क्र	ओं १	1	अत.	विना	ने.	क्षा.	अना.
		1	3		वे. १	1	अव			क्षायो.	

नं. ४३४ तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवांके अपर्याप्त आलाप.

ग. जी. प.	प्रा¹स ग्. हे.का.	यां. वे.क.			T-130	. उ
११६ ५ अ	७ ४ 🕄 १ र	રે ૧૪		३ द्र २ र केट का भा	३ १ २ ऑप. सं. आह	3
, " "	-11	ओं मि वै मि.				. अमा
1		कार्म.	अव.	भार ते	क्षायो.	.

पज्रचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि बेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संज्ञमासंज्ञमो, तिण्णि दंसण, दन्नेण छ हेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भन्नसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्रत्ता होति अणागारुवज्जता वा

ंतेउलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, दां जीवसमासा, छ पडजतीओ छ अपडजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि

संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगित और मनुष्य-गित ये दो गितियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपश्मिक आदि तीन सम्यक्त्य, मंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेह्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, मंद्री-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संद्राणं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविद्युद्धि ये

नै. ४३५ नेजोलेस्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

₹.	जी.	٩.	श्रा.	सं.	ग. इ	, কা	. 4	ît.	वे.		मा	. संय	. द.	ले	. म	. स.	साज्ञ	, आ	હ. ા
\$	1 2	Ę	7 0	ጸ	(O)		ু)	₹	¥	ą crê r	,	₹ at #	₫. ***	ξ ?	(§)	.	2	उ. २ साका-
दश.	7				ात प सः	· 7·	ન a.				भात श्रुत		क व विनाः	मा. ते.	′ H.	क्षा.	₩.	जाहा.	अना.
1							ગો	*			अव.					क्षायोः			

नं. ४३६ तेजोलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

13.	जी.	q.	था	₹,	स्.	Ę.	का.	या.	वे.	क.	₹ 1-	मंय.	द.	ਲ.	ਥ.	स	संक्ष	आ.	₹.
1							2		ર્	ሄ				द्र. ६		3	2	2	٦_
H	सं.प. सं.अ.	६अ.	ø		म.	वा	be.	स. ४ व. ४							म.	ओप.	स.	आहा.	साका.
150	सं.अ			t.		6	1				~	छदे।	विना	ते.		क्षा-			अना
		1					- 1	औ. १			अव	पारे,				क्षायो			- 1
	1							अग. २			मनः								

संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-अप्पमत्तसजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणु उगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{र्र}।

पम्मलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ,

तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं छेश्याएं, भावसे तेजे छेश्याः भव्यसिखिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्वः संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके अलाप कहने पर—एक अप्रमत्तियित गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचिन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योगः तीनों वेद, चारों कषाय, अतिके चार झान, अधिके तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्याः भव्यसिदिक, अपरामिक आदि तीन सम्यवत्व, संशिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

पद्मलेश्याबाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संकी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौँ प्राण, सात प्राण, वारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेव तीन गतियां, पचेन्द्रियजाति, असकाय, पन्द्रहाँ

नं- ४३७ तेजोलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

<u>į.</u>	1	_		ग.	₹ —	का∤	यो.	बे.		न्ना	संय-		हे.	म.	स.	संक्रि.	आ.	ਰ
1.		٩	२० (३ । भेष	т.	¹	भ । त्रः ।	्म. भ. ४	1 1	g	म ते	सामा.	े क.द.	द्ध, ६ भा. १	1 8	ું ર્	सं.	भ आहा	२ साका.
34.7	H. 4		मे.				व. ४			श्रत	छद्।.				क्षा.		,	अना.
1			वरि.				ઓ. ૧		Ì	अव.		1		í 	क्षाया.			
		- 1								मन							- 1	

पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्ताः भविसिद्ध्या अभव- सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारु- वज्जता वा

"तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि सत्त गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ हेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो,

योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सृक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात वंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्याएं, भावसे प्रालेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहीं सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, एक संही पर्याप्त जीवसमासः छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संहाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, केवलहानके विना शेष सात हान, मृक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और

तं.	४३ ८	पद्मलक्यावाले जीवीं	के सामास्य	आलाप.
460	040	नमल्यपापाल आपा	का रवास्तरण	24(2)(4)

गु.	जी∙	٩.	प्रा.	सं.	ग.	\$	का.	यो.	वे	奪.	हाः	सय.	्द.		~! ~—	-		आ.	उ.
9	2	६ प.	२०	8	(3)	₹.	1	2 6	1	४	9	4	1 3	द्र. ६	1	६	१	2	२
मि.	सं. प.	ξ ¥.	৩		ति.	q.	স.				केव.	असं.	के. द.	भा ।	म.	-	मं.	आहा.	साकाः
से.	सं. अ.				म.				į.		विना	देश.	विनाः	ч.	अ.	} 		अना	अना-
अप्र-	į				दे.							सामा.							
1	1					ĺ						छेदो.							
1					1	1						परिः		1					
		t									ĺ					Į	1		1

नं. ४३९ पद्मेलस्यामाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

្ រូវ	जी.	٩.	प्रा.	सं.	ग.	₹.	का-	्य	ì	वे	क.	सा-	संय•	द.	ल	_ ;	н.	स.	संझि.	आ.	ु उ.
ی	ર	Ę	१०							3	R	G	५ अस.	₹	页。		₹	Ę	*		ર
भि.	सं.प				ति -	ч.	₹.	व ्	X	i		केव.	देश.	के.द	सा-	t 4	١.	ł	सं.	आहा.	साका.
से.					म.			ओ.				विनाः	सामा.	विना.	٩.	3	₹.			1	अना.
अप्र					₹.			वे.	8				छेदो.	}						İ	
<u> </u>								आ.	₹ :				परि.								

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहुाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, ::पंचि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

पम्मलेस्सा-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दे। जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेदयावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—प्रिध्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, देवगाति और मनुष्यगति ये दे गितियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, लसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, पुरुषवेद, चारों कबाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और श्रुक्त लेदयाएं, भावसे पद्मलेद्द्याः भव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना द्रोष पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आद्दारक, अनाद्दारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेश्यावाले मिध्यादि जीवं के सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादि गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगदिकके विना शेष बारह योग,

नं. ४४० पद्मेलस्यावाले जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

कसाय, तिष्णि अष्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भात्रेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिष्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवजुत्ता वा"

"तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंज्ञमो, दो दंसण, दन्वेण छ हेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,

तीनों येद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेह्याएं, भावसे पद्मलेह्याः भन्यांसाद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिण्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनिद्धारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेक्यावाले मिथ्यादि जीवेंकि पर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमाम, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारीं संब्रापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचित्रियजाति, जसकाय, चारीं मनीयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्षियिककाययोग थे दश योगः तीनों वेद, चारीं कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेक्यापं, भावसे पद्मलेक्याः भश्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संब्रिक, आहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो-

નં. ૪૪૧	पद्मलेह्यावाले	मिथ्याद्यप्रि	जीवॉके	सामान्य	आलाप.

्गु∙] जी-											मंग	ा द.	। ले	भ.	स.	मिन.	आ.	ਰ.
2											₹	,		<i>5</i> , 6			₹	3	2
	सं. प.	৩	, I	ति	q.	7	म	X	 		अज्ञा	अस	चे शु	भा. १	भ	मि-	स.	आहा.	माका.
1	सं. अ.			म			व	8					अच.	q.	अ.			अन्।.	अन्।
1	i			दे.			ાં	. १)		1			į						
1							व	ર	ŀ				İ	ł					
I							का	8						j					

नं. ४४२ पद्मेलेश्याव ले मिथ्यादाष्ट्र जीवींके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	q,	प्रा.	सं.	ग.	5.	机.	यो.	वे.	布.	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ.	ख∙
2	8	Ę	10	8	₹	٤	8	\$ 0	₹	K		2	3	द्र६	₹	*	8	१	ર
ाम -	सं.प.			16	ते. प	ī.	त्र₊ ∫	म. ४		1	अहा	अस.	चक्षु.	भा. १	स.	मि .	सं.	,आहा.	सका.
				Ŧ	1.	- 1	1	व. ४	L	ŀ	İ		अच.∣	q.	₹.		f	1	अना.
				दे	·		İ	औ.ः	١	L		l			1				1
<u></u>			}	-				वै. १]									

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चनारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जेग, पुरिमवेदो, चन्तिर कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेम्सा; भविभाद्वया अभविसिद्धिया, मिन्छनं, सिण्णणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुना वा न

पम्मलेस्मा-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, बारह जोग, तिण्णि चेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंज्ञमो, दो दंसण, दक्षोण छ लेस्साओ, भाषेण पम्मलेस्सा; भगसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेदयाचाले मिथ्यादृष्टि जीवों के अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संकी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, देवगित, पंत्रेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, विकिथिक मिश्र और क मंणक ययोग ये दो योगः पुरुषवद, चारों कथाय, आदिके दें। अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लक्ष्यापं, भावसे पद्मलेद्रयाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यास्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेहपात्राले सासादनसम्यग्दाप्रि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संजी-आर्याप्त थे दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सन प्राण, चारों संबाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्धिकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कवाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहां लेह्याएं,

नं. ४४३ पद्मेलस्याचाले मिध्यादिष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

यु जी. प.	पा. मंग इं. का. यो.	वृक्तः हा.	सय. द.	ले. म,	स. सहि	आ उ.
१ १ ६अ	0 8 O 1 1 3	E) 8 4	۶ ۶	द्र, २	1 5 8	२ २
मिय अ	द. प. त्र वास.	.पु. कुम.	अस. चधु	का. भ.	ं मि-∤स-	आहा माका.
	कार्म.	कुश्रुः	ं अच∙	ग्र . अ.		अना अना .
			;	मा. १	,	
_				q. 1		, _} [

कसाय, तिष्णि अपणाण, असंजमो, दो दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भात्रेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिष्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुत्रज्ञत्ता होति अणागारुत्रज्ञत्ता वां

"तेसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ हेस्साओ, भावेण पम्महेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,

तीनों चेद, चारों कषाय. नीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यस छहों लेश्याएं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यांसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनिहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मालेह्यावाले मिथ्याद्य जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्य गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, द्रों। प्राण, चारों संब्रापं, नरकगतिके विना द्येष तीन गित्यां, पंचित्र्यज्ञाति, जसकाय, चारों मनीयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और जिक्रियकप्राययोग ये द्रा योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेदयापं, भावसं पद्मलेदयाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संब्रिक, आहारक साकारोग्योगी और अनाकारोग्

नं ४४१ पद्मेलस्यावाले मिथ्यादाप्ट जीवींके सामान्य आलाप.

्य.	जी-	۹.	प्रा	1		1	का	4	1	वि.	क.∣	झा	मंग	। द.	िले	भ.	ਚ.	, सक्ति	आ.	ੁ ਤ.
1		l ' '	१८		3	1	1 *	3	4)	₹.	8	₹		<	<i>5</i> €	1 '	Ł	₹	ર	2
	सं. प.	६अ.	ঙ		ति	q .	'ব	म	X	ļ	1 , l	अज्ञा	अस	य शु	मा ।	भ	मि-	ं स.	आहा.	माका.
	सं. अ.	ļ			म		i	व	A					अच.	q.	अ.	Ì	ĺ	अना.	अना.
İ					दे.			ओं	. (१)		1						I			ĺ
	}						1	व	3		ļ.,									
<u> </u>	,			1	<u> </u>			का	१		!							1		

नं. ४४२ पद्मेळेश्याचाळे मिथ्याद्दाप्टे जीवींके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	q	য়া.	स.	π.	₹.	का.	यो.	_ ∤ वे.	布	झा	मग	द.	ਲੇ.	म	स	संहि	आ.	ਰ.
2	ξ		\$ 0					१०		¥	1 4	*		द्र६	 3	١٤	₹_	8	२
मि•	सं.प.			!	ति.	ч.	त्र.	म. ४	i		भन्	अस.	चक्षु.	भा. १	ਮ.	मि -	सं.	आहा.	साका.
				1	म.			व. ४			1		अच.	φ.	अ.				अनाः
		j			दे.			ગૌ. ા	:	1						ĺ	1		
								वै. १			<u> </u>				_		í		

सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जाग, पुरिमवेदो, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेम्सा; भविभाद्धया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा- हारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पम्मलेस्मा-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, बारइ जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्येण छ लेस्साओ, भावेग पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेदगायाले मिथ्याद्यप्रि जीवों के अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, देवगिन, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैकियिकिमश्र और कर्मणकाययोग ये दो योगः पुरुषवद् चारों कपाय, आदिके दें। अक्षान, असंवम, आदिके दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लश्यापं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यास्व, संक्षिक, आहारक, अनाद्यसिद्धकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेइयात्राले सासादनसम्यग्द्यप्रिजीवांके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संजी-आर्याप्त ये दी जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सन प्राण; चारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेख्यापं,

नं. ४४३ पद्मेलेश्याचाले मिथ्याद्यप्रि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु जी प्	पा मंग ई. का.	. यो. वृंक.	ज्ञा.	संय. द.	हो.	म. । स.	∙संक्रि आ⊦ उ	ا۔
१ १ ६अ	0 8 1 1 1	₹ 8/8	4	१ । २	द्र, २	र ∤	१ २ २	
मि प अ	द्ये. प. त्र	व वि. पु.	कुम.	असं, चिशु	का.	प. ∣ भि.	ंसं. आहा साफ	1.
		कार्म.	कुश्र-	अच	. য়-	अ.	अना अन	1.
1				1	भा. र	1		- 1
		[1		1	. 4.	<u> </u>		- 1

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्ञत्ता होति अणागारुवज्जता व। ।

भायसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिकः सासादनसम्ययत्व, संक्षिकः, आहारकः, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मालेश्यावालें सासादनसम्यग्दि जीवीं पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संकी पर्याप्त जीवसमासा छहीं पर्याप्तियां, दशौं प्राण, वारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचीन्द्रयजाति, यसकाया वारों मनीयोग, वारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्षियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, वारों कवाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दे दर्शन, द्रव्यमे छहीं लेश्याएं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्ययत्य, संक्षिक, आहारक. साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४४४ प्रशेलदयाबाले सासादनसम्यग्दाप्र जीवोंके सामान्य आलाप.

																		ਫ. ,
															2			
सा	स.प.	६अ.	و	İ	ति. प	্য.	म. ४			'अद्गाः.	अस	चक्षु.	मान	म	वासा.	स.	आहा	पाका.
	सअ				म. '	l i	व् ४			ı		,अव.	प.				अन्।.	अना.
1				}	द.	Ì	ઓ.	1		1		}	{					}
1					}		व २	ì	1		1		. !			,		i
		i	ł	1	. 1	1 .	का. ।			1						1		

नं, ४४५ पद्में एक्स्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

J	जी,	4	श्रा.	सं.	ग	₹.	का	्यो.	¦वे	क.	श्.	सय.	द.	ले.	म-	स	संक्षि.	आ.	₹.
9	9	Ę	90	8	3	3	٦	90	3	8	3	٩	1	द्र६	9	9	9	3	ર
सा	सं.प	i			เสิ.	q .	স.	म. ४	į		अशा.	अस.	चशु	मा- र	म-	मासा.	सं.	आहा.	साका.
	1				म.			व. ४			1	f:	अच.	q.					अना.
	1				दे.			ઔ.૧	İ					1			1		
<u></u>			Ì	-			_ [वै. १					1						<u> </u>

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपन्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, देा जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सात्तणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

ं पम्मलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि,

उन्हीं पद्मलेश्यावाले सासादनसम्पग्हिए जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संबाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्तियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावस पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संविक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेश्यावाले सम्यागमध्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यागमध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४४६ पद्मेलस्याचाले सासादनासम्यग्दणि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्र गु. जी. प.्रशु.	सं. ग.। इं. का	यो वे क	ह्या-	संय.	द.	ले ∣भ.	स.	सिन्न.	आ.	ड.
१ १ ६अ. ७	8 (3) 5 1	. २ 🔞 ४	3	*	2	द्र२∣१	*	1	२	ર
सा. सं अ.	दे प. त्र	वे.मि. प्	कुम.	अस.	चक्षु.	काः भ	सासा	स∙	आहा.	साका.
		कार्म ।	कुश्रुः		अच.	शु ।			अनाः	अना.
1		I I				मा-१			ļ	
		1				प-		ì	Į	

नं. ४४७ पद्मेलस्यावाले सम्योग्मध्यादि जीवोंके आलाप.

्रा जी.	प. प्रा. सं. ग. इ. का.	यो. वे. क. ज्ञा	संय. द.	ले. म.	. स. संझि. आ	ड.
१ १ सम्यः सं.पः	प. प्रा. सं. ग. इ. का. ६ १० ४ वि १ १ ति. पचे. तस.	(9) (2) X 318	. १ २ ॥ अस्तं. चक्रा	द्र.६ १	१११ संबाह्य	्र साका
	म.	व ४	अच.	4	## 41 -1161	अना.
	₹-	ओ. १ झा वे. १ मि				
\ <u></u>	<u>, , , , , , , , , , , , , , , , , , , </u>		1 1	, ,	l	

असंजमो, दो दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; मवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रजुत्ता होति अणागारुत्रजुत्ता वा ।

पम्मलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, वे जीवसमामा, छ पज्जचीओ छ अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवतिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाणि।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेदः चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं भावसे पश्चलेश्याः भन्यसिद्धिक, सम्याग्मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेश्यावाले असंयतसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञाणं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्धिकके विना शेष तेरह योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपश्चिमकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेश्याबाले असंयतसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों भाण, चारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४४८ पद्मलेश्यावाले असंयतसम्यन्द प्रे जीवोंके सामान्य आलाप.

गु. जी. प. प्रा. स गु. इ का यो २ ६प. १० ४ (३) १ १ (३) अति स प. ६अ ७ ति प. त्र. आ है स अ	३ ४ ३ १ ३ मिति अस.क.द	द्र १ (३) र २	् साका
---	--------------------------	---------------	-----------

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्तेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^भै।

तेसिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा ने

चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और चैिकायिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, इन्यसे छहों छेश्याणं, भावसे प्रक्रिक्याः भन्यसिः द्विक, औपश्मिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेश्यावाले असंयतसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगित और मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्षियकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त, संबिक, आहारक, अनाहारक।

नं. ४४९ पद्मेरुस्यावारे असंयतसम्यग्दप्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

मु.	जी.	पः। प्राः। सः। गः इः।		¦ ज्ञा. सय. ॑ द.	है. ∋ म. स.	सन्नि, आ.	ਫ.
१	2	E 80 8 3 2	१ रिंग्स.४ ३ ४	3 2 3	a. € 1 (₹) 2 2	2
अवि.	स.प.	ाते. पं.	्रं वि∙ ४	मति अस. कं दः	मा. १ म. ऑप	. सं व्याहा,	साका.
			किं ओ. १	श्रुत. विनाः			अना.
		दे.	वै. १	अव.	क्षाय		

नं. ४५० पद्मेलस्यावाले असंयतसम्यग्दप्रि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

IJ.	जी.	ч.	प्रा.]	स ग.	इं.का.	यो.	वे. क.	हा .	संय-	ζ.	ले.	स.	स.	संक्रि	. সা.	ं उ. │
2			৩		, ś <u>ś</u>	3	₹ 8						3		२	ર
Ja.	सं. अ.		ı	द म.	य. त्र	ओं.मि वै.मि.	io Dr	मात. श्रत.	1	कद. विनाः			आप. क्षा.		5	साका. अना.
1			[कार्म.		अब.		i .	मा. १		क्षायो.			
L.)	1						į .) ,	प				i	

पम्मलेस्सा-संजदासंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजातीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, मावेण पम्मलेस्सा; उत्तं च पिंडियाएं—

हेस्सा य दन्त्र-भावं कम्मं णोकम्मिमस्सयं दन्त्रं । जीवस्स भावळस्सा परिणामो अप्पणो जो सो ॥ २६८॥

भवसिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{भ्य} ।

पम्मलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पश्चलेश्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर— एक देशविरत गुणस्थान, एक संशी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संश्चापं, तिर्यंचगित और मनुष्यगति ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और भौदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रस्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पद्मलेश्या होती है। पिंडिका नामके प्रन्थमें कहा भी है:—

हेर्य। दो प्रकारकी है, द्रव्यहेर्या और भावहेर्या। नोकर्मवर्गणाओंसे मिश्रित कर्मवर्गणाओंको द्रव्यहेर्या कहते हैं। तथा जीवका कपाय और योगके निभित्तसे होनेवाहा जो आत्मिक परिणाम है, वह भावहेर्या कहहाती है। २२८॥

लेड्या आलापके आगे भव्यासिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्विक, आहा-रक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण,

१ आ प्रती ' पिटियाए ' इति पाठः ।

न. ४५१ पद्मेलस्याचाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

2	जी. १ सं. प	q. €	प्रा. १०	8 1	દે) ર ⊢વં.	*	3	- { {	¥	₹	१ देश.	३ क.द.	द. ६	₹ म.	₹	?	2	उ. २ साकाः अमाः
							\$					ļ						

पन्जत्तीओं छ अपन्जत्तीओं, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओं, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओं, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणों, आहारिणों, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{र्त}।

"पम्मलेस्सा-अप्यमत्ततंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एत्रो जीवसमासो, छ पज्रत्तीञ्जो, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

सात प्राणः चारों संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वसनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकिमश्रकः ययोग थे ग्यारह योगः तीनों वद, चारों कषाय, आदिके चार क्षान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहार विद्युद्धिसंयम ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावते पद्मलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपदामिक आदि तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेइयावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर--एक अप्रमतसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्षाके विना शेष तीन संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-

नं. ४५२

पद्मेलदयाचाले प्रमत्तसंयत जीवांके आलाप.

J.	जी.	ч.	গা	स.	ग_	ģ.	का.	यो.	वे.	क.	शाः	संय.	द.	छे.	म.	स.	_ संक्रि	-आ.	ड-
2								88,	ą	x	8	₹	₹	द्र. ६		(है)		8	२
=	सं∙प.	६ अ.	9		म.	d o r		म. ४							स.	ओप.	₹.	आहा.	साका.
i k	सं,अ.					b	7				विना	छेदो.	विनाः	Ч.		क्षा.			अना.
								औ. १				परि.			1	क्षायी			
1	}							आ. २									1		

नं. ४५३

पद्मेलस्यावाले अप्रमत्तंसयत जीवोंके आलापः

ਹੁ.	3	नी.	ч.	গ্না.	₹.	ग.	ţ.	का.	यो.	वे.	雨.	₹ा.	संय.	द.	ले.	. म	. स.	संक्रि.	आ.	ं ड.
1		1	Ę	१०	3	*	*	?	3		8	У	₹	3	页.	६१	₹	₹	8	. ૧
अप्र.	स.	ч.			म्य -∿	ч.	व्	अस.	म. ४ व. ४				सामाः छेदोः				. आप. ंक्षा.		आहा.	साका. अनाः
					म. परि			1	व. इ औ. १			19ग1	ख्दा. परि.	ाष्णा.	4 1		क्षायो <u>.</u>	!		34411.
		1			11(

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

सुक्कलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि अजोगि विणा तेरह गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जनीओ छ अवज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकसाओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंत्तग, दव्वेण छ लस्माओ, भावेण सुद्रलेस्ना; भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो जेव सिण्णिणो णेव असिण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदु-वजुत्ता वा

रिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारिवशुंडि ये तीन संयम, आदिके नीन दर्शन, द्रव्यसे छहें छेदयाएं, भावसे प्रालेदया; भव्यसिखिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

शुक्त हेरवावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहन पर—अयोगिकेवली गुणस्थानके विना आदिके तेरह गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण तथा सयोगिकेवलीकी अपेक्षा चार प्राण और दो प्राणः चारों संक्षाएं तथा क्षीणमंक्षाम्थान भी होता है, नरामितिके विना शेष तीन गतियां, पंचे-निद्रयज्ञाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपनतवेदस्थान भी होता है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आहों ज्ञान मानों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों करयापं, भावसे शुक्रलेदयाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्ययत्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा माकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

न. ४५४ शुक्रलेस्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	_जी∙_	ч.	भा.	ή.	ग	3		यो. वे									आ.	<u>ड</u>
१३	ર	€ q.	9 0	8	₹	\$	8	रम्। इ	Y	<	v	8	द्र.६	<	Ę	१	ર	ર
	स. प•		v	be.	ति-	q.	₹.	غ ا ا					मा-१	म		₩.	आहा.	साका.
विना,	स. अ.		X		₽.			अंत	জ্ঞান				ગુ.	अ.		अनु.	अना.	अना.
			२	at.	दे.				100					İ				तथा.
								i										यु. उ.

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणमण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अद्व णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ हेस्साओ, भावेण सुक्कहेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णणो णेव सिण्णणो णेव अस्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगबदुवजुत्ता वा

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, देव-मणुसगिदि ति दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद अवगदवेदो वि अत्थि,

उन्हीं गुक्क लेक्यावाले जीवोंके पर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राणः चारों संबादं तथा श्रीण संबास्थान भी होता है, नरकगितके विना शेप तीन गितयां, पंत्रेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकाल संबन्धी ग्यारह योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कषाय, तथा अकषायस्थान भी होता है, आठों बान, सानों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे गुक्क लेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त्व, संबिक तथा संबिक और असंबिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगों युगपत उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं गुक्क लेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर—भिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तिविरत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थानः एक संबी-अपर्यात जीवसमासः छहां अपर्याप्तियां, सात प्राण और दो प्राण, चारों संबापं तथा श्लीणसंबास्थान भी है। देवगित और मनुष्यगति ये दे। गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, अपर्याप्तकाल संबन्धी चारों योग, पुरुषवेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा

न. इ५५ - अञ्चलभ्याचाल जावाक प्रयाप्त आर	નં. ૪५५	गुक्रछेदयावाले जीवोंके पर्याप्त	आलाप
---	---------	---------------------------------	------

ગુ.	जी.	प-प्रास	. ग. इं.	का-।	यो. ः व	के.	श्चा-	संय.	द.	ले.	म.	स.∣ संक्रि	. आ.	ਰ.
१३	₹	€ (20) 8	ाइ १	18 8		¥ 3	6	ی	8	萬. 長	3	€ ₹	8	२
अये।.	सं. प.	W H	्ति पचे	. त्र. बि	۲ ا	<u>:</u>				मा-१	म•	सं.	आहा.	साका
विना		5	्रम.	अं	ौ∙ र है					য়ু.	अ.	अनु.		अना.
1		30	दे.	वि	٠ ٤	n				1		1		तथा.
1		3		1 3	п. १			{ (1	1	यु. उ.

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्ताओ, भावेण सुक्कलेस्ताः; भविसिद्धिया अभविसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सिण्णणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा वा

"ं सुक्कलेस्सा-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद,

अकषायस्थान भी है, विभंगाविध और मनःपर्ययक्षानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

शुक्क लेरयावाले मिथ्यादि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुण-स्थान, संझी पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, इसों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगहिकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद,

ग. ७ ७५	नं.	४५६
----------------	-----	-----

द्युक्रलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलापः

ग्र-	जी.	ч.	प्रा-	सं.	ग.	Ę .	का	्यो-	ब.	, 事.	श्रा-	सय.	ζ.	ਲੇ.	म.	स∙	सक्रि.	आ.	उ. ∣
५मि.	9	६अ.	و	8	2	9	٩	¥	9	8	Ę	X	¥	द्र. २	ર	وبر	1	ર	٦
ett.	सं.अ.		ર		दे.	q	₹.		<u>'</u> 9.	≐	विभं-	असं.				सम्य		आहा.	साका.
अवि					मं.			वै भि.		ও ক	मनः.	सामा.		য়ু •	₹.	विनाः	अनु	अना.	अना.
प्रम.				35				आ।मे	अवग	מו	विनाः	छेदो.		माः १					तथा.
सयो		ĺ						कार्म.	1"			यथा.		् श्र.					यु. उ.

नं. ४५७

शुक्रलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>11</u>	जी	- _\	प .	সা	सं.	ग.	Ę	का.	यो.	_	वे.∣	क 。	शा.	े संय.	₹.	ਰੇ.	म.	₹.	संकि.	आ.	₹.
2	२	٤	q.	20	¥	(3)	•	*	2.5		₹	8	₹		ર	द्र. ६ मा. १	ર	2	*	3	ર
∣िम∙	सं. प	स⊷∤६	्अ.	9	1	ति	ġ٠	₹.	म. १	8			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	स.	मि∙	सं.	आहा.	साका.
	सं. ३					म-			व. १	8					अच.	₹.	अ.			अना.	अना.
1	1					₹.			ઔ.	₹						1					
					1		İ	Ì '	वै. ^३	3	Ì	ĺ			ı						
									কা.	8					1	i	1				
1	ĺ	ŀ		}	l	•				l	l	•		l	Í	1	,				!

चत्तारि कसाय, तिष्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दम्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा।

तेसिं चेव पजनाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनित्रों, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्नेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाह्यज्ञता होंति अणागाह्यज्ञता वा

तेसि चेव अपज्ञत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ. देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाणः असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ,

चारों कषाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे गुक्रलेक्या; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्रलेश्यावाले मिथ्यादि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्षियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्यापं, भावसे शुक्रलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले मिथ्यादाष्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादिष्टे गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वैकियिकामिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योगः पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृज्यसे कापोत और

नं. ४५८ - शुक्रलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवाँके प	ार्याप्त आलापः
--	----------------

1 2	ſ. [जी.	q .	त्रा.	सं.	ग. ≰.	्रका.	∉यो₊	वे.	♠.	啊.	∣ संय∙	द.	∣ छे∙	₩.	स-	संक्रि-	आ.	₹.
	2	2	Ę		-	3 1		20	3	Y	3	2	ર	द्र. ६	2	१	1	5	ર
า	Ħ٠	सं. प.		•		ति. प	त्र.	म.४			अहा.	असं.	चसु.	मा-१	म.	मि	सं.	आहा.	साका.
1						н.		q. ¥	1				अच.	ग्र-	Э,				जना-
1						<u>द</u> .	1	औ. १											
1			1			"	1	वै. १]							

भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{र्रा}।

सुक्कलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं मण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तमकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णित्य । कारणं, देव-मिच्छाइड्डि-सासणसम्माइट्टीणं तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्यज्जमाणाणं अमुणिय-परमत्थाणं तिच्च-लोहाणं संकिलेभेण तेउ-पम्म सुक्कलेस्साओ फिड्डिऊण किण्ह-णील-काउलेस्साणं एगदमा भवदि । सम्माइट्टीणं पुण मणुस्सेसु चेव उप्यज्जमाणाणं मंदलोहाणं समुणिद्परमत्थाणं अरहंतभयवंतिम्ह छिण्ण-जाइ-जरा-मरणिम्ह दिण्णवुद्धीणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ चिरंत-

गुक्क लेरपाएं, भावसे शुक्कलेरपाः भव्यमिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारकः अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

गुक्रलेश्यावाले सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण: चारों संझाएं, नरकगितके विना शेष तीन गितयां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र ओर आहारककाययोगिहिकके विना शेष वारद योग होते हैं: किन्तु यहां पर आदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है। इसका कारण यह है कि, तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले, परमार्थके अज्ञानकार और तीन्न लोभकपायवाले एस मिथ्यादिष्ट और सासादनसम्यग्दिष्ट देवोंके मरते समय संक्षेत्र उत्पन्न हो जानेसे तेज, पद्म और गुक्क लश्यापं नष्ट होकर कृष्ण, नील और कापेत लेश्यामेंसे यथासंभव कोई एक लेश्या हो जानी है। किन्तु जो मनुष्योंमें ही उत्पन्न होनेवाले हैं, मंद लोभकपायवाले हैं, परमार्थके जानकार हैं, और जिन्होंने जन्म, जरा और मरणके नष्ट करनेवाले अरहत भगवन्तमें अपनी बुद्धिको लगाया है ऐसे सम्यन्दिष्ट देवोंके चिरंतन (पुरानी) तेज, पद्म और गुक्क लेश्यापं मरण करनेके

१ प्रतिप ' किण्णचुद्धीण ' इति पाठः

न. ४५९ गुक्रलेश्यावाले मिध्याद्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलापः

गु. जी प. प्रा.	स ग इं का यो. वे. क.	शा संय द.	ले. म.	सः संक्रिः आः	₹.
१ १६अ ७ मिः च	x (5) 5 5 5 15 18	२ १ २	द्र.२ २	₹ १ २	2
פח	कार्म.		• का. म . शु. अ.		
.# .		3.3. 44.	भा १	अना.	जना.
			શુ.		

णाओं जाव अंतोम्रहुत्तं ताव ण णस्संति । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दृष्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः, भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सिण्णणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा" ।

"'तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ

अनन्तर अन्तर्मुहृत तक नए नहीं होती हैं, इसलिए शुक्क लेश्यावाले मिथ्यादिए और सासाइन-सम्पन्छि जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है योग आलापके आगे तीनों वेद, चारों कवाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिक दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्क लेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सिज्ञक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं गुक्किरयावाले मासादनसम्यग्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौं प्राणः चारों संक्षाएं नरकगातिके विना शेष तीन गितयां, पंचेन्टियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्कान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे शुक्कलेश्याः

नं. ४६० शुक्टेलस्यावाले सासादनसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप.

्रा जी. पर्मा स∤ग इ वा यो	वे क. हा. सय	.द. हे. [।] स [†] स.	सक्ति आ	ਚ.
१ २ इप. १० ४ ३ १ १ हेरे	३ ४ ३ १	२ इ. ६ १ १	, र	2
सा.सं.प. इअ ७ ति प. त्र. म. ४		चक्षु-भा-भ्भ-मासाः		
स अ		अच- ्ञु-	अना-	अना.
द. ऑ. १		1 1 1		1
व. २	1		1 1	\ \

नं. ४६१ शुक्लेक्स्यावाले सासादनसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्त आलापः

∤ग्र ∣जी,	٩.	সা.	स.∣	ग 🕽 ई.	. का	ंयो.	∣वे	क	II	सय.	द.	ਲ.	म.	स.	सझि.	आ,	ਰ.
9 9	Ę	90)	- 1)	90	1 .	8	₹ .	9	ી ર	द्र. ६	9	9	9	9	2
साःसं.प			la	ा. प-	স.	म. ४	ĺ		अह्या.	असं.	चक्षु.	भा. १	∙म∙	सासा	स.	आहा.	साका-
			म	1	'	व. ४	,				अच.	খ্য,					अना.
	[1	दे	.		ओ.१											
11	1]	/	व. १		<u> </u>					1		l		<u> </u>

लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा

सुक्कलेस्सा-सम्मामिच्छाइद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणिहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, मावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया,

भ्रष्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्क हेरयायाले सासादनसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, वारों संबाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकिमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापीत और शुक्क लेर्याएं, भावसे शुक्क लेर्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

गुक्क लेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संझाएं, नरक-गितके विना शेष तीन गितयां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, वारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग थे दश योगः तीनों वेद, वारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे

•			2 2.
नं. ४६२	ज्ञान्स्र लग्गानाल	सासादनसम्यग्दछि जीवं	क अपराप्त आलाए.
.11 0 4 1	23 . 40.00 4 40.40.00	controld a trans a comment	4 40 -14 -14 -14 -14 -14

गु.	जी∙	ч.	সা.	सं.	ग.	₹.	का.	योः	वे. व	Б .	हा.	सय.	<u>द.</u> २	हे.	म.	₹.	संक्षि.	आ.	उ.
2	2	६अ.	૭																
सा.	सं.अ.				दे.	ч .	স.	वै.मि.	g.		कुम.	असं .	चिशुः.	का.	म.	सासा.	स.	आहा.	साका.
1				1	1			कामे.			कुभुः		अच.	₹.				अना.	अना.
1	i								1 1	1			İ	भा- १					
			1						1					₹.			1		

सम्मामिच्छत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

सुक्केस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्नेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

गुह्रलेश्याः भन्यसिद्धिक, सम्यग्मिश्यास्यः संक्षिकः, आहारकः, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

गुक्रलेश्यावाले असंयतसम्यग्दां जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दां गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संबाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगिहिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे गुक्ललेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मं. ४६३ शुक्ललेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	<u>_</u> जी	प-	সা-	सं. ग	इं का.	यो	वे.		₹.	ਲੇ.	म.	स∙	साहे.	आ.	ક.
8	1	£	80	४ ३	१ १	१०	₹.	₹		द्र. ६			१	१	२
सम्य,	सं. प.			'ति. प	प. बि. वि.	म. ४		अज्ञा.			म.	सम्यः	सं.	आहा.	साका.
				₩. -		व. ४ ओ. १	ĺ	₹	अच.	રાક્ર.					अना.
1	}			द .	- { }	वे. १	}	ज्ञान. कर्	1			!			
1	ļ			'		व• र	- 1	मिश्र.		[,					
		1		1						,					

नं. ४६४ शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्द्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

ŋ	-	जी-	q,	त्रा.	सं	ग.	Ę.	का.	यो.	वे	. 奪.	हा.	संय.	द.	हे.	' स-	स.	संक्रि.	आ.	ਚ.	J
13		3	ξq.	-			*		(13)		₹8		8	₹	द्र.६			2	3	ર	Ì
आं	₫.	स.प.	६अ	19		ाते.	₫.	₹.	ओ है.			मति.					औप.	सं.	आहा.	साका.	ļ
		सं.अ.		J		म.			विना.			भुत.		विना.	33.8 .		क्षा.		अना.	अना.	I
	-					दे-					1	अब.					क्षायो-	1			l
	_		ļ]				1	1_ :		}_			[,		ĺ			١

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ ठेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसि चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एय गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुमगदि त्ति दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दक्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्ही शुक्ललेश्याबाले असंयतसम्यन्दिए जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यन्दिए गुणस्थान, एक संकी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संस्थाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग अंद चेकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होतं हैं।

उन्हीं गुक्छिदेयाचाछे असंयतसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकाछसंबन्धी आछाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक मंजी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगित और मनुष्यगित ये दो गितयां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुपवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क छैस्याएं, भावसे गुक्कछेस्याः भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः

मं. ४६५ शुक्लहेरयावाले असंयतसम्यग्दप्रि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	q	प्रा.] स.	. ग.∣ इ	. কা.	्यो -	वि.	क	%1 -	सय	द.	ਰ,	म स.	संक्षि	आ.	ਰ.
१ १ अवि सं.प	, ,		३ १ ति.।प	-		₹	X	३ स्राति	् १ अस	्र कट	द्र. ६ मा. १ म		₹ #i.	र आहा	२ माका
31141 (1.4			म. ं दे- !	ŀ	व. ४ ओ. १	} .		श्रुत अव		विना. 		क्षा. भायो.		311613	अमा.
	i I	1	G a	1:	वै. १	 		94.				चाथा∙			

सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा दि

सुक्कलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ं।

सुक्कलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

गुक्क लेखावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यचगित और मनुष्यगिति ये दो गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक काययोग ये नो योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन क्षान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे गुक्ललेख्याः, भव्यसिद्धिक, औपश्रमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

शुक्छछेश्यावाछे प्रमत्तसंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुण

नं. ४६६ शुक्ललेरयावाले असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग्.	जी.	q,	त्रा	स	ग इ	र. का.	यो.	वे. क.	₹ (1.	मय	द.	ਲੇ.	स.	स∙	साझ	आ.	उ.
٦ ا	₹ .	Ę	৬	8	₹ :	8 8	₹)	₹. § 8	3	ξ	₹	द्र. २	*	(3)	1	ર	3
अवि.	स अ	3{		ਰੇ	Ç q	• স	श्री भि	g.	मति.	अस.	के द.	का,	भ	आप.	स∙	आहा.	साका.
				Ŧ	Ι.		व मि.		श्रुत.		विना	Ŋ.					अना.
1							कार्म.		अव.			भा. १		क्षाया			'
1												3 3.]	1	

١	ŋ.	जी.	٩.	प्रा.	सं.	η,	₹.	का.									संक्रि.	आ.	उ.
۱	*	1	Ę	१०	ሄ	ર	8	2	8	(3)				द्र. ६					2
ı	देश	स.प.				ति.	η.	7	म. ४			मति-			η,	ओप	₹.	आहा.	साका.
						म.			व् ४			अत.	विना	गुऋ		क्षा.	,		अना.
-									ओं. १			अव.	ı			क्षायो.	}		
ı							I					I					1		
1		1		1						I	l ———		 1			1	1		

पन्जत्तीओ छ अपन्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्ष

ह पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, संझी-पर्योप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीयसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझांण, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार झान, सामायिक, छेदे।पस्थापना और परिहार- विशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेद्याएं, भावसे शुक्कछेद्याः भव्य- सिद्धिक, औपद्यामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

शुक्कछेदयावाळे अप्रमत्तसंयत जीवोंक आळाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, आहारसंझाके विना होष तीन संझाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

નં. ૪૬૮	गुक् लेइ यावाले	प्रमत्तसंयत	जीधोंके	आलाप.
न ४५८	गुन्छल्यनामाल	MA (1 (1 4 (1	3117171	-11/21/40

1	.	जी.	प-	प्रा.	सं -	ग	₹.	का.	यो.	विष	奪.	朝.	संय.	₹.	हे.	म∙	स.	सिंहा.	आ.	ਚ.
1	١	ર	ξq.	80	¥	₹.	ર	8	१ १	₹	8	8	ર્		द्र. ६		3	2	2	2
18	Я.	सं. प.	६अ.	u		н.	q.	त्र.	म. ४								आप.	सं.	आहा.	साका.
	1	सं. अ.	1			1			व. ४		l	श्रुत∙	छदा	विना.	गुऋ.	1	क्षा.	1		अना.]
1						1		Ì	ओ, १			अव.	पीरे-				क्षाया			1
1		1			1	1	İ		आ.२		1	मनः.		1						1
l						-	ļ							L						<u> </u>

नं. ४६९ शुक्लेक्स्याचाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, द्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

अपुन्वयरणप्पहुडि जाव सजोगिकेविल ति ओव-भंगो; तेसु सुक्कलेस्सा-विद-रित्तण्णलेस्साभावादो । अलेस्साणं अजोगि-सिद्धाणं ओव-भंगो चेव ।

एवं छेस्सामग्गणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धियाणं भण्णमाणे मिच्छाइद्विष्पहुडि जाव अजोगिकेविल चि ओघ-भंगो । णवरि भवसिद्धिया चि वच्चचं ।

अभवसिद्धियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, चोहस जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार झान, सामा-यिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेक्यापं, भावसे शुक्ललेक्याः भन्यासिद्धिक, औपश्रामिक आदि तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवर्ला गुणस्थान तकके गुक्ललेश्यावाले जीवोंके आलाप ओछ आलापके समान ही होते हैं, वयोंकि, इन गुणस्थानोंमें शुक्ललेश्याको छोड़कर अन्य लेश्याओंका अभाव है।

लेश्यारहित अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आलापोंके ही समान होते हैं।

इस प्रकार लेक्यामार्गणा समाप्त हुई।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिक जीवोंके आलाप कहने पर मिथ्यादृष्टि गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं। विशेष वात यह है कि भव्य आलाप कहते समय एक भव्यसिद्धिक आलाप ही कहना चाहिए।

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौद्हों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दृशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छ प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छ प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगहिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रक्य और भावसे

असंजमो, देा दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, भिच्छत्तं, सिण्णणो अस-ण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जनीओ पंच पज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसायं, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्त्र-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

छहाँ लेक्यापं, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्वः संज्ञिकः अमंज्ञिकः आहारकः अनाहारकः साका-रापयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अभव्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक भिथ्यादिष्ट गुणस्थान, सान पर्याप्त जीवसमास; छहां पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयांग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृष्य और आवसे छहों लेदयाएं, अभ्रष्ट्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिकः, असंक्षिकः आहारक, साकारापयोगी और अनाकारापयोगी होने हैं।

नं. ४७०

अमर्व्यासिद्धिक जीवांके सामान्य आलाप.

1	गु. ।	जी	q .	्रयाः	सं	ग.∤ इ	का	यो-	वे.	奪.	ह्या.	मय.	द.	हे	म.	स.	संक्षि-	आ	ुड.
ľ	9	18	६प.	10,0	81.	8 4	Ę	93	ą	8	₹	9	4	द्र. ६		9	२	२	२
-	मि.		६ अ.	9,0	1		1	आ,द्रि			अशा	અ <i>લં</i> .	चक्षु.	भा- ६	ઍ.				साका.
Ì			५प	८,६) '	İ		विनाः			1		अच.		}	i	अस.	अना.	अनाः
-			५ अ	७,५	}	1)	1							,
- {			४व.	₹,¥	; }		{	'			1				1	}	1		, 1
- (¥3ī.	8,3	l t			{ 1				į !							1
- 1		}	1	1		1	1	}			1	1. 1		}		1			1 1

नं. ४७१

अभव्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

, ग्र	जी-	q.	प्रा.	सं.	ग.	इ. का	योः	वि	あ.	柯]。	संय.	द.		भ स	साह्री.	आ.	ਭ.
9	· •	ξ	20	8	x	५ ६			8	₹	१	4	द्र. ६	1 1	3	*	, २ [
íп	पर्या	ષ	٩				म ४	1		यझा,	अस.	चक्षु.	भा ६	अ. मि			साका.
	1	¥	۷				व. ४	1				अच.			असं.	1	अना,
1)		৬				ऑ. र	11				Ì		1		1	1
1		l	६४	,			व १	1 1								1	

तेर्सि चेव अपजनाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, अवपन्जनीओ पंच अपन्जनीओ चत्तारि अपन्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; अभविसिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

णेव-भवसिद्धिय-णेव-अभवसिद्धियाणमोध-भंगो ।

एवं भवियमगणा समता।

सम्मत्ताणुवादेण सम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणहाणाणि अदीद-गुणहाणं पि अत्थि, वे जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पजतीओ छ

उन्हीं अभग्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याहि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, बार अपर्याप्तियां, सात अपर्याप्तियां, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; बारों संझापं, चारों गितयां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र, और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कचाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेह्यापं, भावसे छहों लेह्यापं; अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

भव्यसिद्धिक और अभन्यसिद्धिक विकर्णोंसे रहित सिद्ध जीवोंके आछाप भोघ भाळा-पके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई।

सम्यक्त्यमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अदि-रतसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान तथा अतीत-गुणस्थान भी है, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास-

नं. ४७२ अभन्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। ग्र∙_	जी.	٩.	সা_	सं.'	ग,	₹.	का,	यो-	वे.	ず.	गा-	संय.	द.	हे.	स.	स.	संबि.	ना.	₹.
₹.	9	ફઅ.	v	٧,	8	4		₹ .		R	ર	i 🐧		द्र. २				3	2
मि.	5	५ अ. ४अ.	છ					औ.मि					चश्चु.	का.	अ.				सका.
1	क	४अ.	Ę					वे मि.		!	कुथु.		अच.	श्च.			असं.	अना.	अना.
1		Ì	4			1		कार्म.						मा. ६					
			Y		- 1	- 1													
1_	'	`	₹	1		Ì				t		1	1		1	<u> </u>			1

अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस पाण सत्त पाण चत्तारि दो एक पाण अदींदपाणा वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ सिद्ध-गदी वि अत्थि, पंचिंदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमा- संजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भव-सिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा न

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि,

स्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां और अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है। चारों संक्षाएं तथा सीणसंक्षास्थान भी है, चारों गितयां तथा सिद्धगित भी है, पंचोन्द्रयज्ञाति तथा अनिन्द्रयत्वस्थान भी है, पत्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, पांचों क्षान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रष्य और भावसे छहों लेश्याएं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक तथा भव्यासिद्धिक और अभ्रज्यासिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, औपद्यासिद्धक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं सम्यन्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--अविरतसम्यन्दि गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दश, चार, दो और एक प्राणः चारों संक्षाएं तथा क्षीणसंक्षास्थान भी है, चारों

न. ४७३ सम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

, 3 .	जी.	q.	प्रा-	सं.	η.	₹.	का.	यो.	वे.	奪.	ह्या.	सय.	ζ.	ਲੇ.	भ.	स.	संक्रि.	आ.	उ.
११अवि-	२ सं.प∙	६प.	20 0	8	¥	*	ę	१५	₹	Y	4	v		द्र.६			2	વ	_ ২ _
से अयो.	सं. अ.	६अ.	. ૪ ે વે	Y	÷	पं.	衤.	<u>.</u> :	1	عم		65		मा-६	म.	ओप.	सं.	आहा.	साका-
i÷2	←	p.	. <u> </u>	स्रीवाह	12	Ju.	<u>सं</u>	अयोग	अवगः	अक्षा,		अनुम		द	1	क्षा.	अनु.	अना.	अना.
		- 1		35	(HV	쌸	क	No.		(%		<i>ਲ,'</i>		अलेश्य	3	क्षा. क्षायो.			' तथा-
adl.	अती	अती	1	,		र्ग स	8							<i>ਨ</i>					यु. व.

चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउन्वियमिस्सेण विणा चोहह जोग अहवा एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो णेव सिण्णिणो णेव असिण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्जता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवज्जत्ता वा^{भ्ण} ।

तेसि चेव अपन्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, एमो जीवसमासो, छ अपन्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

गतियां. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकिमिश्रकाययोग के विना चौद्द योग अथवा तीनों मिश्र योग और कार्मणकाययोगके विना शेष ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी हैं: तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, नारों कपाय तथा अकषायस्थान भी हैं, पांचों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रध्य और भावसे छहों छेदयाएं तथा अछेदयास्थान भी हैं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्य, सीझक तथा सिक्षक और असंक्षिक इन दोनों विकर्णोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ — छठवें गुणस्थानकी आहारकसमुद्धात अवस्थामें और तरहवें गुणस्थानकी केविलसमुद्धात अवस्थामें पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेपर आहारकिमश्र, औदारिकिमश्र और कार्मणकाय ये तीन योग पर्याप्त अवस्थामें भी बन जाते हैं। इसीश्रकार सयोगकेवलीके हो प्राणोंके संबन्धमें भी समझ लेना चाहिए।

उन्हीं सम्यग्हाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्हिष्टे प्रमत्तसंयत और संयोगिकेवली ये तीन गुणस्थानः एक संबी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्या- सियां, सात प्राण दो प्राणः चारों संबापं तथा श्लीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-

नं. ४७४ सम्यग्हिष्ट जीवोंके पर्याप्त आसाप.

j IJ.	जीः	प.।प्र	ा ∣ संः	ंग्.	₹.	का.	यो.	वे	ፋ.	#1 -	संय.	₹.	छे.	भ.	₹.	संक्रि.	आ.	उ. ,
११		€ ?	0 8		8	8		व	¥	4	છ		द. ६		at .	8	ર	2
	सं. प.				पंचे -	77.	वं मि	अपना.	-				मा-६	भ∙	ओप.		आहा.	साका.
स		(# (3				विना.	क	अक्षा.				र्देख:		क्षा.		अना	अनाः
अयो•			٠ -				अथवा						अलेश्य.		क्षायो.			तथा-
1	}		1	}	ļ	1	११म ₋ ४ व.४						.,	,				यु. उ.
1	}		1				औ. १							,	j			
}	\$				[वे. १		}					-				
			-				आ. १							}			i	

गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जता वा तदुभएण वा

उवरि असंजदसम्माइद्विप्पहुडि जाव अजोगिकेवाले ति ताव मूलोघ-भंगोः तेसिं सब्बेसिं सम्मत्तसंभवादो ।

जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्वीवेदके विना रोप दो वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कपाय तथा अकषाय-स्थान भी है, मित, श्रुत, अवधि और केवलक्षान ये चार क्षान, असंयम, सामायिक, छेदोप-स्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और श्रुक्त लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकर्णोंसे रहित, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपल् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ —यहांपर सम्यक्त्वमागंणाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए भाषसे छहां लेह्याएं बतलाई गई हैं, और गोमहसार जीवकाण्डके आलापाधिकारमें सम्यक्त्वमागंणाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए एक कापोत और तीन शुभ इसप्रकार चार लेह्याएं ही बतलाई हैं। परंतु गोमहसारमें ऐसा कथन क्यों किया यह कुछ समझमें नहीं आता, क्योंकि, आगे उसीमें वेदकसम्यक्त्वके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए छहों लेह्याएं कहीं गई हैं। संभव है यह लिपिकारकी भूल है जो बराबर यहां तक चली आई है। अस्तु, धवलाका कथन टीक प्रतीत होता है।

ऊपर असंयतसम्यग्दाष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती सम्यग्दाष्टि जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं; क्योंकि, उन सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंके सम्यक्त्व पाया जाता है।

अपर्याप्त आस्राप
: अपर्याप्त आर

₹.	जी∙ं	q.	श्रा-	सं-	ग.	Ę.	का.	यो.	वे-	क .	सा∙	सय.	ζ.	' ਲੇ.	म.	स.	, संक्रि.	आः	उ.
1	9	€34.	v	¥	8	9	9	8	3	R	18	¥	X	द्र. २	9	₹	9	ર	ર
अवि.	सं.अ.		ેર	Ħ,		q.	ন.	औ.मि.	ч.	÷	मॉते-	असं.		का.	₹.	ओप.	सं.	आहा.	साका.
त्रस.		1		भीवा				वै मि.	न.	नक्षा.	श्रुत.	सामा.		31.		क्षा.	अनु.	अना.	अना.
सयो.		1		86				आ।मि.	Ę	מי	अब.			मा ६		क्षायो.			तथा.
	<u> </u>	1						कार्म.	영		केव.	यथा.							यु. उ.

खहयसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणद्वाणाणि अदीदगुणद्वाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ अदीदपज्जनी वि अत्थि, दस पाण सत्त पाण चनारि दो एक पाण अदीदपाणो वि अत्थि, चनारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चनारि गईओ सिद्धगई वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियन्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायनं पि अत्थि, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चनारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चनारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, मनसिद्धिया णेव भव-सिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मन्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव अस-णिणणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्जना होंति अणागाहवज्जना वा सागार-अणागोरिहं जुगवदुवज्जना वा

क्षायिकसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी होता है, संझीप्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी हे, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गितयां तथा सिखगित भी है, पंचीन्द्रयज्ञाति तथा अनिन्द्रयस्थान भी है, त्रसक्ताय तथा अकायस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतिवद्यस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतिवद्यस्थान भी है, वारों क्षाय तथा अकपायस्थान भी है, पांचों झान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रिहत भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेह्याएं तथा अलेह्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रिहत भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोप्योगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे गुगपत उपगुक्त भी होते हैं।

नं. ४७६ क्षायिकसम्यग्दाष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अन्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अन्थि, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो णेव सिण्णणो णेव असिण्णणो वि अन्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगबदुवजुत्ता वा तां ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिष्णि गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दे। वेद अवगदवेदे। वि अत्थि,

उन्हीं श्लायिकसम्यग्दिए जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दिए गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवळी गुणस्थान तक ग्यारह गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राण और एक प्राणः चारों संझाएं तथा श्लीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रमकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदम्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, पांचों सम्यग्लान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावने लहों लेक्याएं तथा अलेक्यास्थान भी है, भव्यत्विद्धक, क्षाधिकसम्यक्त, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अताहरकः साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगींने युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दिष, प्रमत्तसंयत और सयोगिकंवली ये तीन गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संवाएं तथा क्षीणसंवास्थान भी है चारों गतियां, पंचे-निद्यजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, खीवेदके विना दोष दो वेद तथा

मं. ४७७	क्षायिकसम्यग्दाष्टि	जीवॉंके	पर्याप्त	आलाप.
न. ४७७	क्षायकसम्यग्दाष्ट	जावाक	पयाप्त	आलाप

्र । जी प्रश्पाः सं । ग. इं. ।		द. ∣ले. मः∣सः ¦सिक्स	. आ. ह.
18 5 E 80 8 8 8	१ शेम ४ ३ ४ ५ मात. ७	४ द्र. ६ १ १ १	२ २
अबि.सं.प. 📴 प.	वु ४ 📻 📻 अुत	भा६ म क्षा स	आहा. साका.
₩. <u>₽</u>	ओ. १ के हैं अब.	अले अनु,	अना अना
अयो.	वे. १ ं मनः.		तथा.
	आ. १ कत्र		्रु सु. स

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दन्त्रेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णकाउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वां व

"खइयसम्माइड्डीणं असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जन्तीओ छ अपज्जन्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-

अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है, मित, श्रुत, अबिध और केवल झान ये चार झानः असंयम, सामायिक छेदोपस्थापना और यथाख्यातिवहारगुद्धिसंयम ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुह लेद्याएं, भावसे जघन्य कापोतः तेज, पद्म और ग्रुह लेद्याएं, भवसे जघन्य कापोतः तेज, पद्म और ग्रुह लेद्याएं, भव्यसिद्धिक, अधिकसम्यक्त, संक्षिक तथा अनुभयस्थान, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगें से ग्रुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

क्षायिकसम्यग्दि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—पक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्यासियां: दशों शाण, सात प्राणः चारों संबाएं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय,

नं. ४७८ क्षायिकसम्यग्दिष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलापः

गु.	जीः	q.	श्रा.	स	11	\$	का	यो.	्वे.∣क.	ज्ञा	सय.	₹.	ੂ ਲੇ.	्भ	. स	. मोज्ञे	आ	∣ ਫ. ੂ
३	ş	६अ	9	8	8	*	8	8	1216	x	x	X	द्र२	€1. ₹	8	*	?	२
अवे.	₩.		A seed	Þ.		ġ.	¥.	जा. भि.		मान	अम		यु. भ	। ह। म	क्षा	मं	आहा.	साका.
प्रम सयो.	H.		-	क्षीणस.				व. मि		श्रुत	मामा.		का. ते	न		अनु	अना.	अना,
सयो.	H		1	100				आ.मि	1=10	अव.	छदी.		प म.					तथा
<u> </u>			1 + 1				-	कार्घ.	स्	केव.	HEIP	,	利寒					पू.इ.

नं. ४७९ क्षायिकसम्यग्हाप्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

ગુ.	जी.	q.	प्रा.	सं.]	ग.	₹.	का.	यो.	वे	क	न्ना.	संय.	<u>द</u>	ले.	म.	स.	साझे	आ.	₹.
१ ऑब.	२ स. प							- १३ श्रानद्वि						द्र ६ भा. ६		्र क्षा.	•	`	२ साकाः
	स. अ.					••		विना.			थृत. अव.		विना.		••	(' '	अना.

जमो, तिण्णि दंसण, दन्त्र-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेत्र पञ्जताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्ज-तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्त्र-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होंति अणागारुवज्जता वा

आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योगः तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शनः द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिकः आहारकः, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दाष्टे असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दाष्टे गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्षियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद चारों कवाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यतिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४८० क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	q .	प्रा₊∣ सं,∤	ग्,∣ई.	का-	यो•	वे. क	₩1.	संय.	द.	हे.	स.	स.	संक्रि.	आ.	ਰ.
8	*	Ę	१०।४	8 8	2	१०म.४	३ ⊹४	₹	8	3	द्र. ६	1	٤	१	٤	2
अवि.	सं.प.	i		٩.	100	व. ४	1 .	मति-	अस.	के. द.	मा ६	म-	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
					ir.	ओ र	, ,	अत.		विनाः						अनाः
1						वै. १		अव.	1	I		Ì	Ì		Ì	

नं. ४८१ क्षायिकसम्यग्द्यष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	٩.	प्रा.	स	ग.	ŧ.	का.	यो.	वे.	क.	हा	सिंय-	द.		हे.	स.	_स.	संक्रि	. आ•	ੱ ਚ.
1	2	Ę	৩	X				্র		-	ą				का.		ş	₹.	7	ર
अ.	ক	अ				ч.	ন.	ओ.मि			ति.						क्षा.	सं.	आहा.	साका.
	#							वै.मि.	न.		श्रुत.	!	विना	का •	तेज.				अना-	अना.
								कामे.			अव.		1	1	ाडा.					1
		1											1	। इ	唐					

तेसिं चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्ण जोग, इत्थिवदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णकाउ-तेउ पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा"ं।

खइयसम्माइट्ठीणं संजदासंजदाणं भण्णमाणे अतथ एयं गुणद्वाणं, एगो जीव-ममासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संशी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संशापं, चारों गितयां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन श्लान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यंस कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं: भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

श्लायिकसम्यग्दाष्टि संयतासंयत जीवोंक आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनायोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, एक और गुक्क लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, श्लायिकसम्यक्त, संक्षिक, आहारक,

नं. ४८१ क्षायिकसम्यग्दिष्ट असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. जी. प. प्रा.	सं, ग. इ का यो वे. व	हाः संय, द. है. म. स	संक्रि आ ह.
	४ ४ १ ६ ३ २ ४		१ २ २
अवि.सं. अ. अ	प. त्र. आभि पु.	- बति असं. केद.का.यु. म ् क्षा .	सं. आहा साका.
	व मि. न.	श्रत∙ विनामा-४	अना अना.
	कार्म.	अव. का.	
	i i	तेज.	' +
!		पद्म.	
		33%.	

सिणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा'े ।

खइयसम्माइद्वीणं पमत्तसंजदप्पहुडि सिद्धावसाणाणं मूलोध-भंगो। णवरि सन्वत्थ खइयसम्मत्तं चेव वत्तन्वं।

"वेदगसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, बेदगसम्मत्तं,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानरी लेकर सिद्ध जीवीं तकके प्रत्येक स्थानवर्ती क्षायिकसम्यग्दि जीवींके आलाप मूल ओघ आलापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि सम्यक्त आलाप कहते समय सर्वत्र एक क्षायिकसम्यक्त्व ही कहना चाहिए।

वेदकसम्यग्दाप्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर — अविगतमम्यग्दाप्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक चार गुणस्थान, संकी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दक्षों प्राण, सात प्राण: चारों संबाणं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, लेदोपम्थापना और परिहारविद्युद्धि ये पांच संयम: आदिके

नं ४८२

क्षायिकसम्यग्दाष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

IJ.	जी	ч.	प्रा∙्स-	¶.	₹. ₹	हें हैं	यो	1	वे. क	शा	संय.	े द.	ਲ.	म.	_स.	्सं शि	্ৰা.	ਰ.
٩	۱	q	30 8	19	9	4	8		3 8	3	1	् ३	ड़. ६	9	9	9	9	२
in the	: ₅	-		4.	q.	7	स.	8	1	मात्-			भा.३		क्षा.	़स.	आहा	साका.
/le	1	;			1		a .	8		બ્રહ્		विना.	जुम.	!		f		अनाः
1	1	}		1	,		आ	٩ '		গ্ৰ-			1	i				! !
1					1			1	i			1	1			1		1 1
1	1	1		}	1 1			1		- {	1	1	1			ì	1	1

नं. ४८३

वेदकसम्यग्टाप्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी-	q	श्रा,सं.	्ग- इ	. का.	यो	वे.।	क	S T	मंय.	द.	∫ छे.∤	H.	स.	मिन्नि.	आ.	ਤ.
8	ર	ξq.	90 8	8 4	१	₹'₹	3	8	Х	4	3	द्र. ६	₹ :	8	7	ર	२
आवि.	सं. प.	६अ.	10	q.	₹.		ĺ		मति	असं	केद	भा ॄ६ ।	ਜ.∤	क्षायो	स.	आहा.	साका.
से.	सं. अ.							.	श्रुत.	देश.	विना	! ;	ļ			अना.	अना.
अप्र.	}				1				अव	सामा.	l l			į			
1	1		1					;	मनः	छेद ो.	Ì						
<u> </u>	<u> </u>		1	1	1]	1		परि.		11	1		,		

साण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासी, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगमम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेत्र अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ; देवगदि-मणुसगदी। कद-करणिज्जं वेदगसम्माइहिं पद्म णिरय-तिरिक्खगईओ लब्भंति। पर्चिदियजादी, तसकाओ,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावते छहीं छेश्यापं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों वेदकसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहेने पर—अविरतसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके चार गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, पर्याप्तकालमावी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों प्रपाद, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहागविद्युद्धि ये पांच संयमः आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यतिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्तकाळसंबन्धी आळाप कहने पर—अविरतसम्यग्दिष्ट और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां होती हैं, क्योंकि, वेदकसम्यग्दिष्टेके अपर्याप्तकाळमें देवगाति और मनुष्यगति तो पाई ही जातीं हैं, किन्तु इतकृत्य वेदकसम्यग्दिष्टकी अपक्षासे नरकगति और तिर्यंचगति भी पाई जातीं हैं। पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, अपर्योप्तकाळभावी चार

नं. ४८४ वेदकसम्यग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्त आलापः

ागु.	जी-	पर्भश्राः। सं	ग,¹ इ	का यो.	वे. व	क.∣ झा.	्सय.	[।] द.	े हैं. म	स. सिंहा.	आ.	₹.
8	8	६ १० ४	1818	१ ११	1 2 1	ช ชื	4	' ३	戻 年 9.	٤ ٤	१	2
अवि	5	I	ď,	_! त. [!] म-४	. [मान				क्षायाः सः	आहा.	साका-
से.	· H.			व. ४	; 1	श्रुत.	देश.	विना.	1 '			अना.
अप्र.			,	ओ. १		अव	सामा.					l
1			, [वि १		मनः.	छदा.			,		
				आ.१			परि.					1 1
	1	1						<u> </u>	1	i		

चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दृव्वेण काउ-सुक्कलेस्नाओ, भावेण छ लस्माओ; भवसिद्धिया, वेदग-सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्ति।

वेदगसम्माइहि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपन्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंगण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा'ं।

योग, स्तिवेदके विना शेष दे। वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयमः आदिके तीन दर्शन, इच्यसे कापीत और शुक्क लेश्यापं, भावने छद्दों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण: चारों संझापं, चारों गित्यां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक-काययोगिहिकंक विना दोष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय. आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छद्यापं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगा और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४८५

वेदकसम्यग्दाप्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

									ले ⊦म.स			
3	१ ६ अ.	9 8							द्रिस्थ १			
अवि.	स.अ.		ı	q.		मात.	अस	क, द	का. भ. क्षा	गेत सन	आहा.	साकाः
त्रम.					वं मि				शु.।	-	अना.	अना
					आ.मि.	अवे.	छदा		मा ६			
İ	Ì				कार्म				Ì	ì	1	

નં. ૪૮૬

वेदकसम्यग्दाप्टे असंयत जीवांके सामान्य आलाप.

्रा, जी∙	प. प्रा	सः। गः इ	का य	- -	क	啊.	मय द	∣ ਲੋ.	भ∙, स-	साझे.	आ. उ.
		8 8 8	1		R	1 -	१ ३	द्र.६	8 2	P	२ २
अबि⊹ स₊प₌	६अ ७	ď,				मति.			भ-क्षाया-	स.	आहाः साकाः
स अ			ी वि	ना.		श्रुत.	विना				अना. अना.
			,			अव.	1	i	I		
			1					1	1		

तेसिं चेव पज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

"तिसं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दक्वेण

उन्हीं बेद्कसम्यग्दि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तयां, दशों प्राण, वारों संबाएं, वारों गितयां, पंचेन्द्रियजानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग थे दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृष्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्य, संबिक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोने हैं।

उन्हीं वेदकसम्यन्दि असंयत जीवोंके अपयोष्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यन्दि गुणस्थान, एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तयां, सात प्राण, चारों संबाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुष और नषुंसक ये दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान,

नं. ४८७ वेदकसम्यग्टाप्ट असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

] गु∙	जी.	4	प्रा । स•	ग. ह	相.	यो।	, वे.	죵.	啊.	सय	द.	ਲਂ.	भ	म.	संहि	आ.	ਰ.
,		Ę	8 08	8 8	8	१०	3					द्र६		7	8	. ?	2
अवि.	स.प			P	त्र.	स. ४			माति	अस.	क. द.	सा. ६	₩.	ક્ષાયો.	सं.	आहा.	साका.
1			ţ	i		व. ४	1		श्रुत		विना.						अमा.
1					1	ગો. ૧	i	í	अव.		f						1
<u> </u>					,	व. १	1	i	1								

नं. ४८८ वेदकसम्यम्हिए असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ŋ.	जी.	٩.	प्रा.	₹.	η.	₹.	का.	यो.	वे. क	5.	ह्या .	सय.	द.	ਲੇ.	भ.	. स.	संक्रि	आ.	ਤ.
१ अवि.	*	Ę	હ	X	X	R	۶	₹	②	ሄ	₹	8	₹	द्र. २ का.	₹		8	ર	ર
						•		वै. मि कार्भः	. नं		श्रुत. अव.		विनाः			•			अना.
1																	1		

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेदगसम्माइड्डि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंगण, दन्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगमम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होंति अणागारुवज्जता वां।

वेदगसम्म।इ।द्व-पमत्तसंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण,

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क हेश्याएं, भावसे छहों हेश्याएं। भष्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

वेदकसम्यग्हिष्ट संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणम्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यवगित और मनुष्यगिति ये दो गातियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन क्षान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेद्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेद्याएं: भ्रव्यासिद्धिक, वेदकसम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वेदकसम्यग्द्दाप्टे प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहा पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संझांण, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग अंतर आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योगः

नं. ४८९ वेद्कसम्यग्दाप्टे संयतासंयत जीवोंके आलाप.

। ग्र		जी.	q.	प्रा.	सं.	ग्.	₤."	का.	यो.	वे.	क,	, शा.	सय.	ζ.	ਰੇ.	भ.	₹.	सिंहा.	आ.	₹.
1.3	٠ .	₹	Ę	\$ 0	ጸ	3	8	8	8	₹	X	₩ C	. 8	্₹	द्र ६	8	y	8	₹.	२ साका.
द	श.स	र. प ∙															क्षामा.	₩.	आहा.	
						म.			व. ४ ओ. १			थुत. अ व.		ાવના.	शुभ .					अना.
ł																				1

तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्त्रेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{र्ण}ा

वेदगसम्माइहि-अप्पमत्तमंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंतिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुहलस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेदयाएं, भावसे तीन शुभ छदयाएं। भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वेद्कसम्यग्दि अप्रमत्तसंयत जीवोंक आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंबाक विना शेष तीन संवापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और ओदारिककाययोग ये ना योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिक चार बान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं छेश्याएं, भावसे तीन शुभ छेश्याएं; भन्यसिद्धिक, वेद्कसम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४९० वेदकसम्यग्दिष्ट प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

Ŋ,	जी.	q,	प्रा	₹.	ग्र	₹.	का.	या.	वे.	邨.	श्चा.	सय.	द.	ਨੇ	भ	स	सं।ज्ञ.	आ.	उ. ∣
₹	- 2	६प.	70	8	۶	*	7	8 %	₹	_	8	-		द्र, ६		,	₹	₹	ર
نيا	स.प. सं अ	६अ.	৩		म.	, कि	٠	म. ४ व. ४							₽.	क्षायाः	स.	आहा.	साका.
E	सं अ.					Ъ	K.	व, ४			श्रुत	छद्।.	विना	गुभ					अना
\								ઓ. ર			अव.	र्पार.							
	1							आ. २			मन								1

नं. ४९१ वेदकसम्यद्दष्टि अव्रमत्तंसयत जीवोंके आलाप

	र्जा.																	आ.	उ. ।
1.5	₹	Ę	१०	3	٠ १	Ę	₹	٩,	₹	४	R	₹	₹	द्र. ६	9	१ _	*	१	2
अप्र.	स. प.			भय	म.	ip.	H.	H. R			मति-	सामा.	के.द.	भा. ३	म.	क्षायो.	्सं	आहा.	साका.
1				म.		יש	II.	व्. ४					विना.	भ्रम.			1	1	अनाः
1				परि				ओ. १			अव.	परि.					1 :		- 1
											मनः.						•	l 	

उवसमसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अतिथ अह गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जजीओ छ अपज्जजीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अतिथ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्स-आहार-आहार-मिस्सेहि विणा बारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अतिथ, चत्तारि कसाय उवसंत-कसाओ वि अतिथ, चत्तारि णाण, परिहारसंजमेण विणा छ संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होंति अणागारुवज्ञत्ता वा

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि अद्व गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

उपशमसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दि गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकपाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राणः चारों संक्षाएं तथा उपशान्तपरिष्रहसंक्षा भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जमकाय, औदारिक मिश्रकाययोग आहारककाययोग और आहारक मिश्रकाययोग इन तीन योगोंके विना शेष बारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा उपशान्तकपायस्थान भी है, आदिके चार क्षान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना शेष छह संयम, आदिके तीन दर्शन, दृष्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपश्रमिक सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपशमसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अवितसम्यग्दिष्ट गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकपाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संझाएं तथा उपशान्तपरिश्रहसंझा भी है, वारों गितियां, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, वारों मनोयोग, वारों वचनयाग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, वारों कथाय तथा

नं. ४९२ उपरामसम्यग्दाप्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु∙∣जी., प∙	प्रा-्स ∤ र	ग⊹्इ.∣क	ं यो∙ा	वे. क. झा.	संयः दः	ले. मि. स.	संज्ञिः आः छः
आंव स.प. ६अ	१० ४	४ । १ प. त्र	१२ म. ४	३ ४ ४	पीर कि. द. 🛭	इ. इ. १. १ माइ.म.⊨ ऑप.	१ २ २ सं आहा साका. अना अना.
से स.अ. उप-	ad.		त्र. ४ औ. १ वे. २	हैं हैं शित्र शब्द मनः	विनाः विनाः		Julia Julia

कसाय उवसंतकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, छ संजम, तिण्णि दंसण, दन्त-मावेहिं छ हेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमयम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क- हेस्सा, भावेण तिण्णि सुहहेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्जता होंति अणागाहवज्जता वा

उपशान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, परिद्वारिवशुद्धिसंयमके विना शेष छद्द संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहीं लेश्याएं, भव्यसिद्धिकः औपशमिकसम्यक्त्य, संज्ञिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वेते हैं।

उन्हीं उपरामसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अवि-रतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चाराँ संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैक्षियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये हो योगः पुरुष्वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत्त और शुक्क लक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क ये तीन शुभ लेक्ष्यापं: भन्यसिद्धिक, भौपश्मिकसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं.	823
44.0	A 24

उपरामसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

યુ-	जी.	φ.	त्रा.	स.	ग,	₹.	का,	यो	वे.	क.	शा.	सय.	द.	ले.	स.	स.	साह्ने.	ंआ.	8.
८ अवि	101	६	20	H. A	8	₹ प	१ त्रे.	१० म. ४	ar (h)	₩. 8	४ मति.	६ पीरे	्र के.द	मा. ६	₹.	्र ओप.	्र . सं.	१ आहा.	२ सा का .
से • उप.				्य ।				ब. ४ ओ. १ ब. १		3d.	श्रुत. अत्र. सनः	।वना	. विना						अना.
1	1 1															1		,	

नं. ४९४

उपशमसम्यग्दाप्टे जीवोंके अपर्याप्त भालापः

्र गु∙	जी-	ष. ्रप्रा-	सं । ग	इं. व	ग⊣ यो-	वे.	क.∤ झा-	सय.	₹.	ે ∂.	म.	₹.	, सिक्	आ.	ਵ.	l
		६अ. ७	8 6	9	۹ [٦]	9	४ ३	9		द्र. २	_	9	3	ર	3	I
अवि र	1.अ.	1	दे.	प न		4.	मति-	असं.	क.द	का.	भ∙	आप.	सं.	आहा.	साका.	١
1	1	1 1		1	कार्म.		श्रत.		विनाः	য়∙				अना.	नना.	١
		1 1] .			अव.	ł		भा∙ ३	ì					l
l			1		Ì	1	(')		∖ शुभु ~	,1					ł

उवसमसम्माइट्टि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जत्तीओं, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओं, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-जमों, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओं, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, साण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

"'तेसि चेव पजनाणं भण्णमाण अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज-चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस

उपशामसम्यग्दिष्ट असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौं प्राण, सान प्राण; चारों संबाएं, चारों गतियां, पंत्रिन्द्रयजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, ओदारिककाययोग, वैिक्रियककाययोग, वेिक्रियकिमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये वारह योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन बान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृश्य और भावसे छहां लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, औपश्मिकसम्यक्त्य, संक्रिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपदामसम्यग्दि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राणः चारों संबापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४९५ उपदामसम्यग्दि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	जी.	٩.	श्रा.	₹.	ग.	₽,	का.	यो.	ब.	क	ब्रा.	सय	द	ਲੋ.	भ	्स.	मान्ने	अा.	ਰ.
१ अवि.	२	ξЧ.	ţ o	8	8	*	, স.	_ १२	ą	¥	ঽ	,	₹	द्र. ६	*		2	२ आहा.	२ साकाः अनाः

नं. ४९६ उपरामसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प-, प्रा-∣ स.	ग्राइ. का	यो.	बे.∣क	ह्या.	∃सय.	द.	हे.	स.	स.	साझे.	आ.	₹.
8	₹ # 17		४११	1	₹ &	ξ π/3	\$	₹ à: ≠	द्र ६	, E	र योग	۶ تت	श	२ साका.
(अ)व.	सं.प-	1	4. HE	्व.४ ¦ ओ. १ ∫		भात- अ त.	⊣ અસ. -	क. ५. विनाः	का ५	4.	जाप,	4.	आहा.	अनाः
<u> </u>		,		वै. १		अव.								

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्व-भाषेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्रता होति अणागारुवज्जता वा।

तेसिं चेव अपजनाणं भण्यमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपन्नत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णिट्दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण तिण्णि सहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवज्जता होंति अणागाहवज्जता वां

उवसमसम्माइहि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी,

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चार्गे कपाय, आदिके तीन हान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ हेश्याएं, भव्यासिद्धिक, औपश्रमिक-सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारेपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपरामसम्यग्हिए असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्हिए गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति एंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकिमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, पुरुपवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और जुक्क लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और जुक्क ये तीन जुभ लेक्याएं, भव्य-सिद्धिक, औपरामिकम्मस्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उपशमसम्यग्दि संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थाम, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यवगित और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और

नं. ४९७ उपशामसय्यग्दप्रि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

े गु. जी. प. प्रा. स ग. ई. का.			सिक्किओं उ.
११६७४(१।१ १ ₩ # 3 दे. प. त	रे, .१/1४ ३ १	३ द्र.२ १ १ . क.द. का म.ऑप.	र २ २
के अ के के	कार्मः श्रुत.	विनाः शुः	अनाः अनाः
	अव.	भा ३	

तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४८}।

उवसमसम्माइहि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, मणपज्जवणाणेण सह उवसम-सेढीदो ओयरिय पमत्तगुणं पिडवण्णस्स उवसमसम्मत्तेण सह मणपज्जवणाणं लब्भिदि, ण मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइहि-पमत्तसंजदस्सः तत्थुप्पत्ति-संमवाभावादो । दो संजम, परिहारसंजमो णित्थि । कारणं, ण ताव भिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइहि-संजदा

भौदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेदः चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञानः संयमासंयमः आदिके तीन दर्शनः, द्रव्यसे छहां लेक्याएं भावसे तेज, एक और शुक्त लेक्याएं भव्यसिद्धिक, भौपशामिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपशमसम्यग्द्य प्रमत्तसंयत जीवों के आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग थे नौ योगः तीनों वेद, चारों कवाय, आदिके चार झान होते हैं। उपशमसम्यग्दिष्टके मनःपर्ययझान होता है इसका कारण यह है कि मनःपर्ययझानके साथ उपशमसम्यग्दिष्टके मनःपर्ययझान होता है किन्तु, मिध्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दिष्ट प्रमत्तसंयत जीवक मनःपर्ययझान नहीं पाया जाता है। किन्तु, मिध्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दिष्ट प्रमत्तसंयत जीवक मनःपर्ययझान नहीं पाया जाता है। काता है। क्यांकि, प्रथमोशमसम्यग्दिष्ट प्रमत्तसंयतके मनःपर्ययझानकी उत्पत्ति संभव नहीं है। झान आलापके आगे सामायिक, और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं; किन्तु परिहारिव-शुद्धिसंयम नहीं होता है। इसका कारण यह है कि, मिध्यात्वसे पीछे आये हुए प्रथमोपशम-सम्यग्दिष्ट संयत जीव तो परिहारिवशुद्धिसंयमको प्राप्त होते नहीं है; क्योंकि, सर्वोत्कृष्ट भी

नं. ४९८ उपरामसम्यग्दष्टि	संयतासंयत	जीवांके आलाप.
--------------------------	-----------	---------------

₫.	नी.	प. । प्र	स	ग,	₹.	का.	यो.	वे.	क	श -	सय.	द.	े ले.	म.	· F5	संद्यिः	आ.	उ.
2	\$	₹ ₹	8 0	١,٦	₹.	१	8	₹				₹				१	?	ર
देश.	सं. प.			ति.	q.	त्र.	म ४			मति.				भ.	ओप.	स∙	आहा.	साका.
			ì	म∙		- 1	व् ४			अ त •		विना.	गुम.					अनाः
			1	١ ,	Ì	1	औ. र			अव.]		ĺ	1			1	
			.	<u>.</u> . !							1						i j	_

परिहारसंजमं पिडविज्जंति; अइट्ट-उवसमसम्मत्तकालब्मंतरे तदुप्पत्तिणिमित्तगुणाणं संभवा-भावादो । णो उवसमसिद्धं चढमाणाः; तत्थ पुव्चमेवमंतोम्रहुत्तमिथि त्ति उवसंहरिद-विहारादो । ण तत्तो ओदिण्णाणं पि तस्स संभवोः; णट्ठे उवसमसम्मत्तेण विहारस्सा-संभवादो । तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सहलेस्साओः; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वां

उत्रसमसम्माइहि-अप्यमनसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तस-काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, परिहारसंजमो

प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालके भीतर परिहारिवशुद्धिलंयमकी उत्पत्तिके निमित्तभृत विशिष्टसंयम, तीर्थंकर-चरणमूल-वसति, प्रत्याख्यानपूर्य-महाणंवपटन आदि गुणोंक होनकी संभावनाका अभाव है। और न उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले जितीयोपशमसम्यग्दि जीवोंके भी परिहारिवशुद्धि-संयमकी संभावना है; क्योंकि, उपशमश्रेणिपर चढ़नेके पूर्व ही जब अन्तर्मुहर्तकाल शेष रहता है तभी परिहारिवशुद्धिसंयमी अपने गमनागमनादि विहारको उपसंहरित अर्थात् संकुचित या बन्द कर लेता है। और उपशमश्रेणीसे उतरे हुए भी द्वितीयोपशमसम्यग्दि संयत जीवोंके परिहारिवशुद्धिसंयमकी संभावना नहीं है; क्योंकि, श्रेणि चढ़नेके पूर्वमं ही परिहारिवशुद्धिसंयमके नए हो जानेपर उपशमसम्यक्त्वके साथ परिहारिवशुद्धिसंयमीका विहार संभव नहीं है। संयम आलापक आगे आदिके तीन दर्शन, द्वयसे छहां लेश्यापं, भावसे तीन शुभ लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपशमसम्यग्दि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्षके विना शेप तीन संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, वारों मनोयोग, चारों चचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं: किन्तु, परिहारियगुद्धिसंयम नहीं होता है।

नं. ४९९ उपरामसम्यग्दिष्ट प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा	al ")	η.	Ė	का.	यो.	ं वे.	事.	ह्या.	सय.	₹.	लं.	भ.	स.	साझे.	आ.	₹.
१		६ १०	- 1							8						1	*	ર
प्रम.	सं.प.		i	₹.	T	₹.	म. ४							म.	आप.	सं.	आहा.	साका.
	1						व. ४	1	į	श्रुत.	छेदो.	विना.	श्म.					अनाः
							ओं, १		 	अव.				1				
1								}		मन.,				}		1		
1			1					j.						i		}		1
1	1		i															

णितथा। उत्तं च---

मणपज्जवपरिहारा उवसमसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एक्कपयदे णिथ ति य सेसयं जाणे ॥ २२९॥

तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वा ।

कहा भी है-

मनःपर्ययक्कान, परिहारविशुद्धिसंयम, प्रथमोपशमसम्यक्त्व, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोग इनमेंसे किसी एकके प्रकृत होनपर शेषके आलाप नहीं होते हैं: ऐसा जानना चाहिए ॥ २२९ ॥

विशेषार्थ — गोमहसार जीवकाण्डमें भी यही गाथा पाई जाती हैं। परंतु उसमें 'उवसमसम्मत्त ' के स्थानमें 'पढमुवसम्मत्त ' पाठ पाया जाता है जो संगत प्रतीत होता हैं। क्योंकि, प्रथमोपरामसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययक्षान, परिहारविशाद्धिनंयम और आहारद्विक इन सबके होनेका विरोध है औपरामिकसम्यक्त्वके साथ नहीं। यद्यपि औपरामिकसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयम और आहारद्विक नहीं होते हैं फिर भी द्वितीयोपरामसम्यक्त्वकी अपक्षा औपरामिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययक्षानका होना संभव है, इसिलये गाधामें 'उवसमसम्मत्त ' ऐसा सामान्य पद रखनेसे औपरामिकसम्यक्त्वके साथ भी मनःपर्ययक्षानके होनेका निषेध हो जाता है जो आगम विरुद्ध है। तो भी 'उवसमसम्मत्त ' पदका अर्थ प्रथमोपरामसम्यक्त्व कर लेने पर कोई दोष नहीं आता है यही समझकर पाठमें परिवर्तन नहीं किया है।

संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेखाएं, भावसे तीन ग्रुभ लेखाएं, भव्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ मणपञ्जन परिहारी पदमुवसम्मत्त दोष्णि आहारा । एदेसु एकपगदे णित्य चि असेमयं जाणे ॥ गो. जी. ७२९.

नं. ५०० उपरामसम्यग्दिष्ट अप्रमत्तसंयत जीवोंके आळाप.

गु.	जी. ।	q.	प्रा.	₹.	ग.	₹.	का.	यो-	∣वे.	ক_	श्रा-	संय-	द.	ਰ•	म.	स.	साझे.	. आ.	_ ਤ.
٤ .	१ सं.पः	Ę	१०	र्बे आदा	₹.	8	१ त्र-	९ म४	₹	R	४ माति	र मामा	₹ ₹	द्र.६ गाः ३	ξ π	्र	₹ zř	अगरा	२ साका.
<u>फ</u>				विनाः	7 1 ·	٠.		न ४ व. ४ ओ. १			धत. अव.	छदो.			गः।		4.	011611	अना.
_											मनः.							ı	

अपुन्तयरणप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ ति ताव ओघ-भंगो । णवरि सन्वत्थ उवसमसम्मत्तं भाणियन्वं।

मिच्छत्त-सासणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ओघ-मिच्छाइद्वि-सासणसम्माइद्वि-सम्मा-मिच्छाइद्वि-भंगो ।

एवं सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

पाधण्णपदे अवलंबिज्जमाणे सच्वाणुवादाणं मूलोघ-भंगो होदिः तत्थ सच्व-वियप्प-संभवादो । गुणणामे अवलंबिज्जमाणे ण होदि । पाधण्णपदे अणवलंबिज्जमाणे असंजमादीणं कधं गहणं १ णः विदरेगमुहेण संजमादि-परूवणद्वं तप्परूवणादो । तेण दोण्णि वि वक्खाणाणि अविरुद्धाणि । एसत्थे। सच्वत्थ वत्तव्यो ।

सिंणयाणुवादेण सण्णीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पन्जनीओ छ अपन्जनीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि

उपशामसम्यग्दिष्ट जीवेंकि अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती जीवेंकि आलाप ओघ आलापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि सम्यक्त आलाप कहते समय सर्वत्र उपशामसम्बन्ध ही कहना चाहिए।

मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वके अलाप क्रमशः मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्निथ्यादृष्टि गुणस्थानके आलापोंके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई।

प्राधान्य पदके अवलंबन करनेपर सभी अनुवारों के आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं; क्योंिक, मूल ओघालापमें विधि प्रतिपेधकप सभी विकल्प संभव हैं। किन्तु गौणनाम- १ पदके अवलंबन करनेपर सभी विकल्प संभव नहीं हैं; क्योंिक, इस नामपदकी दृष्टिसे गुण- के नामोंके भंगोंके ही आलाप कहे जायेंगे, दूसरोंके नहीं।

शंका — ते (फिर प्राधान्यपदके अवलंबन नहीं करनेपर संयमादिके प्रतिपक्षी असंय-मादिका ग्रहण कैसे किया जा सकता है?

समाधान — नहीं; क्योंकि, ब्यतिरेकडारसे संयमादि विकल्पोंकी प्ररूपणाके लिए ही असंयमादि विपक्षी विकल्पोंकी प्ररूपणा की जाती है; तभी विवक्षित मार्गणाडारा समस्त जीवोंका मार्गण हो सकता है, अन्यथा नहीं। इसलिए संयमादि अन्वयरूप और असंयमादि व्यतिरेकरूप दोनों ही व्याख्यान अविरद्ध है। यही अर्थ सभी मार्गणाओंके विपयमें कहना चाहिए।

संज्ञी मार्गणाके अनुवादसे संज्ञी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा शीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

'तिसि चेव पज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासा, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकमाओ वि अत्थि, सत्त णाण, मत्त संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ

त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वद् तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, केवलकानके विना रोप सान बान, सातें। संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भन्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनुकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संबी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संबी पर्योप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं तथा क्षीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, केवलबानके विना शेष सात बान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक,

A. 408

संश्री जीवोंके सामान्य आलाप.

। य	जी	q	न्ना म	47	Ę	का.	यो.	वे क	शाः	सय	ζ.	ल ्भ•	स,	सक्षिः आः	3
१२ मि	ર	द्प ६अ		8	8	Ą			₍₉₎	g	३ ३.द.	-	Ę	१ २ सं आ हा	

नं. ५०२

संज्ञी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

जी.	प प्रा	स-।ग हि. क	ा यो.	वेक.। ज्ञाः	संय द हे.	म.। स.	सिन्न. आ	. ૩.
			रश्म-४	₹ ४ ७	७ ३ द. ६		?	₹
स. प		ું પાંચ	. व ४	_{हिं} ⊨ ^{कव} •	क.द मा ६	म∙ ।	स आइ	ा साका
		103	आं १	हि हि बिना	विना	अ.		अना.
	ļ.,	, gr.	बे. ≯	<i>7 7 7 7 7 7 7 7 7 7</i>			1	
		1	आ. १			}	1	
	₹	₹ 1€ 90	1 5 20 8 6 2 8	र हि १० ४ ४ १ १ ११म.४ सं. प प. ज. व ४ के जिल्ला के वे. १	र हि १० ४ ४ १ १ १ १ १ १ ४ ४ ७ सं. प प. त्र. व ४ हे कि विना	र हि १० ४ ४ १ १ १ १ १ १ १ ४ ७ ७ ३ द. ६ सं. प प. त्र. व ४ हे है केव. के.द मा.६ हो है जिना विना केट १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १	र हि १० ४ ४ १ १ १ १ म. ४ ३ ४ ७ ७ ३ द. ६ २ ६ सं. प प. ज. व ४ हे कि के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के के द मा ६ म । इंड के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के के द मा १ म । इंड के के के द मा १ म । इंड के के के के द मा १ म । इंड के के के के के के द मा १ म । इंड के के के के के के के के के के के के के	१ ६ १०४ ४ १ १ ११म.४ ३ ४ ७ ७ ३ इ. ६ २ ६ १ १ सं. प प. त्र. व ४ में केव. के.द भा ६ में आह ऑ १ के बिना विना अ.

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्चेण काउ-सुक्कलेरना, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञत्ता होति अणागारुवज्ञता वार्षे।

सिंग मिच्छाइद्वीणं भण्णमाने अतिथ एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

अमध्यतिद्धिक, छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी जीवोंके अपयोप्तकालसंबन्धी सालाप कहने पर—मिथ्याहाष्टे, सासावृत्त-सम्यग्हिए, अविरतसम्यग्हीए और प्रमत्तरं यत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपयोप्त जीव-समास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत, और आदिक तीव ज्ञान ये पांच ज्ञान; असंयम, सामाधिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीव दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेद्याएं, भावसे छहों लेद्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। सम्यग्निथ्यात्वके विना दोप पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संक्षी मिथ्यादि जीवें के सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, संक्षी पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशौँ प्राण, सात प्राण; वारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

नं. ५०३ संश्री जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी	q.	ঘা	मं	ग	इ	কা	यो. वे. क	मा	ं संग.	द.	ले	<u>म</u>	स.	महि	आ.	₹.
¥	۶	६अ	O	X	ć		ę		५ कुम.	. ₹	्रव्	द्र २	₹	ંષ્		1 2	2
मि	*					q	4,	अं। मि.	कुभ	अस	के द	₹J.	म	यम्य	सं.	आहा.	साका.
सासा	ě							व मि	मांत	वामा.	विनाः	য়ু.	3	ावना.		अना.	अमा.
अति.	T.		-	1				आ.मि.	श्रुत	छदो.		मा. ६		1			
प्रम	į.		_					कार्म	সর		[1	1	1	

असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे ।

तेसि चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हाँवे अणागारुवजुत्ता वाँवे

द्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रच्य और भाषसे छहों छेश्याएं, भध्यसिद्धिकः अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्वः संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संश्री मिध्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिध्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संश्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दृशों प्राण, चारों संश्रापं, खारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियककाययोग ये दृश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृष्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संश्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

,

संश्री मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु		जी-	प.	प्रा.	सं .	η.	Ę.	का.	यो.	व.	फ	झ्।	सय.	द.	ਲੇ.	भ.	स.	सिंग.	आ.	ਰ.	
1	۲	ર	६प.	१०	¥	8	ર	8	13	3	8	ર	۲_	ર	द्र. ६	3	8		ર	२	Ĺ
f:	ι.	सं. प.	€अ.	હ			q٠.	₹.	आ द्वि.	i		अज्ञा	असं .	चक्षु.	मा.६	म.	मि.	ंस.	आहा.	साका.	l
1		सं. अ.				1			विना.		i			अच.	1	37.		1	अनाः	!	l
									1		1			ı				!			
1														1	Ì						ı
																					ı

नं, ५०५

संश्री मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

L	गु.	जी⊹	q.	प्रा-	सं.	ग.	₹.	का.	यो.	वे.	奪.	₹1-	सय.	ा द.	हे.	म.	स.	सांश्	आ.	े ड. ,
ľ	₹.	1	Ę	१०	¥	¥	2	1	₹0	1		3	2		द्र. ६		*	8	2	2
ı	मि.	5					q.	त.	म. ४			अज्ञा.	असं.	च हु.	मा-६	भ.	मि.	स.	आहा.	'साका-
١		æ							व.४		,		I	अच.		अ.				अना.
١									औ. १				í							1
١									व. १					 				[.
1																				
	-	1			. ;		ı	'		- 1						l i		, ,		1

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

ँ (सिंग्निं-) सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जतीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

उन्हीं संज्ञी मिध्यादि जीवोंके अपयीप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपयीप्त जीवसमास, छहों अपयीप्तियां, सात प्राण, वारों संज्ञापं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, इच्यसे कापोत और गुद्ध लेदयाएं, भावसे छहों लेदयाएं; भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः मिथ्यास्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सबी सासादनसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दंशों प्राण, सात प्राण; चारों संबाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, श्रसकाय, आहारककाययोग-

प्रतिन्वतान्यत कोष्ठकान्तर्गतपाठं। नास्त्रीति क्षेयम् ।

÷	५०६	25	की	मिथ्यादृष्टि	जीवोंके	आक्रांत्व	श्राद्धात
न.	५०६	•	श्चा	ામથ્યાદાષ્ટ	जावाक	अपयाप्त	आलाप

गु.	जी प.	श्रा.	न-	ąŗ,	₹.	का	यो.	वे	ক.	हा.	संय•	_ द.	ਲੇ.	भ -	₹.	संक्रि.	आ.	ड.
	१ ६अ.	٥	8	8		?	₹	ર્		₹	<u>۶</u>	3	द्र.२	3	*	1	ર	2
ाम.	स .अ. [!]		}		ч.	4.	ओ. भि. वै.मि			कुभ. कुश्रु.		স ধ্যু. अचे.			141-	1	आहा. अनाः	साका. अनाः
	ļ		,				कार्म.			2.2.			मा ६	1			-1-11.	ખના
	1															1		

नं. ५०७ संबी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

1	-							यो.	वे.	क.	झा.	संय.	द.	ਲੇ.	म.	स.	्संक्रि.	आ.	g.
l		ર						₹₹.					ર	द्र. ६	1 -		2	3	2
	सा-	सं.प.	६अ.	v		प.	7.	आ.द्वि.			अज्ञा	असं.	चक्षु.	मा-६	म.	લાલા.	⊺सं.	आहा.	साका.
ì		स अ.		l i				विना.					अच.		1			अना.	अना.
1																			
1			,							-	ı								
İ		ļ	i		1	ι		- 1		1		1							

असंजमो, दो दंवण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्माओ, भवमिद्धिया, सासणसम्मत्तं, मिण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीत्रसमासी, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्ताि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमी, दो दंसण, दन्व- मानेहिं छ लेस्साओ, भन्नसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्ष

तेसिं चेत अपजाणां भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीतसमामो, ह अपजातीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिष्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिष्णि जोग, तिष्णि वेद, चत्तारि कसाय, दा अण्णाण, असंजमो, दा दंसण, दच्नेण

द्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अदिके दो द्वान, द्रव्य और भावले छहों लेश्याएं, भव्यानिद्धिक, सामादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संझी सासादनसम्यग्दिष्ट जीवों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमान छहीं पर्याप्तयां, दशों प्राण चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, अंदारिककाययोग मोर वैकिथिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दे। दशीन, दृष्य और भावसे छहां लेहवाएं, भव्यासिद्धिक, सानादनसम्यन्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संश्री सासादनसम्यग्टाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालनंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संशी-अपर्याप्त जीवसमान, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संशापं, नरकगतिके बिना दोष तीन गतियां, पंत्रीन्द्रयजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकि-यिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके हो अञ्चान,

न, प	100			4	श	सा	साद् नर	1+4	118	ह आ	वकि	पयाप	त आल	अप.	•			
। गु	जी,	q	प्रा.] मं,	ग.	Ť.	'কা	यो.	। वे	क	হ্যা∙	सय.	द	ले.	भ	म	मित्रि	आ.	₹.
9	3	9	1418	x	1				1	₹	1	٠,	द्र६	1 1	1	9	٩	2
सा.	P.B				q.	7.	म. ४		İ	अज्ञ ।	अस.	च श्रु	मा-६	भ	शस	स	शहा	1
							व ४ औ.१			١		अच	1					अना.
-0%	<u> </u>	1					बें. १											

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

(सिंप्ल-)सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्य एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जतीओ, दस पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणिहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंनण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, मविधिद्वया, सम्मामिच्छत्तं, सिंप्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जता वां ।

असंयम, आदि दे। दर्शन, द्रव्यमे कापोन और शुक्क छेर्याएं, भावसे छहीं छेर्याएं: भव्य-सिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

संज्ञी सम्यग्निण्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्निण्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचित्रियजाति, तमकाया चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और विक्रियक-काययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, अदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावने छहाँ लेदयापं भव्यसिद्धिक, सम्यग्निध्यात्व, संज्ञिक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ५०९ संज्ञी सासावनसम्यग्दि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग_	र्जा	Ų	भा.	म ग	. इ	का	यो	वे.]	屯	शा	मग	₹.	ਲ	म.	स	माज्ञ	137	₹.
1		, ե	O	8 4	۶.	1	३	1 2	8	₹.		*	3 .	1		7	ર	4
₩1,	य अ	, ্ল		ैन	q,							न क्षु	का	ਮ.₹	वाया	स	आइ।	माका.
	ł	ĺ		Ħ			वीभ			कु भ		भच .	য়.			Ì	अनः	अन्।
1	1			द		1	काम.						मा ६			1		ļ
	ļ	ì						1				l						
t		İ				'						i						
	1	1			_			1						ļ		1		- 1

नं. ५१०

संश्री सम्यग्मिण्यादिष्ट जीवाँके आलाप.

1 7	ं जी.																			
,	*	Ę	ζ.	8	8	8	y	y o	3	ĸ	, ব	>	ર	<u>द</u>	Ğ	3	þ	*	,	- 4
म∓य	स. प							म. ४												साका.
1								व. ४			₹		अच.							अना,
1								ओं. १	1		अझा					ı				
}		ļ						व. १			भिश्र			1		I				
1								_												İ

(सिंग्ण-) असंजदसम्माइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जतीओं, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओं, चत्तारि गईओं, पंचिंदियजादी, तसकाओं, तेरह जोग, तिंग्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिंग्णि णाण, असंजमो, तिंग्णि दंमण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओं, भवसिद्धिया, तिंग्णि सम्मत्तं, सिंग्णिणों, आहारिणा अणाहारिणों, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा "।

तेमि चेव पन्जचार्ण भण्णमाण अन्यि एयं गुणहार्ण, एओ जीवसमासा, छ पन्जचीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

संशी असंयमसम्यन्दि जीवोंके नामान्य आलाप कहो। पर—एक अविरतसम्यन्दिष्ट गुणस्थान, संजी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमान, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या- दित्यां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संजा है, चारों गतियां, पंचित्तित्रजाति, जनकाय, आहारक- काययोगिहिकके विना होच तेरह योग, कीवों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों होइवाणं, भव्यन्तिद्विद्ध और शिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी असंयतसम्यग्टीष्ट जीवेंकि पर्याप्तकाल नंबन्धी आलाप कहन पर—एक अविरतसम्यग्टीष्टे गुणस्थान, एक संजी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारौं संज्ञापं, चारौं गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारौं मनोयोग, चारौं वचनयोग, औदारिकः

नं. ५११ मंत्री अनंयतसम्यर्ग्डाष्ट जीवोके सामान्य आलाप.

۱ Ŋ.	जी.	पुत्र	मा	स	Į.	ą.	की	यो	ð	F	រ ជា្រ	सग	। द्	िले.	भ	_स_	मिल्लि	आ.	उ. २ साका
१	ે ર	ξų_ 9	0	6	ď	?	1	₹ ₹	₹	ď	ಶ	>	ঽ	इ.६	ę	3	X	۶	ે ર
अवि	स.प.	专州	v			Ţ,	٦.	आ दि			मान	अम	办。蜀	अ.ह	भ	अ।प	स.	आहा	साका
	स.अ.							[तन].			अन्.		त्रिना			क्षा-		अनाः '	अना.
ł											अव.					क्षायाः			
1													ı						. I

नं. ५१२ संज्ञी असंयतसम्यर्ग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्त आलाप.

्रा गु. बी. प प्रा स. ग. इ. का.	यो विकास	ाः मय दः	ले. भ स. सं	ह्रिअग.∣ उ.
१ १ ६ २० ४ ४ १ १	१० ३ ४	ર્વે ર	इ.६ १ ३ ः	१ १ २
अवि सं.प. प. त्र	स ४ मा	ते अस.क.द.	साः६म. ओप सं	. आहा. साका.
	व. ४ । श्रु		क्षा.	अना.
,	ओ. १ अ	त्र-	श्चायो.	
	व. १			

दम जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एशे जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, विण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्मा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

मंजदासंजद्प्पहुडि जाव खीणकसाओं त्ति नाव मुलोघ-भंगो।

काययोग और चैकियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संकी असंयतसम्यग्टिए जीवोंके अपर्याप्तकालखंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्टिए गुणस्थान, एक संकी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारों संक्षाएं, बारों गतियां, पंचीन्द्रयजाति, असकाय, औदारिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे काणेत और श्रृक्क लेदयाएं, भावसे छहों लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्य आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकपाय गुणस्थानतकके संबी जीवोंके आलाप मूल ओघ आलापोंके समान होते हैं।

नं. ५१३ संशी असंयतसम्यग्दीष्ट जीवोंके अपूर्याप्त आलाप.

गु. जी. प. प्रा. स ग इं. का यो. वं. क. ज्ञा. संय. द. हे भ. स. सांज्ञ आ उ. १ १ ६ ७ ४ ४ १ १ ६ ४ ३ १ ३ ४ २ १ ३ ४ २ १ अवि. सं अ. अ. पं. च. ओ मि पूं. मित. अस. क द. का. म. ओप. स. आहा. साका. वं भि. न अहा. विना. च क्षा अना. अना कार्स. अव. मा. ६ क्षायो असण्गीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, बारह जीवममासा, पंच पजन्तिओं पंच अपन्नत्तीओं चत्तारि पन्नतिओं चत्तारि अपन्नत्तीओं, णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्त रि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओं, तिरिक्खगदीं, पंच जादीओं, छ काय. चत्तारि जोग अवश्वमोगविचि-जोगों ओरालिय-ओरालियमिस्सकायजोगा कम्मइयकायजोगों चेदि, तिविण वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमों, दो दंमण, द्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओं; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणों, आहारिणों अणाहारिणों, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वार्ष ।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, छ जीवनमासा, पंच पज्ज-त्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, णव पाण अद्घ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चतारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंच जादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

असंबी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादाष्टे गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्तके विना दोष बारह जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, नो प्राण, सात प्राणः आठ प्राण, छह प्राणः सात प्राणः, पांच प्राणः छह प्राणः, चार प्राणः, चार प्राणः, तीन प्राणः चारों संबापं, तिर्यंचमाति, पांचों जातियां, छहां कायः, असत्यमृषाचचनयोगः, औदारिककाययोगः, औदारिकिमिश्रकाययोगः और कार्यणः काययोगः ये चार योगः तीनों वेदः, चारों कपायः, विभंगावधिज्ञानके विना दोष दे। अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शनः, द्रव्यसे छहां लेद्यापं, भावसे कृष्णः, नील और कापोत लेद्यापंः भध्यसिद्धिकः, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंज्ञिकः, आहारकः, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंज्ञी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमासोंमेंने एक संज्ञी-पर्याप्तके विना दोव छह पर्याप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां: नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्रण, छह प्राण, चार प्राणः चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पांचों जातियां, छहों काय, अनुभयवचनयोग, और औदारिककाययोग थे

नं. ५१४ असंबी जीवोंके सामान्य आलाप.

Ŋ.	जी.	ч.	য়া	स.	ग,	₹.	का.	यो.	वे.	क.	हा	मय	₹.	ેં.	म	म.	संक्रि.	্ঞা.	उ.
١,	24	149	3,0	8	$\widehat{\alpha}$	4	Ę	Y	₹	8	₹	٤	ર	द. ६	Ž		*	4	٦)
भि	मं प.	५३%	۶, ۶		'ते			व.भूनु. १			क्रम								साका.
- 1	म अ	Rd"	2,4					ં ઑં. ર			কৃষ্		अचे.	' ঝয়ু.	141.			अना,	अना
1	विना	४अ	₹,४					कार्म. १											. 1
}			18 3																

कसाय, दो अण्णाण, अमंजमो, दो दंयण, दव्येण छ लेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्माओ; भविविद्धिया अभविसिद्धिया, मिच्छत्तं, असिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवज्जता वांं।

तेमि चेव अपजनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, छ जीवसमासा, पंच अपन्जनीओ चत्तारि अपन्जनीओ, सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, पंचिदियजादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजमो, दो दंमण, दन्नेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह णील-काउलेस्साओ; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिन्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा "।

दो योगः तीनों वेद, चारों कपाय, कुमिन और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रुघ्यसे छहों लेश्याएं, भावने कृष्ण, नील आर कापोत लेश्याएं: भन्यासिद्धिक, अभन्यसिद्धिक। मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनग्कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंत्री जीवोंके अपर्याप्तकालमंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संत्री-अपर्यक्षके विना शेव छह अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्ति सियां; सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों सज्ञापं, तिर्यंचगित, पंचिन्द्रयज्ञाति, छहों काय, औदारिकमित्र ओर कार्मण कार्योग ये दे। योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दे। अज्ञान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यंन कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, अयानिद्धिक, अभव्यि दिकः, मिथ्यात्व, असंदिक, आहारक, अनाहारकः, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

નં. ५१५	असंश्री जीवेंकि पर्याप्त आलापः
ग. ५६५	अलशा जावाक पयाप्त आलापः

गु	<u>जी</u>	φ,	য়া.	स.	Ψ,	8	क {,	्या. २ व. अनु. १	ৰ.	T	हा।	मग	द	હે .	भ	स.	मक्रि.	आ	स.
1	Ę	ų:	9	ಕ	8	4	Ģ	3	₹	ಕ	4	٠	૨	4 4	4	۶		8	2
H	पर्याः	ሄ	6		त			व. अनु. १			हम	अस.	ন প্লু	मा. ३	भ	मि.	असं	भाइा.	साका,
1	स प.		ঙ					आ. १											
1	विना.		Ę														ſ		1
			¥														*		ļ

नं. ५१६ असंकी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी प-	্ব্য	सं.∤ग	इं.का. यो	वे ⊦क	ज्ञा-	सय	द	ले	भ	स.	_। संक्रि	आ.	ख.
٩	E 1431.	y.	8 9	4 8 2	३ ' ४	1	1	<	₫. ₹	े र	1	9	1	3
मि	अप ।४अ,	Ę	ાંતે !	अं। मि		कुम	अम	चक्षु	का.	म.	मि.	:स.	श्राहा.	साका
	स अ.	e _q i		कार्म.		দুপু.			. যু.	ા			अना	अन्।
1	विना	8		1		1			वा ३	•		1	1	
-	,	3 (ļ			अग्र.	.				

णेव-सण्णि-णेव-असण्णीणं सजोगि-अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो । एवं सण्णिमगणा समत्ता ।

आहाराणुवादेण आहारीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्टाणाणि, चोह्स जीव-समासा, छ पञ्जनीओ छ अपज्जनीओ पंच पज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि पज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण) पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, चोह्स जोग कम्मइयकायजोगो णित्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, छ मम्मत्तं, सिण्णणो असिण्णणो णेव सिण्णणो वि अत्थि, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारहें जुगवदुवजुत्ता वा "।

संक्षिक और असंक्षिक इन दोनें। विकल्पोंने रहित सयोगिकेवली, अयोगिकेवली और सिद्ध भगवानके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं।

इसप्रकार संज्ञी मार्गणा समाप्त हुई।

आहार मार्गणाके अनुवादंस आहारक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण; तीन प्राण; स्योगिकेवलीके चार प्राण और दो प्राण: चारों संक्षाएं तथा शीणसंक्षःस्थान भी है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चौदह योग होते हैं: क्योंकि, यहांपर कार्मणकाययोग नहीं होता है। तीनों वेद तथा अपगतथेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्य, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकर्णोंसे रिहत भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन उपयुक्त भी होते हैं।

१ श्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठी नास्ति ।

4910

*11	120				,	~11	QIC-	11 011.	-14-16			-	1111	•					
Į IJ.	जी :	q.	प्रा-	सं∙ी	ग	\$	का-	यो.	वि	क	श्रा.	सय	ς.	ले	म.	स_	संक्रि.	आ.	ु उ.
र३		ξq.	20,0	_}\	8	4	Ę	15.8	₹	¥	<	હ	8	द्र.६	3	Ę	1 3	?	3
मि	. '	६अ.	8,9	b.				काम	÷	41.	1			मा-६			1		साका.
से	15	५प.	1	क्षीणस.				विना-	अव	क्र					अ.		असं.		अना.
सया		५अ.	l. * *	1 20						'							अनु		तथा
1	i i	४प.					1										1		3
'	__	४अ.	A'S A'	ર	1 1				1									ł	1

आहारक जीवोंके सामान्य आलाए.

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जतीओ चत्तारि पज्जतीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, एगारह जोग, ओरालिय-वेउ व्विय-आहारिमस्स-कम्मइयकायजोगा णित्थ । तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अह णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंभण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागाह्यज्ञत्ता होति अणागाह्यज्ञत्ता वा सागार-अणागोरिहं जुगवदुवजुत्ता वा वि

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णिपाण दोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

उन्हीं आहारक जीयोंके पर्याप्तकाल मंबन्यी आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नी प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राणः चारों संझाएं तथा सीणसंझारधान भी है, चारों गितयां पांचों जातियां, छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग होते हैं; क्योंकि, यहांपर ओदारिकिमश्र, वैकियिकिमश्र, आहारकिमश्र और कार्मणकाययोग नहीं होते हैं। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, सिक्षक, असंद्धिक तथा संद्धिक और असंद्धिक इन दोनों विकर्गोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंस शुगपत उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं आहारक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्बग्दृष्टि, अविरतसम्बग्दृष्टि, प्रमत्तसंबत और सबोगिकेवली व पांच गुणस्थानः सात अप-र्याप्त जीवसमासः छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राणः चारों संक्षापं तथा श्रीणसंक्षास्थान भी

नं.	५१८	अहारक जीवोंक पर्याप्त आलाप
- 4 5	99.00	- 161/11 attached to 1611

गु.	जी.	प .	न्ना	1	स.)ग	इ	. का	यो.	ो बे	क.	ह्याः	संय.	₹.	ले.	. भ.	ेस.	संज्ञ	. সা.	ੁਫ਼∙
१३	y	ξ.	2,0	o	8 8	્ષ	Ę	११स.	४ ३	¥	6	ى	Х	民	ર્ ર	Ę	2	8	ર
मि	पर्या.	4	3	١,	<u>-</u> [व् ४	<u>.</u>	=	'	l I		मा-ध	म•		सं.	आहा.	साका
से		8	c	c	कार्वा			ગો. શ કો	ক	4					अ.		असं		अना.
पयो.			e	Ę	35	1		वें. १	1	ויפי							अनु.		तथाः
l	<u> </u>		8	¥		<u> </u>		आ. १	1			<u> </u>			,	ا 			य उ

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाण, चतारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्माओ; भविमिद्धिया अभविमिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वि, आहारिणो, सागारुवज्ञता होति अणागारुवज्ञता वा (सागार-अणागोरिह जुगवदुवज्जता वा)।

आहारि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चे हम जीवममासा, छ पज्जत्तीओं छ अपज्जत्तीओं पंच पज्जत्तीओं पंच अपज्जत्तीओं चतारि पज्जत्तीओं चतारि पज्जत्तीओं चतारि अपज्जत्तीओं, दस पाण मत्त पाण (णव पाण मत्त पाण अह पाण छ पाण सत्त पाण') पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चतारि पाण तिण्णि पाण, चतारि सण्णाओं, चतारि गईओं, पंच जादीओं, छ द्वाय, बारह जोग, कम्मइयकायजोंगों णत्थि। तिण्णि

है, चारें। गतियां पांचों जातियां, छहों काय, जे ह्रिकि मिश्र, चेकि येकि मिश्र और आहारकि मिश्र-काययोग ये तीन योग, तिनें। वेह तथा अप क्तिब्द स्थान भी हे चारों कपाय तथा अकपाय-स्थान भी है, विभंगावधि और मनः पर्ययक्षानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथास्यातिविहार अदिसंध्यम व चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत हेस्या, भावसे छहों हेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अनव्यसिद्धिकः सम्याग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सैम्यक्त्व, सिक्कि, असंज्ञिक तथा अनुमयन्थान भी है। आहारकः साकारोपयोगी और अना-किरोपयोगी तथा साकार और अनावार इन दानों उपयोगोंसे युगपत उपयक्त भी होते हैं।

आहारक मिथ्यादि जीवीं के सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादि गुणस्थान, कौद्दों जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, क्षार पर्याप्तियां च र अपर्याप्तियां: दशें आण, सात प्राण: ने। प्राण, सात प्राण: आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण: चार से। चार से। चार प्राण: चार प्र

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठी नास्ति ।

नं. ५१९ आहारक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

1	जी.	q.	য়া	्ग.	ग.	\$	क	यो.	वे	ق ا	লা.	मय.	₹.	ले.	भ.	स.	सं हि.	आ.	₹.
	u	६अ	9	K	8	4	Ę	₹	2	8	Æ	R	X	₫. ₹	ર	ц	1 2	*	2
मि.	+	५अ.	છ					जो मि	-	1	कुम	अस.		का	म.	मि.	ਜ.	आहा.	साका.
सा.	ल	५अ. ४अ.	Ę	क्षाणम					क	10		यत्मा		मा. ६	अ.	सामा	अस.	`	अना.
अवि.			4	20				आःभि.		155	माति	छटो				ऑप	अन्.		तथा.
प्रम,			8		1						श्त.	यथा.				क्षा			यु. उ.
सयो.			₹		1					ļ	अव.					क्षायो			
			1 3		!						केव.						1		

वेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि अण्णाण, अमंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असिष्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्वे ।

तेास चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जतीओ पंच पज्जतीओ चत्तारि पज्जतीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्गाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भाविहि छ लेस्माओ, भवमिद्धिया अभविद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, ्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, असव्यसिद्धिक; भिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अद्वारक मिण्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिण्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझापं, चारों गितियां, पांचां जातियां, छहां काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयांग, औद्दारिककाययोग और वैक्षियककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, अन्यम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहां लेदयापं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिण्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सं ५२०

अहारक मिथ्याद्य जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	ч.	्रा.	स.	η,	₹,	新]。	यो	à	क	啊.	संय.	द	ਰੇ.	भ.	स.	में हि.	व्या.	ਰ.
	128	ξų	20,0	8	K	4	ξ	17	ą	8	_ {	Ł	ર	द्र ६	1 -		3	8	9
ांने.	•	६ अ.	9,9					# X			अला	अस	चक्षु	मा ६	्भ.	मि,		आहा.	साका.
1		५प.	८,६					ब. ४					अचे.		अ.		असं.	1	अमा.
		५ अ.	७,५					ओ.२											1
ı		४प.	€,8					वे. २							Į				
-	ı	४अ.	¥,₹									(1 1

नं. ५२१

आहारक मिथ्याद्य जीवोंके पर्याप्त आलाप.

Ŋ.	्जी.	٧.	সা.	सं.	ग. '	इं	का	यो.	वे.	क	शा	संय.	द	હે	स.	स.	संक्रि.	आ.	ਚ.
٩	ø	٩		R	8	4	Ę	9 01	- ₹	8	₹	9	3	द्र. ६	ર	1	2	٩	ર
मि	·	ч	8					म, ४	\$		अज्ञाः	अस	चशु	भा.६	म∙				साका.
	42	8	<					व. ४	\$				अच		अ.		अ सं .		अना-
1			9					ओं १	}		1					1			
1_		}	६ ४		}		1 1	वं. १			- 1]	j		1]]]]

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छनं, सण्णिणो अस्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता दोंति अणागारुवजुत्ता वा

ें आहारि-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जचीओ छ अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ,

उन्हीं अदारक मिथ्याद्दि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादिष्ट गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तयां, पांच अपर्याप्तयां, चार अपर्याप्तयां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहाँ काय, ओदारिकमिश्र और विकियिकमिश्रकाययोग ये दो योगः तीनों चेद, चारों कपाय, आदिके दे। अधान, असंवम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यसे कापात लेदया, भावसे छहाँ लेदयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्य, संक्षिक, असंकिक, असंविक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक सासादनसम्यग्दिष्टि जीवींके सामान्य आलाप कहने पर—एक नानादन गुणस्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्या-प्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संबाण, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों

नं. ५२२ आहारक मिध्यादिष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

] गु.∫	जी.	ч.	সা.	स.	गः∣ इ.	का	योः	वे.		हा .	मय.	_ ኛ.	ले	म.	स.	सिंब.	आ.	उ. ∣
8		६ अ.		8	8 14	Ę	(₹	₹	8	ર	Ę	ર	, द्र-१			2	8	२
मि.ः	अप .	۲,	9		i		ओं मि			कुम.	अस	-	1 1		मि.			साका.
1		٧,,	Ę				व.मि			कुधु.		अच.	भा-६	अ.		असं.		अनाः
1			ц	i	I		1											
<u></u>			४ ३		- 1											į į		

नं. ५२३ आहारक सासादन सम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप.

ਹੁ.	1 —			-				-							~	स.	सान्ने.	अ।	₹.
8	1 3	ξЧ.	7 0	X	8	*	>	१२	3	¥	Ę	>	ર	द्र. ६	,	2	₹.	₹	2
स 1.	स. प	६ अ.	U			q.	त्र.	म ४			अज्ञा.	अस.	चक्षु	मा. १	६ स.	सासा.	स.	आहा.	साका.
	स. अ.							ब. ४					अचे.						अना.
-		1						ओं २										1	
		į.						बे. २										1	
- 1	1					,	, ,							I					i

पंचिदियजादी, तसकाओ, वारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवतमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भाविद्दि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसि चेव अपज्जनाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजनीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्धिक और वैक्रियिककाययोगद्धिक ये वारह योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अञ्चान, असंयम, अदिके दो दर्शन, इन्य और भावसे छहीं लेह्याएं भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्हि जीवोंके पर्यातकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक रांबी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राणः चारों संज्ञापं चारों गितयां, पंचेन्डियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, दृज्य और भावसे छहों लेदयाएं, भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यन्दि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना होष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और

नं. ५२४ आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.						यो		सय.	द.	लं	₩.	स.	संहि.	आ.	ુ હ.
1		Ę	80 8	8 1 8	₹ ,	१०म.४		8	ર	द्र ह	₹ ₹	8	?	2	2
सा.	स.प.		'	q.	अस.	व. ४ औ. १	अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	भाष	; म . ∶	सासा.	स.	आहा.	साका. अना.
						वै. १			ज प						બના.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसग, दव्वेण काउ-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{र्र}।

आहारि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणिह मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सिण्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां

वैक्रियिकमिश्रकाययोग ये दो योग, तीनों घेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत छेरया, भावसे छहीं छेर्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक सम्यग्निध्यादि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्निध्यादि गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्निध्यात्व, संविक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ५२५ अहारक सासादनसम्यग्दाष्टे जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

										हा.				म.	स.	साह्न.	. आ.	ਰ.
			હ	8						ર				₹	\$	1	1 7	3
सा.	ক	अ			वि.	q	7	भी मि								सं.	आहा	साका.
	T.				म.			वै.मि.	l	कुश्र .	!	अच.	भा 🗟					अना.
					दे.						1	1	•			1		1
1))			1	}	1	1

नं. ५२६

आद्वारक सम्योग्मध्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

Z	जी. प	₹.	प्रा.	सं.	ग्.	ŧ.	क I.	यो.	वे.	क,	ह्या.	संय,	₹.	ਰੇ,		भ.	स.	संझि.	आ.	उ.
,	₹ 8	ŧ	9 0	X	8	\$	8	80	₹	У	₹	8	9	द्र	Ę	Ş	8	8	*	२
सम्य. स	. प.					ч.	7	म. ४			ह्यान .	अस.	चशु.	भा.	Ęį	Ŧ.	सम्य.	सं.	आहा.	साका,
								व् ४			₹		अच.							अना.
I								आं. १			अज्ञा.									
l l								वं. १			मिश्र									!
	ı											ι	ŀ						1.	j

आहारि-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद. चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-जमो, तिण्णि दंसण, दव्य-भावीहं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा "।

"तिसि चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवममासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

आहारक असंयतसम्यग्दि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दिष्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, दशाँ प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गितयां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगिडिक और वैकियिककाययोगिडिक ये बारह योग, तीनों वद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेह्याएं, भव्यसिद्धिक, औपर्शामक आदि तीन सम्यक्त, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—पक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण,

नं. ५२७ आहारक असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	q.	त्रा.	सं.	η,	₹,	का.	यो-	वं.	죡.	हा.	सय.	द.	हे.	ाम.	स.	संक्षि.	ंआ	ਰ.
१	. 2	६प.	20	X	8	. ?	9	१ २	₹	8	₹	1	्३	द्र.६	1.	(3)	*	8	ર
अवि.	स.प.	६ अ.	v			ď	न-								भ.		स.	आहा.	साका.
	सं अ.	1						ब. ४ औ.२			श्रुत. अव.		विनाः	•		क्षा. क्षायो.			अना.
								वै. २			অধ.					વાપા	,		
1	ł																		

नं. ५२८ आहारक असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>I.</u>	जी.	٩.	श्रा.	सं. ग	्रइ	কা	यो	. ā	• क.	शा.	संय.	द.	छे.	भ.	स.	संक्रि.	आ.	उ.
9			90	8 3	8 9	۱۹	90	=	8 8				ን. ξ			9	9	२
अवि.	÷				पं	. গ.	म, भ	8		मात-	असं.			स∙	ओप.	सं.	आहा.	साका.
1	æ.				-		व. ¹	8		श्रुत.		विना.			क्षा.			अमा-
1		Ì					औ.	٩	f	अव.		I			क्षायो.			
<u> </u>	_	<u> </u>					a' '	3	1			1		_		J .		<u> </u>

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्य-मावेद्धं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजिताओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्मा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मनं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

आहारि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-रिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों त्रवाय, आदिके तीन ज्ञानः ससंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं भव्यितिद्धिक, औपशामिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्हि जीवोंके अपर्याप्तवालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्हिए गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्र और वैक्रियिक-मिश्रकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कपाय, आदिक तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे काषोत लेश्या, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अमाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-

नं. ५२९ बाह्यरक असंयतसम्यग्दिष्ट जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

														लं.			सांब	आ	उ. ∣
8	١ ٢	Ę	હ	8	K	8	*	२	3	Х	₹	٤	₹	द्र. १	₹.	(3)	१	?	2
अवि.	सं.अ	.¥.				Ţ٠	₹.	ओ मि	g.		मति.	अस.	के. द.	का.	भ	ओप.	स.	आहा.	माका.
1		!		1			ì	वै भि.	न.		श्रुत.		विना.	मा. ६		क्षा.			अना.
	}								1		अव.					क्षाया			
\	1	1		}		ı							l						

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण,संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दच्तेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्ताओ, भवतिद्विया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वाँ ।

ें आहारि-पमत्तमंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तमकाओ, एगारह जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लस्साओ, भावेण तेड-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया,

गति ये दो गतियां, पंचिन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययांग ये नो योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यमें छहों छेद्रयाणं भावसे तेज, पद्म और शुक्र छेद्रयाणं भव्यसिद्धिक, औपदामिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञीपर्याप्त और रांझी-अपयोप्त य दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपयोप्तियां, दशों प्राण,
रात प्राणः चारों संझाण, मसुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों
वचनयोग, औदारिककाययोग और आहारककाययोगिडिक ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों
कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामाधिक, छदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम,
आदिके तीन दर्शन, हव्यसे छहों छेस्याएं, भावसे तेज, एक और शुक्क छेस्याएं: भन्यसिद्धिक,

नं. ५६०

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप.

1	ग्. ्	जी	٩.	, A1.	Ħ	₹,	5	ক্য	_ 2	ì.	वे.	क	झ्।.	स्य	द.	ਲ.	भ	_ स∙	'संक्रि	ু आ.	8.
		>	Ę	80																8	
	্য∙	सं. प.	ļ.			1ने	Ţ	Ŧ	स	ጸ			माति.				भ	अव.	स.	आहा.	साका.
1				į		Ħ.			व	R		1	अत.		विना.	गम.		क्षा.	1	1	अना.
L	1			j					आ	٠ ۲			अत्र.		I			क्षायो.	ı		1
L												'			1			ļ			

र्न. ५३१

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

a.	जी.	q.	प्रा	स.	η,	₹.	का.	या.	व.	죡.	P []	मय.	द.	लं.	म.	स.	सांश्	आ.	ਰ.
₹	२	ξΨ.	१०	R	Ŗ	₹	P	8 8	₹	γ	x	ર	₹	द्र, इ	7	₹	*	2	ર
1	सं.प	. ६ अ	৩		Ŋ.	Ŧ,	₹.	म. ४			र्मात.	सामा.	केंद्र	भा₹	म.	आप.	सं.	आहा.	साका. अना.
i i⊼	सु उ							व. ४			47.	छदो.	विना	गुब.		क्षा.			अना.
-	1							ओ, १			अव.	परि.				क्षायो -			
								आ, २		_	म्बः								_

तिणि सम्मत्तं, साणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

एत्थ पज्जत्तापज्जत्ता आलावा वत्तव्वा । एवं सव्वत्थ ।

आहारि-अप्पमत्तसंजदाणं मण्णमाणे अतिथ एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ हेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कहंस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

आहारि-अपुन्वयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ

औपशीमकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यकत्व, संज्ञिक, आहारक साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी होते हैं।

इस आहारक प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप भी कहना चाहिये। इसीप्रकार जहां पर संज्ञी-पर्याप्त और सज्जी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास होवें वहां भी सामान्य आलापेक अतिरिक्त दोनों प्रकारके आलाप ओर कहना चाहिए।

आहारक अवमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अवमत्तसंयत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, आहारसक्रके विना शेप तीन संबाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और ओहारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्यापं, भावसे तेज, पन्न और शुक्क लेश्यापंः भव्यसिद्धिक, औपदामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोप्योगी होते हैं।

आहारक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर-एक अपूर्वकरण गुण-

नं. ५३२ आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

2	जी-	ч.	प्रा.	सं.	ग.	₹.	का.	्य	<u>]- </u>	वे। क,	, হ্লা•	संय-	द.	ਲ.	म.	स.	साही.	आ.	ु उ.
2	१	ξ	१०	3	2	8	8	3		₹ 8	R	-				્રે	₹.	2	ર
⋉.	स.प.			आहा	Ħ.	q .	7.	म.	ጸ	1					ਸ.,	આવ.	सं.	आहा.	साका.
ñō				विना.			' !	व्			श्रुत-	छद्।.	विना.	गुभ.		क्षा.			अना.
1								ओ.	\$		अव.	परि.	1			क्षाया			
1_		,							1	,	मनः.								

पन्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवज्जता वा "।

ें आहारि-पढम अिणयद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंक्षाके विना शेष तीन संक्षएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार क्षान, सामायिक आदि हो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों ठश्याएं, भावसे शुक्रुलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकायः चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार क्षान, सामाध्यक आदि दो संयमः आदिके तीन दर्शनः द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे गुक्छलेश्याः भव्य-

नं. ५३३	आहारक	अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती	जीवॉके	आलाप.
---------	-------	------------------------	--------	-------

गु.	जी । प	√श्रा	ुसं₊ा	ग.	₹.	का.	यो	व.	क.	朝.	संय.	द.	। <u>ले.</u>	म-	₹.	संहि.	आ.	₹.
१	१६	80	3	8	٤	8	8	₹	8	Я	3		द्र. ६					2
अपृ.	सं.प.	1	आहा.	म.	प.	7 .	₩. ¥	 							ઓવ.	सं.	आहा.	साका.
1			विना.	l I			वे. ४		ļ	श्रुत.	छदो.	विना.	গুন্ত.	í	भा.	}		अमा.
1	j			1			ओ. १		1	अव.		1			1			
1	1									मनः.		ŀ			1			} !
	1														-			

नं. ५३४ आहारक अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागवर्ती जीवींके आलाप.

गु. जी प	त्रा. स.	ग इंका	यो वे क	朝-	सय.	द	हे.	म. स.	संक्रि.	आ.	₹.
१ १ ६ अनि । प्रम	20 21 :	१ १ . पं. त्र.	भ ४ ३ ४	8	२ सामा.	्र के.द.	द्र. ६ मा∙१	रः २ मः औप∙		आहा-	ો ર

भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, यिष्णणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सेस-चदुण्हमणियद्वीणं ओघ-भंगो ।

आहारि-सहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जनीओ, दम पाण, सहुमपरिग्गहमण्णा, मणुमगदी. पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सहुमलोहकसाओ, चत्तारि णाण, सहुमसांपराइयसुद्धिमंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा होते

आहारि-उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

सिद्धिक, औपरामिक और क्षायिक ये दें। सम्यवस्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके शेष चार भागोंके आलाप ओघारापके समान होते हैं।

आहारक स्क्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक स्मासम्पराय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, मृक्ष्म प्रिवृहसंद्धा, मृत्य्याति, पंचिन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योगः अपगतवेद, स्क्ष्म लोभकपायः आदिके चार क्षान, स्क्ष्म साम्परायिकशृद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे शुक्कलेक्याः भव्यसिद्धिक, ओपक्षिमक और आयिक येदो सम्यक्त, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप कहने पर- एक उपशान्तकपाय गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तपरित्रहसंक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग,

नं. ५३५ आहारक स्क्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप.

y .	जी∗∣	q	श्रा-	सं.∣	ग.}	ŧ	का.	यो-	वे.	本.	\$11 .	सय.	₹.	ले.	भ	स.	संक्षि-	आ.	ड.
2	2	Ę	१०			2	3		0		¥	8	\ ₹	₹. ६	2	5	7	8	2
सूक्म	6			ا نع	H. 9	Ì	त्र.	म- ४	<u> </u> =	-	मति-	। सुक्ष	क. द विनाः	मा-र	भ	आप.	स.	आहा.	माका.
	-		, .	5				व. ४	동	IE.		1	विना.	হ জ্ঞ	1	क्षा.			अनाः
			,	į	1	- 1		ओ. १		ltc/	ં પાંચા		ļ	i !	্ৰ		1		
	1		l t	í			ł				मनः.		ł						. {
1			١ .			İ													1
<u></u>	1		i		ı	- 1		ı			l		L)		

जोग, अवगदवेदो, उवसंतलोहकमाओ, चत्तारि णाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुककलेस्मा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वाँ।

आहारि-खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, चत्तारि णाण, जहाकखादिविहारसिद्धिसंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयमम्मनं, सिण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जना होंति अणागारुवज्जना वांं।

अवगतचेद, उपशान्तलोभकपाय, आदिके चार ज्ञान, यथाख्यातिवहारगुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहीं लेश्यापं, भावमे गुक्कलेश्याः भव्यिमिद्धिक, औपशमिक और श्रायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आळाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयांग, चारों वचनयोग और आदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, अकषाय, आदिके चार ज्ञानः यथाख्यातिविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं: भावसे शुक्कलेश्या, भव्यामिद्धिक, शायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ने. ५३६

आहारक उपशान्तकपायी जीवोंके आलाप.

J.	र्जाः,	9	शा.,	स,	ग.	₹.	का	यो	•	वे	क.	क्षा.	सय.	द.	ੋਰੇ.	भ-	स.	सक्रि.	आ.	₹.
٩	9	Ę	30	0	9	9	٩	Q.		0	0	8	9	₹	द्र. ६	9	3	9	1	3
उप.	सं.प				म.	प	₹.	म		=	ıç	मानि -	यथा.	के द.	मा. १	भ.	ओंप.	सं.	आहा.	साका.
1			1	34.				व.	8	<u>ਨ</u>	अप.			विना.	গান্ত.	ł	क्षा.	1		अना,
			,	ומ	-			ओ.	9		in a	अव	1				ì		1	1
\			_1	į	1						1	मन:	1						1	<u> </u>

नं. ५३७

आहारक शीणकपायी जीवोंके आलाप.

∤ग्र⊪्जी प∞प्रा⊸	सं,ग. इका√योः	वे.क. हा	सय. द. ले. म _्	म-संक्रि आ. ड.
2 2 6 20	0 9 8 8 8	0 0 8	र इद्र १	रु १ १ २
र्शाण, यं प्रा	ुम, पं. त्र. म. ४	🚅 🔔 मातिः	यथा. के द. मा १ म	क्षा. सं. आहा साका.
	€ a. x	हैं हैं अत.	विना गृक्त.	र्झो. सं. आहा साका. अना.
	कें और	্ ^ক		
		सनः.		
				1
1 1		1		,

आहारि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदि-यजादी, तसकाओ, छ जोग, कम्मइयकायजोगो णित्थः अवगदवेदो, खीणकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्क-लेस्साः भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव साण्णणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागार-अणागरिहं जुगवदुवजुत्ता वा

एवं पज्जत्तापञ्जत्तालावा वत्तच्या । एवं सच्वत्थ वत्तच्यं । अणाहारीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि अदीदगुणहाणं पि अत्थि, अद्व

आहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां, वचनबल, काय- बल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा कायबल और आयु ये दो प्राणः श्लीणसंक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दो वचनयोग, औदारिककाययोग और औदारिकमिश्रकाययोग ये छह योग होते हैं। किन्तु कार्मणकाययोग नहीं होता है। अपगतचेद, श्लीणकषाय, केवलकान, यथाख्यातिवहारगुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहां लेश्यापं, भावसे गुक्रलेश्याः भव्यसिद्धिक, श्लायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकर्लोंसे मुक्त, आहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत उपयुक्त होते हैं।

इसीप्रकारसे सयोगिकेवलीके पर्याप्त और अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए। इसी-प्रकार सर्वत्र कहना चाहिए।

अनाहारक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिध्यादिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट, अविरतसम्यग्दिष्ट, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, सात अपर्याप्त और अयोगिकेवली गुणस्थानसंबन्धी एक पर्याप्त इसप्रकार आठ जीव-

नं. ५३८ आहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप.

1	I •	जी.	ч.	भा.	स.	ग.	ţ.	का.	यो.	ं वे.	্ ক.	朝.	संय.	₹.	े हे.	म-	स.	संक्रि.	आ.	ਚ.	ı
	٤	ર	६प.	Х	0	*	₹	*	Ę	0	0	*	₹.	*	द्र. ६	8	ą.		8	2	l
Ħ	यो.	ч.	६अ.	٦.	·hr	म.	Ϋ.	₹.	म ∙ २ व्. २	1 = 2	يا	केव.	यथा.	के.द.	मा-१	म.	क्षा.	अनु.	आहा.	साका-	İ
1	l	अ.			क्षांच				व, २	্ব	अव		1		₹.					अना-	
					900				ओ. २	1	ימי	1			'			1 .		यु. उ.	
						١.,					ı	ĺ	<u>'</u>								
L						'				_	_		,		}	1					

जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जनीओ छ अपजनीओ पंच अपज्जनीओ चत्तारि अपज्जनीओ अदीदपज्जनी वि अत्थि, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दे। पाण एग पाण अदीदपाण वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ सिद्धगई वि अत्थि, पंच जादीओ अदीदजादी वि अत्थि, छ काय अकाओ वि अत्थि, कम्मइयकायजोगो। अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाणाणि, दो संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दव्व-मावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, अणाहारिणो, सागाहवज्जना होंति अणागाहवज्जना वा सागार-अणागारेहिं जुगवदु-वज्जना वा

समास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहीं पर्याप्तियां, छहीं अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है; चारों संज्ञापं तथा श्लीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगित भी है, पांचों जातियां तथा अतीतजातिस्थान भी है, छहों काय तथा अकायस्थान भी है, कार्मणकाययोग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, विभंगाचि तथा मनःपर्ययज्ञानके विना रोप छह ज्ञान, असंयम और यथाख्यातसंयम ये दो संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनों से रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रस्य और भावसे छहों छेश्यापं तथा अछेश्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक तथा भव्यासिद्धिक और अभव्यसिद्धिक हन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्स्य, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

∌	630
ч.	747

अनाहारक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा		н.	ग	١₹.	का.	यो.	वे.	有.	शा .	सय-	₹.	ਲ.		स.	सीहा.	आ.	ਚ.
५ मि.	८ अप.	६प.	v		8	8	4	Ę	2	3	8	Ę	ર	8	द.६		ધ્ય	ર	2	2
सा.		६अ.			HE.	نے	Ė	5	कार्म.	1		विभः मनः.	अस.		मा•६					साका.
अवि.	अयो.	ч,,	ે ફ		क्षीणस.	Įý.	ાતાં. હ્યાં.	16		अव	नुस्र	मनः.	युथः	i,	अंख.	¥.	विना.	असं.		अना.
सया.	4.8	٧,,	ч		æ.	CAN	જુ	למ	अयोग.		פה	विनाः	भनु.			अत्.		अनु.		तथा.
अयो.	अती.,	अत्रो.	¥	₹				'	w	1						क				यु. उ.
अ. गु.	जीव.	ч.	ર	١,]			<u> </u>				,						

अणाहारि-मिच्छाइट्टीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपजातीओ पंच अपजातीओ चत्तारि अपजातीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण विण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

अपन्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, णिरयगदी णित्थः, पांचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

भनाहारक मिध्यादि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिध्यादि गुणस्थान, सात भर्पेर्यन्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सात प्राण, स्नात प्राण, छह श्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संहाए, चारों गतियां, पांचों हातियां, छहों काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके दो अहान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे गुक्कलेश्या, भावसे छहों लेश्याएं: भन्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक; विश्वास्त, संक्रिक, असंक्रिक; अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनाहारक सासादनसम्यग्दाधि जीखोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं: किन्तु यहांपर नरकगित नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,

] ग्र-	मी∙	q .	मा.	स.	ग.	। इं.⊬क	ा यो∙	वे∙	क .	हा.	संय		ले		स.	संक्रि-	आ.	उ.	i
1	9	६अ.	9	8	¥	ધ ફ	١, ٤ -	₹	X	2	ţ		3.8		*	२	8	3	ı
A.	अप.	4 ,,	9				कामे.			कुम.	असं ं	चधु.	यु.	म-	मि∙	स.	अना.	साका-	l
		٧,,	•							कुशु.		अच.	भा.इ	अ.		असं.		अना.	ı
	1		4			1					, 1]	۱
]		४ ३	.1			1			3	1		·	ł		1 1		<u> </u>	

नं. ५४१ अनाहारक सासादनसम्यन्दष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	नी-	q.	श्रा.	सं	η.	ŧ.	का.	यो.	बे.	क 。	₹1.	सय.	ζ.	ਲੇ.	म.	₩.	संकि	आ.	ਰ.
1	8	1 -	9			<u> </u>	₹ '		; ₹	8	ર	2		ब्र. १		?		\$	٦.
् वा .	10	Э.			ात. ∣म∙	ч.	7.	कार्म.	1	,	कुम. कुशुः			रु. मा∙६		लाला.	н.		साका, अना.
		,			₹.		, 		1					1					

असंजमो, दो दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

अणाहारि-असंजदसम्माइद्वीणं मण्णभाणे अतिय एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तस-काओ, कम्मइयकायजोगो, इत्थिवेदेण विणा दोण्णि वेदा, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण सुक्कलेस्सा, मावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

अणाहारि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अतिय एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, दोण्णि पाण, मण-विच-उस्तासपाणा णित्यः, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं,

कार्मणकाययोग, तीनों वेद, वारों कवाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्यसे शुक्रुलेदया, भावसे छहों लेदयाएं: भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्रिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनाहारक असंयतसम्यग्दि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गितियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, कार्मणकाययोग, स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारों कचाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे गुक्कलेश्या, भावसे छहों लेश्यापं, भष्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

भगहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं। किंतु पहांपर मनोबल, वचनबल और दवासोण्ड्यास प्राण नहीं हैं। क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रि-धजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाक्यातविहारशुद्धि-

i. ५४२	असंयतसम्य ग्हां ध्रे	जीयोंके	आलाप.
--------	-----------------------------	---------	-------

] ग्र.	जी-	q.	श	ग.	ग.¦	ij.	का.	यो.	⊹्वे.	事,	FIT.	सय.	₫.	ਰ.		₩.	(संबि.)	आ.	8.
1		€अ.	૭	¥	¥	•	1	\$	(2)	18	₹	1	₹ 1	я. ?	8	13	?	3	3
अवि	ं लं			l		ď.	₹.		1 -		मति-				ž.	ऑप.	स.	अना -	साका.
1	12			İ					न.		भुतः . अब.	İ	विनाः	HI. E	13	क्षाः क्षायोः			अना.
											जन.								

जहामखादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दन्त्रेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा', भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खड्यसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, सरीरणिष्पाय-णत्थं णोकस्मपोग्गलाभावादो अणाहारिणेः, सागार-अजागोरेहिं जुगबदुवजुत्ता वा होति "।

"अणाहारि-अजोगिकेवलीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एगो जीवसमासो, छ पअत्तीओ, एक पाण, खीणसण्णा, मणुलगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसाद्धिसंजनो, केवलदंसण, दव्वेण

संयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे गुक्क अथवा छहीं लेखाएं, भावसे गुक्कंल्याः भव्यसिद्धिक, भाविकसम्यक्ष्त्व, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनें। विकल्पोंसे रहित, शरीर-निष्पादनके लिये माने वाली नोकर्म पुद्रलवर्गणाओं के अभाव हो जानेसे अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपन् उपयुक्त होते हैं।

विशेषार्थ— ऊपर अनाहार क स्यागिकेविलयों के लेक्या आलापका कथन करने समय सभी प्रतियों में 'द्व्वेण छ लेस्साओं ' इतना है। पाठ पाया जाता है परंतु पूर्वमें कार्मण-काययोगी सयोगिकेवलीके आलाप बतलाने समय इध्यसे गुक्रलेक्या अथवा छहीं लेक्याएं कहीं गई हैं, इसलिये यहांपर भी उसीके अनुसार सुगर कर दिया गया है।

अनाद्वारक अयोगिकेवली जिनके आलाप कदने पर—एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, एक आपु प्रायः श्लीणसंकः, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलकान, यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन,

९ प्रतिपृ 'दव्वेण छ लस्साओं ' शत पाठ ।

नं. ५४३

अनाहारक संयोगिकेवर्ला जिनके आलाप.

ग्र.	जी.	. P.	प्रा.	स.	ग-	इ	का	योः									सिंह्	आ.	उ.
१	2	Ę	3	0	8	2	*	9	0	0	!	, <	*	<u>\$</u> .	ŧ(0)	۶	0	१	२
सयो,	अप.	날		br.	म \cdots	q	₹-	कार्म.	F	÷	केंग-	यबः	के द.	ξţ.	ਮ•	क्षा	अनु.	अनाः	स् साका अना-
		क		Î di		'			क्र	1	[1		अ.६		[ı		अना-
				ab		ł			1	19				मा ः	8				यु. उ.
11					l ,									য় -					

नं. ५४४

अनाहारक अयागिकेवली जिनके आलाप.

ग्र∙	जी.	۹.	সা.	सं.∣	ग,	ŧ.	का	यं।	वे	क	झा	संय	द.	₹.	भ	स.	साझे.	आ.	₹.
1	8	Ę	*	0	१	ŧ	₹	o	0	0	, ,	,	y	व. द	P	8	0	र	2
अयो.	प ।		अायु.	12	म.	Ϋ٠	স,		5	Ė	ो•व∙	यवा.	क.द	इ. ६ भा. ० अहे.	₹.	क्षा.	भनु.	अना.	'साका-
	1			(B)				<u>ਕੂ</u> ਸ਼,	8	¥ 45				अले.					अना-
1	Ι,							-		w				_					यु. स.
1																			
<u> </u>	<u>' </u>	<u> </u>			1	_													,

छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; मवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सिण्णणो जेव असिण्णणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा।

अणाहारि-सिद्धाणं मण्णमाणे अत्थि अदीदगुणहाणाणि, अदीदजीनसमासा, अदीदपञ्जतीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अदीदजादी, अकाओ, अजे।गो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवल-दंसण, दन्त्र-मावेहिं अलेस्सा, णेव मवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति

एवं आहारमागणा समता।

तहेव च

संत-परूवणा समता।

द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे अलेक्या, भव्यासिद्धिक, शायिकसम्यक्त्व, संक्रिक और असंक्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

अनाहारी सिद्ध जीवेंकि आलाप कहने पर--अतीतगुणस्थान, अतीतजीधसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, श्रीणसंज्ञा, सिद्धगति, अतीतजाति, अकाय, अयोग, अपगतधेद, अकषाय, केवलकान, संयम, असंयम और संयमासंयम विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रध्य और भावसे अलेश्य, मध्यसिद्धिक और अभ्यसिद्धिक विकल्पोंसे रहित, शायिकसम्यक्ष्य, संक्षिक और असंज्ञिक विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगयत् उपयुक्त होते हैं।

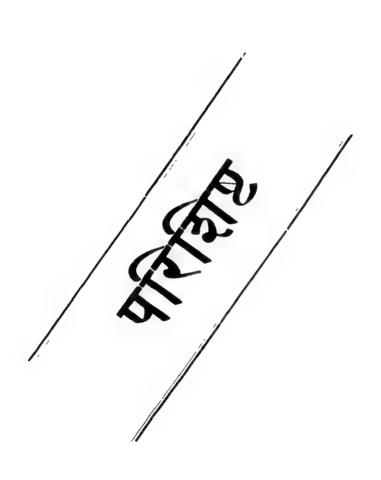
इसप्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई। और इसीप्रकार उसके साथ सत्प्ररूपणा भी समाप्त हुई।

नं. ५४५

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आलाप.

1	ुं जी∙			ग. एं.	事1。	यो.	वे.	क. हा.	संय. इ.		भ. स.	संकि	आ.	ਰ.
		۵ <u>ن</u>		° °	٥	°	•	० (१ -:कत.	∘ (रे ऌंके.द	o '	०।्१ फ्रंकीं≀	•	्र अस्तर	्र साका.
	अती. - अती. ३	dì.	र सुन्दे	तं हो ==	अकार	अभी	अवग	ं केब. इ. इ. इ.	क्षे के द क	अहेहय	क्षेत्र क	10	9(4)(1	अमा.
1	क	के है	<u>,</u>	100 100		-	1	.,	1	1	1 !	1	1	यु. उ.
١	,			}	1) j		





(यहां उन्हीं शन्दोंका संप्रह किया गया है जिनकी निर्दिष्ट पृष्ठपर परिभाषा पाई जाती है।)

१ पारिभाषिक-शब्द-सूची

शब्द	ब्रि ड	शब्द	पृष्ठ
अ	1	अयोगकेवली	१९२
अक्षाय	३५१	अयोगी	2<0
अकायिक	२६६,२७७	अरनिवाक्	११७
अन्रायणीय	११५	अरिहंत	४२, ४३
अ <u>च</u> क्षुर्दरीन	इटर	अर्हृत्	88
अवसुप्राग आवित्तमंगल	26	अलेश्य	३९०
आञ्चातमग <i>्</i> अञ्चात	३६३,३६४	अल्पबहुत्व (अनुयोग)	१५८
अतीतपर्याप्ति अतीतपर्याप्ति	४ १७	अवग्रह	३५४,३ ७९
अतीत प्राण	ક શ્ ર	अवधि	३५९
	१०२	अवधिश्रान	९३,३५८
अन्तकृद्शा अन्तरात्मा	१२०	अवधिदर्शन	३८२
अर्थनय अर्थनय	८ ६	अ वयवपद	७७
अर्थावग्रह	३५४	अवाय	३५४
अथावत्रह अधिराज	4.0	असत्यमन	स्ट१
	3:40	असत्यमापमनोयोग	२८१
अधुवावग्रह	4.9	असङ्गावस्थापना	२०
अर्धमण्डलीक	१.३	असंयत	३७३
अनाहार अनादिसिद्धान्त पद	उह	असंयत <i>स</i> म्यग्हिष्ट	মৃ ওম্
અનાવાલકાના ૧૧ અનિ <i>ન્દ્રિય</i>	રદ્દેષ્ઠ	र्थास्तनास्तिप्रवाद	११%
आनवृति अनिवृत्ति	१८४	आ	
आनवृत्तिबाद् रसाम्पराय	१८४	अकाहागना	११३
आन हो राजादरसारपराप अनुःचरापपादिकदशा	१०३	आक्षेपणी	200
	३४२	आगमद्रव्यमंगल	ર્ં ફ
अपगर्तेय द अपर्याप्त	રેદ્દે ૭,૪૪૪	आचार ांग	०,०
अपर्याप्त अपर्याप्ति	२५६,२५७	આ ના ર્ય	४८,४९
_	१८०,१८१,१८४	आत्मश्रवाद	996
अपूर्वकरण	२७३	आत्मा	१७८
अप्कायिक	११७	आदानपद	5 14
অ প্রতানিবাক্	१७८	आनापानपर्याप्ति	२/५/५
अप्रमत्तसंयत	33 ९	आभिनिबाधिकज्ञान	<.३,३५ ९
अप्रवीचार	२२ <i>५</i> १८७	आभ्यन्तर निर्दृत्ति	२३२
अ वद्धप्रला प	३९४ १	आहार	१५२,२९२
अभव्य	२९७ ११६	आहारक	२९४
अभ्या ख्यान अयोग	१९२	आहारककाययोग	२०,२
અલ(4)	* * *		

		()		
बाहारपर्याप्ति		રહક	कमेमंगल	૨ ૬	i.
बाहारमिश्रकाययो		२९३,२९४	कल्पक्यवद्वार	9,0	
थाद्वा रसंश्वा		४१४	कल्प्याकल्प्य	9,0	
	ξ		कल्याणनामधेय	१२१	
इन्द्रिय			कषाय	१धर	
	१३६,१३७,		कापोतलेश्या	२८९	
इन्द्रियपर्याप्ति रूपार्टन		२५५	काय	१३८	८,३०८
इचुगति इंगिनीमरण		२९९	काययोग		२,३०८
वागमासर्थ	· ·	રષ્ઠ	कार्मण	390	4
_	ž.	1	कार्मणकाय	३ ९९	4
र्रहा		३५४	कार्मणकाययोग	२९७	5
	उ		कालमंगल	२ ९,	
ara tanta	G	71	क′लानुयोग	<i>१५</i> ,	6
उक्तावप्रह उत्तराध्ययन		३५७	क्रिया	१८	
		९७	कियावि शाल	१२	ર
उत्पादपूर्व उत्पादानुच्छेद्	[m2.2m	११४	क् तिकर्म	९७	
उत्पादासुच्छव् उदीरणी दय	[परिशिष्ट भा.		कृष्णलेश्या	30	
उपकरण	[परिशिष्ट भा.		वेवल्यान	९५,१९१,३ ५८,३६	०,३८५
उपक्र म		२३६ ७२	के्वटदर्शन	३ ८'	
उपधिवाक		११७	क्रोध	34	
उपयाग		२३६,४१३	क्रोधक्षषाय	₹8'	
उपराम		२१ १	क्षपण	२१'	
उपरामसम्यग्दर्शन	r	364	क्षा यिक		१,१७२
उपरामसम्यग्द ि	•	१७१	क्षायि कसम्यक्त्व	३०	
उपशान्तकषाय		१८८,१८९	आधिक सम्य ग्दाष्टि	१७	
उपाध्याय		40	क्ष योपशमिक		१,१७२
उ पासकाध्ययन		१०२	र्शाणकषाय	१८	
0 41(1411)-44-1	**	101	र्श-णकषायवीतरा		
-22-	ए	****	क्षीणसंज्ञा	ક્ષ્	
एकेन्द्रिय		२४८,२६४	क्षेत्रमंगल		16
य र्वभूत	*	९०	क्षेत्रक	१२ १५	
~ 4	औ		क्षेत्रानुयोग		10
भौदयि क		१६१	1	ग	
औदारिककाययोग	τ	२८९,३१६	गुण	१ ७	
औ्दारिकमिश्रका	ययोग	२९०,३१६	गुणनाम		16
मौपशमि क		१६१,१७२	गोमूत्रिकागवि	३०	
	K		गौण्यपद	4	88
कर्ता		११९		4	
कर्मभवाव		१२१	ब्राणनिर्युचि	२३	હિલ

	ৰ	वर्शन	१४५,१४६,१४७,१४८
चशुर्दर्शन	३७९,३८२	zina-	१४९,३८३,३८४,३८५
च ञ्जरिन्द्रिय	२६४	दृष्टिवाद देव	१०९
चतुरिन्द्रिय	२४४,२४८	् द्व द्वगति	२०३
चतुर्विशतिस्तव	९६		२०३
चन्द्रशक्षि	₹ 0 ₽,	देशसत्य	११८
चयनलिघ	१२४	द्रव्य	८३,३८६
च्याचित	२२	द्रव्यमन	5/46
च्युत	२२	द्रव्यमल	રૂ ર
चतन्य	१८५	द्रव्यमंगल	२०,३२
		द्रव्यार्थिक	८३
	₩	द्रव्यानुयोग	१५८
छद्मस्थ	१८८,१०,०	द्रव्येन्द्रिय	ર રે ર
छेदोपस्थापक	३७२	द्वीन्द्रिय	२४१,२४८,२६४
छेदोपस्थाप न र्जुा	द्धेसंयम ३७०	द्वीपसागरप्रश्नादित	११०
	ज		घ
जनपद्सत्य	११८	धारणा	३५४
जन्तु	१२०	धुवावग्रह	३५७
जम्⊹द्वीपप्र क्र प्ति	११०		न
जलगता	११३	नपुंसक	३४१,३ ४२
जाति	१,4 १,9	नय	63
जीव	१ १०,	नरकगति	२०१,३०२
जीवसमास <u>जीवसमा</u> स	१३१	नारकर्गात	२०१
जीवस्थान	Go,	नाथधर्मकथा	१०१
जापस्थान ज्ञा न	३५३ ,३६३,३८४	नामपद	 &&
क्षान क्षान प्रवाद	१४२,१४३,१४६ ,१४ <i>७</i> ,३६४	नाममंगल	૧૭,૧૦
सागतनार्		नामसत्य	११७
	त	निकृतिवाक्	१२७
तदुभयवक्तब्यता	८२	निक्षेप	۶٥
तिर्थग्गति	२०२	निरतगाति	ર. ૨૦૧
तीर्थकर	46	निर्वेदनी	१०%
तेजोलेश्या	३८९	निषिद्धिका	9,5
तेजस्काय	২৩३	नीललेश्या	३८९
त्यक्त	२६	नैगमनय	ধ্য
त्रसकाय	२७४	नोगौण्यपद	४७
त्रिखण्डधरणीश	46	i	q
त्रीन्द्रिय	२४२,२४८,२६४	पद्मलेश्या	प ३९०
	द	परसमयवक्तस्यता	۲ <i>۰</i> ۰ د۶
दशवैकालिक	९,७	परिणाम परिणाम	१८०
प्राचकाालक	-,0	41/41/44	

	(8)	
परिग्र हसंज्ञा	४१५	बाह्यनिर्दृत्ति	२३४
परिद्वारशुद्धिसंयत	३७०,३७१,३७२	ম	
पर्याप्त	२५४,२६७	·	
पर्याप्ति	२५७	भक्तप्रत्याख्यान	રક
पर्याय	८४	भव्य	840 ."
पर्यायार्थिक	८४	भव्यनोआगमद्रब्य	२६
पश्चादानुपूर्वी	<i>હ</i> રૂ	भव्यसिद्ध	३९२,३९४
पाणिमुक्तागति	३००	भाव	२९
पारिणामिक	१६१	भावमन	२५९
पुद्रल	११९	भावमल	32
पुरुष पूर्वगत	३४१	भावमंगल	२९,३३
प्वेगत	११२	भावलेश्या	४३ १
पूर्वानुपृदी	<i>७</i> ३	भावसत्य	११८
वैशुन्य	११७	भावातुयोग	₹ '4८
पंचेन्द्रिय	२४६,२४८,२६४	भावेन्द्रिय	२३६
पंचेन्द्रियजाति	રદેક	भाषापर्याप्त	२५५
पुंचेद	३४१	भोक्ता	११०
पुण्डरीक	٥,८	म	
प्रतिक्रमण	۶,۶	मतिज्ञान	३५४
प्रतिपक्षपद	<i>७</i> ह	मत्यञ्चान	346
प्रवीचार	३३८,३ ३ ९		306
प्रतीत्यसत्य	११८	मनस् मनःपर्यय	९.४,३५८,३६०
प्रत्यक्ष	१३५	मनःपर्याप्ति	244
प्रत्याख्यान	१२१	मनःप्रवीचार	३३ ०.
प्रत्येकअनन्तकाय	२७३	मनुष्य	२०३
प्रत्येकद्यारीर	२६८	मनुष्यग(त	२०२
प्रथमानुयोग	र्ष्ट	मनोयोग	२७०,,३०८
प्रमत्तसंयत	१७६	महाकल्प्य	9,6
प्रमाणपद	હહ	महापुंडरी क	9,6
प्ररूपणा	क्षर	महामंडली क	46
प्रश्नव्याकरण	१०४	महाराज	4,9
प्राण	२५६,४१२	मान	3'40
प्राणावाय	१ঽঽ	मानकषाय	389.
प्राणी	११०.	मानी	820
प्राधान्यपद	ভ হ	माया	340
प्रायोपगमन	२३	मायाक षाय	રૂપ્રવ
च	j	मायागता	११३
बादर	રુક્ષ્વ,રદ્દહ	मार्य ी	१२०
बाद् रकर्म	२५३	मार्गण	१३१
	114	4144.41	74.7

	(५	. 1	
	()	•)	
मिथ्यादर्शनवाक्	११७	विद्यानुवाद	গৃ হ্
मिथ्य।दृष्टि	र् ६ २,२६२,२७४	विपाकसूत्र	१०७
मिश्रमंगल	ર ૮	विभंगञ्चान	३ ५८
मैथुनसं ज्ञा	४१ ५	विष्णु	550
मोषमनीयोग	३८०,२८१	वीर्यानुप्रवाद	११५
मंग	33	शृत	१३७,१४८
मं गल	३२,३३,३४	वेद	११९,,१४०,१५१
मं डली क	40	वदक	39.6
	य	वेदकसम्यग्दिष्	२७१
यथाख्यातविहारशु	द्धिसंयत ३७१	वेदकसम्यक्त्व	36,4
यथा ख्यातसंयत	393	वेदनाइत्स्रशभृत	१२५
यथातथानुपूर्वी	७३	वैक्रियिक	२९१
योग	१४०,२९९	विकियिककाययोग	२ ९,१
योगी	१२०	वैकियिकमिश्रकाययोग	૨૧૧,૨૧૨
	₹	व्य वहार	63
*G===		व्या <u>ख्या</u> प्र ज्ञा प्ति	२०१,११०
रतिवाक् रसननिर्वृत्ति	११७	ब्यंजननय	८६
रतमामञ्जूष राजा	૨ ३%	व्यंजनावग्र ह	३ ५५
राजा रूपगता	પ ુ ૧ ૧૩	श	
रूपप्रविचार	ર ્ડ ૨૨ ૦,	शब्दनय	્રહ
रूपसत्य	२२. ११७	शब्दपवीचार वाद्दप्रवीचार	૨३૧
44/11/4	ल	दार्ययाम दारीरपर्याप्ति	244
ल िध	1	શરાસ્ત્રવાત શરીમી	१२०
लान्य लांगलिका	२३६		
	5.5.5	डाकलेख्या	300
	200 200	गुक्कलेखा धनबान	રૂ ર્ ૦ ૧૩ ,૩५ <u>,</u> ૦,૩५૨
लेइया	१४९,१५०,३८६ ४३१	श्रु नश्चान	०,३,३५७,३५९
लेदया लोकबिन्दुसार	१४९ ,१५०,३८६ [,] ४३१ १२२	श्रु नश्चान	૧૩,૩ ५७,३५ ९ ३५८
लेइया	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५०	श्रुतज्ञान श्रुता ज्ञा न श्राप्र	०,३,३५७,३५९
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व	श्रुतज्ञान श्रुता ञ्चा न श्रोत्र स	૧૩,૩ ५७,३५ ९ ३५८
लेदया लोकबिन्दुसार लाभ वक्ता	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व	श्रुतझन श्रुताझान श्रोत्र स स्वित्तमंगल	९३ ,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका बचस	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११९ ३०८	श्रुतज्ञान श्रुता ञ्चा न श्रोत्र स	९३,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८ १२०
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका वका वचस वन्दना	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० २०८ ०,७	श्रुतज्ञान श्रुताञ्चान श्रोत्र स स्वित्तमंगल सत्ता सत्यप्रवाद	२३ ,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८ १२० ११६
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका बचस बन्दना वस्तु	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० ३०८ ९,७ १७४	श्रुतज्ञान श्रुताञ्चान श्रोत्र स स्वित्तर्भगळ सत्ता सत्यप्रवाद सत्यप्रवाद	९ ३ ,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८ १२० ११६ २८ १
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका वका वदस वन्द्रना वस्तु वाग्गुप्ति	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० २०८ ०,७ १७४ ११६	श्रुतझान श्रुताझान श्रोत्र स सवित्तमंगळ सत्ता सत्यप्रचाद सत्यप्रन सत्यमनोयोग	२३,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८ १२० ११६ २८१ २८०,२८१
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका वक्स वन्दना वस्तु वाग्गुप्ति वाग्गुप्ति	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११९ २०८ ९७४ १४६ २७९,३०८	श्रुतझान श्रुताझान श्रोत्र स्वित्तमंगल सत्ता सत्यप्रचाद सत्यप्रन सत्यमनोयोग सत्यमोषमनोयोग	२३,३५७,३५९ ३५८ २४७ २८ १२० ११६ २८१ २८०,२८१ २८०,२८१
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वक्ता वचस चन्द्रना चस्तु चाग्गुप्ति वाग्योग वागुकायिक	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० ३०८ ९,७ १७४ ११६ २७९,३०८ २७३	श्रुतझान श्रुताझान श्रोत्र स सवित्तमंगल सत्ता सत्यप्रचाद सत्यप्रन सत्यमने सत्यमोयोग सत्यमोयमनोयोग सद्युयोग	 ९३,३५७,३५९ ३५८ १८ ११६ २८९ २८०,२८१ १५८
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वका बचस बन्द्ना चस्तु वाग्गुप्ति बाग्योग बागुकायिक विश्लेपणी	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० २०८ ०,७ १७४ ११६ २७९,३०८ २७३	श्रुतझान श्रुताझान श्रोत्र स्वित्तमंगल सत्ता सत्यप्रचाद सत्यप्रने सत्यमोयोग सत्यमोयमोयोग सद्योग सद्भावस्थापना	 ९३,३५७,३५९ ३५८ १८० ११६ २८०,२८१ २८०,२८१ १५८ २०,२८१ २०,२८१
लेदया लोकबिन्दुसार लोभ वक्ता वचस चन्द्रना चस्तु चाग्गुप्ति वाग्योग वागुकायिक	१४९,१५०,३८६ ४३१ १२२ ३५० व ११० ३०८ ९,७ १७४ ११६ २७९,३०८ २७३	श्रुतझान श्रुताझान श्रोत्र स सवित्तमंगल सत्ता सत्यप्रचाद सत्यप्रन सत्यमने सत्यमोयोग सत्यमोयमनोयोग सद्युयोग	 ९३,३५७,३५९ ३५८ १८ ११६ २८९ २८०,२८१ १५८

समवाय	१०१	सूत्रकृत्	<i>९</i> , ९
समवायद्वय	१८	सूर्यप्रश्लाति	११०
सम्यक्तव	१५१,३९५	संकुट	१२०
सम्यग्दर्शन	<i>१५</i> २	संग्रह	૮૪
सम्यग्द्शनयाक्	१२७	सं झ	१५२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१६६	नं इंशि	१५२,२५०
सयोग	१९१,१९२	संयतासंयत	१७३
सयागकेवली	हरू	संयम	१४४,१७६,३७४
साधारणशरीर	२६ २	सयोगद्रव्य	१८
साधु	14.5	संयोजन:सत्य	११८
सामायिक	०,६	संवृतिसत्य	११८
साम≀यिकशुद्धिसंयम	३६९,३७०	संवेदनी	१०'९
सामायिकगुद्धिसंयत	કે હે	स्त्री	३४०
सासादन	१६३	स्त्रीवेद	३४०,३४१
सासादनसम्यग्दष्टि	१६६	स्थलगता	११३
सिद्ध	ક્રદ	स्थानांग	१००
सिद्धिगति	૨૦૨	स्थापनामंगल	१०
सुचक्रधर	فإذ	स्थापनासत्य	११८
स्रम	२५०,२६७	स्पर्शन	२३७
सृक्ष्मा म	२५३	∓ पर्शन।नुगम	5146
	३७३	स्पर्शप्रवीचार	३३८
	१८६,३७१	स्वयंभू	१२०
	११०	स्वसमयवक्तव्यता	૮૨
म्ःमसांपराय म्ःसमसांपरायशुद्धिसंयत सृत्र	१८६,३७१	स्वयंभू	१२०

२ अवतरण-गाथा-सूची

क्रम सं. गाथा पृ. अन्यत्र वाहां क्रम सं. गाथा पृ. अन्यत्र वाहां २१८ आहार-सर्रारिदिय- ४१७ गो जी १६९ २२७ तिण्हं दोण्हं दोण्हं ५३४ गो. जी ५३४ २२२ काऊ काऊ काऊ ४५६ गो. जी ५२९ २२६ तेऊ तेऊ तेऊ ५३४ गो. जी. ५३५ २२३ किण्हा भमरसवण्णा ५३३ पञ्चसं १,१८४ २२३ दस सण्णीणं पाणा ४१८ गो. जी. १३३ २१७ गुण जीवा पज्जती ४१२ गो जी, २ २२४ पम्मा पउमसवण्णा ५३३ पञ्चसं १,१८४ २१९ जह पुण्णापुण्णाइं ४१७ गो जी. ११८ २२० पंच वि इंदियपाणा ४१७ गो. जी. १३० २२५ णिम्मूलसंघसाहुव- ५३३ गो जी ५०८ २२८ मणपज्जव परिहारा ८२४ गो. जी. ७२९ २२८ लास्मी म दाव भावे ७ २४

३ प्रतियोंके पाठ-भेद

वृष्ठ	पंकि	अ	आ		क र	प्त मुद्रित
४ ११	ક	सारिण-असरकी	ोसु सण्णीसु अ	ासण्णीसु सर्व	पेज−अस ण्ज ीस	सणिण-असण्जीसु
ध११	દ્	पण्णत्ती	पजाः		णत्ती पज्ज	
४१२	ધ્ય	-मापेक्षया	–मापे	स्य ,,	•	-मापेक्षया
४१२	११	-यस्यैकत्वाभा	वाच यस्य चैक	त्वाभावात् ,	,	–यस्य चैकत्वाभावात्
४१३	3	-संद्रायां	37	91		−संज्ञाया
४१३	8	लोभोदय स ्य	छो भोद्य		,	लोभोदय-
४१३	9	संज्ञान-	संश्वातान	-		स ज्ञान-
८१४	ę	-संज्ञानां	13	~संशायां		-संझानां
४१४	6	मायात्रेवयो-	17	51	मायार	કોમયો− ,,
४१४	१०	-प्रभावा	,1	1,	মমৰ	
४१५	દ્	शंदिया	,,,	,,	पशंदिः	वा ,,
४१ ६	8	ए	परे	प	एं ब	91
४१७	3	–गत−	−ਸਲ−	–गਲ–	19	37
४१७	૪	–घद्-	-गद्-	11		-घड-
४१८	ર	-आणापाणिहि	**	19	-आजावाजाचार्व	हि -आणापाणपाणेहि
४१८	<	पज्ज-	अपज्ज-	,,	31	7 1
८१८	११	−पज्जत्त्स्स	12	37		पञ्जत्तयस्त
४१९	3	पदासि	पदेखि	पदासि		पदाःसिं
४२०	3	-विसिट्टे	,,	-विसेसे		-विभिट्ठ
४२०	११	–भावेण	,,	33	–भावेहि	11
ध२१	२	छण्णं भेदं	छले र साभेदं	छ-भेदं	छबमेवं	99
४२१	<	सत्त पाण	37	"	सत्त पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
४२२	9,	भणादि	भणिवे	9.9		भण्याद
४२५	8	–साणे	–त्ताणं		-सोघे	11
४२६	દ	−जुत्ता	,, সুন	ता वि होंति		-जुत्ता वि अतिय
		वि अत्थि	, ,,			91
४२६	9		-णं भण्णमाणे -	-णमोघाळावे		13
		भववभावे	मोघाळाचे			
836	<	अपज्ञ—	,,	17	पजा	n .
४२८	8	अणाहारिणो	11	अणाहा०		आहारिणो
850	ર	पज्जत्तीओ	,11	"		यपञ्चत्ती भो
850	9	-जीवाणं	_	–जीवार्ण		जीवा ण
४३३		×	-मोघ/ळावे	99	–मोधे	-मोघाळाचे

કકર	ર	दंसण	"	37	सण्णाओ	,,
४३ ६	ર	अत्थि	"	,,	णत्थि	91
પ્ર રૂદ	70	-द्याणं सदि	,,	,,	-दयो णस्सदि	99
४३८	8	–माण∽	"	33	−माया~	**
८ ८३	Ę	णिव्यत्त-	"	णिश्वत	**	,,
888	ક	भवंति	हवंति	भवंति		भणंति
888	S	भवंति	हवंति	भवंति		,,
४४६	સ્	अर्दिथ	णत्थि	,		**
८८७	રૂ	लेब-	णेव -	सेव-		लव-
886	6	करणेति	19	٠,	सणोत्ति	कण्देत्ति
४५३	3	जाज	,,	>>	57	अण्णाण
846	3	पज्ज०	,, ર	गपज्जत्तीओ		,,
8.40	૪	काउसुक्र−	,,	,,		काउ-
880	۶	काउसुक्र−	"	,,		काउ-
880	ક	पज्ज०	,,	,,		अपज्जत्तीओ
830	돲	तदिय—	"	,,	पवं तदि्य —	* *
પ્રક	3	इंदियाणं	**	99		इंद्याणं
४७:	۶.	एदो ओदो	99	एदाओ दो		,,,
४९४	8	पंचिदिय - अप	उजना		पंचि	दियतिरिक्ख-अपज्जना
834	1	अणाहारिणो	,,	, ,		आहारिणो
ઇકદ	1	सत पाण	,,	17	दस पाण सत्त पा	ण ,,
ઇકડ	२	पन्ज तीओ	1)	19		अप <i>ः</i> जन्तीओ
યુક્ટ	6	स्यमामित्धाइही	_		सम्मामिच्छ	(इट्टीणं ,,
8८१	3	~.जमाणं		ाणं जजमाणं		−ज्जमाणं
घटर	S	पंन्चित्यतिरिक्ष	वाणं पीचिद्य	रति- पंचिति	देयतिरिक्स०	पांचाद्य-तिरक्खाण
			रिक्स	पुज्ज त्ताणं		
863	ن	×	खइयसः	मातं खहयः	परगाइट्टी सदयस	म्मत्तं ,, 🕦
844	ۍ	आद्वारिणा	* 9	,,	3	भाहारिणो अणाहारिणो,
હજુ.	S	णच पाण	, •	13		णव पाण सत्त पाण
80 3	ક	दःबदायेहि	द्व्यस्थिण	दब्बभावे	हि	39
80%	5	अम्मीण्यणीओ	. 99	,,	स्राणिवार्वा	એ ,,
2012	S	-काउमकलम्सा	वि -काउसुद्य	हरे स्सा ओ :	-काउसुक्कले	काउलेस्साओ
400	1	सत्त पाण	11	,, ₹	त्त पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
400	12,		अजोगो	19		,,
400	S	अर्माण्याणो	अस्रिकाणी	असण्जि	गो	णेव सण्णिणो णेव
		वि अस्थि	अणुभया व	ा वि अत्थि		असण्मिणो वि अत्थि

				(%)		
५०४	ક	पंच णाण	पंच जाज	मणपज्जवकेव	ਲ-	पंच णाण केवलणा-
		केवलणाणेण	केवलणाणेण	णाणेण विणा		जेज छ जाज
		छ पाण	विणा छ णा	ग छ जाज		
५१०	९	पञ्ज-	"	77 7	প দ্ভর −	अपज्जन्तीओ
५११	દ્	-लेस्साओ	55	**		-लेस्साहि
५१२	8	सागाह० हो	ति ,, साग	गार अणागारेहि		सागारुवजुत्ता होति
		अणा० वा	जुगव	दुवजुत्ता वा हों	ति।	भणागारवजुत्ता वा
५१२	eq.	सम्मत्तसंजद्षा	हुडि ,,	"	पमत्तसंजदप्पहुरि	ž "
५१३	O	वेदोपि	,,	,,		-वेदे पि
५१५	8	तासिं	तस्सेव	तासिं		3 3
५१५	Eq.	पज्जन्तीओ	,,	"		अपज्जत्तीयो
५१५	દ્	×	×	×	चत्तारि कसाय	1)
५१८	6	सागारवजुत्त	। सागारअण(-	सागार अणा-		सागारवजुत्ता होति
		होंति अणाग	ा- गारेहिं जुग-	गारेहिं अणु-		अणागारवजुत्ता व
			वरुवजुत्ता व			
५२८	ર			ोसु-उवसंत-,,		11
५३०	દ્	णेव सण्णिणी		59		णेव साण्णणीओ
			**	••		णेव असण्णिणीमो
५३१	t _a ,	देवगदीप	देवगद्दीणं	देवगदीए		देवगदीप
५३२	હ્		पदं घडदे	पदं ण घडदे		23
५३३	8	णीलाघण-	णीलायण-	णीलायण-		णीला पुण
	•	_	णीलगुणिय-			णीलगुलिय-
५३३	3	पउवसवण्णा	"	,,	पउमसवण्णा	11
५३३	દ્	वुश्चित्तु	वुश्चिब्बु	29		बुधितु
५३३	و	-लेस्साणं	-लेस्साइं	-लेस्साणं		-लेस्साणं
५३५	१	भावादो	,,	,,,	भावदो	"
५३९	9	दो गदि	,,	,,		देवगदी
५४२	9	पज्ज-	,,	99		अ परज ∽
५५२	2 3	आहारिणो अणा	हारिणो ,,	,,		आहारिणे।
५५२	ų	प ज्जन्ती ओ	11	11		अपज्जन्तीओ
५५४	હ	पज्जन्तीओ	11	33		अपज्जन्तीभो
५५५	૪	णा्ण	**	93	अक्वांग	"
५५५	٧ 5	क्वेण काउ सुव	दब्बेण का	उसुक्त दब्वेण व	गउसुक ०	द्व्येण काउ-सुक्क-
	;	प िक्समा तेउ लेस	सा माज्झमा	तेउ माज्झिमा	े तेउले॰	मज्झिम-तेउलेस्सा
		भावेण	हेस्सा भा			भावेण मज्ज्ञिमा
			मुज्झिमा है	ाउ-		तेउलेस्सा;
			लेस्सा भो			

446	ę	द्व्येण काउसुक्क-	द्व्वण काउस	क्त- दब्बे	ण काउसक	_	दब्बेण काउ-सुक्र-
			हेस्सा		झमा तेउले र		मज्झिम- तेउलेस्सा
५५९	६	–यारुद्दिय	,,	,	,	-मार्हा	
५६०	8	पुणोद्धिणा	पुणाहाणा		गोहिणा	पुणोदिष	
५६१	9	-सुक-उक्कस्स-	"	,1		-जहण्ण	दुव्वेण काउ-सुक
		जहण्ण					उक्कस्स-तेउ-जहण्ण-
५६४	É	-पादिंकर-	"	पीदिंक	₹		9,9
५६८ १	६-७	पवं देवगदीप	"	,			एवं देवगदी। सिद्ध-
		सिद्धभंगो					गदीए सिद्धभंगो।
५६९	ર	णेय असंजदा	19	,,			णेय असंजदा णेव
		संजदा वि					संजदासंजदा वि।
५६९	8	कायव्वा	,,,	,,	वत्तव	वा	,,,
५६९	6,	पुढर वणण्फर पु	रुढिविचणप्फ र ्	पुढइ वण	ग्प्पाइ		युढइ-वणप्पर्इ
400	4	संविजनी	"	"			असण्णिणा
५७१	દ્	आहारिणो	,,	9.9		3	गहारिणो अणाहरिणो
408	۶	सण्णिणो	,,	,,		3	स्तिणणो
५७५	٥,	असंजमोस-	"	"	असचमोस	! -	99
५८१	२		सिंचेय	,,			79
			पज्जनाण				N - N
५८३	S	द्व्येण छलेस्सा	,,	7.7	19		(ब्व−भावेहि छ लेस्सा
५८६	3	पज्ञत्तीओ	"	, ,	अपज्जत्तीअ		19
५९१	8	कायाणुवादेण	"	19		क	ायाणुवा देण ्ओघालावे
		•					भूणमाणे
५९१	3	अट्टावीस वा	11	,,			सोलस वा
५९१	8 ਵ	ो <mark>वीस</mark> वा तेतीस व	τ,,	,,		ج	तिस वा, चडवीस वा
		चडतीस वा					•
५९१		रतालीस	31	"			वायालीस
५९२		विव्यतिपञ्जन-			नेअपज्जत-		37
५९२		तसकार्या पंचित्य					तसकाइया दुविहा
		दुविहा पजना					पंचिंदिया अपंचिं-
		अपउ जसा । पं चिं- दिया दुविहा सण्णी	ाद्या दु।वहा भारतका आ	्पाचादः - स्राताम	या द्वावहा		दिया । पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो
		विया उपिहा सण्ण अस <mark>ण्णी सण्</mark> णी	। पण्डात्ता अप - उज्जना स्विक्त	- स्वरण्याः १-चिम्राणो	ा असः		जुषहा साम्मणा अ सम्मिणा । साम्म
		दुविद्या पज्जत्ता अप					णो दुविहा पज्जसा
		जित्ता । असण्णी	दविद्वो २	अपज्ज	असाण्ण		अपन्जत्ता। असण्णि-
		दुविद्वा फजत्ता	पज्जता अप	- दुविहो	पज्ञ		णा दुविहा पज्जत्ता
		अपन्जसा ।	ज्जता ।	अपज्ज	a 1		अपज्जना ।
५९८	4	पत्तेयं	पत्तेयं पत्तेयं	पत्तेग	यं		99

६००		१ वीप	,,		**	- \$
६०२	•	३ तिण्णि	,,	**	प	्रदि
६०३	1	३ अकसाभा	1,	,, अकसा	थो	दोणिण
६०४	=		जीव- ,,			,,
६०६	=	पज्जतीओ	"	"	मूलोघब्भुत्तर्ज	
६०६	,,	तिण्णिगदी	٠,	" निरि	० गदि	अपज्जसीमो
६०९	94	आहारिणो	"		ુ નાલુ	तिरि क्याग्त्री
			,,	"		आहारिणो
६००.	१ः	-मुवसाणिय	- ,,		- Am	अण(हारिणो,
६१०	3		,	"	-मेव पार्णाय- 	11
६१०	દ		,, नि – कारमा	,,	एवं	11
		पज्जता-	पञ्जना	• •	79	-काइयाणिब्वात्ति-
६१०	0		गणाम नाम	(- X		पजनापजनाणं
		मकस्मोदया	nî	"		पजातणामकस्मोद्य-
६११	ર	वणिज्ञ-	41		•	तेउकाइयाणं
६११	"	पज्जनाणं	"	,,	्तवणिज्ज-	91
६१२	" ੨	अण्णेयचण्णाह	,,, Table	पःजत्तापःज		पज्जनाणं
	`	गुलिवसा ।	ગવ ,,	73	अणेयचण्णा	"
६१४	o	गुल्वसा । भवसिद्धिया			तोवि रूढिवस।	•
7.0	9	भवासाद्ध्या	,,	"		भवसिद्धिया अभव-
हर्ष	6	पन्जन्तीओ				सिद्धिया,
६२०	१०	वज्जनाञा तेसि २	- 67	ं,, तेसिं २	अपन्जन्तीओ	**
દેરર	-		तसि	तास २		तेसि
	•	वणप्पाइकाओ ह स्ति भंगो	रणप्पद्र-भूगा	"		55
६२२	2					
६२७	3	सत्त पाण	,	सत्त पाण २		सन पाण सत्त पाण
	8	-इड्डिप्पहुडि <u>-</u>	र िट्ठणप्प ह ि	इद्विष्पहुद्धि		J1
६२७	3	चदुगिद्गदाओ	चिउगदिग <i>र्द</i>	भे	चउगदिमदीदो	
६२७	4	द्व्य-भावाह्	>>	11	दब्ब-भाषेहि अलस्स	rr ,,
		छ लेस्साओ				,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,
६३३	8	इहिंदो	"	,,	इदि दो	••
६३४	ક	-जोगीणं भंगी	-जोगीभंगे	τ,,		" जोगि-भंगो
६३४	<	ताजावि	,,	,,	ताओ वि	
६५३	३	सण्णित्तिब्भु	,,	सण्णित्रन्भु		"
६५४	۶	साण्णात्तव्भु जोगोव उत्ताणं	जोगेव उ	रोगेव उत्ताणं	–जोगे वहत्ताणं	-जोगे वहंताणं
			उज्जत्ताणं			चाग पष्टताण
६५४	8	छव्वण्णकालिय-			छन्वण्णारा लिय	
		रसाणाणं	.,	"	परमाण् णं	"
					4 (411 2) 01	
६५४	२	परमाणादि	"	99	परमाण्हि सह	

	कालोद-		कावोद-	,",
६५४	७ - केवलि ,,	"	71	केवालिस्स
६५८	४ अयोग− ,,	**		आयु
६५९	२ समणा सभणा	समणा	समत्तो	समणा
६६०	५ एवंध- ,,	1,	बंध-	>5
६६९	६ विरहाकालाव- "	12	विरहकालोव-	,,
६७२	८ तंजहा णेद्व्या तम्हा णेद्व्य	।। जं जहा णेद	व्या जहा मूलोघो णीदो	
			तं जहा णेदव्वा	तहा णेद्वा
६८४	८ सण्णिणो ,,	,,	>>	सण्जिजो असण्जिजो
900	१ अणिदियत्तं अणियद्वियत्तं	अणियद्विनं		अणिदियत्तं
	पि अत्थि			
900	२ छ ले स्साओ ,,	y ⁷	अ लेम्मा ओ	,,
904	५ आहारिणो ,,	,,,		आहारिणो
	अणाहारिणो	,,		
७१२	१० मुणं सुणः ,,	,,	माण-माया-	
७१३	३ × १०४२-१	,, X		**
७२६	10 - months		-णाणाणि वत्तदवाणि	
014	वत्तव्वाणं	"	all all a dimallal	31
1000			~~	
७२६	८ तिण्णि ,,	"	तेण 	11
७२७	१ इयकेसु सत्तीसु ,,	"	स्यरेसु संतेसु	511
७२७	२ –विवक्सियाणाण – ,,	",	9 9	विवक्षिवयणाण-
७२७	७ −तं पि्च्छाय त् −ू,,	22	−तं पच्छायद्-	–त्तपच्छायद–
७३०		पूळोघो		मूलोघो व्य
७३३	७ विवट्टिदो ,,	"	एवं छेदावट्टावण-	31
	बटुावण-			
७५०	१ खीणसण्णाविञा ٫ 🔻			9.9
<i>७५१</i>	२ किण्ह-णील किण्णलेस्स	ओ किण्ण-प	गील ०	किण्हले र सा
	काउलेस्साओ			
७५४	२ भावेण भावेण छ लेस्स।	ओ ,,		भावेण किण्हलेस्सा
	वि एवं			
७६३	७ पंचिंदियजादि ,,	• •	पंच जादीओ	5,
200	४ × पिटिय	त्रण ×	पिंडियाप	33
७९४	६ तिब्व लाहाणं ,,	,,	तिब्बलोहाणं	1,
८०१	४ अजोगि-केविल जोगि-			सजोगिकेवछि
८०१	५ अण्णलेस्साणं ,,	,,		अलेस्साणं
८१६	८ वेदगसम्मारहि-	71	वेदगसम्माइड्डि-	
~74	romania di		पमत्त-	_
	ज्यहाड ,,	"	447	n

८२२	Ø	ओरात्छिय	,,	औयरिय	31	37
८२२	4	तत्थुप्पत्तिद्दि- त	त्थुप्पत्तीहिं-		तत्थुप्पत्ति-	
		भवा-	भवा-	13	संभवा−	"
८२२	ৎ	पाच्छगद्-	11	पछागद		पच्छागद्-
८२३	Ş	पडिवज्जिति	"	,,	पडिवज्जंति	73
८२३	२	उवसंघडिद-	उवसंहारेद-	. ,,		**
८२३	3	तहो उदिण्णाणं	,,	,,	तत्तो ओदिण्णाणं	,,
८२४	3	–सेसपज्जाणे	9.7	7.7	सेसयं जाणे	١,
८२'५	6,	एसत्था			एसत्थो	
		वत्तव्वा	,,	99	वत्तस्वा	91
८२९	É	सासणसम्मा-	,,,	,,		सण्जिसासजसम्मा-
८३४	૪	चत्तारि जोगः । सव्वजोगो	वत्तारि जोग असंजमो सञ्चजोगो	· चत्तारि जे सब्द जो		चसारि जोग- अस च मोसवचि- जोगो

४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठः

पृष्ठ	पंक्ति	प्रति	कहांसे	कहांतक
४ ५५	Ŋ	अ.		ओरा लिय कायजोगो
४६४	3	अ. आ. क.		छ अपज्जन्तीओ,
306	S	अ.	मणुस्स-सम्मामिच्छाइट्टीणं	अणागारवजुत्ता वा।
५२४	S	આ.	मणुसिणी-विदिय-	
५२९	१	आ.	द्व्वेण छ हेस्साओ	केवलदंसण,
483	Ę	आ.	×	खश्यसम्मत्तेण विणा
488	R	था.	तेसिं चेव पज्जत्ताणं	अणागारवजुत्ता या।
५६०	O	क .	पविमित्थिपुरिस	माळाषो वत्तब्घो
५६३	१०	अ. आ. क.	पज्जत्तकाले	पम्मलेस्सा,
५६६	3	अ.	भिच्छारद्वीण	को तत्थ
५७०	९	अ. आ. क.	भावेण	काउलेस्सा,
308	G	अ. क.		तसकाओ,
५८६	3	अ. आ. क.		सत्त पाण,
५९२	Lq.	अ. आ.	तसकार्या	वियक्तिंदिया शि

६००	4	क.	प्रंदियज्ञादि-आदी	•••	अवगद्वेदो वि अरिथ,
६३०	4	अ. आ. क [.]	तिण्णि अण्णाण	•••	चत्तारि कसाय,
६३६	G	थ. था. क.	असचमोस− …	•••	णवरि
६५४	9	अ.	कवाडगद्	•••	चेव भवदि,
६५६	3	आ.	ओरालियमिस्सकायजोगि	•••	तसकाओ,
६६२	8	क.		•••	अणागारुवजुत्ता वा।
६७८	8	अ.	तेसिं चेव पज्जत्ताणं	•••	अणागारुवजुत्ता वा ।
६८७	3	अ.	तेसिं चेव अपज्जत्ताणं	•••	अणागारुवजुत्ता वा।
६९८	Co.	अ. आ. क.	दें(जीवसमासा	•••	समासो वि अत्थि
800	۹,	अ. आ. क.			छ अपज्जन्तीओ,
७०९	9	थ. आ क.	मणुसगदी		कोधकसाओ,
७१२	ક	આ.	कोधकसाय-विदिय-		अणागारुवजुत्ता वा ।
७१२	१०	अ.	लोभकसायस्स		वचव्वे
७१४	१	અ. આ. क.	सागार		दुवजुत्ता वा।
७१६	ક	अ. आ. क.			चत्तारि गदीओ,
७१८	દ્	अ. आ. क.			चत्तारि गदीओ,
७३६	3	अ. आ. क.			छ अपन्जत्तीओ,
280	१	अ. आ. क.			चत्तारि गदीओ,
७५५	8	अ. आ. क.			चत्तारि गदीओ,
७६४	8	अ. आ. क.			छ अपज्जत्तीओ
७६९	२	आ.	तेसिं चेव पञ्जनाणं		अणागारुवजुत्ता वा ।
1919°	3	अ. आ.	तेउलेस्सा-अप-	•••	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८४	8	અ.	सागारुव	•••	−रुवजुत्ता वा।
७८४	२	क.	तेसि चेव पःजत्ताणं	•••	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८५	4	अ. आ. क.	तिण्णि पाणाणि	• • •	असंजमो,
८१६	6	अ.	वद्कसम्माइट्टि-पमत्त	• • •	अणागारवजुत्ता वा।
८१७	3	अ.	वेदकसम्माइट्टि-अप्प-	• • •	अणागारुवजुत्ता वा।
_			अणाहारि-असंजद-	•••	अणागारुवजुत्ता वा ।

५ विशेष टिप्पण (पुस्तक १)

go do

१५७ २ "ण च संतमत्थमागमे। ण परूवेश्वतस्य अत्थावयत्तप्पसंगादो " में आये हुए 'अत्थावयत्तप्पसंगादो 'का अर्थ 'अर्थापदत्व अर्थात् अनर्थकपदत्वका प्रसंग प्राप्त हो जायगा 'ऐसा किया गया है। जयघवला अ. प्र. प्. ५१२ में भी 'ण च संतमत्थं ण परूवेदि सुत्तं, तस्स अन्वावयत्तदोसप्पसंगादो 'श्स, प्रकारका वाक्य पाया जाता है। जिसमें आये हुए 'अन्वावयत्तदोसप्पसंगादो का अर्थ 'अन्यापकत्वदोषका प्रसंग प्राप्त हो जायगा 'होता है। धवलाके पाठसे जयघवलाका पाठ शुद्ध प्रतीत होता है।

(प्रस्तक २)

४११ ५ पदाासि विधि पुध पुध उवसंदरिसणा परूवणा । जयधा अ. पू. ६३१.

४३५ ४ उदीरणाए चेव उदयो उदीरणोदओ ति । जयधः अ. पृ. ५२६.

> इस पंक्तिके अनुसार 'उदीरणामें ही होनेवाले उदयको उदीरणोदय कहते हैं' ऐसा अर्थ होता है। परन्तु हमने अर्थ करते समय उदीरणोदयका उदीरणा तथा उदय ऐसा अर्थ किया है। इसका कारण यह है कि आठवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें भय प्रकृतिकी उदीरणा ब्युच्छित्ति तथा उदय ब्युच्छित्ति होती है।

४४८ ८ १ 'णिरया किण्हा ' गो. जी. ४९६. णेरहया णं भंते ! सब्बे समवन्ना ! गोयमा ! णो इणहे समहे । से केणहेणं भंते ! एवं बुच्च — नेरहयां नो सब्बे समवन्ना । गोयमा ! णेरहया दुविह पन्नत्ता, तं जहा—पुज्वोचवन्नगा य पच्छोववन्नगा य । तत्थ णं जे ते पुज्वोचवन्नगा ते णं विसुद्धवन्नतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं भविसुद्धवन्नतरागा । प्रहा. १७. १. ३.